भारत व पाकिस्तान
का
आर्थिक व वाणिज्य भूगोल

ए. दास गुप्ता

एम. ए., बी. कॉम., एफ. आर. जी. एस., एफ. सी. सी. एस. (लन्दन)
अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग, देहली पॉलीटेकनिक, देहली,
भूतपूर्व भूगोल अध्यापक, विद्यासागर कालेज, कलकत्ता,
विविध विश्वविद्यालयों के परीक्षक
लेखक '*Economic and Commercial Geography*',
'*Economic Geography of India & Pakistan*',
'आधुनिक आर्थिक व वाणिज्य भूगोल',
'*Principles of Physical Geography*',
'भूगोल के भौतिक सिद्धान्त' ।

तथा

अमर नाथ कपूर एम. ए., डी. फिल.

अध्यापक, वाणिज्य विभाग, देहली पॉलीटेकनिक, देहली
भूतपूर्व अध्यापक, एस. एम. कालेज, चन्दौसी (यू. पी.)
लेखक 'भूमंडल का सरल आर्थिक व वाणिज्य भूगोल',
'भारत का सरल आर्थिक व वाणिज्य भूगोल',
'आधुनिक आर्थिक व वाणिज्य भूगोल',
'भूगोल के भौतिक सिद्धान्त, *Principles of Physical Geography*'.

प्रीमियर पब्लिशिंग कम्पनी

फव्वारा—देहली

केवल भारत से सम्बन्धित सामग्री को ही स्थान दिया गया है परन्तु यथास्थान विभाजन का प्रभाव बराबर स्पष्ट कर दिया गया है। तेरहवें अध्याय में पाकिस्तान राज्य के आर्थिक जीवन व वाणिज्य का विवरण किया गया है परन्तु जहाँ-तहाँ आवश्यकतानुसार पाकिस्तान और भारत का अटूट आर्थिक सम्बन्ध भी स्पष्ट कर दिया गया है।

अन्त के दो अध्यायों में वर्मा और लंका के आर्थिक भूगोल का अध्ययन है। ये हमारे देश के पड़ोसी राष्ट्र हैं और सन् १९३७ तक तो वर्मा भारत का ही एक अंग था। अलग होने पर भी भारत और वर्मा व लंका एक दूसरे से सम्वन्धित हैं। इन तीनों राष्ट्रों की बहुत-सी समस्याएँ बिल्कुल एक जैसी हैं और ये तीनों ही एक दूसरे पर बहुत-सी बातों पर निर्भर रहते हैं। अतः इनका अध्ययन भारत के आर्थिक व वाणिज्य भूगोल के अध्ययन का पूरक है और इनके अध्ययन का उचित समावेश करके पुस्तक को संपूर्ण, व्यापक और सार्वभौमिक बनाया गया है।

अन्त में हम निम्नलिखित सज्जनों को हार्दिक धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकते, जिन्होंने अपने बहुमूल्य विचारों व आदेशों द्वारा इस पुस्तक के तैयार होने में बड़ी सहायता दी है:—श्री बलवन्त सिंह, डी. ए. वी. कालेज कानपुर; श्री एम. पी. ठाकुर, कैम्प कालेज, नई दिल्ली; डा. विश्वम्भर नाथ, योजना कमीशन, नई दिल्ली; श्री डी. एन. मेहता, कमशियल हायर सेंकडरी स्कूल; श्री एस. पी. श्रीवास्तव, अग्रवाल विद्यालय इंटर कालेज, प्रयाग।

उत्पादन व क्षेत्रफल के आँकड़ों के लिए हमने संयुक्त राष्ट्र संघ की विविध रिपोर्टों, सरकारी विज्ञप्तियों तथा अन्य बहुत-सी विश्वसनीय पत्र-पत्रिकाओं से सहायता ली है। उन सभी के प्रति हम अनुगृहीत हैं।

दिल्ली,
ता० १ मई, १९५३

ए० दास गुप्ता
अमर नाथ कपूर

तीसरे संस्करण की प्रस्तावना

'भारत व पाकिस्तान के आर्थिक व वाणिज्य भूगोल' का यह तीसरा संस्करण पूर्णतया नवीन पुस्तक के रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है। इसका स्वरूप परिवर्द्धित व संशोधित तो है ही साथ ही विषय का विवेचन अधिक व्यापक तथा सार्वभौमिक हो गया है। दूसरे संस्करण निकलने के बाद से भारत-पाकिस्तान प्रायद्वीप में अनेक आर्थिक उलटफेर हुये हैं। भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना की पूर्णाहुति के साथ-साथ दूसरी योजना का सूत्रपात विशेष महत्व की बात है। देश की कृषि, उद्योग तथा विदेश व्यापार सम्बन्धी प्रगति व समृद्धि को ध्यान में रख कर ग्रन्थ में प्रस्तुत सामग्री को काफी बढ़ा दिया गया है। फलतः पुस्तक के वर्त्तमान संस्करण में कोई १०० पृष्ठ और बढ़ गये हैं। साथ ही नये मानचित्रों का भी समावेश कर दिया गया है। यथासम्भव कृषि सम्बन्धी, औद्योगिक और विदेश व्यापार विषयक १९५४-५५ तक के आंकड़ों को देकर विषय को नवीनतम कर दिया गया है। जहां पर विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं थे वहां पर पुराने आंकड़ों को ही रहने दिया गया है। लंका और बर्मा के विषय में नवीनतम आंकड़े १९५३-५४ तक के ही हैं। इस से बाद के तो केवल अनुमान मात्र है। ऐसे अधकछरे आंकड़ों को प्रायः कहीं भी नहीं आने दिया गया है।

अन्त में हम उन सभी सरकारी तथा गैर सरकारी सूत्रों के प्रति आभारी हैं जहां से हमें पुस्तक के संशोधन तथा परिवर्द्धन में किसी भी प्रकार की सहायता मिली है।

हमें पूर्ण आशा है कि प्रस्तुत रूप में यह पुस्तक अधिक रुचिकर तथा हित कर सिद्ध होगी। अपने देश तथा उसके पड़ोसी राष्ट्रों के सम्बन्ध में जिज्ञासु पाठकों, विद्यार्थियों और शिक्षकों के बीच इसकी लोकप्रियता ही इस की सफलता है।

दिल्ली
ता. १५ जून, १९५६

ए. दास गुप्ता
अमरनाथ कपूर

विषय-सूची

विषय प्रवेश

भारत के आर्थिक भूगोल के अन्तर्गत हम यहाँ के निवासियों की औद्योगिक व व्यापारिक क्रियाओं तथा प्राकृतिक परिस्थितियों के साथ उनका संबंध अध्ययन करते हैं। यहाँ के लोगों के मुख्य व्यवसायिक उद्यम खेती करना, वनों में काम करना, मिलों कारखानों में काम करना, यातायात के साधनों को चलाना तथा व्यापार हैं। मछली पकड़ना और पशु-पालन करना यहाँ के गौण व्यवसाय हैं।

विहार का मुख्य उद्यम खानों को खोदना है। बंबई और हुगली की तलैटी में विभिन्न उद्योग-धंधे पाये जाते हैं। बम्बई, मद्रास, उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल के तटीय प्रदेशों में मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। उत्तर में गंगा-ब्रह्मपुत्र का मैदान खेती का केन्द्र है। विशिष्ट प्रदेशों में वहाँ के निवासियों के रहन-सहन व उद्योग-धंधों पर उनकी परिस्थितियों, नदियों व प्राकृतिक साधनों का क्या प्रभाव पड़ता है इसी के अध्ययन का नाम आर्थिक भूगोल है। इस अध्ययन के द्वारा हमें यह पता चलता है कि हम प्राकृतिक साधनों का किस प्रकार पूर्ण व सफल उपभोग कर सकते हैं। प्रकृतिदत्त साधनों का उपभोग हमारे ज्ञान व मानसिक शक्ति पर निर्भर है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जैसे-जैसे हमारे ज्ञान व व्यवहारिक कुशलता में वृद्धि होती जाती है वैसे हम अपने प्राकृतिक साधनों से अधिक लाभ उठाने लगते हैं। पश्चिमी बंगाल के दक्षिणी भाग में सुन्दर वन की घनी वृक्षाच्छादित भूमि को साफ करके कृषियोग्य बनाया जा रहा है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, और पूर्वी पंजाब के बहुत से ऊसर और खेती के लिए सर्वथा अयोग्य प्रदेशों को वैज्ञानिक विधियों द्वारा या सिंचाई की नई योजनाओं की सहायता से मनुष्य के रहने योग्य बनाया जा रहा है।
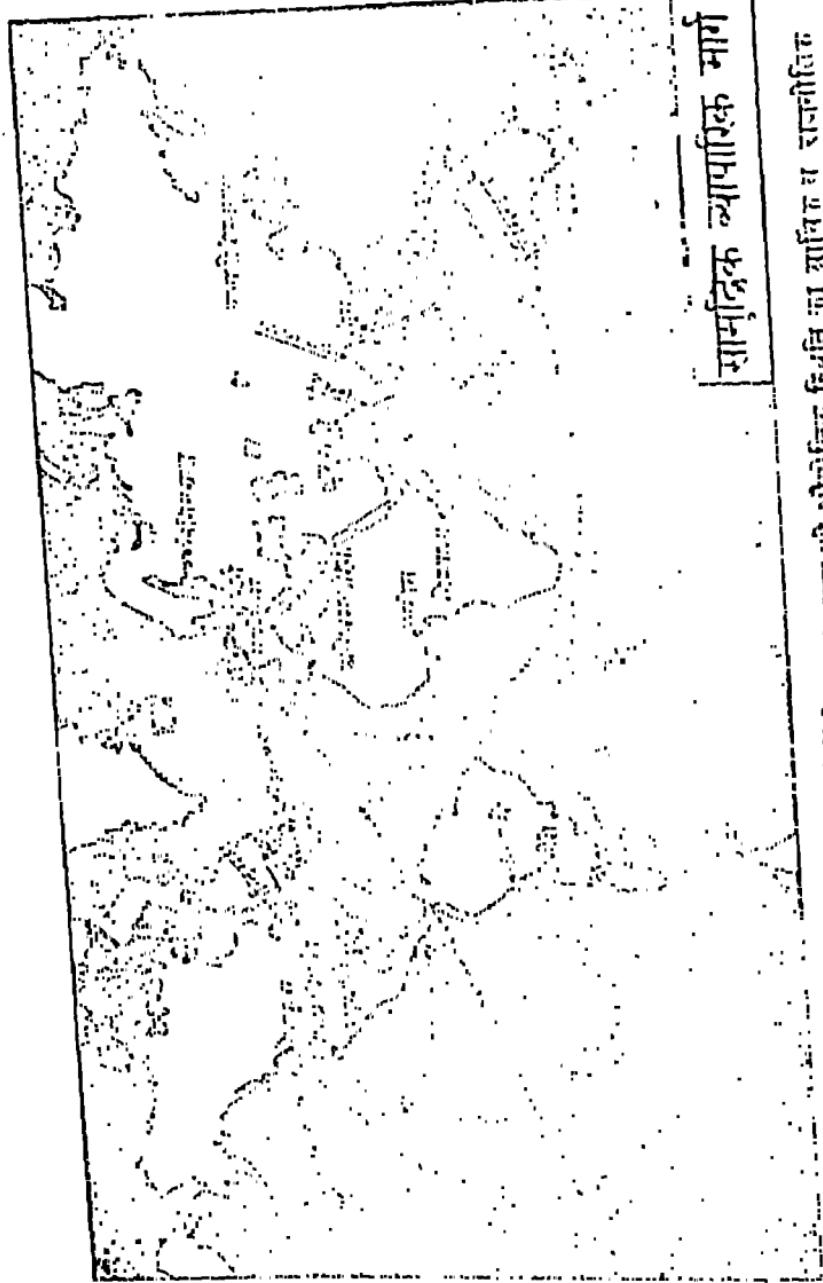
चित्र १—एशिया के तीन बड़े दक्षिणी प्रायद्वीपों के मध्य भारत की भौगोलिक स्थिति का आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में विशेष महत्व है।

स्वरूप ३ प्रान्तों से हाथ धोना पड़ा। उत्तरी-पश्चिमी सीमाप्रांत, सिंध, आधा पंजाब और आधा बंगाल पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिया गया। अतः जूट, कपास, चमड़ा व खालें, खनिज तेल, पहाड़ी नमक, क्रोमाइट आदि के स्रोत इसके हाथ से निकल गये। तीसरे, देश के सूती कपड़ा व्यवसाय को कच्चे माल की कमी प्रतीत होने
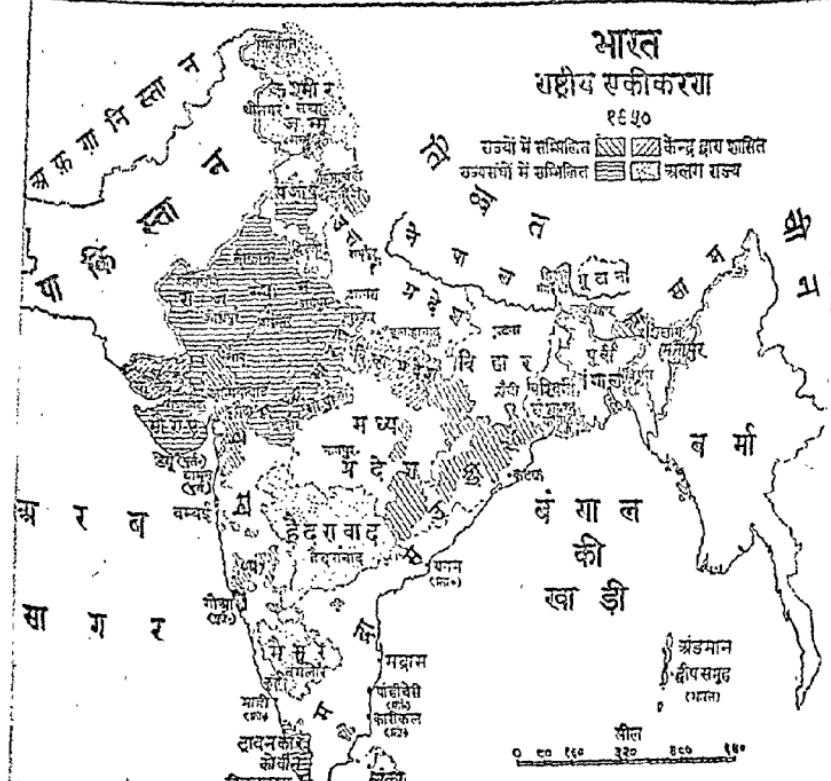
चित्र ४

लगी। भारत का सूती कपड़ा उद्योग कच्चे माल की मांग पूर्ति के लिए पाकिस्तान पर निर्भर रहता है और इसी प्रकार कलकत्ता की पटसन मिलों को पूर्वी पाकिस्तान से कच्चा पटसन प्राप्त करना होता है।

सन् १९५० में देशी राज्यों को, जो अंग्रेजी साम्राज्य काल में सम्पूर्ण देश के भाग होते हुए भी एक पूर्णतया भिन्न व्यवस्था के अन्तर्गत थे, राष्ट्रीय एकीकरण द्वारा प्रांतों में मिला दिया गया या उनको समूहों में आबद्ध करके नवीन प्रान्तों की रचना की गई। परन्तु वह सब अन्तरिम रूप से किया गया। दिसम्बर सन् १९५३ में देश के प्रान्तों की सीमाओं को ठीक करने तथा विभिन्न प्रान्तों के पुनर्गठन के लिए एक कमीशन की नियुक्ति हुई और सन् १९५५ के सितम्बर महीने के अन्त में इस कमीशन ने अपनी सिफारिशें पेश कीं। इसके अनुसार देश को १६ राज्य तथा ३

केन्द्रीय प्रशासित प्रदेशों में बाँटने की सिफारिश की गई। इसका आधार प्रादेशिक भाषाओं के अनुसार विभागों को निश्चय करना था और इसका उद्देश्य था कि देश की सुरक्षा तथा राष्ट्रीय एकात्मता को ध्यान में रखते हुए उचित करीब-करीब बराबर विस्तार वाले ऐसे प्रदेशों में बाँटा जाय कि उनमें शासन की सुविधा रहे और प्रत्येक में एक भाषा बोली जाती हो। देश की सरकार ने इन सिफारिशों को कुछ हेरफेर के साथ स्वीकार कर लिया है। अतएव देश में अब निम्नलिखित राज्य होंगे—मद्रास, विशाल आन्ध्र (तेलंगना-आन्ध्र), केराला, मैसूर, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, जम्मू काश्मीर, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, आसाम। दिल्ली, बम्बई, मनीपुर, त्रिपुरा, हिमाचल प्रदेश, लख द्वीप-माल द्वीप और अंडमान-नीकोबार पर केन्द्रीय प्रशासन रहेगा।

इस पुनर्गठन से देश के आर्थिक जीवन में बड़ा ही महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। यद्यपि विभिन्न राज्यों की आर्थिक रूपरेखा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होगा, उनके बीच का अर्थ-सम्बन्धी अन्तर पहिले से बहुत कम हो जायेगा। पुनर्गठन से वर्त्तमान नदी घाटी योजनाओं की कार्य प्रणाली तथा रूपरेखा में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा। देश के संचार साधन, यातायात व्यवस्था तथा रेल प्रणाली भी वैसी ही बनी रहेगी। हाँ मैसूर, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और पंजाब को केन्द्र से अधिकाधिक आर्थिक सहायता की आवश्यकता पड़ेगी।

विभिन्न राज्यों के बीच परस्पर सम्पर्क रखने के लिए और उनकी पारस्परिक समस्याओं को हल करने के लिए इनको ५ प्रदेशों में एकत्रित कर दिया जायेगा। ये प्रदेश या कटिबन्ध निम्नलिखित होंगे :

(१) उत्तरी कटिबन्ध—पंजाब, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और दिल्ली।

(२) मध्य कटिबन्ध—उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश।

(३) पूर्वी कटिबन्ध—बिहार, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, आसाम, मनीपुर और त्रिपुरा।

(४) पश्चिमी कटिबन्ध—महाराष्ट्र, गुजरात, बम्बई।

(५) दक्षिणी कटिबन्ध—विशाल आन्ध्र, मद्रास, मैसूर, केराला।

आशा है कि यह पुनर्गठन २ अक्तूबर १९५६ को कार्यान्वित हो जायेगा।

भारत की भौगोलिक स्थिति बड़ी केन्द्रीय है और इतनी महत्त्वपूर्ण है कि देश के वाणिज्य, सुरक्षा और जलवायु पर इसका बड़ा ही व्यापक प्रभाव पड़ता है। इसके पूर्व की ओर बर्मा, मलाया, इन्डोनेशिया और स्याम जैसे घने आबाद देश स्थित हैं। इसके पश्चिम की ओर मध्यपूर्व के अनौद्योगिक देश हैं। इस प्रकार इन दोनों पार्श्वों के मध्य स्थित होने के कारण यह नितांत संभव है कि भविष्य में भारत एक प्रधान व्यापारिक देश बन जावेगा। पूर्वी गोलार्द्ध के मध्य और हिन्द महासागर के ऊर्ध्व पर स्थित भारत प्राचीन व अर्वाचीन जगत के बीच आने-जाने वाले व्यापारिक मार्गों का केन्द्र है। पश्चिम में अफ्रीका और यूरोप, दक्षिण में आस्ट्रेलिया तथा पूर्व में स्याम, चीन, जापान और अमरीका से यह समुद्री व्यापारिक मार्गों द्वारा सम्बद्ध है। अतः स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के दृष्टिकोण से भारत की स्थिति बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है।

भारत की सीमायें प्राकृतिक व कृत्रिम दोनों ही प्रकार की हैं। उत्तर में हिमालय पर्वत श्रेणी, दक्षिण-पश्चिम में अरब सागर, दक्षिण-पूर्व में बंगाल की खाड़ी और धुर दक्षिण में हिंद महासागर इसकी प्राकृतिक सीमायें बनाते हैं। पश्चिम में भारत पाकिस्तान की सीमा कृत्रिम व खुली है। अमृतसर जिले में रावी नदी और फिर दक्षिण की ओर मुड़कर फिरोजपुर जिले में सतलज नदी इसकी सीमा बनाती है। फिरोजपुर से आगे भारत की सीमा राजस्थान राज्य की अन्तिम परिधि है। आसाम भारत की उत्तरी-पूर्वी सीमा बनाता है। इसके अतिरिक्त इसका सम्पर्क उत्तर में तिब्बत, दक्षिण-पूर्व में पूर्वी पाकिस्तान, उत्तर-पूर्व में चीन तथा पूर्व में बर्मा से है। साधारणतया हम यह कह सकते हैं कि भारत की सीमान्त रेखाओं के तीन-चौथाई भाग में पहाड़ और समुद्र स्थित हैं जो देश की सुरक्षा के लिए बड़े ही उपयुक्त हैं। राजनीतिक भूगोल के दृष्टिकोण से भारत की सबसे कमजोर सीमान्त रेखा पूर्वी पंजाब की है।

भारत का तट ३५०० मील लम्बा है। या यूँ कहा जा सकता है कि देश के प्रत्येक ४०० वर्गमील क्षेत्रफल के अनुपात में १ मील लम्बी तटरेखा पाई जाती है। परन्तु यहाँ का तट बहुत कम कटा-फटा है और पास में बहुत कम द्वीप पाये जाते हैं। पास का तटीय जल छिछला है और किनारे सपाट तथा बलूहे हैं। इन प्राकृतिक विशेषताओं के कारण तट की लम्बाई को देखते हुए बहुत थोड़े पोताश्रय व बन्दरगाह हैं। कच्छ, कैम्बे और मन्नार की खाड़ियाँ, कोचीन व मालाबार के पीछे के जलाशय और पाक जलडमरूमध्य तथा गंगा के मुहाने पर की कटान के अतिरिक्त यहाँ का समुद्रतट बिलकुल ही सीधा व सपाट है। उपर्युक्त कटे-फटे भाग व खाड़ियाँ भी इतनी छिछली हैं कि उन्हें बराबर खोद कर गहरा करना पड़ता है। केवल कोचीन व मालाबार के जल प्रदेश पर्याप्त गहरे कहे जा सकते हैं पर वहाँ अन्य असुविधायें उपस्थित हैं।

भारत का पूर्वी तट—पूर्वी पाकिस्तान की सीमा पर खुलना प्रदेश में कालिन्दी नदी के मुहाने से सुन्दरबन के समानान्तर पश्चिम की ओर हुगली नदी तक फैला है। हुगली नदी के मुहाने से यह तट कृष्णा नदी के डेल्टा तक दक्षिण-पश्चिम को फैला है और फिर वहाँ से भारत के सुदूर दक्षिण बिन्दु कुमारी अन्तरीप तक दक्षिण दिशा में विस्तृत है। यह पूर्वी तट बिलकुल सपाट है। केवल नदियों के मुहाने पर कटान नजर आती है।

पश्चिमी तट—कुमारी अन्तरीप से उत्तर की ओर विस्तीर्ण होता है। कैम्बे की खाड़ी तक यह उत्तर की ओर अग्रसर होता है। कैम्बे की खाड़ी के समीप काठियावाड़ प्रायद्वीप स्थित है। काठियावाड़ से यह तट उत्तर-पश्चिम दिशा में फैला हुआ है। काठियावाड़ प्रायद्वीप और उत्तर-पश्चिमी तट के मध्य कच्छ की खाड़ी स्थित है। भारत के पश्चिमी तट के पीछे दक्षिण का पठार है और तट तथा पठारी प्रदेश के मध्य एक सकरा मैदान उत्तर से दक्षिण तक फैला हुआ है। इस तट पर लहरें टक्कर मारती हैं और मई से अक्तूबर तक बड़े-बड़े समुद्री तूफान आते हैं।

कैम्बे और कच्छ की खाड़ियों को छोड़कर इस तट पर कोई विशेष कटी-फटी खाड़ियाँ नहीं हैं।
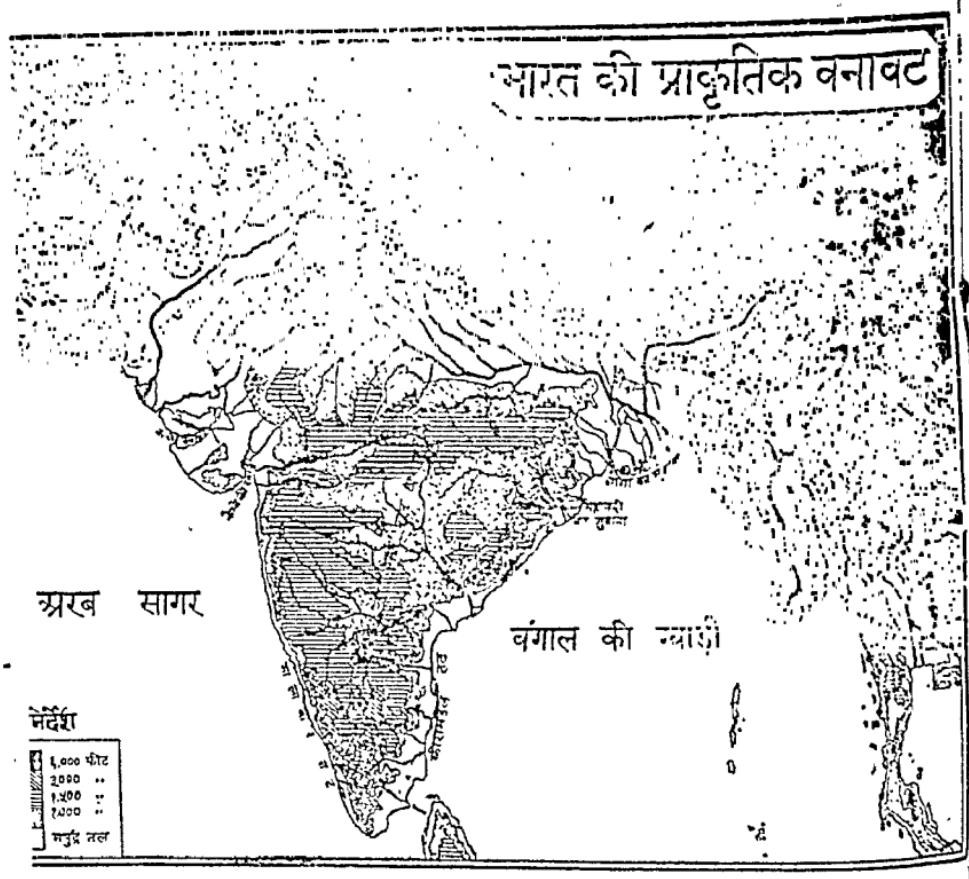
चित्र ५—भारत की प्राकृतिक बनावट

प्राकृतिक भाग—भारत जैसे विस्तृत भूखंड की प्राकृतिक बनावट भी विभिन्न है। कहीं विस्तृत मैदान हैं तो कहीं ऊँचे पहाड़ और कहीं कठोर चट्टानों के पठार। इस प्रकार भौगोलिक दृष्टिकोण से भारत को तीन प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है और प्रत्येक भाग अन्य भागों से बिलकुल भिन्न है। निम्नलिखित तीन भाग भारत की प्राकृतिक बनावट के अनुसार किये गये हैं—

१. उत्तर का पहाड़ी प्रदेश
२. सिन्धु गंगा का मैदान
३. दक्षिण का पठारी प्रायद्वीप

१. उत्तर का पहाड़ी प्रदेश—आसाम की पूर्वी सीमा से काश्मीर की पश्चिमी सीमा तक हिमालय पर्वत श्रेणी २००० मील लम्बी है। इसकी चौड़ाई १८० से २२० मील तक है और संसार के कुछ उच्चतम शिखर इसी प्रदेश में स्थित हैं। हिमालय

पर्वत प्रदेश में समानान्तर फैली हुई कई पर्वत श्रेणियाँ सम्मिलित हैं, जिनके मध्य में बहुत-सी नदी घाटी व पठार स्थित हैं। पर्वत प्रदेश का ढाल दक्षिण में मैदान की ओर है। पूर्व में तो यह तीव्र है पर पश्चिम में क्रमशः है। हिमालय पर्वत प्रदेश की औसत ऊँचाई १७,००० फीट है और लगभग ४० चोटियों की ऊँचाई २४,००० फीट से भी अधिक है। नंगा पर्वत (२६,६२० फीट), नन्दादेवी (२५,६६० फीट), धौलगिरि (२६,८२० फीट), गौरीशंकर (२९,००२ फीट), और कंचनजंगा (२८,१५० फीट) इस प्रदेश के कुछ प्रमुख शिखर हैं। हिमालय प्रदेश में १६,००० फीट से अधिक ऊँचाई पर वर्फ जमी पाई जाती है। यह समस्त प्रदेश एशिया की नवीन पर्वत माला का एक भाग है और इसमें मुड़े हुए परतदार पर्वतों की कई शृंखलाएँ हैं। इन शृंखलाओं की श्रेणियाँ वृत्ताकार हैं और दक्षिण की ओर उभरी हुई हैं। उत्तर-पूर्व में ये श्रेणियां उत्तरी पहाड़ी शृंखला से निकल कर बाहर की ओर साइकिल के पहिये की तीलियों के समान फैली हुई हैं।

हिमालय पर्वत प्रदेश में तीन समानान्तर श्रेणियाँ हैं—

(१) **हिमालय महान्**—यह सबसे ऊँचा प्रदेश है और इसकी औसत ऊँचाई लगभग २०,००० फीट है। इसको चार विभागों में विभक्त किया जा सकता है—(अ) काश्मीर में हिमालय की श्रेणियाँ (ब) कुमायूँ की हिमालय श्रेणी जो सतलज से काली तक फैली हुई है। (स) नैपाल की हिमालय श्रेणी जो काली से टीस्टा नदी तक फैली हुई है। (ड) आसाम की हिमालय श्रेणी जो टीस्टा नदी से भारत के पूर्वी सीमान्त तक फैली है। इस प्रदेश में सर्वोच्च चोटियाँ—गौरीशंकर, धौलगिरि, कंचनजंगा—स्थित हैं और प्रायः सदैव ही वर्फ से ढकी रहती हैं।

(२) **मध्यवर्ती हिमालय**—इस प्रदेश की श्रेणियों की औसत ऊँचाई १५००० फीट है।

(३) **बाहरी हिमालय**—यह श्रेणियाँ मध्यवर्ती हिमालय प्रदेश और निचले मैदान के बीच में स्थित हैं और नदियों के बहाव के कारण बहुत अधिक कटी-फटी हैं। इनकी ऊँचाई भी बहुत कम है और ये श्रेणियाँ अधिकतर चूने, मिट्टी व पत्थर की बनी हुई हैं। इन बाहिरी श्रेणियों की औसत ऊँचाई २००० फीट से लेकर ६००० फीट तक है। इन पहाड़ियों की तली में तराई के जंगल पाये जाते हैं। यहाँ बहुत प्रकार के जंगली जीव-जन्तु निवास करते हैं।

उत्तर में हिमालय पर्वत प्रदेश से भारत को अनेक लाभ हैं—भारत की सुरक्षा के लिए उत्तर में यह एक बड़ी दीवार से खड़े हुए हैं और दूसरे जलवायु के दृष्टिकोण से बड़े ही लाभप्रद हैं। दक्षिणी पश्चिमी मानसून हवाएँ इनके सहारे ऊपर उठकर व ठंडी होकर बहुत वर्षा करती हैं। फिर जाड़ों में उत्तरी ठंडी हवाएँ इसी के कारण भारत में प्रवेश नहीं कर पातीं। यदि हिमालय पूर्व से पश्चिम की ओर न फैले होते तो मध्य एशिया की वर्फीली हवाएँ भारत में घुस आतीं और इसको एक वर्फीला मैदान बना देतीं। तीसरे, सिन्धु, गंगा तथा ब्रह्मपुत्र जैसी बड़ी-बड़ी नदियाँ हिमालय प्रदेश से ही बहती हैं। हिमालय प्रदेश के वर्फीले मैदानों के कारण ही यह नदियाँ

सदैव पानी से भरी रहती हैं। मध्य व बाहरी हिमालय पर्वत श्रेणियों पर अच्छी मुलायम लकड़ी के वन पाए जाते हैं और इन वनों में पाए जाने वाले पशु भी शिकार के लिए बड़े श्रेष्ठ हैं।

यातायात की असुविधाओं के कारण इन वन सम्पत्ति का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता है। बाहरी हिमालय श्रेणियों पर आसाम से लेकर पूर्वी पंजाब तक चाय की विस्तृत खेती की जाती है और इन लम्बी पट्टी में चाय के बड़े-बड़े बगीचे देख पड़ते हैं। जहां कहीं अन्य प्रकार की खेती के लिए सुविधायें उपस्थित हैं वहां चावल, मिर्च, अदरख, फल, गेहूं, व आलू की खेती की जाती है।

हिमालय महान् की बर्फीली ऊँची चोटियों का सुहावना दृश्य देखने के लिये तथा गौरीशंकर शिखर को पार करने की चेष्टा में संलग्न अनेक विदेशी यात्री प्रति-वर्ष यहां आते हैं। उन्हीं के सहारे बड़े-बड़े पहाड़ी नगरों में होटल का धंधा बढ़ गया है। यद्यपि भारत में होटल का धंधा स्विटजरलैंड व इटली की अपेक्षा कुछ भी नहीं है फिर भी इन विदेशी यात्रियों के कारण भारत के पहाड़ी नगरों के होटल व्यवसाय को बड़ा प्रोत्साहन मिला है।

हिमालय की तराई का प्रदेश सदैव मलेरिया ग्रस्त रहता है। केवल ५००० फीट से अधिक ऊंचाई के प्रदेश इस रोग के प्रकोप से मुक्त रहते हैं। प्रायः वर्षा शुरू होने के पहिले और वर्षा खत्म होने के बाद मलेरिया के कीटाणु बहुत अधिक बढ़ जाते हैं। वर्षा काल में मच्छरों के उद्भव स्थान बह जाते हैं और घोर वर्षा के कारण हफ्तों तक मच्छर एक स्थान से दूसरे तक आ-जा नहीं सकते। इस प्रकार तराई प्रदेशों में मलेरिया से मुक्त काल बहुत छोटा होता है। इसका कारण यह है कि मलेरिया के मच्छर नदी पर अंडे देने वाले होते हैं और वर्षा काल में नदियों की बाढ़ के कारण उत्पत्ति की सुविधायें कम हो जाती हैं।

२. सतलज गंगा-ब्रह्मपुत्र का मैदान—हिमालय पर्वत श्रेणी के दक्षिण में स्थित यह मैदान उत्तरी भारत के अधिकतर भाग में फैला है और पूर्व से पश्चिम तक १५०० मील लम्बा है। इसकी चौड़ाई २०० मील है। भूगर्भवेत्ताओं का विचार है कि यह मैदान उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी यूरोप और दक्षिणी एशिया में स्थित एक गहरे जलाशय का शुष्क भाग है। विभाजन के पहिले सिन्धु भी इस मैदान से होकर बहती थी और सिन्धु, गंगा व ब्रह्मपुत्र के द्वारा लाई हुई मिट्टी से ही यह मैदान बना है और सैकड़ों क्या, हजारों फीट गहरी मिट्टी की तह पड़ी हुई हैं। इस मैदान में इन नदियों व इनकी सहायक नदियों का एक जाल-सा बिछा हुआ है और आरम्भ से ही यह भारतीय आर्य सभ्यता का केन्द्र रहा है। इस मैदान को भौगोलिक व प्राकृतिक सुविधायें प्राप्त हैं। भूमि उपजाऊ है और जलवायु अति उत्तम, इसलिये खेती का धंधा, बड़ी आसानी से हो सकता है। नदियों में सदैव जल भरे रहने से सिंचाई की भी सुविधा है और खनिज पदार्थों की उपस्थिति होने से शिल्प उद्योग की सुविधायें भी प्राप्त हैं। मैदान सपाट है और इसलिये रेल व सड़कों तथा अन्य यातायात के साधनों

को आसानी से बनाया जा सकता है। यही कारण है कि भारत का सब से उन्नत व समृद्ध प्रदेश यही मैदानी भाग है। यहाँ पर नगरों की बहुलता, जनसंख्या का घनत्व और उद्योग-धंधों की उन्नति इस समृद्धि की द्योतक अवस्थायें हैं।

ब्रह्मपुत्र-गंगा—के मैदान में वर्षा अधिक होती है और इसीलिये लोगों का मुख्य धंधा खेती है। इस मैदान में भारत की कुल जनसंख्या के ४० प्रतिशत से भी अधिक लोग निवास करते हैं। गंगा के पश्चिम का मैदान बहुत कुछ शुष्क है और इसीलिये सिंचाई की सहायता से खेती होती है। इस पश्चिमी प्रदेश को हम सतलज का मैदान कह सकते हैं। यहाँ देश की कुल जनसंख्या के केवल १० प्रतिशत लोग निवास करते हैं परन्तु यहाँ नहरों का एक जाल-सा बिछा हुआ है। सतलज के इस मैदान के दक्षिण में राजस्थान का शुष्क मरुस्थली प्रदेश है। परन्तु इस भाग को भी सिंचाई की नई योजनाओं के द्वारा समृद्ध बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

३. दक्षिणी प्रायद्वीप—दक्षिण का प्रायद्वीप एक पठार है और उष्णकटिबन्ध में स्थित है। इसके उत्तर में कर्क रेखा और दक्षिण में विषुवत् रेखा गुजरती है। यह पठार एक अति प्राचीन पठारी प्रदेश गोंडवानालैंड का अवशेष है और कड़ी रवेदार चट्टानों का बना हुआ है। इसी प्रकार के पठार अफ्रीका, अरब, दक्षिणी अमरीका और आस्ट्रेलिया में भी पाये जाते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि एक समय यह सब भाग मिले हुए थे। इन सभी प्रदेशों की बनावट भी एकसी है। इस प्रदेश की उच्च श्रेणियों के शिखर सपाट हैं, घाटियाँ गहरी व सीधी हैं, ऊंचाई में सीढ़ीदार विभिन्नता पाई जाती है और जोड़ या दरारों के स्थानों पर लावा जमा हुआ मिलता है।

दक्षिण का यह प्रायद्वीप तीन ओर पहाड़ी श्रेणियों से घिरा हुआ है। उत्तर में विंध्याचल और सतपुड़ा की श्रेणियाँ हैं जिनमें मालवा व अरावली के पठार सम्मिलित हैं। पश्चिम में पश्चिमी घाट और पूर्व में पूर्वी घाट की श्रेणियाँ फैली हुई हैं। विंध्याचल और सतपुड़ा की श्रेणियाँ तो पश्चिम से पूर्व की ओर फैली हुई हैं परन्तु पूर्वी व पश्चिमी घाट उत्तर से दक्षिण की ओर फैले हैं। पूर्वी घाट के पूर्व की ओर और पश्चिमी घाट के पश्चिम की ओर तटीय मैदान हैं। पश्चिम के तटीय मैदान को उत्तर में कोनकन और दक्षिण में मालाबार कहते हैं। पूर्वी तटीय मैदान को कोरो मंडल प्रदेश कहते हैं। पश्चिमी तटीय प्रदेश की अपेक्षा पूर्वी तटीय प्रदेश अधिक चौड़ा है।

पश्चिमी घाट—भारत के मालाबार तट के समानान्तर उत्तर से दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक १००० मील लम्बे हैं। इस श्रेणी और अरब सागर तट के बीच का मैदान ३०-४० मील चौड़ा है। समुद्र से पश्चिमी घाट श्रेणी एक ऊँची दीवार-सी दिखाई पड़ती है। इसकी औसत ऊँचाई ३५०० फीट है परन्तु इसका सब से ऊँचा शिखर दोदाबट्टा ८७०० फीट ऊंचा है। पश्चिमी तटीय मैदान मध्य के पठारी भाग से कई दर्रों के द्वारा सम्बद्ध है। पश्चिमी घाट श्रेणी में स्थित ये दर्रे पालघाट, थाल, भोरघाट और नामा हैं। सुदूर दक्षिण में नीलगिरि श्रेणी पश्चिमी व पूर्वी घाट श्रेणियों का मिलन विन्दु है और मध्य के पठारी प्रदेश को दक्षिण से घेरे हुए है।

पूर्वी घाट—उत्तर में महानदी की घाटी से दक्षिण में नीलगिरि तक दक्षिण पूर्व दिशा में ५०० मील की लम्बाई में फैले हैं। इनकी औसत ऊँचाई १५०० फीट है। पश्चिमी घाट की अपेक्षा पूर्वी घाट प्रदेश न केवल कम ऊंचे ही हैं बल्कि शृंखला-बद्ध भी नहीं हैं। समुद्रतट से अधिक दूर स्थित होने के कारण पूर्व का तटीय मैदान ५० से ८० मील तक चौड़ा है।

पश्चिमी तटीय प्रदेश में सालाना वर्षा की औसत १०० इंच है परन्तु पूर्वी प्रदेश में वर्षा केवल २० से ५० इंच तक होती है। दक्षिणी प्रायद्वीप में तापक्रम सदैव ऊंचा रहता है और औसत तापक्रम ७५° से नीचे नहीं जाता है।

इस प्रदेश का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है और इसलिए प्रायः सभी मुख्य नदियाँ बंगाल की खाड़ी में बहती हैं। महानदी, कृष्णा, पेन्नार, कावेरी और वैगाई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। नर्मदा व ताप्ती पूर्व से पश्चिम की ओर बहकर अरब सागर में गिरती हैं। इस प्रदेश की सभी नदियाँ वर्षा पूरित हैं और इसीलिये शुष्क ऋतु में सूखकर तलैया-सी रह जाती हैं। इस प्रदेश की मुख्य उपज कपास, चाय, और मसाला है। सिनकोना, नारियल और विभिन्न प्रकार की वन-सम्पत्ति भी इस भाग में उपलब्ध है।

दक्षिण प्रायद्वीप को हम ५ प्राकृतिक भागों में बांट सकते हैं:—

(१) ताप्ती से कुमारी अन्तरीप तक विस्तृत संकरा पश्चिमी तटीय प्रदेश अरब सागर की मानसूनी हवाओं के मार्ग में पड़ता है और यहाँ १००″ से अधिक वर्षा होती है। यहां की भूमि भी उपजाऊ है और चावल मसाले व फल प्रधान फसलें हैं। जनसंख्या भी बहुत घनी है। प्रतिवर्ग मील में लगभग ४०० मनुष्य निवास करते हैं।

(२) काली मिट्टी या रेगर प्रदेश की मिट्टी गहरी व लावा से बनी हुई है। इसमें पानी रुक सकता है। इसीलिये इस प्रदेश को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। यह मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ है और चूना-मिश्रित होने के कारण कपास के लिये यह अत्यन्त उपयुक्त है। ज्वार, बाजरा, तिलहन और गेहूं यहाँ की अन्य उपज हैं।

(३) उत्तरी-पूर्वी प्रदेश की भूमि कम उपजाऊ है परन्तु वर्षा ५०″ से भी अधिक होती है। तालाबों के द्वारा सिंचाई की जाती है और चावल यहाँ की मुख्य फसल है।

(४) दक्षिणी पठारी प्रदेश वर्षा से छायावित प्रदेश है और यहाँ अक्सर अकाल पड़ता रहता है। भूमि बहुत अनुपजाऊ है और केवल सिंचाई की सहायता से ही खेती संभव है। इन सब कारणों से यहाँ की जनसंख्या बहुत कम है।

(५) पूर्वी तटीय प्रदेश नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना निम्न प्रदेश है। इस प्रदेश के उत्तरी भाग में वर्षा गर्मी के मौसम में होती है और दक्षिणी भाग में वर्षा जाड़े में होती है। समुद्रतट नदियों के डेल्टा व छिछली झीलों के कारण अत्यन्त

वापस होने लगती हैं और दिसम्बर के मध्य तक यह मानसून बिलकुल ही शेप हो जाता है। इसके फलस्वरूप उत्तरी भारत में मौसम शुष्क हो जाता है। परन्तु बंगाल की खाड़ी पर से गुजरने के कारण इनमें नमी आ जाती है जिसके फलस्वरूप मद्रास राज्य के तटीय भागों व प्रायद्वीप के पूर्वार्द्ध में वर्षा होती है।

उत्तरी-पूर्वी मानसून—ये मानसूनी हवाएँ जनवरी में प्रारम्भ होकर मार्च तक चलती हैं। इस काल में मध्य एशिया के भारी दवाव वाले भागों से शुष्क हवाएं फारस और उत्तरी भारत की तरफ वहने लगती हैं। इन हवाओं के कारण उत्तरी भारत और विशेषकर पंजाब के मैदान में हल्की वर्षा होती है। रवी की फसलों के लिए इस हल्की वर्षा का बड़ा महत्व है। इस मानसून की दूसरी शाखा में ठंडी व शुष्क हवाएँ हिमालय के पूर्वी भाग को पार करके आगे बढ़ती हैं। बंगाल की खाड़ी पर से गुजरने के कारण इन हवाओं में नमी आ जाती है और फलतः मद्रास के तटीय प्रदेशों व लंका में वर्षा होती है। यही कारण है कि इन प्रदेशों में जाड़े की ऋतु में वर्षा होती है।

भारत की औसत वार्षिक वर्षा ४२ इंच है परन्तु विभिन्न स्थानों पर वर्षा की मात्रा में बड़ी विभिन्नता पाई जाती है। यही नहीं वल्कि विभिन्न सालों में वर्षा की मात्रा कम या ज्यादा हो जाती है। किसी साल तो वर्षा का औसत ६० से ७० इंच तक हो जाता है और किसी साल मानसून हवाओं के सफल रहने के कारण ३० से ३२ इंच तक ही वार्षिक औसत रह जाता है। इस विभिन्नता व अनिश्चितता का फसलों की उपज पर बड़ा असर पड़ता है। भारत की वर्षा की दूसरी विशेषता यह है कि यहाँ की भूप्रकृति का वर्षा की मात्रा पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। भारत के पहाड़-पहाड़ियों को यदि हटा लिया जाए तो भारत की वर्षा इतनी कम हो जाएगी कि देश की आबादी के निर्वाह व भोजन की समस्या अत्यन्त प्रचण्ड रूप धारण कर लेगी।

भारत की वर्षा का विशेष आर्थिक महत्व है। भारत की कृषि यहाँ की वर्षा पर ही निर्भर रहती है। जब वर्षा अच्छी होती है तब फसल भी खूब होती। परन्तु इसके विपरीत जिस साल या जिस भाग में वर्षा कम होती है, उस दशा में अकाल पड़ जाता है। सच तो यह है कि पानी से लदी हवाओं के रुख में जरा-सा परिवर्तन हो जाने से विस्तृत वर्षा के प्रदेश भी मरुस्थल के समान हो जाते हैं। जलवृष्टि के भूप्रकृति तथा हवाओं के रुख पर निर्भर होने के कारण भारत की वर्षा का औसत सदा बदला करता है।

भारत की वर्षा का वितरण अनिश्चित व अनियमित है। कहीं तो अत्यधिक वर्षा होती है और कहीं १ या २ इंच से अधिक वर्षा भी नहीं हो पाती। इसके अलावा बहुत से भागों में वर्षा का होना बिल्कुल ही अनिश्चित रहता है। एक और विशेषता यह है कि केवल मात्रा ही अनिश्चित नहीं होती बल्कि वर्षा का समय भी एक नहीं रहता। कभी एक महीने में वर्षा होती है तो कभी उसके एक-दो महीने पहले या बाद। इसी सब अव्यवस्था के कारण भारत में अक्सर अकाल पड़ते रहते हैं—कभी किसी भाग में तो कभी किसी में। कम वर्षा होने से तो अकाल पड़ जाता है

और भारी वर्षा से बाढ़ आ जाती है या अन्य प्रकार से फसल को नुकसान पहुँचता है। जब कभी पानी नियत समय से देर में बरसता है तो फसल की उपज व किस्म में कमी आ जाती है। इसीलिए भारतीय कृषि वर्षा के साथ जुआ मात्र है और भारतीय किसान का सबसे अधिक पूज्य देव या देवी वर्षा है।
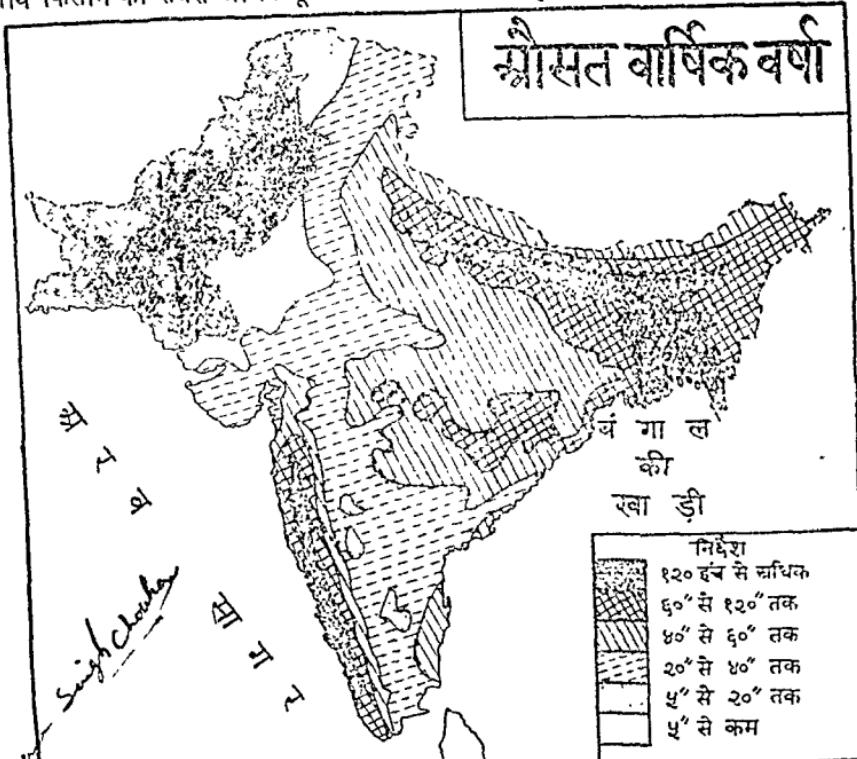
चित्र ६—साधारण वर्षा विभिन्न है—चेरापूंजी में ४६० इंच वर्षा होती है जबकि राजस्थान में केवल ५ इंच। परन्तु समस्त देश में औसत वर्षा ४२ इंच होती है।

वर्षा की मात्रा व वितरण के आधार पर भारत को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

१. निश्चित वर्षा के प्रदेश और २. अनिश्चित वर्षा के प्रदेश। बंगाल, आसाम, पश्चिमी मालाबार तट, पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल और नर्मदा की घाटी का ऊपरी भाग निश्चित वर्षा के प्रदेश हैं। इनके विपरीत उत्तर प्रदेश, पश्चिमी व उत्तरी राजस्थान, मध्य राजस्थान का पठार, बम्बई राज्य के कुछ भाग, सम्पूर्ण मद्रास राज्य, दक्षिणी-पश्चिमी हैदराबाद और मैसूर तथा बिहार व उड़ीसा के कुछ जिलों में वर्षा की मात्रा व काल दोनों ही अनिश्चित हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत के इतने विस्तृत प्रदेश में वर्षा के अनिश्चित व अनियमित होने के कारण ही देश में अक्सर अकाल पड़ा करते हैं।

अकाल की समस्या—भारत में वर्षा की कमी, अनिश्चितता और आधिक्य तीनों ही दशाओं में अकाल पड़ते हैं। जब वर्षा कम होती है तब देश में सूखा पड़
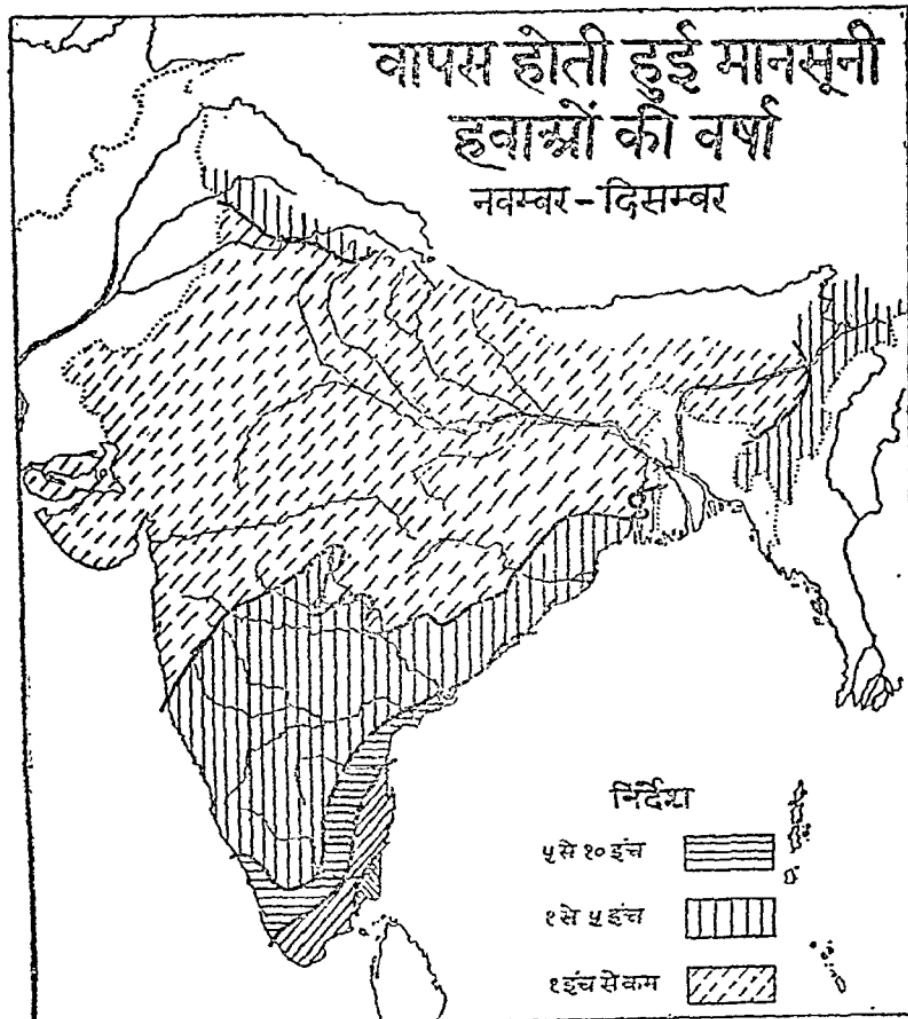
चित्र १०—भारतीय प्रायद्वीप के दक्षिणी-पूर्वी भागों में नवम्बर व दिसम्बर के महीनों में काफी वर्षा होती है।

जाता है, जब पानी देर से या समय के पूर्व बरसता है अथवा वर्षा की मात्रा कम हो जाती है तब फसल की प्रति एकड़ ऊपज कम हो जाती है, और जब या जहाँ पानी नियत मात्रा से अधिक बरसता है तब नदियों की बाढ़ या अन्य प्रकार से या तो फसल बह जाती या खड़ी हुई फसल सड़ जाती है। इस प्रकार इन तीनों ही दशाओं में मनुष्य के सामने अनेक समस्याएँ उपस्थित हो जाती हैं।

परन्तु इन अकालदर्शी समस्याओं को रोका जा सकता है और इस समय सरकार की ओर से अनेक प्रयत्न किये जा रहे हैं। नई रेलवे लाइनों को बिछाकर, सिंचाई की सुविधाओं में वृद्धि करने तथा अनुपजाऊ प्रदेशों को खेती योग्य बनाकर इन समस्याओं को हल किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण से हमें संयुक्त राज्य अमरीका,
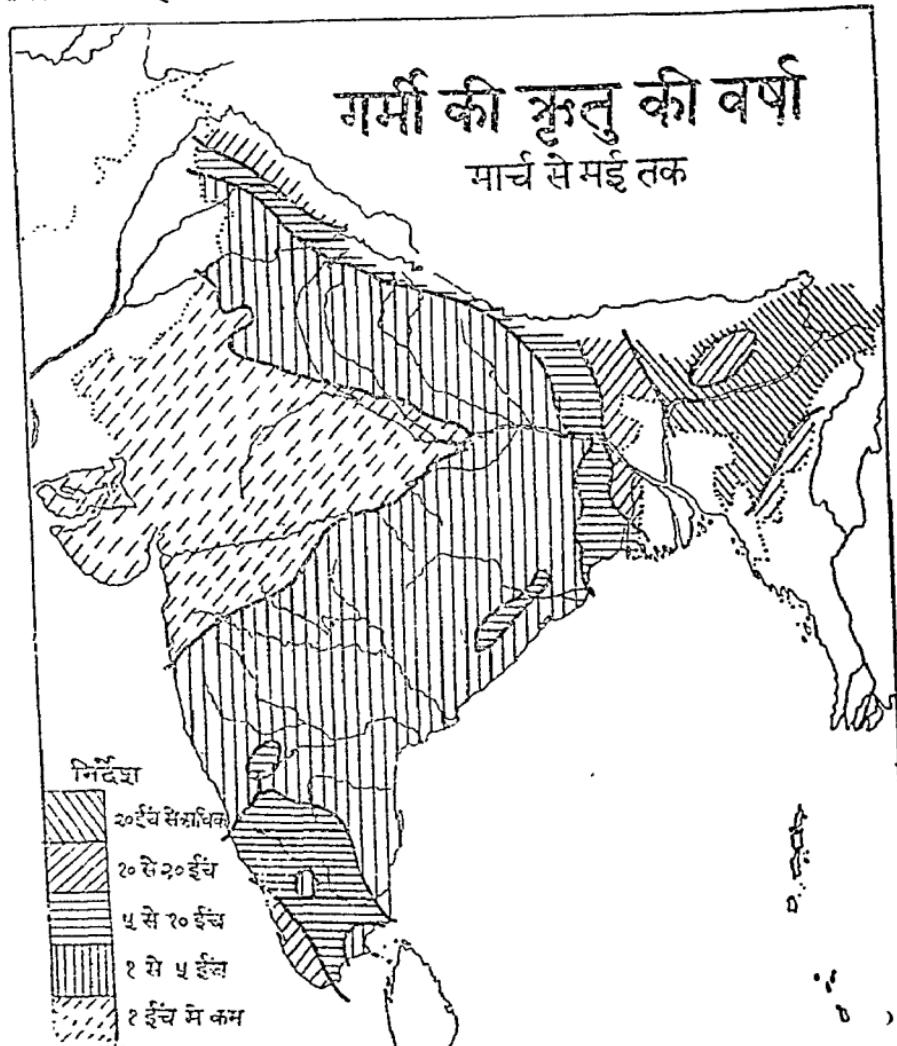
चित्र ११—मार्च से मई तक के काल में [आसाम, पश्चिमी बंगाल के पूर्वी भाग और ट्रावनकोर-कोचीन के तटीय प्रदेश में घोर वर्षा होती है।

रूस और कनाडा की कृषि प्रणालियों से सबक लेना चाहिए। वर्षा के वितरण की दशाओं के पूर्ण अन्वेषण के बाद वैज्ञानिक रीति पर फसलों का हेर-फेर या विभिन्न प्रदेशों में उचित फसलों के निर्धारण द्वारा इस शत्रु पर विजय पाई जा सकती है। हमारी कृषि-अनुसंधानशालाओं में विभिन्न प्रदेशों की जलवायु के अनुसार उपयुक्त

बीजों की खोज की जा सकती है और फिर इस ज्ञान का उपयोग खेती को व्यवस्थित करने में हो सकता है। इसके अलावा प्राकृतिक असुविधाओं के अनुसार विभिन्न प्रदेशों की मालगुजारी व लगान में कमी करके किसानों को प्रोत्साहन देना भी आवश्यक है। इस प्रकार उपाय करने से अकाल की भीषणता को कम किया जा सकता है। उस दशा में वर्षा न होने पर चाहे सूखा भले ही पड़ जाए, फसल की उपज कम हो जाये पर अकाल को बचाया जा सकता है।

मिट्टी और खाद

भारत का मुख्य धंधा खेती है और खेती की सफलता भूमि के उपजाऊपन पर निर्भर रहती है। मिट्टी का उपजाऊपन भिन्न-भिन्न प्रदेशों की भौगोलिक दशाओं के अनुसार विभिन्न होता है। कुछ भूमियों में खेती का धंधा आसानी से हो सकता है और कुछ भूमियों में उपजाऊपन का धीरे-धीरे ह्रास होता जाता है। वास्तव में खेती की रीति व प्रणाली से भूमि के उपजाऊपन का बड़ा निकट संबंध है। खूब उपजाऊ भूमि भी निरंतर खेती के कारण कुछ वर्षों के बाद अनुपजाऊ हो जाती है और इसके विपरीत बंजर भूखण्डों को विविध रीतियों व उपायों के द्वारा खेतीयोग्य व उपजाऊ बनाया जा सकता है।

भूमि की उपज शक्ति बहुत कुछ अंशों में उसमें पाये जाने वाले या उपस्थित नमकों, रासायनिक पदार्थों तथा वनस्पति के सड़े-गले अंश की मात्रा पर निर्भर रहती है। अतः यह सम्यक् रूप से कहा जा सकता है कि प्रदेश विशेष की मिट्टी वहाँ की भूगर्भ रचना, भूप्रकृति और वर्षा के अनुसार ही उपजाऊ या बंजर होती है। इसलिये कहीं की भूमि की विशेषता जानने के लिए यह आवश्यक है कि हम वहाँ की चट्टानों का उद्भव व प्रकृति समझें और वर्षा की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करें।

अब तक भारत में इस दृष्टिकोण से कोई भी अन्वेषण या भूमि परीक्षा नहीं हुई है। इस खोज के बिना भारत जैसे विस्तृत भूखण्ड पर पायी जाने वाली मिट्टी की विविधता और विशेषता का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना असंभव-सा है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में विविध दृष्टिकोण से मिट्टी (soil) का अध्ययन किया गया है। भारतीय भूगर्भ निरीक्षण विभाग ने भूगर्भ तत्वों के अनुसार भारत में पाई जाने वाली मिट्टी का विभाजन किया है। पंजाब में सिंचाई के दृष्टिकोण से भूमि का अध्ययन किया गया है। भूमि व्यवस्था सम्बन्धी पुराने कागजों में भी मिट्टी व भूमि की उपज शक्ति का हवाला मिलता है परन्तु वह अपूर्ण, अव्यवस्थित व अवैज्ञानिक है। फलतः उनके आधार पर भूमि का सफल उपभोग नहीं किया जा सकता।

भारतीय कृषि अनुसंधानशाला (Indian Agricultural Research Institute) के राय, चौधरी और मुकर्जी ने भारत में पायी जाने वाली मिट्टी को निम्नलिखित १६ प्रकार की बतलाया है—(१) नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी, (२) नदी द्वारा लाई हुई जिसमें खनिज नमक भी मिलते रहते हैं, (३) तटीय प्रदेशों की बलुही मिट्टी जो नदियों द्वारा लाई गई है, (४) नदी के तलहटी की पुरानी मिट्टी,

(५) डेल्टा प्रदेश की नमकीन मिट्टी, (६) चूना मिली हुई मिट्टी, (७) गहरी काली मिट्टी, (८) माध्यमिक काली मिट्टी, (९) छिछली (कम गहरी) चिकनी दोमट, (१०) लाल व काली मिट्टी का मिश्रण, (११) लाल दोमट, (१२) लाल बलुही मिट्टी, (१३) मिश्रित लाल दोमट और लाल बलुही मिट्टी, (१४) कंकड़ीली मिट्टी, (१५) तराई की मिट्टी, (१६) पहाड़ों की मिट्टी, (१७) दलदली भूमि, (१८) पीट भूमि, (१९) मरुस्थली भूमि।

इस विभाजन में एक ही प्रकार की मिट्टी को कई भागों में बाँट दिया गया है। फलतः इनके आधार पर प्रादेशिक वितरण निर्धारित करना प्रायः सम्भव नहीं होता। इसलिए भूमि के उपभोग को ध्यान में रखते हुये हम भारतीय मिट्टी को निम्नलिखित आठ प्रकारों में विभाजित कर सकते हैं :—

१. **नदी द्वारा लाई हुई मिट्टी**—इसमें डेल्टा प्रदेशों, तटीय भागों तथा भीतरी तलहटियों में पाई जाने वाली मिट्टी सम्मिलित है।

२. **काली मिट्टी**—इसमें मध्य प्रदेश की रेगर व काली मिट्टी तथा कम गहरी भूरी मिट्टी के प्रदेश भी शामिल हैं।

३. **लाल मिट्टी**—इसके अन्तर्गत लाल दोमट तथा पीली मिट्टी के प्रदेश भी आ जाते हैं।

४. **लैटराईट मिट्टी**।

५. **पहाड़ी मिट्टी**।

६. **तराई भूमि**—यह प्रायः दलदली होती है।

७. **मरुस्थल भूमियों की मिट्टी**—भारत में इसका विस्तार ८४००० वर्गमील है।

८. **पीट या अन्य वनस्पति अंशों से ओतप्रोत भूमि**—भारत में इसका विस्तार ३००० वर्गमील है।

इन विविध प्रकारों में कुछ तो एक ही प्रकार की मिट्टी के भाग हैं और कुछ कई प्रकार की मिट्टी से मिलकर बने विभाग हैं। खेती के दृष्टिकोण से **नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी** सब से महत्वपूर्ण होती है और भारत में दूर-दूर तक विस्तृत है। गुजरात, राजस्थान, पूर्वी पंजाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, मद्रास के गोदावरी, किसना और तंजोर जिले तथा आसाम की भूमि नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से ही बनी है। दक्षिणी प्रायद्वीप के पूर्वी व पश्चिमी तटीय प्रदेशों में भी नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी पाई जाती है और भारत के ये ही प्रदेश कृषि के लिए सबसे आगे बढ़े हुये हैं। अतः नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी की खेती के लिए उपयोगिता स्पष्ट है। उत्तरी भारत में इसका प्रादेशिक वितरण इस प्रकार है—

गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश का अधिकतर भाग।

पूर्वी पंजाब में अमृतसर, फीरोजपुर, हिसार, गुड़गांव, रोहतक, करनाल, अम्बाला, लुधियाना और जलन्धर के जिले।

पश्चिमी बंगाल में हुगली, नादिया, मुर्शिदाबाद, माल्दा, जेस्सोर का सम्पूर्ण भाग ; २४ परगना, बीरभूमि, जलपाईगुरी के अधिकतर भाग और मिदनापुर, बांकुड़ा व विन्दवान के कुछ भाग। विहार में पटना, उत्तरी सारन, चम्पारन,
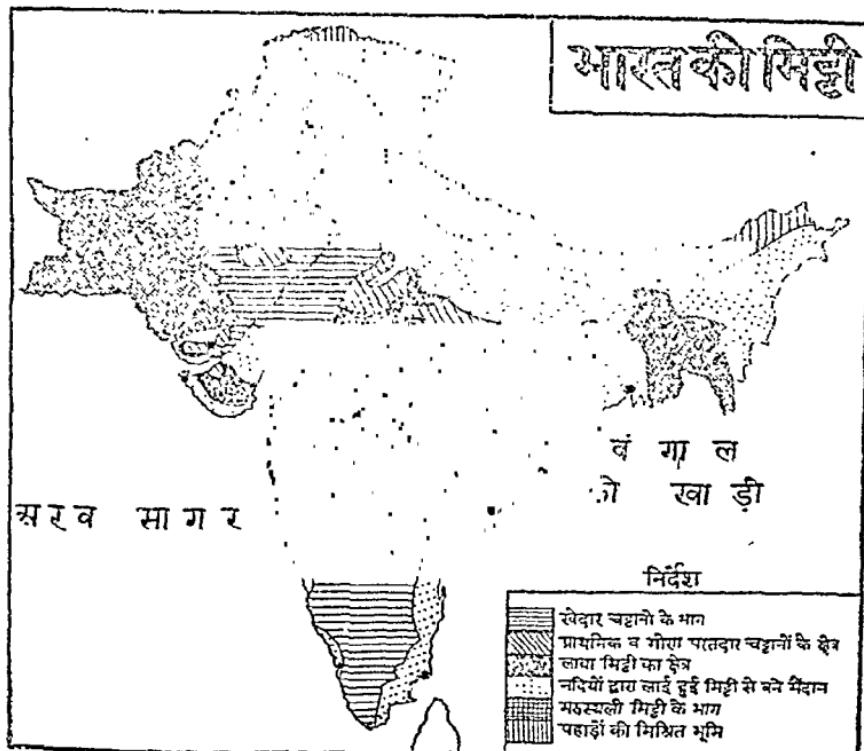
चित्र १२—भारत की मिट्टी का खेती व जनसंख्या के घनत्व के दृष्टिकोण से बड़ा महत्व है।

मुजफ्फरपुर, दरभंगा, पूर्निया जिले तथा धनबाद, मुंघेर व गया के कुछ भाग। आसाम में लखीमपुर, दारंग, कामरूप, गोआरमास के जिले तथा गारो पहाड़ी व सिवसागर के कुछ भाग।

१. नदी द्वारा लाई हुई मिट्टी—नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी में अनेक रासायनिक विशेषताएं पाई जाती हैं। विविध खनिज नमकों की उपस्थिति के कारण इनकी उपज-शक्ति बड़ी तीव्र होती है। नदियों द्वारा वहा कर लाई हुई मिट्टी में फासफोरिक क्षार, नाइट्रोजन और वनस्पति के सड़े-गले अंश की कमी तो जरूर होती है परन्तु चूना व पोटाश का अंश काफी रहता है। प्रतिवर्ष नदियों की बाढ़ के बाद मिट्टी की नई तह जमी रह जाती है और इस प्रकार मिट्टी में सतत हेरफेर व उलट-पलट से उपज-शक्ति में कमी नहीं हो पाती।

यह मिट्टी हल्के भूरे रंग की होती है और इसमें वे ही विशेषताएं पाई जाती

हैं जो रूस, उत्तरी अमरीका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका के स्टेप प्रदेशों की मिट्टी में वर्तमान रहती है। गंगा की तलहटी के ऊपरी भाग की मिट्टी शुष्क, वलुही और मोटे छेद वाली होती है। अतः इस प्रदेश में वे फसलें उगाई जाती हैं जिनकी जड़ों को अधिक नमी की आवश्यकता नहीं होती। आजकल सिंचाई की विशेष सुविधाओं के कारण इस प्रदेश में खेती ने विशेष उन्नति कर ली है। भूमि के सपाट होने से नहरें बनाना सरल व सस्ता रहता है। इसीलिए इस भाग में नहरों का एक जाल-सा विछा हुआ है।

वंगाल या गंगा की निचली तलहटी में मिट्टी अधिक नम, चिकनी व महीन है। वहुधा यह चिकनी मिट्टी नमी के कारण गहरे भूरे रंग की दिखलाई पड़ती है। यहाँ पर चावल, जूट, गन्ना और तम्बाकू की विस्तृत खेती होती है। इसी प्रकार दक्षिण के पठार के तटीय प्रदेशों की मिट्टी भी चिकनी, महीन व नमी के कारण भूरे रंग की होती है।

२. काली मिट्टी—वम्वई राज्य के उत्तरी भाग, वरार, मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग और हैदराबाद के पश्चिमी प्रदेशों में पाई जाती है। इन विभिन्न प्रदेशों में पाई जाने वाली काली मिट्टी का रूप-रंग और विशेपताएं अलग-अलग होती हैं। उनकी उपज-शक्ति भी विभिन्न है। काली रेगर मिट्टी में कैलशियम और मैगनीशियम नमकों का काफी अंश विद्यमान रहता है परन्तु नाइट्रोजन, वनस्पति के सड़े-गले अंश और फासफोरस की साधारणतया कमी रहती है। दक्खिन की पहाड़ियों व पठारों के ढालों पर यह मिट्टी कम उपजाऊ, हल्की, व वड़े छेदों वाली है। इसीलिए इन प्रदेशों में केवल ज्वार, वाजरा या दालें उगाई जाती हैं।

निम्न भूमि पर मिट्टी गहरी है और रंग भी अधिक काला है। यहाँ पर गेहूँ, ज्वार, वाजरा और कपास उगाई जाती है। इस प्रदेश की सव से उत्तम व महत्त्वपूर्ण मिट्टी रेगर या कपास की काली मिट्टी है जो ताप्ती, गोदावरी, नर्मदा और कृष्णा की घाटियों तथा काठियावाड़, मध्य प्रदेश और मध्य भारत के भागों में फैली हुई पायी जाती है। यह मिट्टी ज्वालामुखी विस्फोट से निकले हुए लावा से वनी है। इसका रंग गहरा काला और इसके कणों की वनावट घनी है। फलतः इसमें वर्षा के पानी को रोक रखने की शक्ति होती है और इसके अन्दर चूना आदि विविध खनिज नमक पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इन्हीं विशेपताओं के कारण इसका उपजाऊपन वहुत अधिक है और इस पर कपास, ज्वार, गेहूँ, तिलहन और चने की विविध फसलें उगाई जाती हैं।

३. लाल मिट्टी—मद्रास, मैसूर, दक्षिणी पूर्वी वम्वई, हैदरावाद और मध्य-प्रदेश के पूर्वी भाग तथा उड़ीसा और छोटा नागपुर प्रदेशों में लाल मिट्टी पाई जाती है। इन प्रदेशों के अतिरिक्त संथाल परगना और वीरभूमि के जिलों में; उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झांसी और हमीरपुर जिलों में तथा मध्य भारत और राजस्थान के पूर्वी भागों में यह मिट्टी वर्तमान है। इसका रंग लाल होता है पर रंग के अति-रिक्त अन्य विशेपताओं में वड़ा हेरफेर दिखलाई पड़ता है। यह मिट्टी सव स्थान पर

न तो एक समान गहरी है और न बराबर उपजाऊ। शुष्क उच्च-भूमियों पर यह मिट्टी हल्के लाल रंग की होती है। इसकी उपज-शक्ति बहुत कम होती है और इसमें बालू के समान मोटे कण पाये जाते हैं। अतः केवल बाजरा ही उगाया जा सकता है। निम्न भूमियों की लाल मिट्टी गहरे लाल रंग की होती है और अधिक गहरी व उपजाऊ होती है। इसे हम दोमट भी कह सकते हैं। अतः इस प्रकार की निचली भूमियों पर अनेक प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं।

लाल मिट्टी में यद्यपि पोटाश और चूना बहुत काफी मात्रा में पाया जाता है परन्तु नाइट्रोजन, फासफोरस और वनस्पति के सड़े-गले अंश की साधारणतया कमी रहती है। दूसरी बात यह है कि यद्यपि इस प्रदेश से महानदी, गोदावरी, कावेरी और कृष्णा जैसी नदियाँ प्रवाहित होती हैं परन्तु डेल्टा भागों को छोड़कर अन्य सभी जगह भूप्रकृति के ऊबड़-खाबड़ होने से न तो नहरें ही निकाली जा सकती हैं और न कुएं ही बनाये जा सकते हैं। परन्तु इन प्रदेशों में तालाब बनाकर वर्षा का जल बड़ी अच्छी तरह एकत्रित किया जा सकता है। इसीलिए मद्रास, मैसूर और हैदराबाद में तालाबों द्वारा सिंचाई करके खेती की जाती है।

४. **लैटराइट मिट्टी**—इसी नाम की चट्टानों के कटने व टूटने-फूटने से जो चूर्ण बनता है उसे ही लैटराइट मिट्टी कहते हैं। यह मिट्टी मध्य भारत, आसाम और पूर्वी व पश्चिमी घाटों पर पाई जाती है। इस मिट्टी में तेजाब की अधिकता होने से रासायनिक तीक्ष्णता पाई जाती है और इसीलिए इन प्रदेशों में खेती की मुख्य समस्या इस तीक्ष्णता को कम करना है। चाय के पौधे के लिए यह मिट्टी बहुत उपयुक्त होती है और इसीलिए इस मिट्टी के प्रदेशों में चाय के बागीचे पाये जाते हैं। लैटराइट मिट्टी उच्च भूमियों पर कम उपजाऊ होती है और उसमें नमी भी नहीं ठहर सकती। इसके विपरीत निम्न भूमियों पर इस मिट्टी के साथ चिकनी व दोमट मिट्टी भी मिली पाई जाती है और इसलिए उनमें नमी ठहर जाती है।

५. **पहाड़ी मिट्टी**—उत्तरी पहाड़ी प्रदेशों पर यह कंकड़ीली मिट्टी पाई जाती है और वनभूमियों के लिए उपयुक्त है। दार्जिलिंग, अल्मोड़ा और गढ़वाल जिलों में वन से ढकी हुई पहाड़ी मिट्टी पाई जाती है परन्तु इसको वैज्ञानिक रीतियों से खेती के उपयुक्त बनाया जा सकता है।

६. **तराई की मिट्टी**—अधिकतर दलदली होती है और लम्बी घास व झाड़ियों से घिरी रहती है। इसका कोई विशेष महत्व नहीं है। दूसरे इन प्रदेशों में मलेरिया रोग के कारण भी अधिक काम नहीं हो पाया है। उत्तर प्रदेश और बिहार में मैदान और उत्तर के पहाड़ों के बीच एक पतली-सी पट्टी में तराई प्रदेश पूर्व से पश्चिम तक फैले हुए हैं। नैनीताल, पीलीभीत, खेरी, गोंडा, बस्ती और गोरखपुर के जिले तराई में ही बसे हैं। अब राष्ट्रीय सरकार के प्रयत्नों के फलस्वरूप इन भागों को साफ करके, रोगमुक्त करके तथा इनकी उपजाऊ मिट्टी की दलदल दूर करके खेती के योग्य बनाया जा रहा है।

७. **शुष्क मरुस्थल की बंजर भूमि**—राजस्थान में बालू की मिट्टी पाई

जाती है। बहुधा इसमें खनिज नमक पाये जाते हैं, परन्तु वे शीघ्र पानी में घुल जाते हैं; इसमें कण मोटे तथा नमी की बहुत कमी रहती है। वनस्पति का सड़ा-गला अंश भी बहुत कम रहता है।

८. पीट भूमि—ट्रावनकोर-कोचीन के कुछ भागों में पीट मिट्टी पाई जाती है, वनस्पति व जीव-जन्तुओं के अपूर्ण सड़े-गले अंश से यह मिट्टी बनती है परन्तु खेती के सर्वथा अयोग्य होती है। इसमें केवल दलदल या गहन वन पाये जाते हैं।

निम्न भूमि की कंकड़ीली पहाड़ी मिट्टी शिमला, कांगड़ा और गुरदासपुर जिलों में पाई जाती है और खेती के दृष्टिकोण से कुछ अधिक महत्व नहीं रखती।

मिट्टी की समस्याएं—भारत कृषि-प्रधान देश है। इसलिये भूमि के उपजाऊ-पन को ठीक रखने के लिये यह आवश्यक है कि मिट्टी की ओर पूर्ण ध्यान दिया जाय। कृषि की समृद्धि के लिये भूमि की उपजशक्ति को कायम रखना बड़ा जरूरी है।

कृषि के योग्य ऊपरी भूमि की गहराई ६ इंच से १२ इंच तक होती है। अतः भूमि के उपयोग में काफी सावधानी की आवश्यकता रहती है। उत्तरी भारत में अत्यधिक चराई और दक्षिणी भारत में खेती की रूढ़िग्रस्त रीति के कारण काफी उपजाऊ भूमि खेती के लिए बेकार हो गई है।

इस समय भारत के सम्मुख मिट्टी संबंधी दो विकट समस्याएं हैं—कालांतर के सतत कृषि प्रयत्नों के फलस्वरूप विविध प्रदेशों की भूमि में खनिज नमकों की कमी हो गई है। फलतः उनकी उपजशक्ति का ह्रास हो गया है। इस समस्या का हल खाद के उचित उपयोग द्वारा हो सकता है। खाद देने के कई तरीके होते हैं। भारत में इस समय खली, गोबर व कूड़ा-कर्कट और मल-मूत्र का खाद के रूप में प्रयोग होता है। हरी खाद प्रणाली से तो भारतीय किसान अनभिज्ञ-सा है। हाल में ही वैज्ञानिक रीतियों से रासायनिक खाद देने की योजना पर काम शुरू हुआ है। सिन्दरी में खाद का कारखाना भारतीय कृषि के लिये वरदानस्वरूप है। ऐसा अनुमान है कि निकट भविष्य में भारतीय किसान रासायनिक खादों से परिचित हो जायेगा और उनके प्रयोग द्वारा भूमि की ह्रास होती हुई उपज-शक्ति पर काबू पा लेगा।

भूमि संबंधी दूसरी समस्या भूमि कटाव (soil erosion) की है। भारत के बुन्देलखंड, मध्य भारत, बिहार, बंबई, मद्रास और पूर्वी पंजाब प्रभृति प्रदेशों में यह समस्या बड़ी पुरानी है और इसके कारण भारत की कृषि उपयुक्त भूमि को बहुत क्षति पहुंची है।

भूमि कटाव की विविध शक्तियां हवा, जल और लहरें हैं परन्तु इन तीनों में जल का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। बहता हुआ जल तीन प्रकार से भूमि को काटता है—सतह बहाव (sheet erosion), नाली कटाव (rill erosion) और कन्दरा कटाव (gully erosion)। ढालू भूखंडों पर वर्षा के जल के कारण ऊपर के पपड़े पर स्थित मिट्टी की तह बह जाती है और इस प्रकार ऊपरी आवरण के हट जाने से उन प्रदेशों की उपज-शक्ति बहुत क्षीण हो जाती है। आसाम, उत्तरी बिहार और

उत्तर प्रदेश के कमायूं जिले में पहाड़ के ढालों पर इस तरह का कटाव बराबर होता रहता है। फलतः प्रतिवर्ष वर्षा-काल के बाद इन प्रदेशो के उपजाऊपन में कमी हो जाती है। परन्तु इस प्रकार के सतह-बहाव से होने वाली हानि इतनी क्रमशः होती है कि कुछ समय तक तो इसका अनुमान ही नहीं हो पाता। यकायक ऐसा पता चलता है कि उपजाऊ मिट्टी बिल्कुल गायब हो गई है और नीचे की कड़ी चट्टानों का आवरण ऊपर निकल आया है पर उस समय कोई चारा नहीं रह जाता।

नाली कटाव बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य भारत में बहुत दृष्टिगोचर होता है। वर्षा के कारण वनस्पति-हीन भूमि में छोटी-छोटी नालियाँ व गड्ढे बन जाते हैं। अक्सर यही नालियाँ पानी के बहाव व प्रहार से और गहरी होती जाती हैं और कालांतर में बड़ी कन्दरा का रूप धारण कर लेती हैं। यह कन्दरा कटाव सबसे अधिक हानिकर होता है और इस प्रकार की कटी-फटी भूमि कृषि उद्योग के लिये हमेशा के लिये बेकार हो जाती है।

पेप्सू, गुड़गाँव, करनाल, हिसार, राजस्थान और मध्य भारत में हवा के प्रचंड झोंकों के कारण भूमि के ऊपर की मिट्टी स्थानांतरित होती रहती है। अप्रैल से जुलाई तक हवा के झोंकों के साथ पश्चिमी राजस्थान की बालू उड़कर आती रहती है और उपजाऊ मिट्टी के ऊपर बहुधा बालू की एक मोटी तह-सी जम जाती है। हवा द्वारा भूमि का कटाव बहुत तीव्र होता है और बहुधा विस्तृत भूखंड थोड़े से समय के भीतर खेती के दृष्टिकोण से बेकार हो जाते हैं। इस प्रकार की हानि को रोकने का सिर्फ एक उपाय है कि नये वृक्षों को लगाकर भूमि के कणों को बाँध दिया जाय।

कुछ प्रकार की मिट्टी पर भूमि-कटाव कम होता है। साधारणतया भूमि कटाव की प्रखरता जल के वेग, भूमि के ढाल और मिट्टी के कणों की बनावट तथा वनस्पति की अनुपस्थिति पर निर्भर रहती है। मोटे कणों वाली मिट्टी में भूमि कटाव सबसे कम होता है क्योंकि वर्षा का पानी शीघ्र ही सूख जाता है। इसके विपरीत महीन चिकनी मिट्टी के प्रदेशों में भूमि कटाव सबसे अधिक तीक्ष्ण रहता है।

स्वतन्त्रता के बाद से भारत की राष्ट्रीय सरकार ने भूमि कटाव की समस्या की ओर ध्यान देना शुरू किया है और इसको रोकने के लिये अनेक योजनाएँ तैयार की हैं। वनमहोत्सव तथा बहु-धंधा नदी-घाटी योजनाओं का ध्येय भूमि कटाव को रोकना भी है। इस समय देश में अनेक बांध बनाये जा रहे हैं जिनके पूरा होने पर नदी की बाढ़ों व वर्षा के जल से होने वाली भूमि हानि कम हो जायेगी। उत्तरी भारत के बहुत से बंजर व ऊसर प्रदेशों को नई वैज्ञानिक रीतियों द्वारा खेती योग्य बना लिया गया है और अनेक क्षेत्रों में काम पूरा होने पर भारत में कृषि-योग्य भूमि बहुत कुछ बढ़ जायेगी।

संक्षेप में भूमि सम्बन्धी समस्याओं को निम्नलिखित ४ प्रकार का कहा जा सकता है (१) भूमि का ऊसर पड़ जाना, (२) हल द्वारा भूमि की मिट्टी का उड़ा

ले जाया जाना, (३) सतह बहाव, (४) भूमि का पानी से संतृप्त हो जाना, (५) सदा उगने वाली घास-फूस से खेती के लिए भूमि का खाली न मिलना, (६) वर्षा के द्वारा भूमि का कट-फट जाना। इस आधार पर खेती के दृष्टिकोण से बेकार पड़ी हुई भूमि को निम्नलिखित तीन वर्गों में बांटा जा सकता है—

(१) ऊसर भूमि, (२) भूमि कटाव द्वारा कटी-फटी भूमि, (३) कांस, पतारा, झलेरी, सींक, मूंज, नरकंडा आदि से घिरी हुई तराई की भूमि।

ऊसर भूमि को तो ठीक करने के लिए निम्नलिखित तरीकों को प्रयोग में लाया जा रहा है—

(१) जल प्रवाह को ठीक करके और भूगर्भवर्त्ती जल को कम करके,

(२) जहां जलरेखा निम्न है वहां वर्षा या नदी के जल को बांध बना कर रोक दिया जाता है।

(३) जहां जलरेखा ऊँची है वहां नालियां काट कर जल निकाल दिया जाता है।

(४) हर ३-४ साल में भूमि पर हरसौंठ (Gypsum) फैला देते हैं जिससे भूमि में सिंचाई के पानी से छोड़े हुए क्षार का अंश कम हो जाय।

हवा के द्वारा भूमि कटाव रोकने के लिए भूमि में कम्पोस्ट व हरी खाद दी जाती है। इसके अलावा भूमि के आसपास छायादार पेड़ लगा दिये जाते हैं और स्वयं भूमि पर कोई न कोई फसल बोयी जाती है। इससे बचाव के लिए गर्मी के मौसम में विशेष ध्यान रखना पड़ता है। सिंचाई की योजनाओं के पूरा हो जाने पर भी हवा द्वारा भूमि कटाव को रोका जा सकेगा।

सतह बहाव और नाली कटाव को रोकने के लिए निम्नलिखित दो बातों का विशेष ध्यान रखना पड़ेगा। प्रथम तो यह कि भूमि खाली न पड़ी रह जाये और दूसरे यह कि कगारों व बांध व मेंड़ बना कर पानी के बहाव की तेजी को कम कर दिया जाय।

जंगली घास-फूस से घिरे हुए और बुरी तरह कटे-फटे भूमि प्रदेशों में ट्रैक्टर मशीनों द्वारा गहरी खुदाई करके खेती के योग्य बनाया जा रहा है। जहां नालियां बन गई हैं वहां बांध बनाये जा रहे हैं ताकि नालियां भूमि को और न काट पावें।

इसके अलावा भूमि सम्बन्धी एक और प्रश्न है कि राजस्थान की भूमि पर सिंध से उड़ाकर लाई हुई धूल बिछती जा रही है। इसी प्रकार उत्तरी-पश्चिमी भारत में आगरा, भरतपुर, मथुरा आदि के जिलों में रेगिस्तान बढ़ता चला जा रहा है। इसको रोकने के लिए वायु के मार्ग में आड़े तिरछे तरीके से पेड़ लगाये जा रहे हैं। कई जगह ढाक और अत्यन्त रेगिस्तानी भागों में बबूल के बीज बोये जा रहे हैं। राजस्थान में कई स्थानों पर ७० फीट गहरी खाई खोद कर वृक्ष लगाये गये हैं। इस समस्या के हल के लिए जोधपुर में एक अनुसंधानशाला खोल दी गई है। जयपुर क्षेत्र के झुनझुनू केन्द्र में इस सम्बन्ध में कुछ प्रयोग किये जा रहे हैं।

भारतवर्ष के ८००० लाख एकड़ क्षेत्रफल में से लगभग २००० लाख एकड़

भूभाग पर हवा तथा जल द्वारा आवरण क्षय होता रहता है। इसको रोकने के लिए सन् १९५३ में एक केन्द्रीय भूमि रक्षा बोर्ड का निर्माण किया गया है। इस बोर्ड द्वारा बनाई गई योजना को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम तो यह है कि मरुस्थलों को खतम कर दिया जाय। दूसरे यह कि खेतिहर भूमि को बांध द्वारा या सीढ़ियों में काट कर सुरक्षित कर दिया जाय। तीसरे यह कि कटे-फटे भूभाग तथा रैवाइन और गलियों में वन लगा दिये जाएँ। इस ध्येय को पूरा करने के लिए केन्द्रीय सरकार करीब १३० लाख रुपया खर्च कर चुकी है। इस समस्या को हल करने के लिए देहरादून, कोटा, जोधपुर, बिलारी और ऊटाकमंड में अनुसंधानशालाएँ भी खोली गई हैं।

प्रश्नावली

१. जलवायु के दृष्टिकोण से भारत के पूर्वी व पश्चिमी घाटी की तुलना कीजिये व अन्तर बतलाइये।

२. भारत में बढ़ती हुई व वापस होती हुई मानसूनी हवाओं की विशेषताएँ बतलाइये।

३. भारत में वर्षा का वितरण बतलाइये और लिखिये कि भारत की खेती पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है।

४. हिमालय प्रदेश का एक संक्षिप्त भौगोलिक विवरण दीजिये।

५. "अनिश्चितता व भिन्नता भारतीय जलवायु की विशेषता है", इस उक्ति को स्पष्ट कीजिये और भारत के आर्थिक जीवन पर इसका प्रभाव स्पष्ट कीजिये।

६. "भारत विषमता का देश है।" देश की प्राकृतिक बनावट, वर्षा, फसलें और सिचाई प्रणाली के दृष्टिकोण से इस उक्ति पर अपने विचार प्रकट कीजिये।

७. उत्तरी भारत और विशेषकर पंजाब की नदियों का महत्व बतलाइये।

८. भारत को प्राकृतिक विभागों में बांटिये और प्रत्येक की जलवायु, उपज व उद्योग-धंधों को बतलाइये।

९. गंगा के मैदान का भौगोलिक वर्णन कीजिये और उनका आर्थिक महत्व बतलाइये।

१०. मानसून से आप क्या समझते हैं? भारत के आर्थिक जीवन पर उनका प्रभाव स्पष्ट कीजिये।

११. भारत देश में रहने वालों की औद्योगिक व व्यापारिक क्रियाओं पर यहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों का क्या प्रभाव पड़ा है? समझाकर उदाहरण देते हुए उत्तर लिखिये।

१२. भारत में उपलब्ध मिट्टी के प्रकारों का वर्णन कीजिये और भारतीय खेती के लिये प्रत्येक का महत्व बतलाइये।

१३. भारत में भूमि कटाव की समस्या व उसका हल समझाइये।

अध्याय : : दो

जनसंख्या का वितरण

किसी भी देश के उत्पादन में सबसे महत्वपूर्ण शक्ति वहाँ की जनसंख्या होती है। प्राकृतिक साधनों का उपभोग तथा देश की आर्थिक व व्यापारिक उन्नति वहां की जनसंख्या के वितरण, घनत्व तथा लोगों के स्वभाव पर निर्भर रहती है। अतः विना जनसंख्या के विन्यास को समझे किसी भी देश की आर्थिक उन्नति के विषय में ज्ञान अधूरा ही रहता है।

भारत के लोग—अति चतुर, तीक्ष्ण वुद्धि वाले और हिम्मती हैं। यहाँ के लोग आदि काल से शांति-प्रिय रहे हैं और उनकी सभ्यता अति प्राचीन, कोई ५००० वर्ष पुरानी है। जिस समय दुनिया के अन्य देश पिछड़े हुए तथा असभ्य व जंगली थे, भारतवासी शिल्पकला, साहित्य, विज्ञान और गृह-निर्माण कला में सब से आगे वढ़े हुए थे। आज भी वर्मा, लंका, मलाया, इन्डोनेशिया और दक्षिणी अफ्रीका व कनाडा में प्रवासी भारतीय जनता ने वाणिज्य व व्यापार में वड़ी प्रगति की है और उनकी उन्नति के आधार पर उनकी हिम्मत व चतुरता का अनुमान लगाया जा सकता है। भारत ने दुनिया को यह दिखला दिया है कि किस प्रकार विभिन्न जाति, धर्म व भाषा के लोग एक साथ मिल-जुलकर रह सकते हैं। उनका स्वतन्त्रता संग्राम उनकी शांतिप्रियता का जीता-जागता उदाहरण है।

जनसंख्या का घनत्व—भारत में संसार की कुल जनसंख्या के पंचमांश लोग रहते हैं और सब से घने आबाद देशों में भारत का स्थान चीन के वाद दूसरा है। सन् १९५१ की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या ३५६,८२९,४८५ है। काश्मीर को मिलाकर भारत संघ की कुल जनसंख्या ३६२० लाख है। निम्न तालिका से इस जनसंख्या का प्रादेशिक वितरण व प्रतिवर्ग मील घनत्व स्पष्ट हो जायेगा।

प्रदेश	जनसंख्या (१९५१) लाख में	प्रतिवर्ग मील घनत्व
पेप्सू	३३२	—
आसाम	८५१	१८६
पश्चिमी बंगाल	२४३२	८००
विहार	३९४२	५५०
उड़ीसा	१४४१	३००
बंबई	३२६८	३९०

प्रदेश	जनसंख्या (१९५१) लाख में	प्रतिवर्ग मील घनत्व
मध्य प्रदेश	२०९२	१७०
मद्रास	५४२९	४००
पूर्वी पंजाब	१२६१	१९०
उत्तर प्रदेश	६१५२	६००
राजस्थान	१४६६	—
सौराष्ट्र	३९६	—
मध्य भारत	७८७	—
हैदराबाद	१७६९	२००
काश्मीर	४३७	५०
ट्रावनकोर-कोचीन	८६८	९००
मैसूर	३३२	२५०

देश के क्षेत्रफल और विशेपकर खेती के योग्य उपलब्ध भूमि को देखते हुए भारत की जनसंख्या का प्रतिवर्ग मील घनत्व सबसे अधिक है। यहाँ का औसत घनत्व २१७ मनुष्य प्रतिवर्ग मील है परन्तु केवल इस संख्या या मनुष्य-भूमि अनुपात के आंकड़ों से भारतीय जनसंख्या की विशेपताएं समझ में नहीं आ सकती हैं। समान क्षेत्रफल के प्रदेशों में बहुधा भौगोलिक दशाएँ इतनी विभिन्न होती हैं कि यदि एक प्रदेश में ५०० मनुष्य रह सकते हैं तो दूसरी में २०० मनुष्यों का निर्वाह बड़ी कठिनता से होता है। इसलिये भारत की जनसंख्या के घनत्व के सम्यक ज्ञान के लिए जनसंख्या का उपजाऊ भूमि के क्षेत्रफल के साथ अनुपात निकालना बहुत जरूरी है। किसी भूमि क्षेत्र की उपज-शक्ति वहां की जलवायु, भूप्रकृति, वनस्पति और खनिज संपत्ति पर निर्भर रहती है और इन भौगोलिक दशाओं के आधार पर निर्धारित उपजाऊ भूमि के आंकड़ों के साथ जनसंख्या के घनत्व को प्राकृतिक घनत्व (Physiological Density) कहते हैं। इस दृष्टिकोण से देखने पर भारत की जनसंख्या का घनत्व ५०० मनुष्य प्रतिवर्ग मील होगा। जनसंख्या का यह घनत्व भारत जैसे कृपि प्रधान देश के लिये बहुत अधिक है और विशेपकर उस हालत में जब यहाँ की प्रति एकड़ उपज का औसत इतना निम्न है।

भारतीय जनसंख्या की अन्य समस्याएँ यहाँ पर शिक्षा की कमी, मृत्यु की अधिकता, कम आयु, रहन-सहन का निम्न स्तर और विभिन्न रोग हैं। करीब १५ प्रतिशत जनता बिल्कुल ही वे पढ़ी-लिखी है। प्रति हजार बच्चों में १२३ बच्चे पैदा होते ही मर जाते हैं। साधारण मनुष्य की औसत आयु २७ साल है जबकि आयु का यह औसत जापान में ६५ साल, ग्रेट ब्रिटेन में ६६ साल, कनाडा में ६५ साल, और हालैंड में ६९ साल है। इसी प्रकार साधारण भारतीय की वार्षिक आय ५७ डालर

होती है जबकि अन्य देशों की स्थिति इससे कहीं बढ़ी-चढ़ी है जैसा कि निम्न विवरण से स्पष्ट हो जायेगा—संयुक्त राज्य १५००, ग्रेट ब्रिटेन ७००, न्यूजीलैंड ६००, आस्ट्रेलिया ७००, कनाडा ६०० ।

भारत में संक्रामक रोग भी बहुत अधिक हैं। मनुष्यों की अधिकता के कारण सांस अथवा गुदा द्वारा संपर्क से तपेदिक, डिपथीरिया, मोतीझरा, कालरा, चेचक व पेचिश जैसे रोग बहुत फैलते हैं। इसके फलस्वरूप यहाँ पर लोगों का स्वास्थ्य क्षीण तथा उनकी आयु कम होती जाती है।

भारतीय जनसंख्या के वितरण की एक और विशेषता यह है कि इस संख्या में बहुत शीघ्र वृद्धि हो रही है। जनसंख्या में वृद्धि का वार्षिक औसत १ मनुष्य प्रतिशत है। इस क्रम के आधार पर भारत की जनसंख्या में प्रतिवर्ष ३० लाख मनुष्यों की वृद्धि हो रही है। पिछले १० सालों में—सन् १९४१ से सन् १९५१ तक—भारत की जनसंख्या में १२½ प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

जनसंख्या का घनत्व बहुत कुछ प्रदेश की वाह्यपरिस्थितियों पर निर्भर रहता है। जलवायु, उपजाऊ भूमि, प्राकृतिक संपत्ति तथा प्राकृतिक बनावट के अनुसार ही रहने वालों की संख्या बढ़ती-घटती है। भारत में जनसंख्या के वितरण का वर्षा से बड़ा घनिष्ठ संबंध है। जिन प्रदेशों में वर्षा निश्चित व अधिक मात्रा में होती है वहाँ आबादी स्वभावतः घनी है। पश्चिमी बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा में आबादी बहुत घनी है क्योंकि वहाँ की भूमि उपजाऊ, स्थल सपाट और खेती के लिये पर्याप्त वर्षा होती है। इसके विपरीत गंगा के डेल्टा में सुन्दरबन का प्रदेश अधिक वर्षा के होते हुए भी कम बसा हुआ है क्योंकि वहाँ अन्य प्राकृतिक असुविधाएँ हैं। इसी प्रकार उत्तरी भारत के पश्चिमी भाग में वर्षा तो कम होती है तथा अनिश्चित भी है परन्तु सिंचाई के साधनों की सहायता से इस कमी को पूरा कर लिया गया है। फलतः यह प्रदेश—पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब—काफी उन्नति कर गया है और यहाँ आबादी भी बहुत घनी हो गई है। जहाँ सिंचाई की सुविधाएँ नहीं हैं वहाँ आबादी बहुत कम है जैसे पश्चिमी राजस्थान और सौराष्ट्र में। इसी प्रकार पर्वतीय प्रदेशों में बहुत कम लोग निवास करते हैं। वहाँ खेती के उपयुक्त भूमि कम होती है और कड़ी चट्टानों के कारण सड़कों व रेलों का निर्माण भी कठिन होता है। नदियाँ भी तेज प्रवाह वाली होती हैं और नाव चलाने के लिये सर्वथा अयोग्य रहती हैं। काश्मीर और नेपाल में इन्हीं सब कारणों से जनसंख्या का घनत्व बहुत कम है।

हिमालय प्रदेश का क्षेत्रफल १५३० लाख वर्गमील है परन्तु आबादी केवल २१४ लाख है। भारत के अन्य क्षेत्रों में जनसंख्या का वितरण इस प्रकार है :—

उत्तरी मैदानी भाग	१३९३ लाख।
दक्षिण के पठार व पहाड़	१०८५ लाख।
पश्चिमी घाट व तटीय मैदानी भाग	३९९ लाख।
पूर्वी घाट व तटीय मैदान	५१८ लाख।

देश की आर्थिक उन्नति का भी जनसंख्या के घनत्व पर बड़ा असर पड़ता है। यूरोप और अमरीका में उद्योग-धंधों की उन्नति के कारण अधिकतर लोग बड़े-बड़े शहरों या छोटे नगरों में निवास करते हैं। इससे यह पता चलता है कि वहाँ के अधिकतर लोगों का उद्यम खान खोदना, कारखानों में काम करना तथा व्यापार करना है। इसके विपरीत भारत का मुख्य धंधा खेती है और अधिकतर लोग उसी में संलग्न है। सन् १९५१ की जन-गणना के अनुसार भारत की २४९,१२२,४४९ जनसंख्या खेती में लगी हुई है और १०७,५७१,९४० लोग अन्य व्यवसायों में। अतः स्पष्ट है कि भारत के अधिकतर लोग ग्रामों में निवास करेंगे जहाँ वे अपना मुख्य उद्यम खेती कर सकें। भारत की जनसंख्या का ८२·८ प्रतिशत भाग ग्राम में पाया जाता है और शेष १७·२ प्रतिशत भाग शहरों में। यही कारण है कि भारत में गाँवों की अपेक्षा शहर बहुत कम हैं और बड़े-बड़े शहर तो केवल अंगुली पर गिने जा सकते हैं। निम्न तालिका से भारतीय जनसंख्या का व्यवसायिक विन्यास स्पष्ट हो जायेगा—

पूर्वी पंजाब, गंगा का ऊपरी बेसिन, गंगा की निचली घाटी, पूर्वी व पश्चिमी तटीय मैदान में आबादी का घनत्व सबसे अधिक है और इन सभी प्रदेशों में लोगों का मुख्य धंधा कृषि है।

भारत की ६९.८ प्रतिशत जनसंख्या खेती में लगी हुई है। केवल ३०·२ प्रतिशत लोग ही अन्य व्यवसाय करते हैं। भारत की सबसे अधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश में निवास करती है जहाँ की आबादी ६३२ लाख है। भारत में

सबसे विस्तृत राज्य मध्य प्रदेश है जहाँ का क्षेत्रफल १३०,२७२ वर्गमील है। परन्तु जनसंख्या का सबसे अधिक घनत्व पश्चिमी बंगाल में है। वहाँ प्रतिवर्ग मील में ८०६ व्यक्ति निवास करते हैं यद्यपि भारत का औसत घनत्व केवल ३०३ व्यक्ति प्रतिवर्ग मील है।

चित्र १३

संसार के सबसे अधिक नगर उत्तर प्रदेश में हैं। यद्यपि उत्तर प्रदेश में शहरों की संख्या १६ है परन्तु शहर में निवास करने वाले सबसे अधिक बम्बई राज्य में रहते हैं। वहाँ के शहरों की जनसंख्या ५१ लाख है। भारत के चार बड़े-बड़े शहर निम्न-लिखित हैं—बम्बई (२८ लाख), कलकत्ता (२५ लाख), मद्रास (१४ लाख), हैदराबाद (११ लाख)।
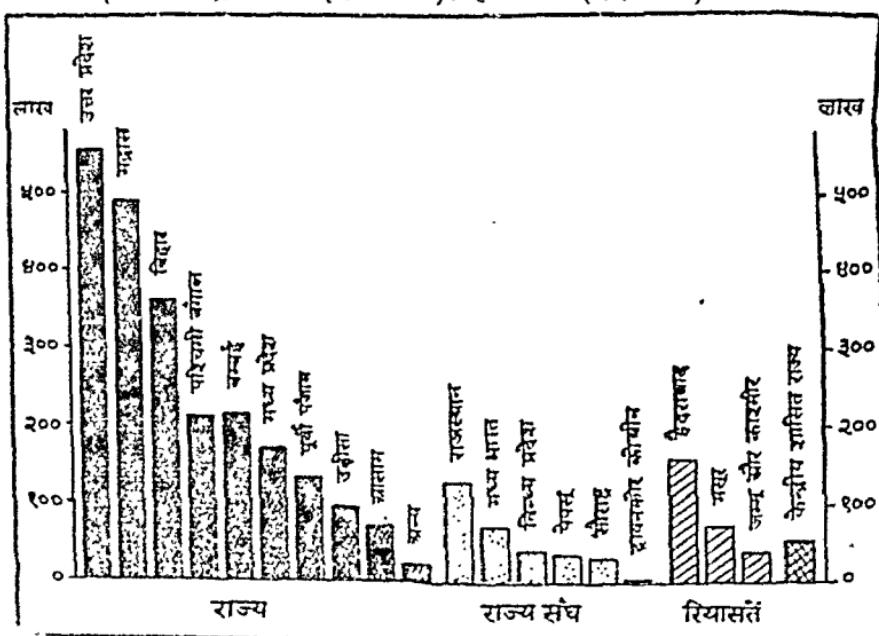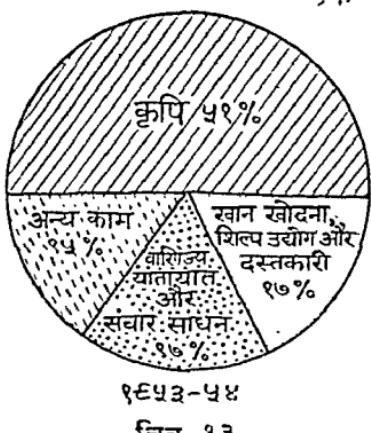
चित्र १४

भारतीय राज्य, राज्यसंघ व रियासतों में जनसंख्या का वितरण।

जनसंख्या की वृद्धि—सन् १९३१ से सन् १९४१ तक के काल में भारत के विभिन्न प्रदेशों में ५०० लाख मनुष्य बढ़ गये और सन् १९४१ से सन् १९५१ तक,

दस सालों के अन्दर लगभग इतने ही आदमी और बढ़ गए हैं। जनसंख्या की इस तीव्र वृद्धि से भारत के सामने एक समस्या-सी उठ खड़ी हुई है। सन् १९०१ में भारत की जनसंख्या २३५५० लाख थी और सन् १९५१ में यह ३५६८३ लाख हो गई। इस प्रकार ५० साल में भारत की जनसंख्या १२३३३ लाख अधिक हो गई। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि भारत की आबादी ५१ प्रतिशत अधिक हो गई है। पिछले १० वर्षों में तो जनसंख्या में वृद्धि ११५०० व्यक्ति प्रतिदिन से भी अधिक थी।

भारत में जनसंख्या की दस-वार्षिक बढ़ोत्तरी

गणना का वर्ष	जनसंख्या (लाख में)	दस-वार्षिक लाख में	बढ़ोत्तरी प्रतिशत
१९०१	२३८४	—	—
१९११	२५२३	+ १३९	+ ५·८
१९२१	२५१५	− ८	—
१९३१	२७९२	+ २७७	+ ११·०
१९४१	३१८९	+ ३९७	+ १४·२
१९५१	३६१२	+ ४२३	+ १३·३

इसी के साथ-साथ ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि यद्यपि पिछले ५० सालों से भारत में औद्योगीकरण व नगरीकरण की ओर प्रगति की जा रही है फिर भी यहां की ७० प्रतिशत जनता खेती पर निर्भर रहती है और ८३ प्रतिशत लोग गांवों में ही निवास करते हैं। भारत का मुख्य धंधा खेती है और इसलिए भारत की बढ़ती हुई आबादी यहां की कृषि पर व भूमि पर भार समान है। साथ-साथ कृषि की उन्नति न होने से उत्पादन तो उतना ही रहा है जबकि देश की जन-संख्या पहले से सवाई हो गई है। इसके साथ-साथ देश के विभाजन से बहुत से उपजाऊ प्रदेश पाकिस्तान में चले गए हैं। फलतः भारत के सामने अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन देने की विकट समस्या उपस्थित हो गई है। इस बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण भारत की आर्थिक प्रगति में रोक-सी आ गई है।

इस सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि भारत में मनुष्यों की अधिकता या भूमि पर भार की वजह से कठिनाई नहीं है। मुख्य कारण यहां के आर्थिक साधनों का अपर्याप्त उपभोग है। अतएव प्राकृतिक व मानव दोनों ही प्रकार के साधनों का ठीक उपयोग होना चाहिए।

औद्योगिक देशों में जनसंख्या की वृद्धि की समस्या को अनेक प्रकार से हल किया जाता है। विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में आबादी के पुनः वितरण से ऊसर भूमियों को प्रयोग में लाकर, देश की प्राकृतिक सम्पत्ति का पूरा-पूरा उपभोग करके, उद्योग-

धंधों की उन्नति करके तथा वैदेशिक व्यापार और प्रवास नीति को बढ़ावा देकर इस समस्या को हल किया जा सकता है। यही नहीं भिन्न-भिन्न देशों ने अपने यहाँ जनसंख्या की वृद्धि की समस्या को इसी प्रकार के उपायों द्वारा हल करने का प्रयत्न किया है।

भारत में भी सदा से ही आबादी का पुनः वितरण होता रहा है और कालांतर में बहुत से लोग गाँवों से निकल कर शहरों में बस गए हैं; खेती का धंधा छोड़कर अन्य व्यवसायों को अपना लिया है परन्तु साधारणतया यह देखा जाता है कि खेती छोड़ने के बाद लोग शहरों के पास स्थापित विभिन्न उद्योग-धंधों में लग जाते हैं। प्रत्येक वर्ष बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा और मद्रास से हजारों व्यक्ति दूसरे राज्य में व्यवसाय की खोज में जाकर बस जाते हैं। अधिकतर ऐसे प्रवासी लोग आसाम, बम्बई, पश्चिमी बंगाल और मध्य प्रदेश में जाकर बस गए हैं और वहाँ की खानों, बागीचों और कारखानों में काम करके अपनी जीविका चलाते हैं।

जनसंख्या का आवागमन

राज्य जो अपने निवासियों को बाहर भेजते हैं या जहाँ पर बाहर से लोग आकर बस जाते हैं	जनसंख्या के प्रति १ हजार मनुष्यों में कमी या अधिकता
बिहार-उड़ीसा	—३७
उत्तर प्रदेश	—३१
मद्रास	—२०
आसाम	+१४४
बंबई	+ १८
बंगाल	+ २६
मध्य प्रदेश	+ १३

बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और नेपाल के बहुत से लोग पश्चिमी बंगाल में जाकर बस गये हैं। बंगाल में प्रवासी जनसंख्या के ६० प्रतिशत लोग बिहार व उड़ीसा से आये हैं और लगभग १८ प्रतिशत लोग उत्तर प्रदेश से। ये लोग अधिकतर हुगली प्रदेश के मिलों व कारखानों में काम करते या दार्जिलिंग जिले के चाय के बागीचों में मजदूरी करते हैं।

आसाम में चाय के बागीचों व खेती के योग्य भूमि से आकर्षित होकर बहुत से लोग जाकर बस गये हैं। इस समय आसाम की कुल जनसंख्या के एक-चौथाई लोग दूसरे प्रांतों से आये हुए हैं। चाय के बागीचों में बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश और मद्रास से आए हुए लोग काम करते हैं। आसाम के नौगांग जिले में पूर्वी पाकिस्तान के मेमनसिंह व कोमिला प्रदेशों के बहुत से लोग जाकर बस गये हैं और खेती के उद्यम में लगे हुये हैं। आसाम एक बड़ा राज्य है और क्षेत्रफल के अनुपात में उसकी जनसंख्या बहुत ही कम है। इसका अधिकतर क्षेत्रफल पहाड़ों व जंगलों से घिरा हुआ है। समस्त क्षेत्रफल के ३९ प्रतिशत भाग पर विस्तृत वन प्रदेश स्थित हैं। इसके

अतिरिक्त बहुत से प्रदेशों में मलेरिया के मच्छर पाये जाते हैं। यदि इस प्रकार के भागों को साफ करके खेती योग्य बना दिया जाय तो आसाम की आर्थिक दशा भी सुधर जायेगी और अधिक घने आबाद राज्यों के लोग वहाँ जाकर बस भी सकेंगे।

बढ़ती हुई आबादी का दूसरा हल यह है कि भारतीयों को अपना देश छोड़कर विदेश में बसने का प्रोत्साहन दिया जाय। परन्तु इसमें कहाँ तक सफलता मिलेगी यह कहना कठिन है। इस नीति की सफलता बहुत कुछ विदेशी राष्ट्रों के रुख पर निर्भर है। पता नहीं कौन राष्ट्र भारतीयों को अपने यहां स्थान देंगे और उन्हें वे सभी सुविधाएँ प्रदान करेंगे जो सफल नागरिक जीवन के लिये अत्यावश्यक हैं।

प्रवासी भारतीय

देश का नाम	भारतीयों की संख्या	गणना का वर्ष
आस्ट्रेलिया	२,५००	१९४७
कनाडा	३,०००	१९५०
न्यूजीलैण्ड	१,२००	१९५२
दक्षिणी अफ्रीका	३,६५,५२४	१९५१
दक्षिणी रोडेशिया	४,१५०	१९५१
लंका	९,८५,३२७	१९५३
मलाया	६,४०,७०९	१९५२
सिंगापुर	८३,६२४	१९५२
हांगकांग	१,५००	१९५२
मारीशस	३,२२,९७२	१९५२
सेशेल्स	२८५	१९४७
जिब्राल्टर	४१	१९४६
नाईजीरिया	३७५	१९४७
केनिया	९०,५२८	१९४८
उगाण्डा	३३,७६७	१९४८
न्यासालैण्ड	४,०००	१९५१
जन्जिबार और पेम्बा	१५,८१२	१९४८
टगांनिका	५६,४९९	१९५२
जमैका	२५,०००	१९५२
ट्रिनीडाड और टोबागो	२,२७,३९०	१९५०
ब्रिटिश गायना	१,९७,६९६	१९५१
फिजी द्वीप	१,४८,८०२	१९५२
उत्तरी रोडेशिया	२,६००	१९५१
ब्रिटिश उत्तरी बोर्नियो	१,२९८	१९४८

प्रवासी भारतीय (क्रमशः)

देश का नाम	भारतीयों की संख्या	गणना का वर्ष
अदन	६४५६	१९४६
सारावाक	२,३००	१९४०
ब्रुनेई	४३६	१९४७
ब्रिटिश सोमालीलैण्ड	२५०	१९४६
माल्टा	३७	१९४८
ग्रनाडा	६,०००	१९४६
सेंट लूसिया	७,०००	१९५२
ब्रिटिश हूण्ड्रास	२,०००	१९४६
सियरा लियोने	७६	१९४८
ब्रिटेन	७,१२८	१९३२
लीवार्ड द्वीप	६६	१९४६
गोल्ड कोस्ट	२५०	१९४८
सैंट विसेंट	१,८१८	१९५०
बारबडोस	१००	१९५०
सेंट किट्स	६७	१९५०
डोमेनिका	५	१९५०
ब्रिटिश कामनवेल्थ देशों में भारतीयों की कुल संख्या	३२,५४,६५१	
अन्य देशों में भारतीयों की कुल संख्या	१,६६,१८३	
इन्डोनेशिया	४०,०००	१९५२
थाई देश	१७,०००	१९५२
हिन्द चीन	२,३००	१९५०
जापान	४७४	१९५२
बेहरीन	१,१३५	१९४८
ईराक	६५०	१९४८
मस्कत	१,१४५	१९४७
पुर्तगीज़ पूर्वी अफ्रीका	५,०००	१९४८
मैडागास्कर	६,६५५	१९५०
रीयूनियन	२,२००	१९४७
अमरीका	२,४०५	१९४७
ब्राजील	४०	१९५१

प्रवासी भारतीय (क्रमशः)

देश का नाम	भारतीयों की संख्या	गणना का वर्ष
पनामा	६०८	१६५०
अफगानिस्तान	२६४	१६५१
ईरान	७५२	१६५२
ईथोपिया	१,२५०	अनुमानित
डच गायना	६०,०००	१६५३
फिलीपाइन	१,६००	१६५१
लेबनान	४६	१६४८
सीरिया	३२	१६४८
कुवैत	१,२५०	१६४८
सऊदी अरब	२,४००	१६४८
जर्मनी	३५	१६५३
आस्ट्रिया	३६	१६५३
इटली	२००	१६५२
बेल्जियन कांगो	१,२२७	१६५०
बेल्जियम	६०	१६५२
रुआण्डा ऊरुण्डी	१,६६३	१६५०
इटाली सोमाली लैण्ड	१,०००	१६४७
नेपाल	१०,४४१	१६४१
स्विजरलैण्ड	१००	१६५३
फ्रांस	२३	१६५१
रूस	१५	१६५३

इस समय भी करीब ३५ लाख भारतीय दूसरे देशों में रहते हैं। इनमें से ७५ प्रतिशत लोग तो बर्मा, लंका और मलाया में बस गये हैं और प्रायः चीनी व रबर के खेतों या खानों में काम करते हैं। खेती के हीन काल में प्रायः देश से बाहर जाने वालों की संख्या बढ़ जाती है। बर्मा में भारतीय निवासियों की संख्या ७ लाख है। हाल में बर्मा के बन्दरगाहों व पोताश्रयों, रबर के बागीचों व खानों में हिन्दुस्तानियों के प्रति स्पर्धा इतनी बढ़ गई है कि बहुधा वहाँ के आदि निवासी भारतीयों के खिलाफ तक हो गये हैं। बैक्सटर कमीशन की सिफारिशों के आधार पर सन् १६४१ से भारत व बर्मा के बीच आने-जाने पर भी कानूनी नियंत्रण लगा दिये गये हैं।

भारत की सम्पूर्ण प्रवासी जनसंख्या के २० प्रतिशत लोग लंका में रहते हैं। लंका की कुल आबादी का सप्तमांश भारतीय हैं। ये लोग अधिकतर चाय और रबर के बागीचों में काम करते हैं। परन्तु इधर कुछ दिनों से लंका में भारतीयों का जाना

बन्द-सा है। उसके दो कारण हैं—एक तो यह कि भारतीय मजदूरों को लंका के
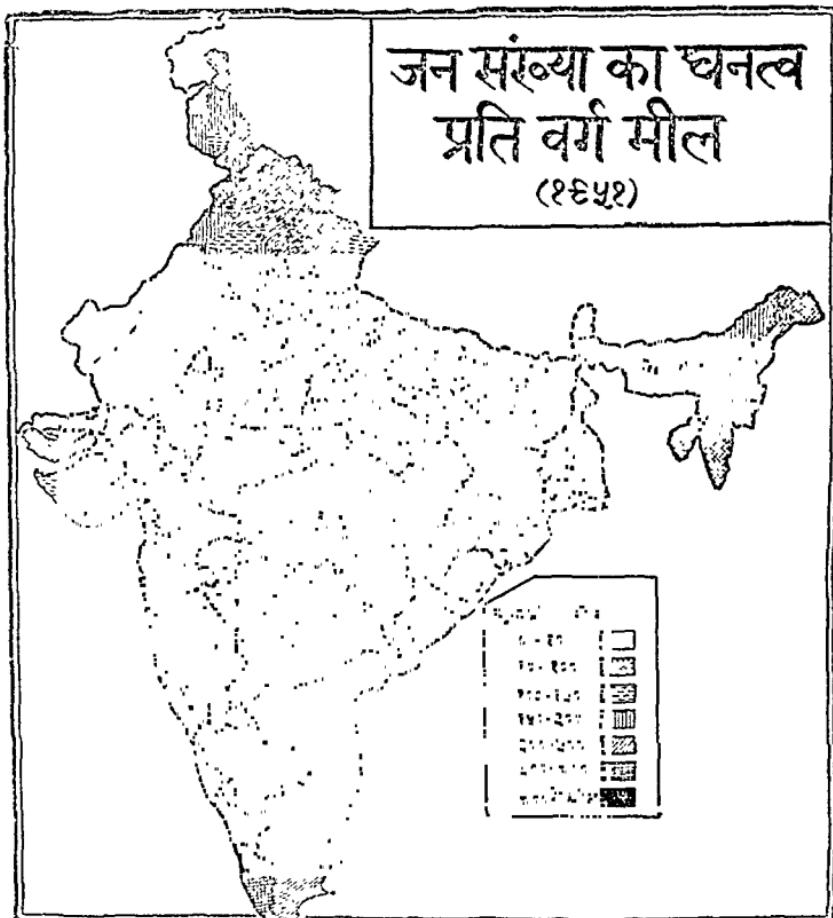
चित्र १५—सम्पूर्ण भारत में जनसंख्या का घनत्व। गंगा की घाटी और ट्रावनकोर में जनसंख्या का घनत्व विशेष रूप से अधिक है।

लोग कम मजदूरी देते हैं और दूसरे वहाँ के लोग व सरकार भारतीयों के बसने के विरुद्ध हैं।

भारत की प्रवासी जनसंख्या के १५ प्रतिशत लोग मलाया में बस गये हैं। ये लोग अधिकतर खानों व रबर के बागीचों में काम करते हैं। दूसरे महायुद्ध के पूर्व मलाया सरकार ने भारतीयों के मलाया में आकर बसने की नीति का विरोध किया था। इसके अलावा ऐसा भी प्रतीत होता है कि लंका और मलाया में अब और भारतीयों के बसने व जीवन निर्वाह की गुंजाइश नहीं है।

दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया की भी बहुत कुछ ऐसी ही दशा है। आरम्भ में तो आर्थिक उन्नति व विकास के लिए दक्षिणी अफ्रीका की सरकार ने भारतीयों को बुलाया था और भारतीय मजदूरों की ही सहायता से अपनी खनिज

सम्पत्ति का विकास व अपने रेल मार्गों का निर्माण किया। फलतः इस समय दक्षिणी अफ्रीका में करीव-करीव २,२०,००० भारतीय हैं। ये लोग विविध व्यवसायों में लगे हैं। मजदूर, व्यापारी और पेशेवर यह भारतीय वहीं पर वस से गये हैं। परन्तु दक्षिणी अफ्रीका की सरकार उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती, उनके साथ भेदभाव दिखलाती है और उनके अधिकारों में हस्तक्षेप करती है। प्रवासी भारतीय के नागरिक अधिकारों को छीन कर तथा उसके नागरिक जीवन में प्रतिवन्ध लगाकर वहाँ की सरकार दक्षिणी अफ्रीका को सफेद वर्ण जातियों का ही घर वनाना चाहती है। इस समय वहाँ के भारतीयों को जमीन खरीदने, उच्च पेशे अपनाने और मत देने का पूरा-पूरा अधिकार नहीं है। विविध सार्वजनिक स्थानों में, रेलगाड़ियों व होटलों में उनका तिरस्कार किया जाता है। इस कारण इस समय दोनों सरकारों के वीच संघर्ष-सा चल रहा है।

आस्ट्रेलिया का क्षेत्रफल ३० लाख वर्ग मील है पर वहाँ की कुल आवादी ७० लाख से भी कम है। अधिकतर लोग पूर्वी भाग में सिडनी से एडीलेड तक के प्रदेश में और दक्षिणी-पश्चिमी कोने में निवास करते हैं। कहीं भी जनसंख्या का घनत्व अधिक नहीं है। इसलिए वहाँ वाहरी लोगों के वसने का पर्याप्त क्षेत्र हैं। वास्तव में मजदूरों की कमी के कारण आस्ट्रेलिया के उद्योग-धंधे पूरी तरह उन्नति नहीं कर पाये हैं। फिर भी आर्थिक कारणों से आस्ट्रेलिया की सरकार ने एशियाई लोगों के आकर वसने पर प्रतिवन्ध लगा दिये हैं।

आस्ट्रेलिया और दक्षिणी अफ्रीका की इस विरोध नीति से भारतीयों को वड़ा हताश होना पड़ा है और अव इसी प्रकार के तिरस्कारपूर्ण व्यवहार के डर के कारण अन्य देशों में जाकर वसने की हिम्मत नहीं पड़ती है। यही नहीं वल्कि वहुत से लोग अव वापस आ रहे हैं। सन् १९३१ से सन् १९३९ तक ९००,००० प्रवासी भारतीय विभिन्न देशों से भारत वापस आये। इसी कालान्तर में केवल ३ लाख मनुष्य भारत को छोड़ कर अन्य देशों को गये।

जन-संख्या का यह प्रश्न देश के विभाजन के वाद और भी प्रखर हो गया है। अगस्त सन् १९४७ के वाद लाखों मनुष्य पाकिस्तान छोड़ कर भारत चले आये। फलतः उन्हें वसाने का काम भारत सरकार के कन्धों पर पड़ा और वढ़ती हुई जन-संख्या के यकायक इस प्रकार वढ़ जाने से यह प्रश्न और भी जटिल हो गया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत की वढ़ती हुई जनसंख्या का हल प्रवास कदापि नहीं हो सकता। अतः इस प्रश्न को हल करने के लिए सन्तान-उत्पत्ति कम करना होगा, ऊसर व वंजर भूमि को खेती योग्य वनाना होगा, नयी भूमि पर खेती करके खेती से उत्पादन वढ़ाना होगा और नये उद्योग-धंधों को खोलकर देश की जनता के लिए नये व्यवसाय प्रदान करना होगा। मध्य भारत, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और आसाम में वहुत-सी भूमि खेती के योग्य वनाई जा सकती है। वाद में विभिन्न राज्यों के वीच जनसंख्या के पुनः वितरण द्वारा इस प्रश्न को हल किया जा सकता है।

जातियाँ

संसार में भारत ही ऐसा देश है जहाँ सभ्यता के हर काल में कई प्रकार की जातियाँ वर्तमान रही हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि विभिन्न समय में भारत में भिन्न-भिन्न जातियाँ आकर बसती रही हैं। फलतः आजकल के भारतीय विभिन्न जातियों के सम्मिश्रणमात्र हैं।

भारत की प्राकृतिक बनावट के कारण यहां पर विभिन्न काल में आई हुई जातियाँ नष्ट न हुई बल्कि बाद में आने वाली जातियों के दबाव से पहले से आई हुई जाति के लोग दक्षिण या पूर्व में जाकर बस गये। ये जातियाँ वर्तमान भारत का मुख्य अंग हैं। आदि-जातियों को भारतीय पहाड़ व जंगलों ने शरण दी और इसीलिए अभी भी बहुत-सी भारतीय जातियों में आदि गुण वर्तमान हैं।

(१) नीग्रायड (Negroid) जाति के लोग सबसे प्रथम अफ्रीका से आकर भारत में बसे। इस जाति के चिन्ह अब बिल्कुल मिट चुके हैं और अण्डमान द्वीप के आदिनिवासियों को छोड़कर और कोई भी भारतीय लोग इनसे उद्भूत नहीं हैं। इस जाति के कुछ लोग राममहल पहाड़ियों में भी पाये जाते हैं।

(२) इसके बाद पैलस्टाइन से प्रोटो-आस्ट्रालायड (Proto-Australoids) जाति के लोग आये। उनका सर लम्बा, रंग काला और नाक चपटी थी। मध्य भारत, मध्य प्रदेश और लंका के आदिनिवासी इसी जाति के हैं। ये ही वास्तव में प्राचीन भारतीय हैं और आस्ट्रेलिया के आदिनिवासियों से रूप, रंग व कद में मिलने के कारण, इनका नाम प्रोटो-आस्ट्रालायड पड़ गया है।

(३) अति प्राचीन सयय में भूमध्यसागर जाति की एक शाखा जिसका नाम आस्ट्रिक (Austrics) था मेसोपोटामिया द्वारा भारत में आई। इन लोगों के सर लम्बे, रंग कुछ साफ और नाक लम्बी व सीधी होती है। यह लोग उत्तरी भारत में बसे और बाद में बर्मा, इण्डोचीन, मलाया और इण्डोनेशिया में फैल गये। आजकल इस जाति के लोग मध्य तथा उत्तरी-पूर्वी भारत के पहाड़ों व जंगलों में पाये जाते हैं और इनकी कुल संख्या देश की आबादी की १·३ प्रतिशत है। कोल, संथाल, खासी व नीकोबारी लोग इसी जाति के हैं।

(४) ईसामसीह से ३५०० वर्ष पूर्व ईसवी में एशिया माइनर और एशियन द्वीप समूह से द्रविड़ (Dravidians) लोग भारत में आये। ये लोग बहुत सभ्य थे और इन्होंने पंजाब और सिंध में बहुत से नगर स्थापित किये। जब इन्होंने दक्षिण और पूर्व में गंगा के मैदान में फैलना शुरू किया तो वे आस्ट्रिक जाति के लोगों के सम्पर्क में आए और दोनों ने मिलकर वर्तमान हिन्दू धर्म की नींव डाली। आजकल द्रविड़ जाति के लोग दक्षिण भारत में रहते हैं और इनकी संख्या भारतीय आबादी की २० प्रतिशत है।

(५) इसके बाद ईसामसीह से २५०० वर्ष पूर्व ईसवी में उत्तरी मेसोपोटामिया के प्रदेश से ईरान होते हुये आर्य जाति के लोग आये। उनका रंग गोरा, चेहरा सुडौल और कद लम्बा था। इस समय भारत के ७३ प्रतिशत लोग इसी जाति के

हैं और पूर्वी पंजाब, काश्मीर, राजपूताना तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में फैले हुए हैं।

(६) आर्यों के बाद मंगोल जाति के लोगों ने भारत में प्रवेश किया। इनका घर उत्तरी-पश्चिमी चीन था और वहां से यह तिब्बत में फैले और फिर हिमालय तथा आसाम से होते हुए उत्तरी-पूर्वी बंगाल के मैदानी भागों में तथा आसाम की पहाड़ियों व मैदानों में फैल गये। आज भी इस जाति के लोग नेपाल, तिब्बत, काश्मीर के पूर्वी भाग और आसाम में मिलते हैं। इनका रंग पीला होता है।

वर्तमान समय में अधिकतर भारतीय इन जातियों के सम्मिश्रण से उत्पन्न हैं और इसी कारण उनमें किसी एक जाति की विशेषताएँ नहीं पाई जाती हैं। इस प्रकार की मिश्रित तीन जातियां प्रधान हैं—

(१) आर्य-द्राविड़ जाति के लोग उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य भारत, बम्बई, मध्य प्रदेश और पश्चिमी बंगाल के कुछ भागों में पाये जाते हैं।

(२) मंगोल-द्राविड़ जाति के लोग आसाम व बंगाल के पूर्वी भागों में पाये जाते हैं। इनका रंग काला, कद मध्यम और नाक चौड़ी होती है।

(३) स्काइथो-द्राविड़ जाति के लोग द्राविड़ और स्काइथ जाति का सम्मिश्रण हैं। ये लोग गुजरात और पश्चिमी प्रायद्वीप में पाये जाते हैं। महराठा लोग इसी जाति के हैं।

भाषाएँ

भारत में अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। भारत की भाषाओं के अन्वेषण से पता चला है कि यहां पर कुल १७९ भाषाएँ बोली जाती हैं, जिनमें से करीब ११६ भाषायें १ प्रतिशत से भी कम लोगों में प्रचलित हैं। इस प्रकार पूर्णतया उन्नत व विकसित केवल १४ भाषाएं हैं—(१) हिन्दी (२) उर्दू (३) बंगाली (४) उड़िया (५) मराठी (६) गुजराती (७) काश्मीरी (८) पंजाबी (९) नेपाली (१०) आसामी (११) तेलगू (१२) कनाड़ा (१३) तामिल और (१४) मलयालम। पंजाबी और नेपाली हिन्दी से मिलती-जुलती है और उड़िया व आसामी भाषाएँ बंगाली से मिलती हैं। अन्तिम चार भाषाएँ दक्षिण भारत में बोली जाती हैं। लगभग २३०० लाख आदमी पहली दस भाषाओं का प्रयोग करते हैं और ६६० लाख मनुष्य अन्तिम ४ भाषाओं को बोलते हैं।

विभिन्न भाषा-भाषियों की संख्या इस प्रकार है (लाख में)

भाषा	संख्या	भाषा	संख्या
हिन्दी	७९०	कनाड़ा	१२०
बंगाली	५४०	उड़िया	११०
तेलगू	२६०	गुजराती	११०
मराठी	२१०	मलयालम	१००
तामिल	२००	सिंधी	१४०
पंजाबी	१६०	आसामी	२०
राजस्थानी	१४०	काश्मीरी	१५

भाषा की यह विविधता राष्ट्रीयता में कोई भी बाधा नहीं उत्पन्न करती। कनाडा, दक्षिणी अफ्रीका, स्पेन, चेकोस्लावाकिया, स्विट्जरलैंड, चीन और रूस में भी बहुत-सी भाषाएँ बोली जाती हैं। यही हाल बेल्जियम और दक्षिणी अमरीका की अनेक रियासतों का भी है। इसलिए भारत की भाषा-विभिन्नता पर अधिक जोर देने की आवश्यकता नहीं है। हिन्दी भाषा को साधारण रूप से जानने वाला व्यक्ति देश के सब भागों में बिना किसी कठिनाई के जा सकता है।

हिन्दी भारत की राष्ट्र-भाषा है और थोड़े ही समय में इसका प्रचार सभी प्रदेशों में हो जायेगा। हिन्दी और उर्दू का व्याकरण तथा वाक्य विधान एक-सा है। हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और उर्दू फारसी लिपि में लिखी जाती है। हिन्दी में संस्कृत शब्दों की अधिकता है पर उर्दू में अरबी-फारसी शब्दों की बहुलता है। उत्तरी भारत में बोलचाल की भाषा हिन्दी-उर्दू का सम्मिश्रण हिन्दुस्तानी है।

प्रश्नावली

१. भारत में जाति का सवाल कृत्रिम है? भौगोलिक परिस्थिति का वर्णन करते हुए इस कथन की पुष्टि करिये।

२. भारत की जन-संख्या के वितरण में विषमता का क्या कारण है? क्या यह विषमता स्थायी है?

३. भारत की अधिकतर जन-संख्या गंगा-ब्रह्मपुत्र के मैदान में निवास करती है। इसके भौगोलिक कारण बतलाइए।

(२) अनियमित वितरण—दक्षिण के प्रायद्वीप में वर्षा केवल कम मात्रा में ही नहीं होती है बल्कि कहीं होती है और कहीं बिल्कुल ही नहीं।

(३) जाड़ों में वर्षा का न होना—जाड़ों में पर्याप्त वर्षा न होने के कारण जाड़े की फसलों को बाहर से कृत्रिम तरीके से पानी पहुँचाना होता है।

(४) वर्षा की मात्रा की अपर्याप्तता—चावल या गन्ना जैसी फसलों के लिए वर्षा से प्राप्त पानी काफी नहीं होता; अतएव उन्हें ऊपर से पानी देना पड़ता है।

वास्तव में वर्षा की ये सभी त्रुटियाँ मनुष्य की शक्ति से परे हैं। वर्षा न होने से या अधिक वर्षा हो जाने से देश में अकाल पड़ जाता है। फसलें नष्ट हो जाती हैं और जन-पशु की हानि हो जाती है। इसको रोकने का एकमात्र उपाय सिंचाई के साधनों की व्यवस्था है। सिंचाई के विभिन्न साधनों द्वारा कम वर्षा के क्षेत्रों में पानी पहुँचाया जा सकता है और अधिक वर्षा से होने वाली बाढ़ के पानी को इधर-उधर भेज कर बाढ़ से होने वाली हानि को भी रोका जा सकता है।

सिंचाई के अर्थ और प्रकार—सिंचाई के अर्थ हैं नदियों या तालाबों से नालियाँ या नहरें निकालकर खेतों तक पानी पहुंचाना। विभिन्न कृत्रिम तरीकों से खेतों को पानी देने का काम भारतीय किसान बहुत दिनों से करते आ रहे हैं। वास्तव में भारतीय ग्रामों के आर्थिक जीवन में सिंचाई का बड़ा महत्त्व है। सच तो यह है कि देश के उन सभी भागों में, जहाँ औसत वर्षा ५० इंच से कम होती है, सिंचाई द्वारा पानी की व्यवस्था करनी पड़ती है। इस प्रकार राजपूताना, जहां वर्षा ५ इंच से कम होती है, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और केवल पश्चिमी तटीय प्रदेश को छोड़ कर समस्त दक्षिणी पठारी भाग में खेती के उद्यम के लिए सिंचाई अनिवार्य है।

भारत में सिंचित भूमि का क्षेत्रफल संसार में सब से अधिक है और कुल मिला कर ४८० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई की जाती है। इसमें से करीब ३०० लाख एकड़ भूमि पर खाद्यान्न उगाये जाते हैं। जिस समय प्रथम योजना चालू हुई उस समय की सिंचाई के लिए निर्धारित भूमि को हम दो वर्गों में बांट सकते हैं—

(१) वे क्षेत्र जिनमें सरकारी नहरों और बड़े तालाबों द्वारा १२ मास सिंचाई की सुविधा थी, और

(२) वे क्षेत्र जहाँ निजी तौर पर सिंचाई होती थी या बहुत कम सिंचाई का प्रबन्ध था। पहिले वर्ग के अन्तर्गत लगभग ३६० लाख एकड़ भूमि थी और बाकी क्षेत्रों में लगभग २२० लाख एकड़ थी। आशा है कि पहिली और दूसरी योजना की अवधि में करीब १ करोड़ ९० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की और व्यवस्था हो जायेगी। भारत में सिंचाई के साधनों के विकास की और भी सम्भावना है। छोटी-बड़ी योजनाओं द्वारा कोई १५-१६ करोड़ एकड़ और भूमि पर सिंचाई का बन्दोबस्त किया जा सकता है। इसमें से आधे पर बहुधंधी योजनाओं द्वारा और बाकी पर छोटी योजनाओं द्वारा।

भारत में सिंचाई का क्षेत्रफल निम्न प्रकार से बांटा हुआ है—

हिमालय प्रदेश	२६ लाख एकड़
उत्तरी मैदानी भाग	२५२ „ „
दक्षिण के पठार व पहाड़	६३ „ „
पश्चिमी घाट व तटीय मैदान	१६ „ „
पूर्वी घाट व तटीय मैदान	१०० „ „

भारत में सिंचाई के मुख्य साधन तीन हैं।

(१) कुएं (२) तालाब, और (३) नहरें। इनमें नहरें सब से अधिक महत्व की हैं और प्रायः तीन प्रकार की होती हैं—

(१) कुएं—भारत की कुल सिंचित भूमि के २० प्रतिशत भाग में कुओं द्वारा सिंचाई होती है। अधिकतर कुओं का निर्माण व संरक्षण विशेष व्यक्तियों ने अपने आप ही किया है। कुओं से पानी निकालने की कई रीतियां हैं। जिनमें सब से प्रमुख व प्रचलित रीतियां निम्नलिखित हैं—

(अ) हाथ से खींचना, (ब) बैलों द्वारा निकालना, (स) बाल्टों द्वारा निकालना, (द) रहट द्वारा और,(ई) तेल इंजिनों द्वारा।

कुएँ से सिंचाई का रिवाज उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब, बम्बई और राजपूताना में बहुत अधिक है। भारत के सभी पूर्वी भागों में सतह पर कुएँ खोदकर सिंचाई करने की रीति बहुत प्रचलित है। कुएँ दो प्रकार के होते हैं—एक तो वे जो शीघ्र ही खत्म हो जाते हैं और दूसरे वह जो पाताल फोड़ कर बनाये जाते हैं इसलिये उनमें पानी हमेशा बना रहता है। साधारण कुओं की अपेक्षा पाताल-फोड़ कुएँ अधिक लाभप्रद होते हैं।

कुओं की सिंचाई में एक दोष भी है। वह यह कि इसके जल में उपज बढ़ाने के गुण नहीं होते हैं। नहरों में पानी नदियों से आता है, जिनमें कई प्रकार के खनिज नमक घुले रहते हैं। यह बात कुएं के जल में नहीं होती। इसलिये कुओं से सिंचित भूमि में खाद का भी प्रयोग करना होता है। कुएँ से सींची हुई भूमि से पर्याप्त उपज प्राप्त करने के लिये भारत की केन्द्रीय व राज्य सरकारें कृत्रिम व स्वाभाविक खाद देने की व्यवस्था कर रही हैं। पिछले कुछ दिनों से यंत्रचालित कुओं का प्रचार बढ़ रहा है और भारत सरकार अपनी योजना के अनुसार विभिन्न स्थानों पर इस तरह कुएं बनवा रही है, अभी तक उत्तर प्रदेश और बिहार में ही इस प्रकार के कुओं का अधिक प्रचलन हुआ है। सन् १९५० में इन दोनों राज्यों में करीब २५०० यंत्रचालित कुएं थे। ६ इंच अर्द्धव्यास के सामान्य यंत्रचालित

कुएं से ३३००० गैलन जल प्राप्त होता हैं और ४०० एकड़ भूमि पर सिचाई की जाती है।

यंत्र संचालित कुओं की सफलता निम्नलिखित बातों पर निर्भर रहती है—(१) प्रदेश नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना हो ताकि जल विभिन्न गहराई पर मिल सके, (२) बिजली सस्ते दामों पर उपलब्ध हो, (३) मिट्टी उपजाऊ हो ताकि इन कुओं पर अधिक खर्च ज्यादा पैदावार द्वारा पूरा किया जा सके।

फलस्वरूप इस प्रकार की सिचाई की सम्यक् सम्भावना उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और पेप्सू में है।

२. तालाब—तालाब वास्तव में भूपटल पर अपने आप बने हुए या कृत्रिम तरीकों से बनाये गये गड्ढे हैं जिनमें वर्षा का पानी एकत्रित हो जाता है। तालाबों से सिंचाई मद्रास, मैसूर और हैदराबाद राज्यों में की जाती है। तालाबों से सिंचित भूमि का कुछ क्षेत्रफल लगभग ८० लाख एकड़ है।

३. नहरें—नहरें सिचाई का सबसे महत्वपूर्ण साधन हैं और इनमें या तो नदियों से पानी पहुंचाया जाता है या कृत्रिम तालाबों में इकट्ठा किये हुए जलाशयों से। नहरें बनाने के वास्ते समतल भूमि का होना आवश्यक है और यदि सदा लबालब भरी हुई नदियां हों तो और भी अच्छा है। इसीलिये नहरों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था उत्तरी भारत में केन्द्रित है, जहां भूमि समतल व मुलायम है तथा नदियां सदा पानी से भरी रहती हैं। यही कारण है कि उत्तरी भारत की सभी नहरें नदियों से निकाली गई हैं। इसके विपरीत दक्षिणी भारत, मध्य प्रदेश और बुन्देलखंड की नदियां गर्मी में सूख जाती हैं। इसलिये कृत्रिम उपायों से पानी इकट्ठा करना पड़ता है। बहुधा घाटी के मुंह पर बांध बना कर वर्षा के पानी को इकट्ठा कर लिया जाता है और फिर उसी जलाशय से नालियों द्वारा आसपास की भूमि पर वितरण कर दिया जाता है। कुल मिलाकर २०० लाख एकड़ भूमि पर नहरों द्वारा सिंचाई होती है। सब नहरों की लम्बाई करीब ६०,००० मील है और उनकी कुल क्षमता २,२०,००० कूसक है।

नदियों से निकलने वाली नहरें दो प्रकार की होती हैं—

(१) बाढ़ की नहरें और (२) सदा भरी रहने वाली नहरें। बाढ़ की नहरों में उसी समय पानी आता है, जब नदियों का जल बाढ़ के कारण ऊपर उठ जाता है। जब नदी के जल का तल नीचा हो जाता है तो इन नहरों में भी पानी नहीं रहता। फलतः जाड़े के मौसम में या अन्य शुष्क ऋतु में ये नहरें सर्वथा बेकार हो जाती हैं। जब नदियों में बाढ़ आई हुई रहती है तो इनकी सहायता से विस्तृत खेती हो सकती है। प्रायः अक्तूबर से अप्रैल तक नदियों में पानी का तल नीचा हो जाता है और इसलिये उस काल में इन नहरों से कुछ भी सहायता नहीं मिलती है। इन सात महीनों के लिये कुओं से सिंचाई करनी पड़ती है और यही द्विविधा इसका बड़ा भारी दोष है। इस दोष को दूर करने के लिये सदैव पूरित रहने वाली नहरें बनाई जाती हैं।

सदैव पूरित रहने वाली नहरें (Perennial Canals) उन नदियों से निकाली जाती हैं जिनमें बराबर साल भर पानी भरा रहता है। नदी के पानी के प्रवाह को बांध द्वारा रोक लिया जाता है और फिर इस रोके गये जल से नहरें निकाल कर आस-पास की भूमि को सींचा जाता है। उत्तर प्रदेश की सभी नहरें इस प्रकार की हैं। बहुत-सी बाढ़ वाली नहरों को भी सदा पूरित रहने वाली नहरों में परिणत कर दिया गया है। इस प्रकार की नहरों की सहायता से अनिश्चित वर्षा के प्रदेश में कृषि उपज बहुत बढ़ गई है। इसके सहारे साल भर बराबर खेती हो सकती है और शुष्क काल में भी किसानों को अपने साधनों पर पूरा भरोसा रहता है।

सिंचाई के साधनों का प्रादेशिक वितरण—पंजाब में सिंचाई की योजनाओं के लिये आदर्श दशाएँ उपस्थित हैं। भूमि समतल है और नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी मुलायम है। इसीलिये यहां पर नहरों का एक जाल-सा बिछा हुआ है और इनकी सहायता से विस्तृत मरुस्थल समभूमि में उपजाऊ खेतिहर प्रदेश बन गये हैं।

पूर्वी पंजाब की प्रमुख नहरें निम्नलिखित हैं:—

(१) **पश्चिमी जमुना नहर**—जमुना नदी से निकलती है और रोहतक, दक्षिणी पूर्वी हिसार, पटियाला और जींद के प्रदेशों को सींचती है। इस नहर में १९०० से भी अधिक नालियां हैं और इनके द्वारा ८,९०,००० एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है।

(२) **सरहिन्द नहर**—सतलज नदी से रूपाड़ स्थान पर निकलती है और लुधियाना, फीरोजपुर, हिसार और नाभा प्रदेशों को पानी पहुँचाती है। यह नहर सन् १८६२ में निकाली गई थी और बहुत दिनों तक इसमें मिट्टी के जमते रहने से बिल्कुल बन्द हो जाने का भय था। परन्तु निकास के स्थान पर इसके स्रोत में कुछ हेरफेर करके इस प्रश्न को हल कर लिया गया है। इस समय देश की सभी नहरों में यह सब से अधिक स्थायी और मजबूत है।

(३) **ऊपरी बारी द्वाब नहर**—रावी नदी से माधोपुर स्थान पर निकलती है और गुरुदासपुर तथा अमृतसर के जिलों को सींचती हैं। यह नहर पाकिस्तान तक गई है परन्तु इसमें एक बड़ा दोष है। जाड़ों में इसके लिये रावी नदी में काफी पानी नहीं रहता। फलतः महीनों तक माधोपुर के नीचे एक बूंद पानी भी नहीं जा पाता।

मद्रास राज्य में करीब ७० एकड़ भूमि पर तालाबी नहरों द्वारा सिंचाई होती है। मद्रास की खेतिहर भूमि के ३० प्रतिशत भाग पर इस तरह सिंचाई होती है। ये नहरें गोदावरी, कावेरी और कृष्णा नदियों से निकलती हैं। मद्रास की प्रेरियर नदी सिंचाई व्यवस्था विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मद्रास राज्य के पश्चिमी घाट से बहने वाली छोटी नदी प्रेरियर के जल को नाली द्वारा पहाड़ के पूर्वी भाग में लाया जाता है और इस प्रकार मदुरा के आसपास की १,३३,००० एकड़ भूमि को सींचा जा सकता है। कावेरी नदी पर स्थित मेटूर सिंचाई व्यवस्था वृहत् है। बांध

बना कर कावेरी नदी के पानी को एक जलाश्य के रूप में परिणत कर दिया गया है इस जलाश्य में ७,३५,००० घन फीट जल आ सकता है।

उत्तर प्रदेश की समृद्धि का कारण बहुत कुछ वहां की नहरें ही हैं। खेती के कुल क्षेत्रफल का २२ प्रतिशत भाग सींचा जाता है। गंगा की ऊपरी तलहटी में जल वृष्टि केवल ४० इंच तक होती है। इसलिये सिंचाई का और भी अधिक महत्व है राज्य में ५ प्रमुख नहरें हैं—

(१) ऊपरी गंगा नहर—यह गंगा नदी से हरिद्वार में निकलती है और सन् १८५४ में बनी थी। राज्य की यह सबसे प्रमुख नहर है और करीब १ लाख
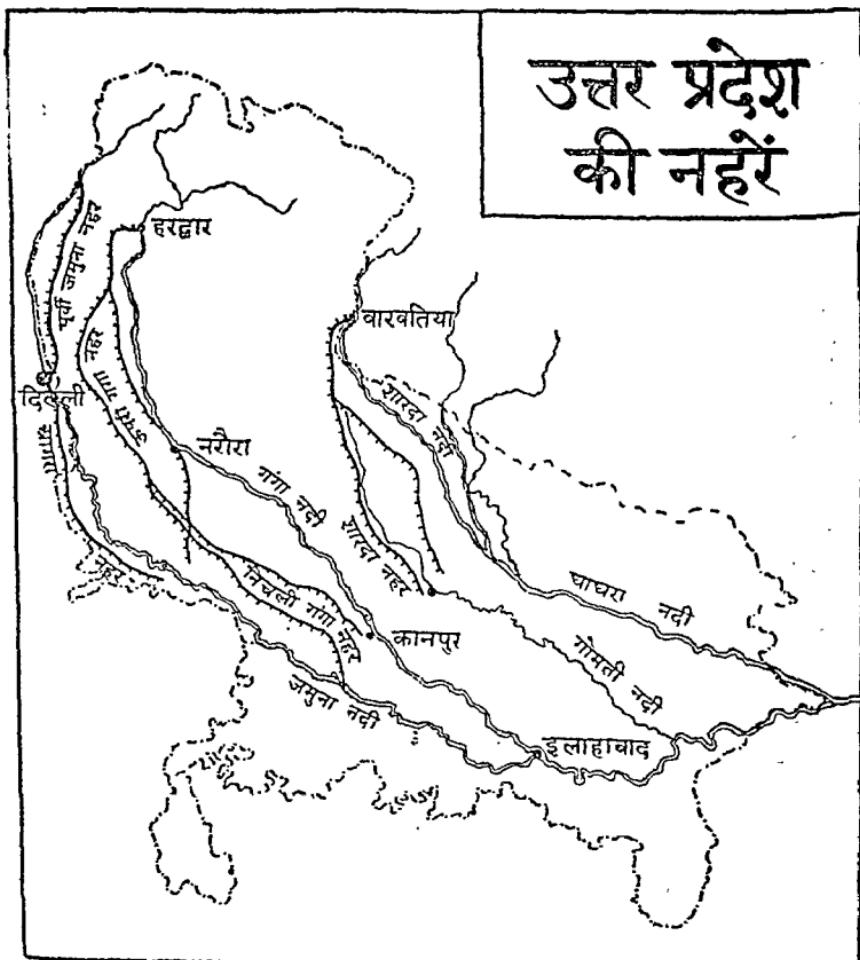
चित्र ३५—दक्षिणी-पश्चिमी उत्तर प्रदेश में नहरों का प्रभाव ध्यान देने योग्य है

एकड़ भूमि को सींचती है। मुख्य नहर २१३ मील लम्बी है और इसकी शाखाएं,

व नदियां ३४०० मील लम्बी हैं। यह आगरा नहर व गंगा की निचली नहर को भी पानी देती है।

(२) आगरा नहर—सन् १८७४ में बनाई गई और जमुना नदी से दिल्ली के पास से निकलती है। इससे २,६०,००० एकड़ भूमि को सींचा जाता है।

(३) निचली गंगा नहर—यह सन् १८७८ में बन कर तैयार हुई और बुलन्दशहर के जिले में नरौरा नामक स्थान पर गंगा से निकाली गई है। इसकी शाखाओं आदि को मिलाकर इसकी कुल लम्बाई ३००७ मील से ऊपर है और यह ८ लाख एकड़ भूमि को सींचती है।

(४) शारदा नहर—सन् १९२८ में बन कर तैयार हुई और इस समय राज्य की सबसे प्रमुख नहर है। शाखा उपशाखा सहित इसकी लम्बाई ५५०० मील है। यह घाघरा की सहायक शारदा नदी से नेपाल की सीमा पर बनबासा स्थान पर निकाली गई है। अवध के पश्चिमी भाग और रोहेलखंड के प्रदेश में इसके द्वारा सिंचाई होती है। इसकी सहायता से लगभग ६० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है।

(५) पूर्वी जमुना नहर से राज्य के उत्तरी पूर्वी प्रदेश की सिंचाई होती है। यह नहर जमुना नदी से फैजाबाद नामक स्थान पर निकलती हैं।

भारत में सिंचाई व्यवस्था की प्रगति कुछ विशेप संतोपजनक नहीं है। भारत के कुल कृषि-योग्य क्षेत्रफल के केवल १८ प्रतिशत भाग पर ही सिंचाई होती है। वैसे पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, दक्षिणी उत्तर प्रदेश और संपूर्ण दक्षिणी प्रायद्वीप में सिंचाई को बढ़ाने की पर्याप्त संभावनाएं हैं।

पश्चिमी बंगाल में कुल १२१ लाख एकड़ भूमि पर खेती होती है परन्तु इसमें से कुल २ लाख ५५ हज़ार एकड़ भूमि पर ही सिंचाई की जाती है। बीरभूम, बांकुरा बर्दवान और मिदनापुर के जिलों में सिंचाई की विशेप आवश्यकता है क्योंकि वहाँ आवश्यकता से बहुत कम वर्षा होती है। भारत में सिंचाई के साधनों में उन्नति की काफी संभावनाएं हैं परन्तु नहरें बनाने में काफी खर्च पड़ता है। इसलिए केवल सरकारी सहायता से ही आगे उन्नति हो सकती है।

भारत में सिंचाई का क्षेत्र

प्रदेश	कुल क्षेत्रफल के प्रति खेतिहर भूमि का अनुपात (प्रतिशत)	खेतिहर भूमि के प्रति सिंचित भूमि का अनुपात (प्रतिशत)	कुल क्षेत्रफल के प्रति सिंचित भूमि का अनुपात (प्रतिशत)
मद्रास	४६	२६	१२
उत्तर प्रदेश	६८	२७	१८
बंबई	६१	४	२
बिहार	५२	२२	१२
मैसूर	३५	१६	६
उड़ीसा	३४	२२	८

चूंकि नहर व्यवस्था के विकास और प्रसार में बहुत खर्च पड़ता है; इसलिए नहर व्यवस्था का विकास सरकारी सहायता तथा आर्थिक दशा पर निर्भर रहता है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में नहर व्यवस्था के विकास के लिए सरकार ने १६८ करोड़ रुपये का खर्च नियत किया। उम्मीद है कि सन् १९५६ तक १९५ लाख अतिरिक्त भूमि पर सिंचाई होने लगेगी तथा १५-२० वर्ष की अवधि में सिंचित प्रदेश का क्षेत्रफल सन् १९५१ की अपेक्षा दुगना हो जाने की उम्मीद है। भारत में भूमि का क्षेत्रफल ८००० लाख एकड़ है। जिसमें से २७७० लाख एकड़ भूमि पर खेती की जाती है। इसमें से सन् १९५१ में केवल ५१० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई की जाती थी। मार्च सन् १९५५ तक ४९ लाख एकड़ भूमि पर और सिंचाई होने लगी थी और सन् १९५६ के मार्च महीने तक यह क्षेत्रफल ७० लाख तक हो जाने की आशा है। इसी बीच में (मार्च १९५६ तक) छोटी सिंचाई व्यवस्था द्वारा ११० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी। इसके फलस्वरूप विकास में सफलता का प्रतिशत ८२ तक पहुंच जायेगा।

प्रथम योजना के अन्तर्गत छोटी सिंचाई व्यवस्थाओं से ११० लाख एकड़ भूमि सींचने का लक्ष्य था परन्तु केवल १०० लाख एकड़ भूमि पर ही सिचाई का प्रबन्ध हो सका है। इसी बीच में सब प्रकार की योजनाओं से ७० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि पर सिंचाई होने लगी है। दूसरी योजना के अन्तर्गत २१० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई का प्रबन्ध हो जायेगा इसमें से ९० लाख एकड़ भूमि पर छोटी योजनाओं द्वारा सिंचाई होगी। इसी में यंत्रचालित कुओं से सिंचित १२ लाख एकड़ भूमि भी शामिल है। अतिरिक्त १२० लाख एकड़ भूमि में से ९० लाख एकड़ भूमि पर तो प्रथम योजनाकाल में शुरू की गई व्यवस्थाओं से सिंचाई होगी और ३० लाख एकड़ भूमि पर दूसरी योजनाकाल में शुरू की गई सिंचाई व्यवस्था से जल मिलेगा। पूरा होने पर इन नई योजनाओं से १५० लाख एकड़ भूमि को सींचा जा सकेगा।

बहुधंधा योजनायें (Multipurpose Projects)

यद्यपि भारत संसार भर में सिंचाई के दृष्टिकोण से सब देशों से आगे है परन्तु यहाँ सिंचाई के साधनों में वृद्धि की बड़ी आवश्यकता है ताकि देश की नई भूमि पर खेती हो सके और खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि करके देश की खाद्य समस्या को हल किया जा सके। भारत की नदियों और भूमि में बहुत जल निहित है। इसका यदि पूरा उपयोग किया जावे तो सिंचाई के साधनों में विशेष वृद्धि हो सकती है। अभी तक इस प्राकृतिक जल-भंडार के ६ प्रतिशत भाग का ही उपभोग हो सका है। बाकी सब जल प्रायः बेकार ही चला जाता है। यही नहीं बल्कि जल के आधिक्य के कारण बहुधा नदियों में बाढ़ आती है और उससे जन-धन की विशेष हानि होती है। भारत का नदियों में प्रतिवर्ष २३ लाख घन फीट प्रति सैकिंड की दर से

पानी बढ़ता है। इसके विपरीत नहरों द्वारा खेती व अन्य उद्देश्यों के लिये प्रतिवर्ष
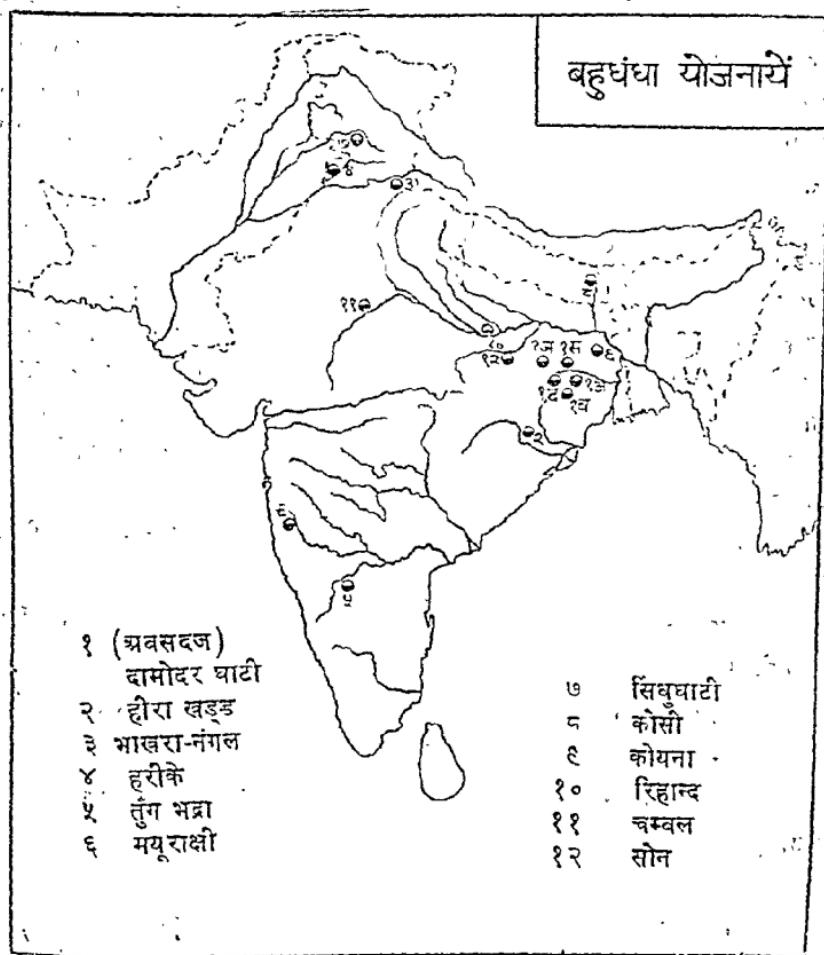
चित्र ३६—सिचाई में उत्तर प्रदेश का महत्त्वपूर्ण स्थान ध्यान देने योग्य है।

१ लाख ३३ हजार घन फीट प्रति सैंकिंड की दर से पानी का उपभोग किया जाता है। अतः स्पष्ट है कि २१ लाख ६७ हजार घन फीट पानी प्रति सैंकिंड प्रतिवर्ष बेकार जाता है क्योंकि साधनों के अभाव के कारण इसका उपभोग नहीं हो पाता।

प्रतिवर्ष भारत की नदियों में १३,५६० लाख एकड़ फीट पानी बहता है। इसको यदि खेती योग्य भूमि पर फैला दिया जाय तो इसकी गहराई ३,५६ फीट होगी। इस वृहत् मात्रा का केवल ५·६ प्रतिशत भाग अथवा ७६० लाख एकड़ फीट पानी ही सिंचाई व जल-विद्युत उत्पादन के प्रयोग में आता है। शेष ९४·४ प्रतिशत भाग यूं ही वह कर नष्ट हो जाता है और बहाव के क्रम में अकथनीय हानि करता है।

वास्तव में इस पानी को सिंचाई व जल-विद्युत उत्पादन में लगाया जा सकता है। भारत की नदियाँ देश भर में समान-रूप से फैली हुई पायी जाती हैं। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि सिंचित भूमि के प्रदेश व क्षेत्रफल को १५-२० साल में दूना किया जा सकता है। सैकड़ों मील लम्बे जलमार्गों को नाव्य बनाया जा सकता है और इनसे ३०० या ४०० लाख किलोवाट जल-विद्युत पैदा की जा सकती है। इस प्रकार जो अधिक खाद्यान्न उपजाया जा सकेगा उससे न केवल वर्तमान कमी ही पूरी होगी बल्कि भविष्य में जनसंख्या में होने वाली वृद्धि के लिए भी बन्दोबस्त हो सकेगा। इसी उद्देश्य से भारत सरकार तथा विभिन्न राज्य सरकारों ने कुछ योजनाएं तैयार की हैं। इन योजनाओं को ऐसा बनाया गया है कि इनसे न केवल सिंचाई की ही सुविधा प्राप्त हो बल्कि इनसे जल-विद्युत भी उत्पन्न हो जावे। इसके अलावा इन योजनाओं के अन्य बहुत उद्देश्य भी है जैसे नदी की बाढ़ को रोकना, जल मार्गों की सुविधा प्रधान करना, आमोद-प्रमोद के साधन बनाना तथा मछली पालना आदि। उद्देश्यों की इस बहुलता के कारण ही इनको **बहुधंधा योजनाएं** कहते हैं। इन विभिन्न योजनाओं के पूरा हो जाने पर भारत की निहित जल-शक्ति के १० प्रतिशत भाग का जल-विद्युत के रूप में उपयोग किया जा सकेगा और लगभग २८० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई की सहायता से खेती हो सकेगी।

देश के आयोजित विकास के लिए देश के उपलब्ध जल को निम्नलिखित नदी-घाटियों में विभाजित किया जा सकता है :—

(१) पूर्वी पंजाब की नदी घाटियां जो सिन्धु घाटी का ही भाग हैं।

(२) मध्य गंगा घाटी जो उत्तर प्रदेश में स्थित है।

(३) पूर्वी गंगा घाटी जिसमें इसकी सहायक नदियों का जाल-सा बिछा हुआ है।

(४) उत्तरी आसाम में ब्रह्मपुत्र घाटी।

(५) हुगली घाटी जिसमें पूर्वी बिहार और पश्चिमी बंगाल सम्मिलित हैं।

(६) उड़ीसा का प्रदेश जिसके उत्तर में सवरन रेखा जल-विभाजक है और दक्षिण में महानदी की घाटी।

(७) गोदावरी की घाटी जो अपनी सहायक नदियों के साथ बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

(८) कृष्णा घाटी जिसमें मद्रास के मध्य व पूर्वी भाग सम्मिलित हैं। कृष्णा का बांध कृष्णा और तुंगभद्रा के संगम पर होगा।

(९) कोवेरी नदी घाटी।

(१०) मध्य भारत में ताप्ती और नर्मदा नदी घाटियाँ।

(११) राजस्थान के पूर्वी किनारे पर और जमुना की सहायक चम्बल के चारों ओर मालवा की नदी घाटियाँ।

भारत की विविध योजनाओं से लाभ

वर्ष	अतिरिक्त सिंचाई (एकड़)	अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पादन (टन)	अतिरिक्त शक्ति (किलोवाट)
१९५३-५४	२०,००,०००	७,००,०००	५५४,०००
१९५४-५५	४३,००,०००	१४,००,०००	५९६,०००
१९५५-५६	५५००,०००	१८,००,०००	६३६,०००
१९५६-५७	६७,००,०००	२२,००,०००	७०८,०००
१९५७-५८	७५,००,०००	२५,००,०००	७९१,०००
१९५८-५९	८५,००,०००	२८,००,०००	८१७,०००
१९५९-६०	९०,०७,०००	३१, ०,०००	९१०,०००
१९६०-६१	१,२९,००,०००	४३,००,०००	१,९९६,०००

इनमें से कुछ नदी घाटियों की उन्नति व विकास के लिए केन्द्रीय सरकार ने निम्नलिखित ६ वहुधंधी योजनाओं पर काम शुरू किया है। छः मुख्य नदी घाटी योजनाओं के नाम इस प्रकार हैं :—

(१) दामोदर घाटी योजना (हुगली की तलहटी)
(१) कोसी योजना (पूर्वी गंगा की तलहटी)
(३) हीराखड्ड योजना (उड़ीसा)
(४) ताप्ती नर्मदा योजना (मध्य भारत)
(५) रिहन्द योजना (उत्तर प्रदेश)
(६) तुँगभद्रा योजना (मद्रास-हैदराबाद)

इन छः योजनाओं पर अनुमानतः २३२ करोड़ रुपया खर्च होगा और इनके पूरा होने पर १२० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी। इन योजनाओं से केवल सिंचाई ही नहीं होगी वल्कि जल-विद्युत भी उत्पन्न की जायेगी और इनके अलावा वाढ़ रुक जायेगी, मलेरियाग्रस्त क्षेत्रों को साफ किया जा सकेगा, ऊसर भूमि पर खेती हो सकेगी, मछलियां पाली जायेंगी तथा नाव्य जल-मार्गों का निर्माण हो सकेगा।

इसके अलावा इन योजनाओं के पूरा होने पर राष्ट्रीय सरकार शरणार्थियों को ठीक से वसा सकेगी, वढ़ती हुई जन संख्या को भोजन दे सकेगी और लोगों के रहन-सहन का स्तर उच्चतर बना सकेगी।

इन छ वृहत् योजनाओं के अतिरिक्त विभिन्न राज्यों की तीन योजनाएं विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पश्चिमी वंगाल की मयूराक्षी योजना, आंध्र की रामपदसागर योजना तथा पूर्वी पंजाव की भाखरा-नंगल योजना। पश्चिमी वंगाल की योजना ४ साल में पूरी होगी और पूरी होने पर इसकी सहायता से ६००,००० एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी। आंध्र की रामपदसागर योजना के पूरा होने पर २३ लाख एकड़ भूमि को सींचा जा सकेगा। १५०,००० किलोवाट विजली तैयार की जायेगी

और विशाखापटनम से अन्दर तक नाव्य जलमार्ग बन जायेगा। मध्य भारत और राजस्थान की चम्बल योजना और बम्बई राज्य की कोयना योजना भी विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। चम्बल योजना सन् १९६४-६५ तक पूरी होगी और तब १४ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी तथा ६९००० किलोवाट बिजली तैयार की जायेगी। कोयना केवल जलविद्युत योजना है और इससे २४०००० किलोवाट बिजली तैयार होगी।

दामोदर घाटी योजना—दामोदर नदी ३३६ मील लम्बी है और शोक की नदी कहलाती है। यह छोटा नागपुर की पहाड़ी पर २००० फीट की ऊंचाई से निकलती है। बिहार में १८० मील तक बहने के बाद पश्चिमी बंगाल में प्रवेश करती है और अन्त में हुगली नदी में जा मिलती है।

इसकी ऊपरी घाटी में हज़ारीबाग, पालामऊ, रांची, मानभूम और सन्थल परगना के जिले स्थित हैं। इस प्रदेश में वार्षिक वर्षा ४७ इंच के लगभग है और इसका अधिकतर भाग मानसून काल में ही होता है। वन-रहित पहाड़ियों पर घोर वृष्टि का जल बिना किसी रुकावट के नीचे की ओर बह निकलता है और नदी को बढ़ा देता है। इस प्रकार वेगशालिनी दामोदर नदी छोटा नागपुर की भूमि काटती हुई अन्त में अपने आसपास के प्रदेशों में भीषण बाढ़ लाती है। इस बाढ़ से प्रतिवर्ष लाखों जीव नष्ट हो जाते हैं।

दामोदर और उसकी दो सहायक नदियां कोनार और बाराकर हज़ारीबाग जिले से निकलकर गंगा के डेल्टा से होती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती हैं। दामोदर से उसकी दोनों सहायक नदियाँ आसनसोल से कुछ मील ऊपर की तरफ आकर मिलती हैं। दामोदर नदी प्रणाली के प्रवाह क्षेत्र का क्षेत्रफल ८५०० वर्ग मील है परन्तु शक्ति के अभाव और दामोदर में बाढ़ के कारण इस प्रदेश की खेती तथा खनिज सम्पत्ति का पूरा उपयोग नहीं हो पाया है।

इसकी निचली घाटी पश्चिमी बंगाल में है और इस प्रदेश में दामोदर की बाढ़ बड़ी भीषण होती है। फल यह होता है कि इसका जल दोनों किनारों पर फैल जाता है, फसलें और मकान नष्ट हो जाते हैं, जन व पशु बह जाते हैं, यातायात के साधन अस्तव्यस्त हो जाते हैं। संक्षेप में, बाढ़ के कारण घाटी के आर्थिक जीवन को बड़ी हानि पहुँचती है।

इस भीषण नदी को कई उपयोगों में लाया जा सकता है। यदि इस पर ठीक से काम किया जाय तो यह पश्चिमी बंगाल और बिहार के विकास और समृद्धि का मेरुदण्ड बन सकती है।

दामोदर घाटी योजना के कई उद्देश्य हैं—

(१) सिंचाई के लिए नहरों को पानी देना।
(२) काफी जल देकर जल-मार्गों को नाव्य बनाना।
(३) मलेरिया को नियंत्रित करना।
(४) भूमि का उचित व नियमित उपभोग करना।
(५) सारी घाटी की आर्थिक उन्नति करना।

इस योजना के पूरी होने पर ७ लाख ५० हजार एकड़ भूमि को सदा भरी रहने वाली नहरों द्वारा सींचा जा सकेगा और ३ लाख किलोवाट जल-विद्युत उत्पन्न की जावेगी जिसकी सहायता से आस-पास के प्रदेशों की औद्योगिक उन्नति हो सकेगी।

दामोदर नदी की घाटी व उसके आस-पास का भाग भारत का सबसे प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र है। इसी प्रदेश के अन्तर्गत भारत के सबसे महत्त्वपूर्ण इस्पात उद्योग के केन्द्र जमशेदपुर वर्नपुर में स्थित हैं। सिन्दरी में देश का सबसे महान खाद का कारखाना और चितरंजन में स्थित रेल इंजिनों का सरकारी कारखाना भी इसी क्षेत्र में है। इसके अलावा सीमेन्ट तैयार करने के भी कई केन्द्र हैं।

दामोदर की घाटी में प्राकृतिक सम्पत्ति की वहुलता है। उत्तरी दामोदर घाटी के जंगलों में लकड़ी, लाख और टसर की वहुतायत है। निचली घाटी की भूमि वड़ी उपजाऊ है परन्तु सिंचाई के साधनों के अभाव में गहरी खेती नहीं हो सकती।

दामोदर घाटी में खनिज का विस्तृत भण्डार है परन्तु उनका अभी तक विशेष उपयोग नहीं हुआ है। भारत का ८० प्रतिशत कोयला, ९४ प्रतिशत कच्चा लोहा, ७० प्रतिशत अभ्रक, १०० प्रतिशत तांवा, १० प्रतिशत मैंगनीज १००, प्रतिशत कैनामाइट, ७० प्रतिशत क्रोमाइट, ४५ प्रतिशत चीनी मिट्टी और ऐसवेस्टास तथा २० प्रतिशत चूने का पत्थर यहीं पाया जाता है।

भारत सरकार ने कानून द्वारा एक कारपोरेशन स्थापित कर दिया है। दामोदर घाटी योजना के काम की देखभाल इसी संस्था के अधिकार में है। सिंचाई, जल-विद्युत, उत्पादन और बाढ़ को रोकने जैसे उद्देश्यों को पूरा करने के लिए काम की विभिन्न प्रणालियां आदि चालू करना इसी संस्था का काम है। घाटी के निवासियों के लिए नाव्य जल-मार्ग प्रदान करना, जंगल लगाना, स्वास्थ्यप्रद व औद्योगिक केन्द्र तथा सामान्य आर्थिक विकास व उन्नति की व्यवस्था करना इसी संस्था का कर्त्तव्य है। इस पर कार्य यथेष्ट प्रगति कर रहा है।

इस योजना के अन्तर्गत आठ जलाशय होंगे जिनसे विजली घर सम्बद्ध होंगे और एक वड़ा अवरोधक वनाया जावेगा। वाराकर नदी में मैथों स्थान पर; दामोदर नदी में अय्यर स्थान पर; कोनार व वोकारो में; वाराकार में वल्पाहारी और तिलैया पर और दामोदर में पन्चेत पहाड़ी के पास ८ छोटे-छोटे वांध बनाये जाएंगे। वड़ा वांध दुर्गापुर पर वनाया जावेगा जिस से नहरें व शाखायें निकाली जावेगी। २ लाख किलोवाट का एक विशाल कोयला शक्ति केन्द्र भी होगा। नवीन जल-विद्युत उत्पादन केन्द्रों से १ लाख किलोवाट पन-विजली प्राप्त हो सकेगी और यह वोकारो के कोयला विजली केन्द्र से २ लाख किलोवाट विजली से अतिरिक्त होगी।

दुर्गापुर वांध से निकाली गई नहरों से १०,२२,७६२ एकड़ भूमि सींची जायेगी। नहरों तथा उनकी शाखाओं की लम्बाई १५५२ मील होगी। इस सिंचाई योजना से खाद्य पदार्थों की वार्षिक उपज ३४८,२७६ टन अधिक हो जायेगी, नाव्य

नहर में २४ फाटक होंगे और इसके द्वारा प्रतिवर्ष २० लाख टन माल इधर-उधर ले जाया जा सकेगा।

दुर्गापुर अवरोधक २२७१ फीट लम्बा और २८ फीट ऊँचा होगा। ऊपरी घाटी में बांध के द्वारा छोड़ा गया पानी इसके द्वारा नहरों में वितरित कर दिया जायेगा। दाहिनी ओर की नहर ४० मील लम्बी है और वायीं तरफ की ८३ मील। यह दामोदर नदी को कलकत्ता से ३० मील ऊपर की ओर हुगली नदी से मिलावेगी। इस नहर पर नाव व बजरों के प्रयोग द्वारा रेलों पर भार वाहन को कम किया जा सकेगा और सस्ते दामों पर कलकत्ता व घाटी के वीच कोयला आदि वस्तुएं लाई ले जाई जा सकेंगी।

दामोदर घाटी योजना के प्रथम पर्व में तिलैया, कोनार, मैथों और पचेंत पहाड़ी के वांध; दुर्गापुर का अवरोधक जिसके दोनों किनारों से सिंचाई की नहरें निकाली जावेगी और बोकारो कोयला विद्युत केन्द्र का निर्माण शामिल है। तिलैया बांध तो दिसम्बर सन् १९५२ में बन कर तैयार हो गया। इस से ६६००० एकड़ पर सिंचाई होगी और ४००० किलोवाट विजली वनेगी जो कोडरमा और हजारी वाग की अभ्रक खानों के लिए सहायक होगी। कोनार वांध जिस से १ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी वह भी सन् १९५४ में तैयार हो गया। बोकारो थर्मल कारखाने को भी चालू कर दिया गया है। इसकी उत्पादन क्षमता इस समय तो ५०००० किलोवाट है पर अन्ततः बढ़ कर २ लाख किलोवाट हो जायेगी। इस केन्द्र की मशीनों को ठंडा करने का पानी कोनार बाँध के जलाशय से प्राप्त होता है। वांध के ठीक नीचे ४० हजार किलोवाट क्षमता का एक भूगर्भस्थित विजली घर बनाया जायेगा।

मैथों तथा पचेंत पहाड़ी बांध प्रधानतः बाढ़ रोकने के लिए बनाये गये हैं पर इन से निचली घाटी में करीव दस लाख एकड़ पर सिंचाई होगी। यह दिसम्बर १९५६ तक वन कर तैयार होंगे। मैथों बांध के द्वारा ११ लाख घन फुट पानी एकत्र किया जायेगा और बांध के निकट भूगर्भस्थित विजलीघर की संस्थापित क्षमता ६०,००० किलोवाट होगी। पचेंत पहाड़ी के प्रमुख वांध द्वारा १२ लाख घन फुट पानी भी एकत्र किया जावेगा। बांध के निकट ४०,००० किलोवाट क्षमता का एक जल विद्युत केन्द्र भी वनेगा।

पूर्ण योजना जून सन् १९५८ में वन तैयार हो जायेगी। पूरा होने पर निम्नलिखित लाभ होंगे।

(१) दामोदर तथा उसकी सहायक नदियों में बाढ़ पर नियन्त्रण हो जायेगा।

(२) १०२५७६२ एकड़ भूमि पर वारह महीने लगातार सिंचाई की जा सकेगी जिससे ३०.४८ करोड़ मूल्य का ३,५०,००० टन अतिरिक्त खाद्यान्न और ३.६० करोड़ रुपये मूल्य का पटसन और प्राप्त हो सकेगा।

(३) कलकत्ता और पश्चिमी वंगाल के कोयला क्षेत्रों के बीच एक नाव्य जल मार्ग वन जायेगा।

(४) विजली शक्ति उत्पन्न की जायेगी।
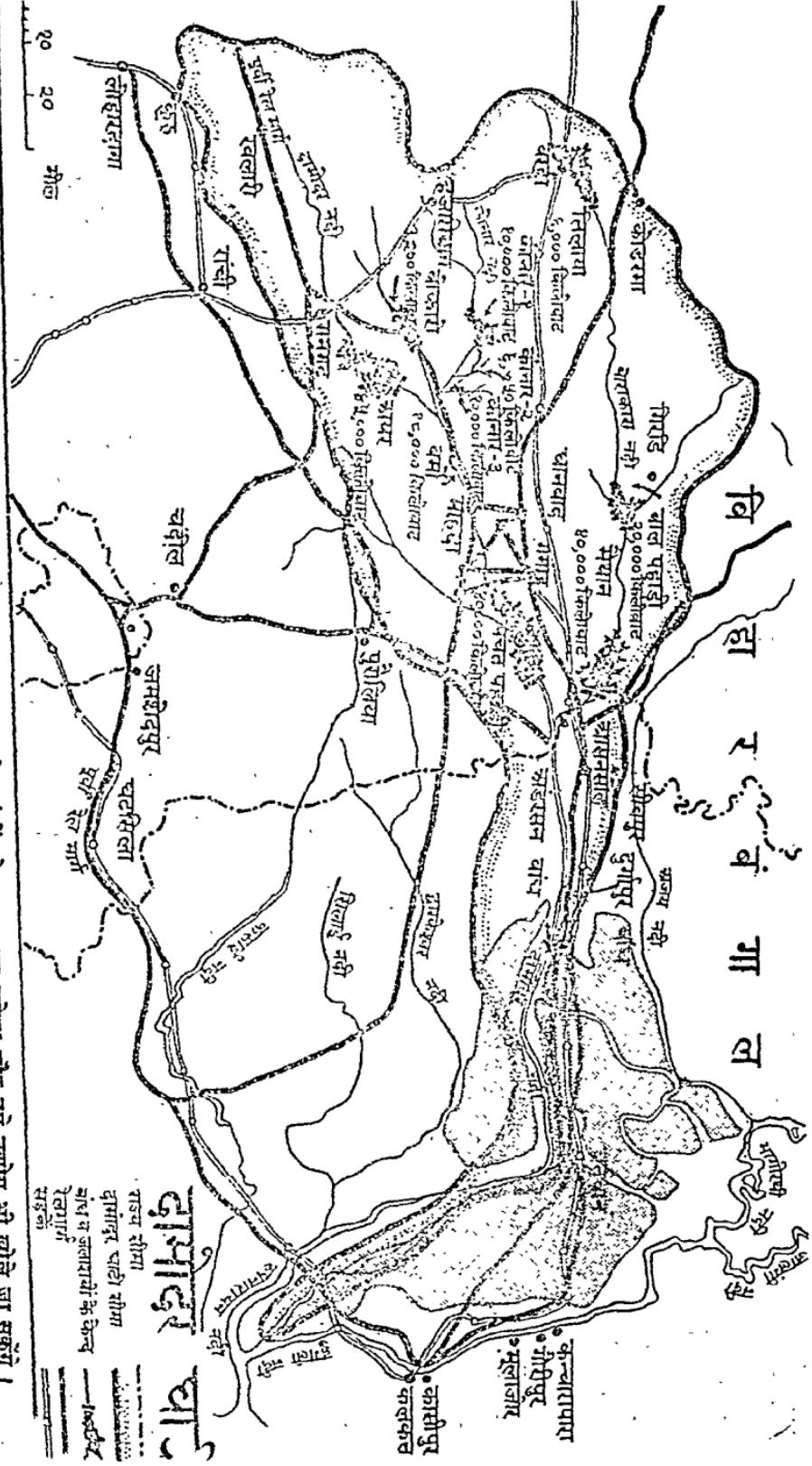
चित्र ३७—उचित जल-विद्युत के तैयार होने से इस प्रदेश में स्थित उद्योग-धंधों को बढ़ाया जा सकेगा और नये उद्योग भी खोले जा सकेंगे ।

हीराखड्ड योजना—इस योजना के अन्तर्गत उड़ीसा की महानदी पर एक बांध बनाया जावेगा। नदी के प्रवाह में ९ मील ऊपर की ओर स्थित सम्बलपुर के समीप यह बांध बनाया जावेगा। इस बांध के दोनों ओर से नहरें निकाली जावेंगी और दोनों स्थानों पर जल-विद्युत उत्पन्न की जायेगी।

हीराखड्ड बांध नदी तल से १५० फीट ऊँचा होगा और इसके द्वारा ५३ लाख टन फीट जल को एकत्रित किया जा सकेगा। महानदी पर दो बांध बनाये जायेंगे—एक टिक्करपारा में और दूसरा नारज में। नारज कटक से कुछ मील पश्चिम में स्थित है। इन तीनों बांधों के तैयार हो जाने पर २५ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी, ३ लाख ५० हजार किलोवाट बिजली पैदा की जायेगी और अनेक नाव्य जल-मार्ग बन जायेंगे। इस योजना से सम्पूर्ण महानदी घाटी और विशेषकर सम्बल, सोनपुर तथा डेलटा प्रदेशों को लाभ पहुँचेगा।

योजना के प्रथम वर्ष में ८५,५०० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायेगी और ४ लाख ४८ हजार एकड़ भूमि पर सिंचाई की जायेगी। सिंचाई की नहरों की लम्बाई ५७४ मील होगी। इसका अधिकांश भाग १९५६ के जुलाई मास तक पूरा हो जायेगा और ३०००० किलोवाट बिजली बनने लगेगी। सन् १९५७-५८ तक बिजलीघर भी बन जायेगा। और तब ८५००० किलोवाट बिजली बनने लगेगी। इसकी उत्पादन क्षमता १२३००० किलोवाट होगी। इससे उड़ीसा के प्राकृतिक साधनों व सम्पत्ति का उपभोग हो सकेगा। इस समय ही राज गंगपुर नामक स्थान
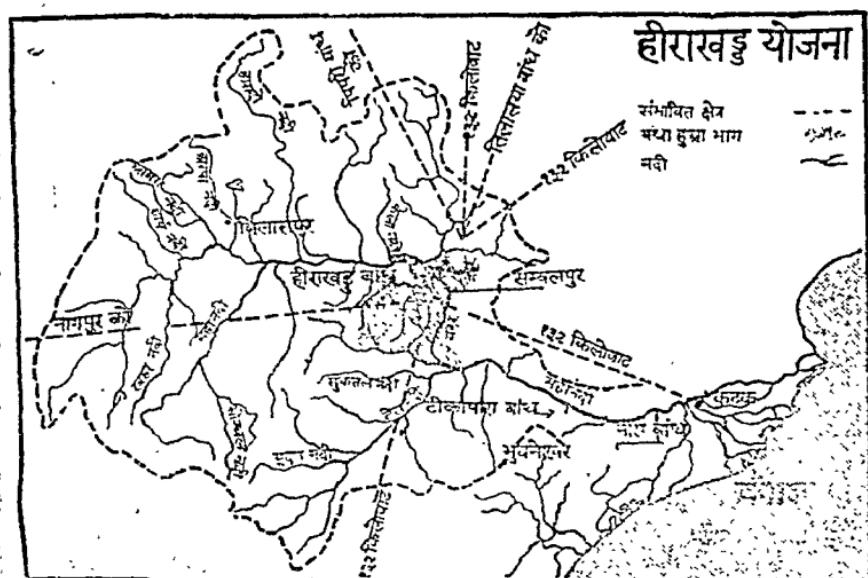
चित्र ३८—महानदी पर बांधों की स्थिति ध्यान देने योग्य है।

पर एक सीमेंट फैक्टरी चालू हो गई है। इसके आसपास अल्यूमिनियम मिश्रण, फेरो-क्रोम, फेरो सिलकन आदि के उत्पादन के कारखाने भी सस्ती शक्ति के उपलब्ध होते

ही खुल जायेंगे। यहां के बाक्साइट और अन्य खनिज पदार्थों का भी उपभोग हो सकेगा। यहां से सिंचाई की योजना से देश का खाद्यान्न उत्पादन ७५०,००० टन अधिक हो जायेगा और ४५ लाख मन धान अधिक उत्पन्न किया जा सकेगा।

कोसी योजना—यह बिहार की सबसे महत्त्वपूर्ण योजना है और इसके द्वारा निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी:—

१. सिंचाई, २. जल विद्युत उत्पादन और ३. जल-मार्गों की व्यवस्था।

इन तीनों मुख्य उद्देश्यों के अतिरिक्त इस योजना के पूरा होने पर भूमि का कटाव रुक जायेगा। मिट्टी जो अब तक नदी द्वारा बहा ले जाई जाती थी उसे रोक कर खेती योग्य बनाया जा सकेगा। पानी से घिरे हुए क्षेत्रों से पानी के निकास का उचित प्रबन्ध करके उन भागों को खेती के काम में ले आया जायेगा। इसके अलावा मलेरिया के प्रकोप को रोक लिया जायेगा और आमोद-प्रमोद तथा मछली पालने की सुविधाएं प्रदान की जायेंगी।

इस योजना के अन्तर्गत नेपाल में छत्र-कन्दरा के आरपार ७५० फीट ऊंचा एक बांध बनाया जावेगा और इस प्रकार ११० लाख घन फीट जल को एक जलाशय के रूप में इकट्ठा किया जायेगा। कोसी नदी पर दो जगह अवरोधक बनाये जावेंगे—एक नेपाल में और दूसरा नेपाल-बिहार की सीमा पर। प्रथम अवरोधक के दायीं और बायीं ओर से दो नहरें निकलेंगी और इन दोनों नहरों की सहायता से नेपाल की १० लाख एकड़ भूमि को सींचा जावेगा। नेपाल-बिहार की सीमा पर दूसरे अवरोधक से ३ नहरें निकाली जावेंगी। दो नहरें बायें किनारे पर होंगी और
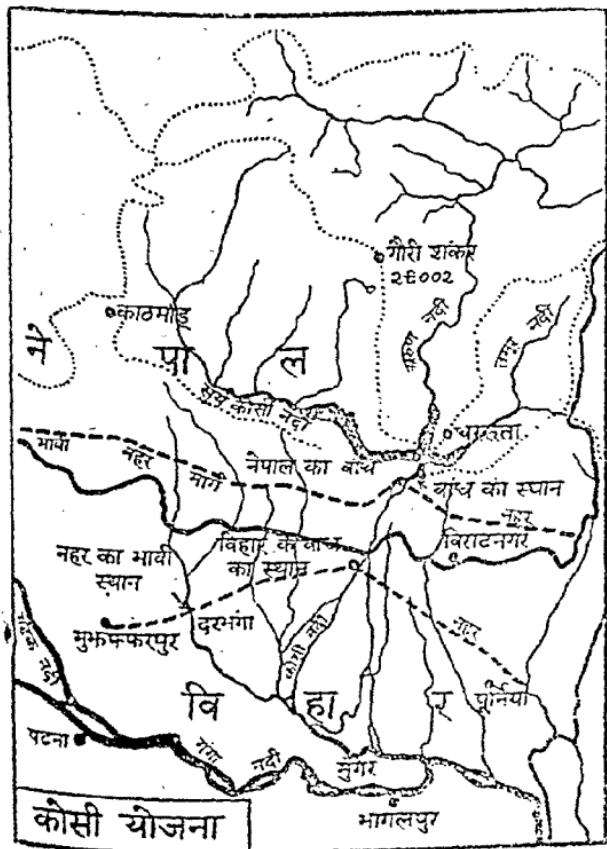
चित्र ३६—इस योजना से उत्तरी बिहार को विशेष लाभ होगा।

एक दाहिने किनारे पर। इन तीनों नहरों से उत्तरी विहार के पूर्निया, दरभंगा और मुजफ्फरपुर जिलों में कोई २० लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी।

बांध के स्थान पर जल-विद्युत उत्पन्न करने का आयोजन किया जाएगा और १८ लाख किलोवाट सस्ती शक्ति उत्पन्न की जाएगी। इस योजना के पूरा होने में १० साल लग जाएंगे और लगभग ६० करोड़ रुपया व्यय होने का अनुमान है।

तुंगभद्रा योजना—तुंगभद्रा कृष्णा की सहायक नदी है। इसके आरपार मुलापुरम स्थान पर १६० फीट ऊँचा और ८,२०० फीट लम्बा एक बाँध बनाया जाएगा। इस प्रकार बनाये हुए जलाशय में २६ लाख घन फीट पानी एकत्रित हो सकेगा और इससे निकाली हुई नहरों द्वारा मद्रास और हैदराबाद राज्यों की ६ लाख एकड़ भूमि को सींचा जा सकेगा। इससे मद्रास में थोड़ी जल-विद्युत भी पैदा की जाएगी। इसके दाहिने किनारे से निकाली जाने वाली नहर २२५ मील लम्बी होगी और मद्रास राज्य की २,५०,००० एकड़ भूमि को सींचेगी। इसके बायें किनारे से १२७ मील लम्बी नहर निकाली जावेगी जो हैदराबाद राज्य की ४½ लाख एकड़ भूमि को सींचेगी। जुलाई १९५३ में इस से आंशिक रूप से सिंचाई होने लगी है। परन्तु पूरी योजना अनुमानतः १९५६ के अन्त तक तैयार होगी और तब मैसूर, हैदराबाद और आन्ध्र राज्यों में २½ लाख टन अधिक उत्पादन होगा। इससे १,२४,८०० किलोवाट बिजली भी बनाई जाएगी। आन्ध्र-मैसूर की ओर दो बिजलीघर होंगे—एक बाँध के नीचे की ओर और दूसरा २१५ मील लम्बी नहर के अन्त में भूखा सागर पर। शुरू में दोनों ही बिजलीघरों में ९००० किलोवाट क्षमता के उत्पादक यन्त्र होंगे। हैदराबाद की ओर बाँध के नीचे एक जल-विद्युत केन्द्र बनाया जायेगा। यहाँ ७५०० किलोवाट क्षमता के तीन उत्पादक यंत्र लगाये जायेंगे।

भाखरा-नंगल योजना—यद्यपि इस योजना को सन् १९०९ में तैयार कर लिया गया था परन्तु कुछ कारणों वश सन् १९४६ तक इस पर काम शुरू न हो सका। सन् १९४१ में सिंध सरकार की माँग पर पंजाब सरकार पर काम न शुरू कर सकने का एक ४ सालाना प्रतिबंध लगा दिया गया। इसकी मियाद सन् १९४५ में खतम हुई और सन् १९४६ में इस योजना पर काम शुरू कर दिया गया। इस समय यह भी देखा गया कि पंजाब की पाँचों नदियों के जल का अधिकतर उपभोग पश्चिमी पंजाब में ही होता है और भविष्य में सिंचाई के साधनों को बढ़ाने का एक-मात्र उपाय मानसून के जल को इकट्ठा करना है। इस खयाल से और भी अधिक जल्दी की गई।

इस समय पूर्वी पंजाब में सिर्फ यही एक बहुधंधी योजना है। पूर्वी पंजाब में शक्ति के साधनों के अभाव के कारण उद्योग-धंधों की कोई विशेष उन्नति नहीं हो पाई है। पूर्वी पंजाब में न तो कोयला ही है और न खनिज तेल। इसलिये उद्योग-धंधों के लिये केवल एक शक्ति का साधन रह जाता है—जल-विद्युत। जल-विद्युत के उत्पादन से ट्यूबवैल भी खुल सकेंगे और उनके द्वारा खेती की उन्नति होगी।

भाग्यवश पूर्वी पंजाब में जल-विद्युत के उत्पादन की बड़ी भावनाएँ हैं। सतलज नदी से भाखरा और नंगल स्थानों पर जल-विद्युत बनाई जा सकती है।

भाखरा योजना के अन्तर्गत सरहिन्द नहर के स्रोत रोपड़ से कोई ५० मील ऊपर भाखरा कन्दरा में सतलज नदी पर आरपार एक बाँध बनाया जावेगा। यह बाँध मजबूत सीमेंट व कांक्रीट का होगा और इसकी ऊँचाई ६८९ फीट होगी। इस प्रकार लगभग ७२ लाख घनफीट जल को इकट्ठा किया जावेगा और इसमें से करीब ५५ लाख घनफीट जल की सहायता से जल-विद्युत उत्पन्न की जावेगी और बाद में उसी जल से सिंचाई भी होगी। यह समुद्रतल से १६८० फीट ऊँचा होगा; बाँध की कुल ऊँचाई ६८० फीट होगी और संसार के सीधे बाँधों में यह सब से प्रमुख होगा। इस पानी से करीब ६६ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होगी जिसका ब्योरा इस प्रकार है—

पंजाब	३८,७५,७२५ एकड़
पेप्सू	१०,८७,९८० एकड़
राजस्थान	९,२०,००० एकड़

इस व्यवस्था से खेती की उपज इस प्रकार बढ़ जावेगी—

गेहूँ और अन्य खाद्यान्न	११३ लाख टन
कपास	८ लाख गाँठ
गन्ना	५ लाख टन
दालें और तिलहन	१ लाख टन
जानवरों का चारा	१५ लाख टन

इस सुविधाजनक स्थिति के उत्पन्न हो जाने पर ३०,००० की आबादी की कम-से-कम ३० और मंडियाँ बन जाएँगी जिनमें करीब ९ लाख शहरी जनता को फिर से बसाया जा सकेगा। ६६ लाख खेतिहर भूमि पर २५ लाख किसानों को फिर से बसाने का प्रबन्ध हो सकेगा। और करीब १,८६,००० किलोवाट बिजली तैयार होगी। इसमें से भाखरा नहर व्यवस्था की सहायक ४० मील लम्बी नंगल-जलविद्युत नहर से ९६,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाएगी।

इस बाँध की लम्बाई ऊपर शिखर पर १७००० फीट होगी और नीचे जल के भीतर इसकी चौड़ाई ११०० फीट। ऊपर शिखर पर एक ३० फीट चौड़ी सड़क बनाने की भी योजना है। इस बाँध के निर्माण के समय सतलज नदी के पानी को ५० फीट चौड़ी दो नालियों द्वारा दाईं-बाईं ओर बहा दिया जायेगा। प्रत्येक नाली करीब आधा मील लम्बी होगी और पहाड़ी भूमि से होकर जायेगी। भाखरा नहर व्यवस्था तैयार हो गई है। ये नहरें नंगल जल-विद्युत नहर के बिल्कुल पीछे शुरू होती हैं और प्रधान नहरों की लम्बाई लगभग ७४० मील है। इसकी वितरक उप-शाखाओं की कुल लम्बाई २२०० मील है। राजस्थान और पेप्सू में नहरों की खुदाई जारी है।

नंगल-योजना के अन्तर्गत सतलज नदी के आरपार भाकरा से ८ मील नीचे नंगल स्थान पर एक सहायक बाँध या अवरोधक बनाया गया है। इस बाँध की सहायता से नदी के जल को नंगल जल-विद्युत नहर में फेर दिया गया है। इससे भाखरा बाँध में नित्य-प्रति होने वाले न्यूनाविकरण के लिये स्थान मिल जाएगा और इनसे और अधिक बिजली उत्पन्न हो सकेगी।

नंगल बाँध मजबूत कांक्रीट से तैयार किया गया है और ९१ फीट ऊँचा, १०२९ फीट लम्बा व ४०० फीट चौड़ा है। नदी के जल के अन्दर ५० फीट की गहराई पर इसकी नींव डाली गई है। इससे निकलने वाली नहर में ३० फीट चौड़ी २८ खाड़ियाँ हैं और प्रत्येक में एक लोहे का दरवाजा लगा है। इसकी सहायता से नदी के जल को वर्तमान सतह से ५० फीट ऊपर पहुँचा दिया गया है।

नंगल जल-विद्युत व्यवस्था में दो उत्पादक केन्द्र बनाये गए हैं—एक गंगूवाल में और दूसरा कोटला में। इनमें प्रत्येक से ४८००० किलोवाट बिजली तैयार होगी और इस बिजली से रूपड़, अम्बाला, करनाल, पानीपत, हिसार, भिवानी, रोहतक नाभा, पटियाला, फीरोजपुर, फरीदकोट, कालका, कसौली, शिमला, जलन्धर, होशियारपुर, कपूरथला, धिलावान और ४९ अन्य छोटी-छोटी बस्तियों को बिजली भेजी जा रही है। जब भाखरा की योजना भी तैयार हो जायेगी तो दिल्ली, गुड़गाँव, पलवल और रिवाड़ी तक बिजली का प्रबंध हो जायेगा। नंगल योजना से तैयार बिजली रोहतक जिले तक पहुँचाई जा रही है। पूर्ण विकास होने पर १४४००० किलोवाट बिजली बनाई जावेगी।

इस जल-विद्युत की सहायता से पूर्वी पंजाब में और अधिक यंत्र-संचालित कुएँ बनाये जाएँगे और उनसे सिंचाई के साधनों में वृद्धि हो सकेगी। ट्यूब-वैल के बन जाने से पानी से भरे हुए भागों का पानी हटाकर शुष्क भागों को पहुंचाया जा सकेगा। कुछ समय बाद इस शक्ति का उपभोग रेलों में भी हो सकेगा, विशेषकर अमृतसर और दिल्ली के बीच मुख्य रेलगाड़ियों में। इस योजना से सिंचाई के क्षेत्र में भी विशेष लाभ होगा। इससे ५ नहरें निकाली जावेंगी जो अपनी नालियों द्वारा राजस्थान व पंजाब के रेगिस्तानी प्रदेश में ९,२०,००० एकड़ भूमि की सिंचाई करेंगी। इसमें सबसे बड़ी नहर का नाम करनी सिंह नहर होगा और इस पर काम शुरू भी कर दिया गया है। राजस्थान और खासकर बीकानेर के लिए तो इस योजना का चम्बल की योजना के बाद सब से अधिक महत्व है।

सन् १९५५ में नवम्बर मास से भाखरा का बाँध कांक्रीट द्वारा बनना शुरू हुआ। आशा है कि कुल ५३ हफ्तों में या एक सवा साल में यह बिलकुल ही बन कर तैयार हो जाएगा। जल-विद्युत उत्पादन के लिए विभिन्न मशीनें आदि भी शीघ्र ही लग जायेंगी। सम्पूर्ण योजना १९५८-५९ तक पूर्ण होगी।

पूरा होने पर पंजाब, पेप्सू और बीकानेर प्रदेशों को अप्रत्याशित लाभ होगा। करीब १२८ नगरों में बिजली पहुँचाई जा सकेगी गाँवों में बिजली से संचालित ८०० ट्यूब वैल चालू हो जाएँगे और ४ लाख किलोवाट बिजली की सहायता से २५ लाख

चित्र ४०
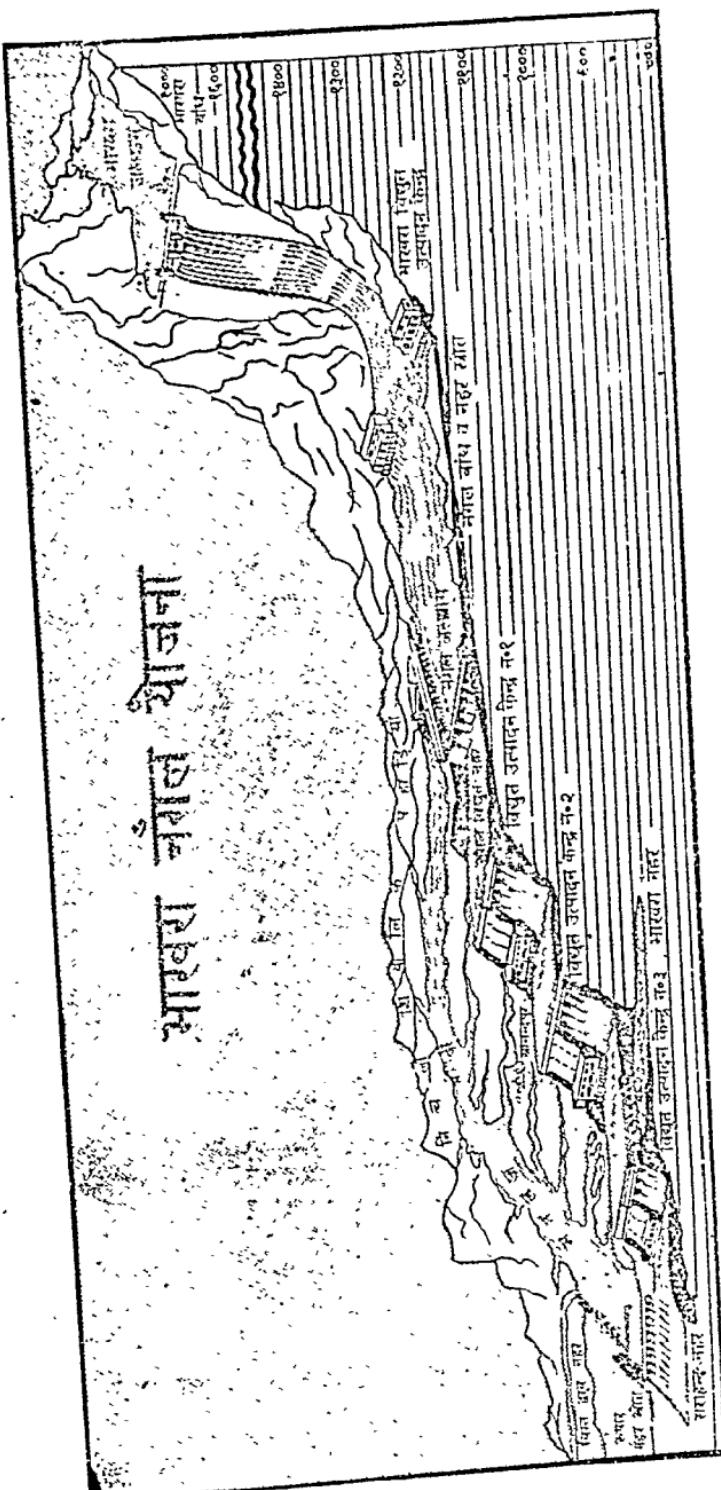
व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए नए उद्योग-धन्धे खोले जा सकेंगे। इस प्रकार इस योजना से देश को ६० करोड़ विदेशी मुद्रा की वचत रहेगी।

रिहान्द बांध योजना—यह उत्तर प्रदेश की सबसे प्रमुख बहुधंधी योजना है। रिहान्द नदी सोन की सहायक है और इसके आर-पार पिपरी में बांध बना कर भारत का सबसे बड़ा जलाशय तैयार किया जायेगा। यह बांध ३,००० फीट लम्बा होगा और इसमें ६० लाख घनफीट जल इकट्ठा किया जा सकेगा। इस प्रकार बनाई गई झील का क्षेत्रफल १८० वर्गमील होगा।

इस योजना के पूरा होने पर उत्तर प्रदेश को अनेक सुविधाएँ प्राप्त हो जायेंगी।

(१) राज्य के पूर्वी भागों में सिंचाई की कोई व्यवस्था नहीं है इसलिए वहां की फसलें वर्षा पर निर्भर रहती हैं। इस योजना से घाघरा और गंगा यमुना से ४,००० मील लम्बी पम्पदार नहरें निकल सकेंगी और ३,००० ट्यूब-वैल बनाये जायेंगे। इनकी सहायता से नई भूमि पर भी खाद्यान्न उगाये जा सकेंगे।

(२) विस्तृत झील में मछलियों को पाला जा सकेगा।

(३) नहरों द्वारा सोन घाटी और गंगा की घाटी के बीच सम्पर्क स्थापित हो जायेगा और रिहान्द व हुगली के बीच माल से लदे बड़े-बड़े जहाज आ-जा सकेंगे।

(४) इस प्रदेश में बहुत अधिक खनिज सम्पत्ति पाई जाती है और शक्ति के उपलब्ध होने पर प्रदेश की औद्योगिक उन्नति हो सकेगी।

(५) उत्तरी रेलवे के कुछ विभागों में कोयले के स्थान पर विद्युत प्रयोग की जा सकेगी। इस प्रकार प्रति वर्ष कोई २० हजार गाड़ी कोयले की वचत की जा सकेगी।

इस योजना से अन्य बहुत से लाभ हैं। इसके द्वारा रिहान्द और सोन की बाढ़ रुक जायेगी, रिहान्द घाटी में भूमि कटान कम हो जाएगा और रीवा में जंगलों को लगाया जा सकेगा। इसके अलावा किनारे की भूमि का उचित उपयोग हो सकेगा। इस प्रकार इस योजना से बहुत से लाभ होने की सम्भावनाएँ हैं और देश के विकास व उन्नति में इसका बड़ा महत्व है।

प्रश्नावली

१. अतिरिक्त भूमि को खेती योग्य बनाने और वर्तमान भूमि की प्रति एकड़ उपज बढ़ाने के लिए भारत सरकार ने क्या कुछ किया है? विभिन्न योजनाओं का विवरण दीजिए।

२. बहुधंधी योजनाओं से आप क्या समझते हैं? उत्तरी भारत की दो प्रमुख योजनाओं का वर्णन करिये।

३. "खेती के लिए सिंचाई का उतना ही महत्व है जितना उद्योग-धंधों के

लिए जल-विद्युत का।" इस उक्ति का समर्थन करिए और उदाहरण देते हुए भारत की मुख्य सिंचाई योजनाओं का विवरण दीजिए।

४. 'बहुध्येय सिंचन योजना' से आप क्या समझते हैं? महानदी (हीरा कुड) योजना का पूर्ण विवरण लिखिए।

५. भारत में सिंचाई क्यों आवश्यक है? भारत के एक मानचित्र पर नहरों, कुओं व तालावों द्वारा सिंचित प्रदेशों को दिखलाइए और प्रत्येक प्रणाली का महत्व प्रदेश विशेष की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार बतलाइए।

६. दामोदर घाटी योजना का एक संक्षिप्त विवरण दीजिए। इससे बंगाल व विहार को क्या लाभ होने की सम्भावना है?

७. भारत में सिंचाई की कौन-कौन-सी रीतियाँ काम में लाई जाती हैं। प्रत्येक का क्षेत्र बतलाइए।

८. "उत्तर प्रदेश में नहरों द्वारा सिंचाई बहुत विकास कर गई है।" इस कथन पर अपने विचार प्रगट कीजिए।

९. भाखरा नंगल बहुधंधा योजना के बारे में आप क्या जानते हैं? इससे दिल्ली व पूर्वी पंजाब राज्यों को क्या लाभ होने की संभावना है?

अध्याय : : पांच

वन-सम्पत्ति और उनकी उपज

भारत में विस्तृत वन प्रदेश पाए जाते हैं और भारत भूमि के १/५ भाग में जंगल पाए जाते हैं। इस विस्तृत वन प्रदेश में कई तरह की वनस्पति पाई जाती है, और मिट्टी, जलवायु तथा अन्य स्थानीय दशाओं के अनुसार कहीं घास के मैदान हैं तो कहीं कांटेदार झाड़ियां ; कहीं कठोर लकड़ी के वन हैं तो कहीं मुलायम लकड़ी के विशाल वृक्ष। भारत के समस्त भू-खण्ड के पचमांश भाग में या १,६०,००० वर्ग-मील क्षेत्रफल में जंगल पाये जाते हैं। इसमें से १२ प्रतिशत वन प्रदेश की व्यापारिक महत्ता है और उनका आर्थिक उपयोग भी। जम्मू व काश्मीर को छोड़कर भारत की ९३० लाख एकड़ भूमि पर वन पाए जाते हैं जिनका प्रादेशिक वितरण इस प्रकार है :—

हिमालय प्रदेश १५३ लाख एकड़ ; उत्तरी मैदान ४८ लाख एकड़ ; दक्षिणी पठार ५५७ लाख ; पश्चिम घाट व तटीय मैदान ७९ लाख एकड़ ; पूर्वी घाट व तटीय मैदान ९५ लाख एकड़।

वन प्रदेशों का भौगोलिक वितरण (१९४८-४९)

राज्य	वन प्रदेश का क्षेत्रफल (वर्ग मील)	राज्य	वन प्रदेश का क्षेत्रफल (वर्गमील)
आसाम	२०,९२९	काश्मीर	११,०५८
बिहार	२,४७३	मैसूर	४,४४८
बम्बई	१५,३४७	पेप्सू	३३२
मध्य प्रदेश	१९,४१४	राजस्थान	१२,७८२
मद्रास	१७,५०४	सौराष्ट्र	६३१
उड़ीसा	२,८७४	ट्रावनकोर-कोचीन	३,०६५
पंजाब	४,८७३	'सी' वर्ग राज्य	१९,३०३
उत्तर प्रदेश	१०,७४३	अण्डमन	२,१९९
पश्चिमी बंगाल	२,६८०		
हैदराबाद	९,४५५	कुल योग	१,६०,१०४

वनों के प्रकार—भारत में पाये जाने वाले वन प्राय: ५ प्रकार के हैं :—

१. **शुष्क प्रदेशों के जंगल**—इनका सबसे महत्वपूर्ण वृक्ष बबूल है और यह राजपूताना तथा दक्षिणी पंजाब में पाया जाता है।

२. पतझड़ वन—ये जंगल हिमालय की तराई तथा प्रायद्वीप के पठार पर पाए जाते हैं और गर्मी के मौसम में अपनी पत्तियां गिरा देते हैं। इन जंगलों की मुख्य लकड़ी साल व टीक है। परन्तु इनके अलावा और बहुत-सी बहुमूल्य वस्तुएँ इनसे प्राप्त होती हैं।

३. सदाबहार वन—जहां वर्षा की मात्रा अधिक है वहां ये वन पाये जाते हैं। दक्षिणी प्रायद्वीप के पश्चिमी तट और हिमालय की पूर्वी निचली पहाड़ियों पर ये वन पाये जाते हैं और इनके मुख्य पेड़ बांस, ताड़, फर्न और रबड़ हैं।

चित्र ४१—भारत में वन प्रदेशों और खेतिहर भूमि में कोई संतुलन नहीं है। कुर्ग, मद्रास और मध्य प्रदेश में विस्तृत वन प्रदेश हैं परन्तु इनके अलावा अन्य प्रदेशों में वनाच्छादित भूमि बहुत कम है।

४. पहाड़ी वन—वर्षा की मात्रा और ऊँचाई के अनुसार पहाड़ी वनों में विभिन्नता पाई जाती है। पूर्वी हिमालय प्रदेश और आसाम में इन वनों में आक व मेगनोलिया के वृक्ष पाये जाते हैं। आसाम में ३,००० से ६,००० फीट की ऊँचाई तक

चीड़ के पेड़ बहुतायत से मिलते हैं। उत्तरी-पश्चिमी हिमालय प्रदेश के इन वनों में देवदार, चीड़ और ओक के वृक्ष पाए जाते हैं। भारत की मुलायम लकड़ी इन्हीं वनों से प्राप्त होती है।

५. समुद्री वन—समुद्र के किनारों व ज्वारभाटा के स्थानों पर इस प्रकार वन पाए जाते हैं। इनमें पाए जाने वाले वृक्षों में सुन्दरी जाति के वृक्ष प्रधान हैं।
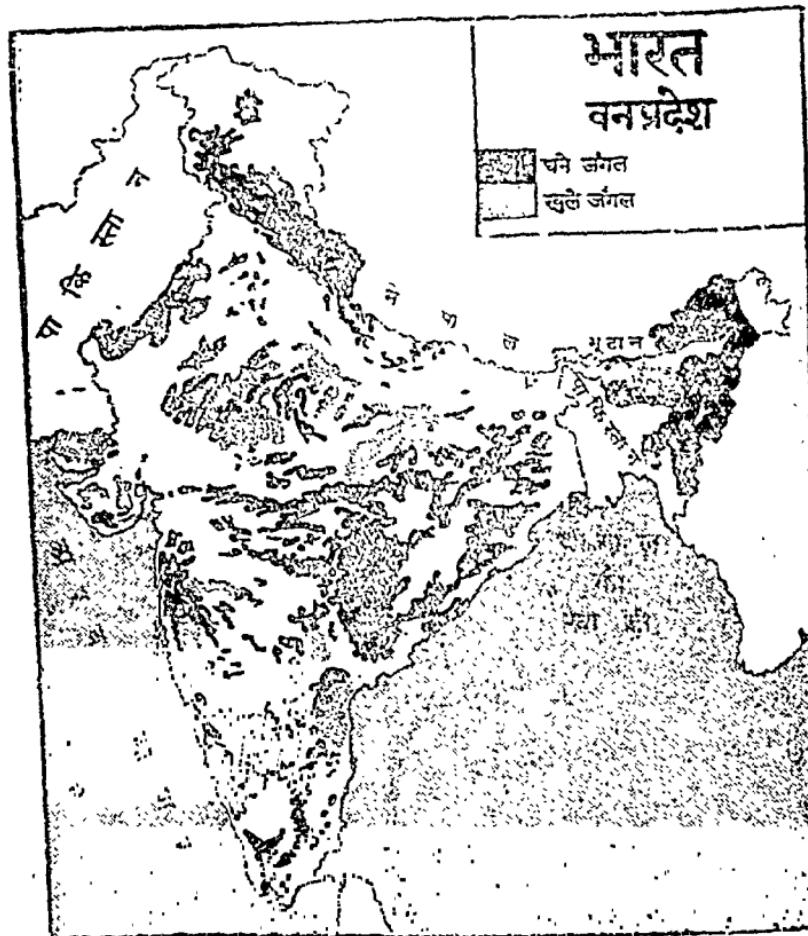
चित्र नं० ४२—भारत में घनी उपज के जंगल ८०० लाख एकड़ भूमि पर पाए जाते हैं।

भारतीय वन प्रदेशों का आर्थिक महत्त्व—भारतीय वनों से बहुत लोगों की जीविका चलती है। बढ़ई, लकड़हारे, लकड़ी चीरने वाले, बोझा ढोने वाले और सामान ले जाने वाले भारतीय वन-सम्पत्ति के सहारे ही अपनी जीविकोपार्जन करते हैं। इसके अलावा भारती वनों से अनेक प्रकार का कच्चा माल प्राप्त होता है और

सके सहारे बहुत से उद्योग-धंधे उन्नति कर गए हैं। भारतीय वनों से दो प्रकार की उपज प्राप्त होती है—

(१) प्राथमिक उपज—लकड़ी और ईंधन।

(२) गौण उपज—लाख, चमड़ा साफ करने की छाल, तेल, तारपीन, गोंद इत्यादि।

भारत का कागज व्यवसाय वन प्रदेशों से उपलब्ध बांस और घास पर ही निर्भर है। इसी प्रकार दियासलाई उद्योग के लिए मुलायम लकड़ी भी वनों के वृक्षों से ही प्राप्त होती है।

वनों से अपहरण की हुई सामग्री को पूरा किया जा सकता है पर बहुत मन्द गति से। इसलिए वनों की लकड़ी का ईंधन के लिए उपयोग करना बहुत हानिकर है। वास्तव में वन-सम्पत्ति का उपभोग और अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्यों के लिए किया जाना चाहिए। लकड़ी को किसी भी दशा में ईंधन की तरह प्रयोग नहीं करना चाहिए।

भारत में प्रतिवर्ष २६०० लाख घन फीट व्यापारिक लकड़ी उत्पन्न होती है। इनमें देवदार, साल, रोज, पदौक, शीशम, महोगनी, आबनूस और टीक की लकड़ी विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। भारत से हांगकांग, संयुक्त राष्ट्र और अन्य देशों को ईंधन, चन्दन और टीक की लकड़ी के तख्ते निर्यात किये जाते हैं। सन् १९५१-५२ में भारत से २२७७ घन टन तोल की कठोर व अन्य व्यापारिक लकड़ी बाहर भेजी गई।

लाख—लाख को उत्पन्न करने वाला एक कीड़ा होता है जो विभिन्न वृक्षों के रस को पीकर रहता है। लाख को उत्पन्न करने वाले कीड़े प्रधानतः पलास, पीपल और कुसुम नामक वृक्षों पर रहते हैं। ये वृक्ष अधिकतर विहार के दक्षिणी-पूर्वी जिलों में, पश्चिमी बंगाल के सीमान्त प्रदेशों में, उत्तर प्रदेश, विन्ध्यप्रदेश, उड़ीसा और आसाम में पाये जाते हैं। अतः इन्हीं प्रदेशों में ही लाख का उत्पादन होता है। भारत के कुल उत्पादन का ६० प्रतिशतांश केवल विहार के छोटा नागपुर प्रदेश से ही प्राप्त होता है। परन्तु उद्योग-धंधों का अधिक विकास न होने के कारण भारत में कुल २ प्रतिशत लाख खर्च होता है। बाकी सब दूसरे देशों को भेज दिया जाता है।

भारत में लाख से वस्तु निर्माण करने के कई छोटे-छोटे कारखाने उत्तर प्रदेश, विहार और पश्चिमी बंगाल में स्थित हैं। उत्तर प्रदेश के मिरजापुर और विहार के पकूर स्थानों का लाख-निर्माण उद्योग विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

लाख के व्यापार में भारत का एकाधिपत्य है। सब से अधिक लाख ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य को जाती है और निर्यात की कुल मात्रा का ९८ प्रतिशत भाग कलकत्ता के बन्दरगाह से बाहर भेजा जाता है। सन् १९५१-५२ में भारत ने ७,१७,००० हन्डरवेट लाख बाहर के देशों को निर्यात किया।

भारत में लाख का उपभोग

ग्रामोफोन रिकार्ड	३५ प्रतिशत
पालिश और वार्निश	२० प्रतिशत
बिजली निरोधक	१५ प्रतिशत
टोप को कड़ा बनाने में	१० प्रतिशत
सील करने की बत्ती	५ प्रतिशत
लीथोग्राफ की स्याही बनाने इत्यादि	१५ प्रतिशत

हाल में भारतीय चपड़ा उद्योग को स्याम की सस्ती लाख की स्पर्धा का सामना करना पड़ा है। ऐसा अनुमान है कि कई प्रकार की कृत्रिम लाख व सस्ती स्यामीज़ लाख की स्पर्धा के कारण भारतीय चमड़े की मांग कम हो जायेगी। संयुक्त राज्य अमरीका अब ग्रामोफोन के रिकार्ड बनाने के लिये भारत से बहुत कम लाख मंगवाता है। भारतीय चपड़ा व लाख व्यवसाय की दूसरी बड़ी समस्या मिलावट की है। बहुधा भारतीय चमड़े में ३० प्र. श. तक गोंद मिला रहता है। कभी-कभी शीरा व चूर्ण मिट्टी भी मिली पाई जाती है। चपड़ा व्यवसाय की प्रगति के लिये इस प्रकार की मिलावट पर रोक लगाई जानी अति आवश्यक है।

गोंद—हिमालय प्रदेश और आसाम की पहाड़ियों पर चीड़ के वृक्षों से गोंद प्राप्त होता है। इससे चिपकाने वाला गोंद तथा तारपीन का तेल तैयार किया जाता है। इसके अलावा लाख की चूड़ियाँ इत्यादि बनाने में, कागज के कारखानों में तथा साबुन की मिलों में भी गोंद का उपभोग होता है। इससे प्राप्त तारपीन का तेल दवाइयों व वार्निश बनाने में प्रयोग किया जाता है।

मेराबोलन—यह वृक्ष मद्रास, बम्बई, पश्चिमी बंगाल, छोटा नागपुर, उड़ीसा तथा अन्य बहुत से प्रदेशों में पाया जाता है। इसी मेल का एक वृक्ष कोयम्बटूर में भी उगता है परन्तु उसके फल बहुत छोट होते हैं और पूरा वृक्ष पीपल के वृक्ष से ऊँचा होता है। इस मेराबोलन के वृक्ष की हर वस्तु काम की होती है। इसके फल, छाल, पत्ते और लकड़ी सभी का विविध कामों में उपभोग होता है। इसकी लकड़ी बड़ी मजबूत होती है। जबलपुर क्षेत्र का मेराबोलन सबसे अच्छा होता है और इसे बहुत-सी दवा व रंग बनाने में प्रयोग करते हैं। इसकी छाल से चमड़ा साफ किया जाता है। इसके फल व पत्ते के छाल को बहुत से रंगों व दवाइयों में मिलाते हैं। मद्रास में सूत, ऊन व रेशम को रंगने में इसका विस्तृत उपयोग होता है। आसाम में अंडी और मूगा रेशम को मेराबोलन के क्षार में ही रंगा जाता है। सन् १९५१-५२ में भारत से ८,३४,००० हन्डरवेट मेराबोलन निर्यात किया गया। इसमें से आधा निर्यात तो मद्रास से हुआ और एक-चौथाई बम्बई से। ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, बेल्जियम, चीन, जापान, संयुक्तराष्ट्र और आस्ट्रेलिया में इनकी बड़ी मांग रहती है और भारत के निर्यात का अधिकतर भाग उन्हीं देशों को जाता है।

हाल के दिनों में भारत के वनों से प्राप्त गौण उपज का महत्व बहुत बढ़

गया है और इस प्रकार के कच्चे माल से बहुत प्रकार की दवाइयाँ व सुगन्धित वस्तुएँ बनाई जाती हैं। चन्दन का तेल, बीरोजा, पालमरोजा, लीनालोल तथा नीम का तेल वन से उपलब्ध सामग्री से ही बनाये जाते हैं। इनका साबुन व दवाई में विस्तृत प्रयोग होता है। भारत में कुछ ऐसे पौधों व जड़ी-बूटियों की मांग है जिनके अन्दर दवा के गुण मौजूद रहते हैं। कुचला, पिपरमिन्ट, जूनिपर आदि इसी प्रकार की वस्तुएँ हैं जो वन से प्राप्त होती हैं।

देहरादून की वन अनुसंधानशाला में वैज्ञानिक लोग विविध प्रकार की खोजों में संलग्न हैं। वे लोग ऐसी लकड़ी का पता लगाना चाहते हैं जिसको हवाई जहाज बनाने में प्रयोग किया जा सके और दूसरी ऐसी वस्तुएँ जिनसे सस्ता छपाई का कागज तैयार हो सके। बैटरी को अलग करने की या विद्युत निरोधक उपयुक्त देशी लकड़ी की खोज भी हो रही है। साथ-साथ पेंसिल बनाने के लिये उपयुक्त लकड़ी खोजने का भी प्रयत्न किया जा रहा है। वैज्ञानिक खोज से पता चला है कि भारतीय देवदार की लकड़ी पेंसिल बनाने के लिये बहुत उपयुक्त है। इस समय भारतीय पेंसिल व्यवसाय पूर्वी अफ्रीका के देवदार पर निर्भर है। भारतीय देवदार इससे कहीं अच्छा है और इससे उच्चकोटि की पेंसिलें बन सकती हैं।

भारत में वन-सम्पत्ति के उपयोग में कई अड़चनें हैं जिनमें सबसे मुख्य रुकावट यातायात सम्बन्धी है। भारी लकड़ी तथा अन्य वस्तुओं को वन प्रदेशों से निकाल कर सड़क, रेल व नदी द्वारा कारखानों तक लाने का प्रश्न बड़ा टेढ़ा है। इस समय यह काम निम्नलिखित दो तरीकों से किया जाता है—(१) बैल, भैंस या हाथियों की सहायता से इस सामग्री को सड़कों, रेलों अथवा नदियों तक लाया जाता है और उनमें से किसी एक साधन द्वारा कारखानों तक पहुँचाया जाता है। (२) वर्षा के महीनों में जब नदियों में पानी अधिक रहता है लकड़ी के तख्तों को बहा दिया जाता है और फिर बहुत दिनों के बाद इन्हें पानी में से घसीट कर लकड़ी चीरने के कारखानों में पहुँचाते हैं। यातायात की यह अड़चनें हिमालय प्रदेश के वनों के उपभोग में सबसे बड़ी रुकावट हैं। यही कारण है कि भारत में मुलायम लकड़ी का काफी भण्डार होते हुए भी इसे उपयोग नहीं किया जा सकता है।

भारत की प्रमुख व्यापारिक लकड़ी—आजकल के युग में लकड़ी का विशेष महत्व है और विशेषज्ञों का विचार है कि दबाए हुए बांस तथा अच्छी तरह तैयार की हुई लकड़ी के तख्ते लोहे व इस्पात की तरह मजबूत होते हैं और इस्पात के स्थान पर इस प्रकार की लकड़ी या बांस का प्रयोग सर्वथा संभव है। भारत में अनेक प्रकार की लकड़ी के वृक्ष पाये जाते हैं और बांस का तो अटूट भंडार है। भारत में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के वृक्ष निम्नलिखित हैं:—

वेंग—यह सफेद रंग की मुलायम लकड़ी होती है और इसका वृक्ष आसाम में पाया जाता है।

सागौन—यह साधारण कठोर लकड़ी है और लाल-भूरे रंग की होती है।

इसका वृक्ष पश्चिमी तटीय प्रदेशों में पाया जाता है और कहवा के डिब्बे, मेज-कुर्सी तथा पानी के जहाज़ बनाने में प्रयोग किया जाता है।

बीजसाल—बम्बई, मद्रास और विहार में उपलब्ध यह लकड़ी मजबूत, ठोस व कठोर होती है। इससे दरवाजों व खिड़कियों की चौखटें, मेज़-कुर्सी तथा खेती के औज़ार बनाये जाते हैं।

नीला चीड़—इसका वृक्ष पूर्वी पंजाब में पाया जाता है और गृह-निर्माण में बहुत प्रयोग किया जाता है।

देवदार—यह भी साधारणतया कठोर होता है। इसमें तेल का अंश काफी रहता है और तेज सुगन्धि भी आती है। इसे रेल के स्लीपरों व गृह-निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

धूप—पश्चिमी घाट के ढालों पर यह वृक्ष उगता है। इससे गोंद निकलता है और इसकी लकड़ी से चाय के बक्स व सामान बन्द करने की पेटियाँ भी बनाई जाती हैं।

हल्दू—यह पेड़ भारत के हर प्रदेश में पाया जाता है। इसका रंग पीला और लकड़ी कठोर व ठोस होती है। इससे मेज-कुर्सी तथा सिगार के डिब्बे बनते हैं।

भारतीय रोज लकड़ी—संसार भर में प्रसिद्ध है और इसके वृक्ष पश्चिमी घाट के दक्षिणी भाग में पाये जाते हैं। वैसे ये मध्यप्रदेश व उड़ीसा में भी पाया जाता है। इसकी लकड़ी बहुत कठोर और ठोस होती है। इसका रंग काला-भूरा होता है और इन्हीं सब कारणों से इसका मूल्य बहुत अधिक होता है। इससे मेज-कुर्सियां बनती हैं।

शीशम—इसका वृक्ष उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल में पाया जाता है। इसकी लकड़ी बड़ी कठोर व ठोस होती है। इसका रंग भूरा होता है और इस पर पालिश का रंग खूब चढ़ता है। इससे गाड़ी, बैलगाड़ी तथा नाव आदि बनाई जाती हैं।

मेसुआ—इसका वृक्ष मद्रास में बहुत होता है। बहुत मजबूत होने के कारण इससे रेल के स्लीपर बनाये जाते हैं। आसाम में भी यह पेड़ मिलता है।

साल—इसकी लकड़ी की उत्तरी भारत में बड़ी मांग रहती है और इससे रेलों के स्लीपर, मकानों की धरनी, खंभे, तख्ते तथा किवाड़ व खिड़कियाँ बनाई जाती हैं। इसका वृक्ष आसाम, पश्चिमी बंगाल, विहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश में पाया जाता है।

चन्दन—चन्दन की लकड़ी दक्षिण भारत के शुष्क प्रदेशों से प्राप्त होती है और इसका मूल्य भी बहुत अधिक होता है। यह कठोर व ठोस होती है। इसका रंग पीला-भूरा होता है और इसमें से एक तेज सुगन्ध आती रहती है। इस लकड़ी में तेल का अंश भी रहता है और इससे प्राप्त किया हुआ सुगन्धित तेल बड़ी कीमत का होता है। इस पर नक्काशी करके छोटी-छोटी वस्तुएं बनाई जाती हैं जो बड़ी अच्छी मालूम पड़ती हैं। कमरे व घर को सजाने के लिये इनकी विशेष मांग रहती है।

सेमुल—इसका वृक्ष आसाम, बिहार और मद्रास में विस्तृत रूप से पाया जाता है। इसकी लकड़ी मुलायम व सफेद रंग की होती है। इससे खिलौने, सामान बन्द करने के बक्स और तख्ते बनाये जाते हैं।

सुन्दरी—इसका वृक्ष केवल पश्चिमी बंगाल के तटीय भागों में पाया जाता है और इसी के आधार पर इसके वन का नाम सुन्दरवन पड़ गया है। इसकी लकड़ी बड़ी ठोस व कठोर होती है। इससे नाव, मेज, कुर्सी, बल्लियाँ, तख्ते और खंभे बनाये जाते हैं।

सागौन—इसके पेड़ मध्य प्रदेश, मद्रास और बम्बई में पाये जाते हैं। पानी के जहाजों तथा घर के दरवाजों, फर्श और छतों के लिये यह लकड़ी बड़ी ही उपयुक्त होती है और संसार भर में प्रसिद्ध है। भारत में इसे गृह-निर्माण व पोत-निर्माण के लिये प्रयोग करते हैं। इससे पुल, स्लीपर तथा मेज-कुर्सी भी बनाई जाती हैं। परन्तु इस समय अधिकतर सागौन की लकड़ी बाहर भेज दी जाती है।

यदि वैज्ञानिकों की खोज के फलस्वरूप इस्पात के स्थान पर लकड़ी का उपयोग संभव हो सका तो भारत तथा अन्य एशियाई देशों की वन-संपत्ति का उचित उपयोग होगा और इन प्रदेशों की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति हो जायेगी।

प्रश्नावली

१. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिये—

(अ) वनों के प्रकार

(आ) फिर से वन लगाना

(ई) भारतीय वनों की गौण उपज

२. भारत में सागौन के जंगल कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं? उनके पाये जाने के क्या भौगोलिक कारण हैं? जर्मनी के जंगलों की अपेक्षा भारतीय वनों का उपभोग कम होने का क्या कारण है?

३. भारतीय लकड़ी के व्यापार को किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है? भारत से विदेशों को लकड़ी निर्यात करने के विभिन्न उपायों को बतलाइये। भारत के जंगलों की कौन-सी लकड़ी इस दृष्टि से सब से महत्त्वपूर्ण है?

अध्याय : : छः

भारत के पशु और उनसे प्राप्त सामग्री

भारत में पशुओं की संख्या वहुत अधिक है परन्तु उनकी दशा वहुत गिरी हुई है।

भारत में पशुओं की संख्या (१९५२)

गाय-वैल	१,५५,०९९
भैंस	४३,३५१
भेड़	३८,८२९
वकरियाँ	४७,०७७
घोड़े और टट्टू	१,५१४
खच्चर	६०
गधे	१,२३९
ऊंट	६२९
सूअर	४,४२०
मुर्गियाँ	६७,१३५
वत्तखें	६,२६४

गाय-वैल—संसार में गाय-वैल की कुल संख्या ६९०० लाख है। इनमें से १३४० लाख गाय-वैल भारत में पाये जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में संसार के सब से अधिक गाय-वैल पाये जाते हैं और इन्हें खेत जोतने व दूध निकालने के लिये प्रयोग किया जाता है। दूध से मक्खन और घी वनाया जाता है। वैसे सादा दूध भी काफी मात्रा में पिया जाता है। भारत के अधिकतर लोग शाकाहारी हैं। इसलिये उनके भोजन में दूध, दही, मक्खन और घी का वड़ा महत्व है। इसके अलावा भारत की खेती का तो यहाँ के पशु सहारा हैं। यदि ये पशु न होते तो भारत के मैदानों व खेतों पर कोई भी फसलें न उग सकतीं और अनाज के भंडार खाली पड़े रहते। इस प्रकार भारत के गाय-वैल यहाँ के भोजन के मेरुदंड हैं, परन्तु खेद की वात है कि इनकी विशेप देख-भाल नहीं हो पाती। इन्हें पूरी खुराक भोजन भी नहीं मिलता। इनका प्रादेशिक वितरण भी अनियमित है। भारत के वहुत से भागों में घास काफी नहीं होती इसलिये चारा उगाने की विशेप जरूरत है। उत्तर भारत में कृपि उद्यम के विस्तृत होने के कारण प्रायः भूमि के हर उपजाऊ टुकड़े को खेती के काम में ले आया गया है। फलतः पशुओं के चारण के लिये तृण-भूमियों का अभाव ही है। चारा भी अलग से वहुत कम ही उगाया जाता है। अधिकतर विविध

फसलों से बचे हुए भूसे व डंठल को ही पशु खाते हैं। भारत के मुख्य पशु-पालन क्षेत्र गुजरात, मध्य भारत, नेल्लोर, उत्तर प्रदेश, मैसूर और बम्बई हैं।

राज्य सरकारें पशुओं की नस्ल सुधारने की ओर ध्यान दे रही हैं। इस समय भारत के गाय-बैलों की प्रमुख नस्लें निम्नलिखित हैं—

साहीवाल, (दिल्ली, फीरोजपुर, नागपुर), हरियाना (करनाल और हिसार), गीर (बम्बई और बंगलौर), कांकरिग (बड़ौदा), नागौरी (राजस्थान), रंगयाम (मद्रास)।

चाहे हम प्रति मनुष्य पीछे या प्रति एकड़ पर पशुओं की संख्या लें, यहां हर तरीके से संसार के सब से अधिक पशु पाये जाते हैं। इनका देश के आर्थिक जीवन में बड़ा महत्व है। पशु की मेहनत, दूध, दही, घी, खाद तथा अन्य वस्तुओं के दृष्टि-कोण से भारत की पशु संपत्ति का वार्षिक मूल्य १३०० करोड़ रुपये होगा।

परन्तु खेद की बात तो यह है कि यहाँ के पशुओं की दशा बहुत गिरी हुई है। पशुओं की संपत्ति को पूरी तरह से उपयोग किया जा सकता है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि इतने बड़े देश में जहाँ इतनी विभिन्न परिस्थितियां पायी जाती हैं वहाँ इस काम को किस प्रकार सुचारु रूप से किया जाय।

पशुओं की दशा खराब होने से उत्पन्न समस्याओं को हम पांच प्रकार का कह सकते हैं।

(१) नस्ल की निम्नता (२) चारे की कमी तथा चारे का ख़राब होना (३) पशुओं में प्रचलित रोगों की अधिकता (४) कार्य-संचालन व देख-भाल (५) उनसे प्राप्त वस्तुओं की बिक्री का इन्तजाम।

इन सब समस्याओं को हल करने के लिए निम्नलिखित काम करना जरूरी है—(१) अच्छी नस्ल के पशुओं और खासतौर पर बैलों का प्रबन्ध (२) अधिक और अच्छे किस्म के चारे को उगाने का प्रबन्ध (३) पशुओं के स्वास्थ्य की देख-भाल और उनके रहने की दशाओं को स्वच्छ बनाना (४) बेपढ़े-लिखे किसानों में प्रचार द्वारा इस प्रकार की देखभाल के तरीकों पर जोर दिलवाना।

इस दृष्टिकोण से हमारी सरकार की भारतीय खेती अनुसंधान समिति विशेष काम कर रही है और बंबई सरकार द्वारा खोली गई दुग्धशाला व पशुशाला बहुत ही सराहनीय है।

भेड़—भारत में लगभग ३५० लाख भेड़ हैं। परन्तु भेड़ पालने वाले गड़रिये अधिकतर बेपढे-लिखे हैं और व्यवसाय की वर्तमान दशाओ से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं। पंजाब के हिसार जिले, उत्तर प्रदेश के गढ़वाल, अल्मोड़ा और नैनीताल जिलों, काठियावाड़, गुजरात और मैसूर तथा मद्रास के बेलारी, करनाल और कोयम्बटूर प्रदेशों में भेड़ों को विशेष रूप से पाला जाता है। परन्तु दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया की अपेक्षा भारत की भेड़ें मामूली होती हैं। फलतः इनका ऊन व मांस दोनों ही निम्न कोटि का होता है। उत्तरा भारत की भेड़ों का ऊन सफेद व बढ़िया होता है। इसके विपरीत दक्षिणी भारत की भेड़ों का ऊन छोटा, रूखा व भूरे रंग

का होता है। भारत में ऊन का औसत उत्पादन ५५० लाख पौंड है। भारत की मंडियों में अधिकतर मरी हुई या मारी हुई भेड़ों के बालों से तैयार किया हुआ ऊन ही आता है।

ऊन का उत्पादन (लाख पौंड में)

प्रदेश	उत्पादन
जोधपुर	८०
बीकानेर	५७
उत्तर प्रदेश	५२
मद्रास	४५
पूर्वी पंजाब	४३
हैदराबाद	४२
जयपुर	३५

भारत में उत्पन्न अधिकतर ऊन गाँव की दस्तकारी में खप जाती है। इससे अधिकतर मोटे कम्बल तथा दरियां व गलीचे बनाये जाते हैं। बहुत थोड़ी मात्रा में यह बाहर भेजी जाती है। भारत से ऊन का वार्षिक निर्यात कुल ४२० लाख पौंड है। परन्तु विदेशी ग्राहक भी ऊन की किस्म से संतुष्ट नहीं रहते क्योंकि इसमें बालू आदि गन्दगी मिली रहती है। निर्यात के पहले ऊन को धोकर साफ कर लेना चाहिये। उचित वर्गीकरण द्वारा ऊन की कोटि निर्धारित कर देना भी आवश्यक है।

बकरी—गरीब आदमी के सस्ते दूध का सहारा है। इसके दूध में बहुत से स्वास्थ्यवर्धक गुण पाए जाते हैं परन्तु बकरी से प्राप्त होने वाली दूध की मात्रा बहुत कम होती है। भारत में ५०० लाख बकरियाँ पाई जाती हैं और इनका मुख्य महत्व दूध, मांस व कहीं-कहीं बालों के कारण है। बकरियां बहुत होती हैं और इन्हें पालने में कोई विशेष खर्च भी नहीं होता। प्रायः घर की झूठन आदि पर ही यह पल जाती हैं।

घोड़े, खच्चर व ऊंट—भारत में करीब ३० लाख घोड़े व खच्चर पाये जाते हैं और पंजाब, उत्तर प्रदेश व बम्बई में इनकी संख्या विशेष अधिक है। इनसे बोझा ढोने का काम लिया जाता है और विविध प्रकार की गाड़ियों में जोतकर सवारी के लिये प्रयोग करते हैं। ऊंट विशेष रूप से पूर्वी पंजाब व पश्चिमी राजस्थान में पाये जाते हैं। इन प्रदेशों में ये जानवर बोझा ढोते हैं और खेत जोतते हैं। एक विशेष प्रकार की गाड़ी में भी इन्हें जोता जाता है।

पशुओं से प्राप्त सामग्री

भारत में पशुओं से कई प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त होती हैं जिनमें खालें व चमड़ा, हड्डी, ऊन, दूध, मक्खन व घी का विशेष महत्व है। खालों व चमड़े से घोड़ों का साज व काठी, थैले, सूटकेस, ट्रंक, मशीनों की पट्टियाँ, मोटरगाड़ियों की सीटें व छत, बन्दूक आदि रखने के बक्स, जूते तथा दस्ताने बनाये जाते हैं। खालों में गाय-बैल, घोड़े व ऊंट की खालें विशेष महत्त्वपूर्ण होती हैं। चमड़ा बकरी, भेड़ व

बछड़ों से प्राप्त होता है। भारत में चमड़ा व खालों को बहुधा सार्वजनिक वधशालाओं से इकट्ठा किया जाता है। पश्चिमी बंगाल और मद्रास में गाय-बैल की सब से अधिक खालें प्राप्त होती हैं। मद्रास में भैंसे का चमड़ा व भेड़ी की खाल का उत्पादन बहुत अधिक है। उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल और विहार से बकरी की खाल प्राप्त की जाती है। कानपुर, आगरा, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास भारत के चमड़ा व्यवसाय के केन्द्र हैं।

चमड़ा व खालों का उत्पादन और निर्यात (१९५१-५२)

	उत्पादन	निर्यात
भैंस का चमड़ा	५२ लाख अदद	२७,००० अदद
गाय का चमड़ा	१९५ „ „	१,९५,००० „
बकरी की खाल	२९७ „ „	१०,३०० „
भेड़ों की खाल	११८ „ „	२,१४,००० „

भारत की खालों व चमड़े की संयुक्त राष्ट्र, जर्मनी, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, बेल्जियम, ईराक, ईरान और वर्मा में विशेष मांग रहती है। सन् १९५२-५३ में भारत से इन देशों को १४,००० टन चमड़ा व खाल निर्यात किया गया। अविभाजित भारत से ३०,००० टन खाल व चमड़ा निर्यात किया जाता था। परन्तु देश-विभाजन से भारत में खाल व चमड़े का उत्पादन निर्यात सीमित हो गया है।

यद्यपि देश-विभाजन से चमड़ा व खालों के प्रमुख क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये हैं परन्तु भारत की घरेलू मांग की पूर्ति के लिए बाहर से कुछ विशेष अधिक आयात नहीं करना पड़ता है। हां, निर्यात की मात्रा जरूर कम हो गई है। दूसरी बात यह हुई कि दिल्ली व पेप्सू के प्रदेश इस उद्योग के केन्द्र हुआ करते थे परन्तु अधिकतर व्यापारियों के पाकिस्तान चले जाने से इस प्रदेश के उद्योग को काफी धक्का लगा। इन बाह्य कारणों के अलावा कुछ आन्तरिक कारणों से भी चमड़ा व खालों का उत्पादन कम हो गया है। बैल-भैंस की कुल संख्या में कमी हो गई है और फिर विभिन्न राज्यों ने पशु-वध पर रोक लगा रखी है। मैसूर में तो पशु-वध निरोधक कानून बना दिया गया है। बम्बई व उत्तर प्रदेश में पशुओं के अत्यधिक वध को रोकने के लिए सरकारी प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं। दिल्ली व पंजाब में ऐसा कोई कानून तो नहीं बना है परन्तु कुछ राजनीतिक दलों के 'गोहत्या बन्द करो' आंदोलन के फलस्वरूप लोगों ने जानवरों का वध करना स्वयं भी कम कर दिया है। फलतः चमड़ा व खालों के उत्पादन में भारी कमी आ गई है।

इस उद्योग की उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि (१) तैयार व साफ किये हुये चमड़ा उद्योग की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। (२) पशु-वध निरोधक विधान बनाने से पहले इस व्यवसाय पर पड़ने वाले हानिकारक असर की पूरी जांच-पड़ताल की जानी चाहिए और (३) गांवों में खालों को देशी ढंग से साफ करने के उद्योग को विकसित करने के लिए बड़े प्रयत्न किए जाने चाहियें।

सन १९५३ में भारत में दूध का उत्पादन १७७ लाख टन था। दूध के उत्पादन में संसार के देशों में भारत का दूसरा स्थान है और केवल संयुक्तराष्ट्र का उत्पादन ही इससे अधिक है। भारत में दूध का उत्पादन ग्रेट ब्रिटेन से चौगुना, डेनमार्क का पांच गुणा, आस्ट्रेलिया का छः गुणा और न्यूजीलैंड का सात गुणा है। परन्तु प्रति पशु से प्राप्त दूध की मात्रा में बड़ा हेर-फेर रहता है। कुछ पशु तो केवल एक दिन में ५ पौंड दूध देते हैं और कुछ १७ पौंड तक। थोड़ा ध्यान देने पर अधिकतर पशुओं के लिए यह दैनिक मात्रा १५ पौंड प्रतिदिन तक की जा सकती है।

भारत के विभिन्न राज्यों में दूध का अनुमानित उत्पादन (लाख मन में)

मध्य प्रदेश	८२·५
उत्तर प्रदेश	११०१·५
विहार	५५६·१८
उड़ीसा	४८·८६
आसाम	२७·८
वम्बई	१८२·६६
मद्रास	४६५·१६

भारत में दूध से दो वस्तुएँ विशेषकर बनाई जाती हैं—मक्खन और घी। पिछले दिनों में पशु-पालन उद्योग में वृद्धि होने से मक्खन का उत्पादन भी बढ़ गया है। पशु-पालन व दुग्धशाला का उद्योग आगरा, अलीगढ़, वम्बई और कलकत्ता में केन्द्रित है। मक्खन का कुल उत्पादन देश में ही खत्म हो जाता है।

भारत में प्रति मनुष्य पर केवल ८ औंस दूध उत्पन्न होता है और दूध की औसत खपत आसाम में १·३ औंस से लेकर पूर्वी पंजाब में १६·३ औंस प्रति मनुष्य तक रहती है।

भारत में घी की बड़ी मांग रहती है और प्रत्येक घर में मक्खन को धीमी आंच पर गर्म करके घी तैयार करते हैं। मक्खन को गर्म करने से एक तेल सी वस्तु ऊपर तैरने लगती है। उसी को घी की तरह प्रयोग करते हैं। घी की सहायता से अनेक प्रकार का भोजन व मिठाइयाँ तैयार की जाती हैं। भैंस के दूध से तैयार किये हुए मक्खन से गाय के दूध के मक्खन की अपेक्षा अधिक घी निकलता है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यभारत और पूर्वी पंजाब में घी बनाने का व्यवसाय विशेष उन्नत है। भारत में घी का वार्षिक उत्पादन १४० लाख मन है। मौसम के अनुसार घी अच्छा या बुरा होता है। घी की क़िस्म मौसम, पशुओं के भोजन व स्वास्थ्य पर निर्भर रहती है। जाड़े के मौसम का घी सबसे अच्छा होता है और बरसात का घी सबसे निम्न कोटि का होता है। बहुधा अच्छे घी के साथ सस्ती व कम अच्छी चर्बी का मेल कर देते हैं जिससे उसकी किस्म खराब हो जाती है।

देश में तैयार किए हुए कुल घी का ३० प्रतिशत भाग किसानों द्वारा अपने घरेलू उपभोग में खर्च कर दिया जाता है। शेष ७० प्रतिशत भाग बाजार में बेचने के लिए लाया जाता है। भारत से स्ट्रेट्स सेटलमेंट्स, मलाया, लंका, दक्षिणी अफ्रीका,

मारीशस और हांगकांग को घी निर्यात किया जाता है। इन प्रदेशों में प्रवासी भारतीय जनता में भारतीय घी की बड़ी मांग रहती है। साधारण समय में भारत नेपाल से ६६,००० मन घी आयात करता है।

पिछले कुछ दिनों से वनस्पति घी की स्पर्धा के कारण देशी घी के उत्पादन व व्यापार को बड़ा धक्का लगा है। शुद्ध घी का मिलना बड़ा कठिन हो गया है। अच्छे घी के स्थान पर बहुधा मिलावट का घी मिलता है। इसलिए देश में घी की परीक्षा कर वर्गीकरण करने के लिए विविध केन्द्रों में पूरी व्यवस्था होनी चाहिए।

भारत के कई स्थानों पर पशु-पालन व दुग्धशाला व्यवसाय की उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। बम्बई राज्य ने इस दिशा में विशेष प्रगति की है। बम्बई के २६६ मील उत्तर में कैरा जिले में आनन्द स्थान एक बहुत बड़ा मक्खन का कारखाना बनाया गया है। इस कारखाने से १०,००० पौंड मक्खन प्रति दिन प्राप्त हो सकेगा।। टीन के डिब्बों में बन्द किया हुआ यह मक्खन देश के हर प्रदेश में बिकता है। बम्बई नगर को इसी इलाके से प्रतिदिन ५,००० गैलन दूध मिलता है। बंबई के कोई २० मील उत्तर में राज्य सरकार ने ३,००० एकड़ भूमि पर एक आदर्श दुग्धशाला बनाई है। इस क्षेत्र में करीब १५००० दुधारू पशु रहते हैं। इस केन्द्रीय दुग्धशाला में दूध जमाने का एक कारखाना भी है जिसमें ४,००० गैलन दूध प्रतिदिन जमाया जाता है।

मद्रास में ऊटाकमंड स्थान पर दूध जमाने का एक बिलकुल ही नवीन कारखाना स्थापित किया गया है। उत्तर प्रदेश में दुग्धशाला व्यवसाय के प्रमुख केन्द्र अलीगढ़, कानपुर, लखनऊ, बनारस और इलाहाबाद हैं। दिल्ली के समीप भी एक दुग्धशाला बनाने की योजना है।

मुर्गी-बत्तख—भारत में मुर्गी व बत्तख के अंडों की अधिक खपत नहीं, इसका कारण यह है कि भारत की अधिकतर जनता शाकाहारी है। भारतवर्ष में प्रति वर्ष प्रत्येक मनुष्य ८ अण्डों का उपभोग करता है जबकि कनाडा में २९६ और ग्रेट ब्रिटेन में १५४ अण्डे प्रतिवर्ष प्रत्येक मनुष्य द्वारा प्रयोग किए जाते हैं। फिर भी देश में अंडों के उत्पादन के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। भारत प्रतिवर्ष ५ करोड़ रुपये के मूल्य के सुखाये हुए व गीले अंडों का निर्यात करता है। भारत में होने वाले मुर्गी के अण्डों का ६० प्रतिशत भाग और बत्तख के अंडों का ८० प्रतिशत भाग निर्यात कर दिया जाता है। प्रतिवर्ष ७½ करोड़ रुपये मूल्य की मुर्गियाँ व बत्तख भी बाहर भेजी जाती हैं।

प्रश्नावली

१. "भारत में १,२०,००० से भी अधिक पशु हैं परन्तु दुग्धशाला का उद्योग फिर भी बहुत पिछड़ा हुआ है।" इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिये।

२. भारत में ऊन किन पशुओं से प्राप्त की जाती है और उसका क्या महत्व है ?

मछलियां

आजकल मछलियों का महत्व बहुत बढ़ गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि भोजन की सामग्री के रूप में उनका अटूट भंडार है। यद्यपि भारत के अधिकतर लोग शाकाहारी हैं परन्तु फिर भी हर जाति व धर्म के लोग मछली खाते हैं। इसलिए भोजन के दृष्टिकोण से मछलियों का उतना ही महत्व है जितना खेती या पशुपालन का। कुल जनसंख्या में से केवल ३ करोड़ २० लाख लोग जो जाति के ब्राह्मण, वैश्य या जैन हैं, मछली व मांस नहीं खाते चूंकि उनके धर्म में इस प्रकार के भोजन का निषेध है। मांसाहारी भी बहुधा शाकाहारी भोजन करते हैं। उसका मुख्य कारण या तो मछली की अलभ्यता है या इसके ऊंचे दाम।

मछलियां प्रायः समुद्र व नदियों में पाई जाती हैं। इसी आधार पर उन्हें खारे पानी और मीठे पानी की मछलियों के नाम से पुकारते हैं। खारे पानी की मछलियां छिछले तटीय समुद्रों, नदियों के मुहाने और खाड़ियों में पाई जाती हैं। मीठे पानी की मछलियां नदियों, नहरों, तालाबों तथा बाढ़ के भागों में मिलती हैं। भारत के आर्थिक जीवन में इन दोनों ही प्रकार की मछलियों का बहुत कम महत्व है।

भारत में समुद्री मछलियों का उत्पादन

क्षेत्र	कुल पकड़ (हजार मनों में)	कुल का प्रतिशत
काठियावाड़	९९·८	०·९९
बम्बई:—		
गुजरात	१०७·७	१·०७
उत्तरी थाना प्रदेश	१६३·९	१·६३
दक्षिणी थाना प्रदेश	३८०·६	३·७८
रत्नगिरि तट	३५४·३	३·५२
उत्तरी कनारा तट	४९०·९	४·९०
मद्रास :—		
पश्चिमी तट—		
दक्षिणी कनाडा तट	१६०४·०	१५·९२
मालाबार तट	२२६६·६	२२·४९

क्षेत्र	कुल पकड़ (हजार मनों में)	कुल का प्रतिशत
पूर्वी तट—		
दक्षिणी भाग	१८२·४	१·८१
मध्य भाग	२७०·४	२·६७
उत्तरी भाग	५४६·७	५·४१
कोचीन	३०८·४	३·०६
ट्रावनकोर	२४२३·०	२४·०३
उड़ीसा तट	३०३·३	३·०
बंगाल तट	५७७·२	५·७

भारत का तट २६२० मील लम्बा है और इसके १०० फैदम से कम गहरे तटीय समुद्र का क्षेत्रफल लगभग १,१०,००० वर्ग मील है। परन्तु इसके बहुत कम भाग में मछलियां पकड़ी जाती हैं। मछली पकड़ने के उद्यम के दृष्टिकोण से गुजरात, कनारा, मालाबार तट, मन्नार की खाड़ी, मद्रास और कोरोमंडल का तटीय प्रदेश ही अधिक महत्त्वपूर्ण है। अधिकतर समुद्री मछलियां तट के समीप के छिछले पानी में ही पकड़ी जाती हैं और छिछले जल का भी पूरा उपभोग नहीं हुआ है। १०० फैदम से अधिक गहरे समुद्रों में मछली पकड़ने का व्यवसाय व्यापारिक दृष्टिकोण से नगण्य-सा है। भारत में समुद्र से मछली पकड़ने के व्यवसाय के अवनत दशा में होने के कई कारण हैं। भारत के पास समुद्र में दूर जाकर मछली पकड़ने के लिए उचित प्रकार के जहाजों का अभाव है। फिर गर्म जलवायु और शीत भंडारों के अभाव में पकड़ी हुई मछलियों को अधिक दिन तक रखा नहीं जा सकता। मछली पकड़ने के व्यवसाय के दृष्टिकोण से पोताश्रयों तथा यातायात के साधनों के असुविधाजनक होने के कारण पकड़ी हुई मछलियों के क्रय-विक्रय में बड़ी कठिनाई पड़ती है। इन्हीं सब कारणों से भारत में समुद्री मछली पकड़ने के व्यवसाय ने बहुत कम उन्नति की है।

इस समय समुद्र में १० फैदम की गहराई तक मछलियां पकड़ी जाती हैं। समुद्री जल में उपलब्ध मछलियों को ठीक तरीके से पकड़ने के लिए समुद्री जल विज्ञान की सभी शाखाओं का सम्यक् अध्ययन किया जाना चाहिए—प्राकृतिक, और जनन-सम्बन्धी। भारत में इस प्रकार के अध्ययन की ओर अभी तक कोई ध्यान नहीं दिया गया है। परन्तु भारत में मछली पकड़ने का व्यवसाय तभी उन्नति कर सकता है जब यहाँ के जलाशयों की मछली जनन व पालन शक्ति की ठीक खोज के लिये कोई अनुसंधानशाला स्थापित की जाए।

भारत के तटीय समुद्रों में पाई जाने वाली मछलियां खाने योग्य होती हैं और उन्हें तैरते हुए, बांधे हुए या फेंक कर डाले हुए जालों से पकड़ते हैं। भारत के मछुवे अधिकतर किनारे से ५-७ मील के इर्द-गिर्द में ही मछली पकड़ते हैं। वे समुद्र में अधिक आगे जाने से झिझकते हैं। भारतीय समुद्रों में निम्नलिखित प्रकार की मछलियाँ पाई जाती हैं—हैरिंग, मैकरल, प्रान, जिउ, कैट, मुलेट, पामफ्रेट और भार-

लिए गए हैं। विभिन्न राज्यों में पश्चिमी बंगाल सबसे आगे है। मछलियों की मात्रा के मूल्य दोनों ही दृष्टिकोण से यह अन्य राज्यों से बढ़ा हुआ है। बंगाल में पकड़ी हुई मछलियां कुल मात्रा की २९ प्रतिशत और कुल मूल्य की ३६ प्रतिशत बैठती हैं। बंगाल के बाद बिहार और तब आसाम का स्थान है। इन तीनों राज्यों से कुल मिलाकर ७२ प्रतिशत मछलियाँ प्राप्त होती हैं। मद्रास, समुद्री मछलियों का सबसे बड़ा उत्पादक है। परन्तु यहाँ केवल ४·७ प्रतिशत मीठे पानी की मछलियां पकड़ी जाती हैं। उड़ीसा की महानदी से देश में मीठे पानी की मछलियों के कुल उत्पादन का ८·३ प्रतिशत भाग प्राप्त है और उत्तर प्रदेश की गंगा नदी से केवल ३·८ प्रतिशत।

मछली पकड़ने के उद्यम के क्षेत्र—भारत में मद्रास, बम्बई और बंगाल के

चित्र ४३—भारत में खारी व मीठे पानी की मछलियों को पकड़ने के क्षेत्र। काठियावाड़ के किनारे से बंगाल की खाड़ी तक का समुद्री प्रदेश ध्यान देने योग्य है। कुल उत्पादन का ७१ प्र० श० समुद्र से प्राप्त होता है।

राज्यों में सबसे अधिक मछलियां पकड़ी जाती हैं। मद्रास के १७५० मील लम्बे समुद्र-तट के पास ४०,००० वर्गमील क्षेत्रफल का जल-प्रदेश उपस्थित है। इस प्रदेश का जल बहुत छिछला है और भूखंड पर रहने वाले मछुओं की संख्या भी बहुत अधिक है। सन् १९५० में राज्य में १५०,००० मछुए थे। ड्रिफ्टर और ट्रालर जहाजों को

तीय सालमन। मैकरल अधिकतर मद्रास, ट्रावनकोर और बम्बई के तटीय प्रदेशों में पाई जाती है। विभिन्न प्रकार की मछलियों की पकड़ की मात्रा इस प्रकार है :—

मैकरल	३४ प्रतिशत
हैरिंग	१५ ,,
प्रान	६ ,,
पामफ्रेट	१·७ ,,
मुलेट	१·६ ,,
भारतीय सालमन	१·३ ,,
अन्य प्रकार	१·१ ,,

भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत मछली का उत्पादन सन् १९५०-५१ के १० लाख टन से बढ़कर सन् १९५५-५६ में १५ लाख टन हो जाएगा।

डेल्टा प्रदेश की मछलियां—प्रायः नदियों के मुहाने, समुद्री खाड़ियों तथा समुद्र के कटे हुए जलाशयों व झीलों में पकड़ी जाती हैं। इनकी उन्नति की भविष्य में विशेष सम्भावनाएँ हैं। इस समय इनका विशेष विकास नहीं हुआ है। उड़ीसा की चिलका झील, मद्रास, कोचीन और ट्रावनकोर के समुद्री जलाशयों में काफी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं परन्तु सुन्दरवन और महानदी के डेल्टा प्रदेश में मछली पकड़ने के पूरे प्रयत्न नहीं किए गए हैं। ट्रावनकोर-कोचीन के समुद्री जलाशय व झीलें ३०० वर्गमील में फैली हैं और वहां पर डेल्टा प्रदेश की मछलियों को पाला जा सकता है। मुलेट, बेक्ती और मोतिया जाति की मछलियां बहुत शीघ्र बढ़ने वाली हैं और शुरू में इन्हीं को पालकर कार्य प्रारम्भ किया जा सकता है।

लिए गए हैं। विभिन्न राज्यों में पश्चिमी बंगाल सबसे आगे है। मछलियों की मात्रा के मूल्य दोनों ही दृष्टिकोण से यह अन्य राज्यों से बढ़ा हुआ है। बंगाल में पकड़ी हुई मछलियां कुल मात्रा की २९ प्रतिशत और कुल मूल्य की ३६ प्रतिशत बैठती हैं। बंगाल के बाद बिहार और तब आसाम का स्थान है। इन तीनों राज्यों से कुल मिलाकर ७२ प्रतिशत मछलियाँ प्राप्त होती हैं। मद्रास, समुद्री मछलियों का सबसे बड़ा उत्पादक है। परन्तु यहाँ केवल ४·७ प्रतिशत मीठे पानी की मछलियां पकड़ी जाती हैं। उड़ीसा की महानदी से देश में मीठे पानी की मछलियों के कुल उत्पादन का ८·३ प्रतिशत भाग प्राप्त है और उत्तर प्रदेश की गंगा नदी से केवल ३·८ प्रतिशत।

मछली पकड़ने के उद्यम के क्षेत्र—भारत में मद्रास, बम्बई और बंगाल के

चित्र ४३—भारत में खारी व मीठे पानी की मछलियो को पकड़ने के क्षेत्र। काठियावाड़ के किनारे से बंगाल की खाड़ी तक का समुद्री प्रदेश ध्यान देने योग्य है। कुल उत्पादन का ७१ प्र० श०. समुद्र से प्राप्त होता है।

राज्यों में सबसे अधिक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। मद्रास के १७५० मील लम्बे समुद्र-तट के पास ४०,००० वर्गमील क्षेत्रफल का जल-प्रदेश उपस्थित है। इस प्रदेश का जल बहुत छिछला है और भूखंड पर रहने वाले मछुओं की संख्या भी बहुत अधिक है। सन् १९५० में राज्य में १५०,००० मछुए थे। ड्रिफ्टर और ट्रालर जहाजों को

बिल्कुल भी प्रयोग में नहीं लाया जाता। मछली पकड़ना मद्रास का मुख्य व्यवसाय भी है परन्तु मछली पकड़ने, रखने व डिब्बों में बन्द करने की रीति बड़ी पुरानी है। देशी नावों के द्वारा सारडाइन, मैकरेल, जिउ, रिबन आदि जाति की मछलियां पकड़ी जाती हैं। पूर्वी तट पर गन्जाम, गोपालपुर, विजगापटम, कोकनाडा, मसूलीपटम, नेल्लोर, मद्रास, पांडीचेरी और नागापटम तथा पश्चिमी किनारे पर कालीकट और बंगलीर मछली व्यवसाय के मुख्य केन्द्र हैं। मद्रास में नदी व गहरे समुद्र से बहुत कम मछलियां पकड़ी जाती हैं।

पश्चिमी बंगाल के लोगों का मुख्य भोजन मछली है और ९६,००० लोग इसी धंधे पर अपनी जीविका के लिए निर्भर रहते हैं। बंगाल में प्रायः नदियों, नहरों व तालावों से मछली पकड़ी जाती है। समुद्र से मछली पकड़ने का धंधा अभी बिल्कुल अविकसित है। सन् १९५२ में समुद्र से पकड़ी गई मछली की कुल मात्रा ११,३२१ मन थी। यदि प्रयत्न किए जाएँ तो बंगाल की खाड़ी के जल से उत्तम मेल की मछलियां बहुत अधिक मात्रा में पकड़ी जा सकती हैं। इस दृष्टिकोण से १९५० में पश्चिमी बंगाल सरकार ने डेनमार्क के मछलीमार विशेषज्ञों को बुलाया था ताकि वे भारतीयों को मछली पकड़ने की वैज्ञानिक रीति बतला सकें और बंगाल की खाड़ी के उत्तरी भाग के जल में मछली पकड़ने की संभावनाओं को कार्यरूप में परिणत कर सकें। देश के विभाजन से पश्चिमी बंगाल के मछली उद्यम को बहुत धक्का पहुँचा है। कलकत्ता में आने वाली ८० प्रतिशत मछली उन क्षेत्रों में पकड़ी जाती है जो आजकल पाकिस्तान में हैं। पूर्ण राज्य में प्रति वर्ष १०० लाख मन मछली की खपत है परन्तु मांगपूर्ति केवल ७ लाख मन है। अकेले कलकत्ता नगर में प्रतिदिन ६५०० मन मछली की मांग रहती है। इसलिए अब मछली के उत्पादन को बढ़ाने का एकमात्र तरीका यही है कि विभिन्न तालावों व जलाशयों में मछलियाँ पाली जायें। इस दृष्टिकोण से पश्चिमी बंगाल को एक विशेष लाभ है कि वहाँ पर बहुत से तालाव विद्यमान हैं जिनका सम्यक् उपयोग हो सकता है। रोहू व मुगल मछलियां तालावों में उसी प्रकार पाली जा सकती हैं जैसे घरों में मुर्गिया व बत्तखें। ये मछलियाँ प्रायः उबाला हुआ चावल, आलू व घर की जूठन व कूड़ा-करकट खाकर बढ़ती हैं।

बम्बई में अधिकतर मछलियाँ समुद्र से प्राप्त होती हैं। इस दृष्टिकोण से बम्बई को एक प्राकृतिक सुविधा प्राप्त है। उसके किनारे पर कई अच्छे बन्दरगाह व पोताश्रय हैं जहाँ से मछलीमार जहाज आ-जा सकते हैं। साल के सात महीने मौसम बड़ा अच्छा रहता है और मछली पकड़ने का उद्यम बराबर होता रहता है। बम्बई की मछली पकड़ने वाली जनता भी और प्रदेशों की अपेक्षा अधिक जागृत है तथा वहाँ के मछुए अधिक हिम्मती भी हैं।

भोपाल में मछली पकड़ने के उद्यम के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। भोपाल में नर्मदा, बेतवा और पारवती नदियां तथा बहुत से बड़े-बड़े सदा भरे रहने वाले तालाव पाये जाते हैं। इन नदियों में मछली का अपार भंडार है और तालावों में मछलियां पाल कर इस सम्पत्ति की और भी वृद्धि हो सकती है।

परन्तु भारत में मछली पकड़ने के उद्यम के विकास में सबसे बड़ी बाधा यह है कि यहाँ मछली की खपत बहुत कम है। भारत में प्रतिवर्ष प्रत्येक मनुष्य के पीछे मछली की खपत का औसत ३ पौंड है। पश्चिमी बंगाल में मछली सबसे अधिक खाई जाती है—प्रत्येक मनुष्य पीछे ६ पौंड। पूर्वी पंजाब में यह औसत ६ पौंड और बिहार में २ पौंड है। फिर भारत के निवासी केवल कुछ विशेष प्रकार की मछलियों को ही खाना पसन्द करते हैं। इसलिए उद्यम को बढ़ाने के लिए भारतीयों में न केवल ज्यादा मछली खाने की आदत ही डालनी होगी बल्कि यहाँ की जनता को अन्य प्रकार की मछलियों के खाद्य गुणों के विषय में बतलाना भी पड़ेगा ताकि वे अन्य विविध प्रकार की मछलियों के उपभोग करने के लिए आकर्षित हों।

भारत में मछलियों का उद्योग—भारत में ताजी मछली का उपभोग बहुत अधिक है। निम्न तालिका से उपभोग की मात्रा व प्रकार स्पष्ट हो जाएगा।

ताजी मछली	५० प्रतिशत	धूप में सुखाई हुई मछली	२० प्रतिशत
नमक लगाई हुई मछली	२० ,,	मछली की खाद	१० प्रतिशत

भारत में मछली को सुखाकर डिब्बों में भरने का उद्योग नहीं के बराबर है। डिब्बों में भरी हुई मछलियों की मांग बहुत कम है और थोड़ी बहुत मांग की पूर्ति आयात से की जाती है। भारत में उद्योग के विकास में अनेक बाधाएँ हैं। एक तो हर समय पर्याप्त मात्रा में मछलियां नहीं प्राप्त होतीं और दूसरी तरफ जाड़े का मौसम, जब यह उद्योग हो सकता है बहुत छोटा होता है। इसके अलावा भारत में अच्छे व सस्ते डिब्बों की भी कमी रहती है। इसलिए भारत में मछली के पेट को फाड़ कर व नमक भर कर रखते हैं। शराब तथा सिरके में डुबो कर भी मछलियाँ रक्खी जाती हैं। यहाँ के मछुए मछली को धूप में सुखाते हैं। वर्षा काल में जब धूप कम निकलती है तो नमक लगा कर रखते हैं। डिब्बों में बंद करके रखने की प्रणाली सबसे अच्छी है। इस प्रकार रक्खी हुई मछलियाँ बहुत दिनों तक ताजी बनी रहती हैं। पहले मछलियों की गरदन काट दी जाती है और फिर उन्हें अच्छी तरह से धोकर साफ कर लिया जाता है। फिर इनको गाढ़ी शराब में डालकर सुखाया जाता है और अन्त में तेल से भरे डब्बों में वन्द कर दिया जाता है। इस प्रणाली से सारडाइन, मकरेल और प्रान जाति की मछलियों को रक्खा जाता है और इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र बम्बई व मद्रास हैं।

भारत में मछली उद्योग की पूरी उन्नति के लिए देश के मछलीमार बन्दरगाहों में शीत भंडारों का इन्तजाम होना चाहिए। इस दृष्टिकोण से प्रत्येक राज्य की सरकारों ने प्रयत्न शुरू कर दिये हैं। प्रत्येक राज्य में मछलियों की मात्रा व क्षेत्र के विषय में अन्वेषण हो रहा है और मछली उद्योग की उन्नति के लिए नए तरीकों की खोज की जा रही है। भारत सरकार की ओर से मछली अनुसंधानशालाएँ खोली गई हैं। कटक में मीठे पानी की मछलियों की अनुसंधानशाला है और मद्रास में समुद्री मछलियों की खोज का केन्द्रीय कार्यालय है। ये दोनों ही संस्थाएँ मछली

उद्योग के विकास के लिए प्रयत्नशील हैं परन्तु धन की कमी और मछुओं की पिछड़ी हुई सामाजिक व आर्थिक दशा के कारण, विशेष प्रगति की संभावना नहीं है। इसके अलावा यातायात के साधनों तथा मंडियों से सम्बन्ध रखने वाली और बहुत-सी असुविधाएँ हैं। कुशल विशेषज्ञों तथा यंत्रादि सम्बन्धी कठिनाइयों को विदेशी राष्ट्रों की सहायता से बहुत कुछ हल कर लिया गया है परन्तु इन स्थानीय असुविधाओं को पार किये बिना कुछ विशेष विकास की आशा कम ही है।

भारत सरकार अपने खर्चे से भारत के तट पर कई मछलीमार केन्द्र स्थापित करने की सोच रही है। इन केन्द्रों में वर्तमान यंत्रादि की सभी सुविधाओं का आयोजन किया जावेगा। इस प्रकार के केन्द्र बम्बई, विजगापटम, चन्दवली और कलकत्ता में स्थापित किए जाएँगे। प्रत्येक केन्द्र में शीतभंडार होगा जिसमें ५०० टन तक मछलियाँ रक्खी जा सकेंगी और देश के भीतरी भागों में मछलियाँ ले जाने के लिए शीतभण्डार युक्त मोटर गाड़ियों का एक काफिला भी रक्खा जायेगा।

विभिन्न तटीय राज्यों की सरकारों ने मिल कर यह निश्चय किया है कि मछलियों के वितरण व विक्रय के लिए सहकारी समितियों द्वारा काम होना चाहिए।

इस समय मछलियों के अनुसंधान की तीन शालाएँ देश में हैं—आन्तरिक जलाशय में उपलब्ध मछली अनुसंधानशाला बैरकपुर में है, समुद्री जल की मछलियों की अनुसंधानशाला मंडापाम में है और गहरे समुद्र की मछलियों का केन्द्र बम्बई में है।

इस सिलसिले में भारत सरकार के खाद्य व खेती मंत्रालय द्वारा चलाई गई आन्तरिक मछली अनुसंधानशाला, कटक ने विशेष प्रगति की है। वहाँ ७२ तालाबों में मछली पालने का प्रबन्ध है। छोटी-छोटी मछलियाँ सरसों की खली के चूर्ण पर पाली जाती हैं और जब बड़ी हो जाती हैं तो विभिन्न मछली पालने वाले उन्हें ले जाते हैं।

इसी प्रकार की एक योजना पर उत्तर प्रदेश की सरकार भी काम कर रही है। झाँसी जिले में १८००० एकड़ जल भूमि में रोहू, काटला, नान और कन्वास जाति की मछलियों को पाला जायेगा। अभी हाल में जौनपुर जिले में ३०००० मछलियों को हवाई जहाज द्वारा झाँसी ले जाया गया है।

मछली से प्राप्त वस्तुएँ और व्यापार—भारत में मछलियों से कई प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त की जाती हैं जिनमें मछली का तेल, भोजन, खाद, जबड़े व शार्क के फिन मुख्य हैं। व्यापारिक दृष्टिकोण से भारत में मोती निकालने का काम बड़ा महत्वपूर्ण है। भारत के तटीय समुद्रों से दो प्रकार की सीप निकाली जाती हैं। एक तो झूठी होती है, परन्तु चमक के कारण घरों के दरवाजों व खिड़कियों को सजाने में प्रयुक्त होती है। दूसरी प्रकार की सीप से सच्चे मोती निकाले जाते हैं। झूठी सीप कोरोमंडल, मद्रास और कोचीन के तटीय समुद्रों में बहुत पाई जाती है। भारत और लंका के बीच की खाड़ी से लेकर काठियावाड़ के नीचे के समुद्र तक का पूरा प्रदेश और कच्छ

की खाड़ी सच्चे मोती की सीपों का विस्तृत भंडार है। इनसे बहुमूल्य मोती प्राप्त होते हैं। परन्तु जापानी सीपों के विपरीत यहाँ की सीपें गहरे पानी वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

भारत के कुछ प्रदेशों से लंका, बर्मा और सुदुरपूर्व के देशों को मछलियां निर्यात भी की जाती हैं। भारत का निर्यात सदैव नहीं होता। जब कभी दशाओं के सुविधाजनक होने से अधिक मछलियां पकड़ ली जाती हैं, उस समय घरेलू उपभोग से बची हुई मात्रा को निर्यात कर दिया जाता है। मद्रास, ट्रावनकोर और बम्बई निर्यात के मुख्य केन्द्र हैं। सन् १९५१-५२ में भारत से ३·२७ करोड़ रुपये मूल्य की मछलियां बाहर भेजी गई। भारत से आयात करने वाले देशों में लंका का स्थान सर्वप्रथम है। भारत के निर्यात का ८० प्रतिशत भाग लंका को जाता है। उसके बाद बर्मा का स्थान आता है।

भारत में कच्ची मछली का आयात बहुत कम है। यूरोप और कनाडा से मंगाई गई मछलियों की मात्रा नहीं के बराबर है। लेकिन डिब्बों में बन्द की हुई मछलियां काफी मात्रा में आयात की जाती हैं। कुल मिला कर प्रतिवर्ष १६·३ लाख रुपये मूल्य की मछलियाँ आयात की जाती हैं।

प्रश्नावली

१. बंगाल में मछली पकड़ने के व्यवसाय की वर्त्तमान दशा कैसी है ? भविष्य में इसकी उन्नति की क्या संभावनाएँ हैं ?

२. भारत के किन प्रदेशों में मछली पकड़ने का व्यवसाय होता है ? देश के मानचित्र पर दिखलाइए।

३. मछली पकड़ने के व्यवसाय के विकास के लिए किन दशाओं का होना जरूरी है ? देश के किन राज्यों में ये दशाएँ उपस्थित हैं और वहाँ इस उद्यम का किस प्रकार विकास किया जा सकता है ?

अध्याय : : आठ

खनिज सम्पत्ति

भारत में प्रकृतिदत्त खनिज संपत्ति का विस्तृत भंडार है। अभी तक तो भारत में खनिज संपत्ति के अन्वेषण के लिए बहुत कम काम हुआ था। पिछले कुछ दिनों में भारत की खनिज संपत्ति का निरीक्षण किया गया और फलस्वरूप बहुत से नए खनिज क्षत्रों का पता लगा है।

भारत में उपलब्ध विविध खनिज पदार्थों में कोयला, मैंगनीज, सोना, अभ्रक, लोहा और नमक का स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण है। संसार का अधिकतर लिमनाइट, मोनाजाइट, जिरकन और अभ्रक भारत से ही प्राप्त होता है। सन् १६०६ में जर्मन विज्ञानवेत्ता श्री C.W.D. Schembers ने ट्रावनकोर-कोचीन की तटीय वालू में मोनाजाइट का पता लगाया। नीलगिरी व अन्य पहाड़ियों की चट्टानें पानी से कट कर समुद्र की ओर वहा ले जाई जाती हैं और समुद्र में मिल जाती हैं। इनमें से कुछ वालू फिर वह कर किनारों पर इकट्ठी हो जाती है और इसी से लिमनाइट, मोनाजाइट व जिरकन प्राप्त होता है। इनके अलावा भारत में बहुत से प्रकार के अन्य बहुमूल्य खनिज पदार्थ पाये जाते हैं जिनका आजकल के उद्योग-धंधों में विशेष महत्व है। इस खनिज संपत्ति का यदि ठीक तरह से उपभोग किया जाय तो यह देश औद्योगिक दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर वन सकता है। देश के विभाजन से भारत की खनिज सम्पत्ति पर कोई विशेष असर नहीं पड़ा है। खनिज तेल, क्रोमाइट, जिप्सम और फुलर्स अर्थ (Fuller's Earth) को छोड़कर अन्य सव खनिजों के उत्पादन में भारत का एकाधिपत्य है।

खनिज का निहित भंडार (टन)

तांवा	३०,००,०००
मैंगनीज	६०,०००,०००
क्रोमाइट	२००,०००
लोहा	१०,२००,०००
चीनी मिट्टी	२५०,०००

गंधक, टीन, जस्ता, शीशा और निकल जैसी व्यापारिक धातुओं की भारत में कमी है। इनकी मांग पूर्ति में भारत आत्मनिर्भर नहीं है और अपनी ७५ प्रतिशत मांग की पूर्ति के लिए उसे अन्य देशों पर निर्भर रहना पड़ता है।

जस्ता व शीशा राजस्थान में पाया जाता है। गंधक भी कई जगह मिलता है

पर भारत में प्रायः सारी मांग आयात द्वारा ही पूरी की जाती है। सन् १९५० में भारत ने ५६·४८८ टन गंधक बाहर से मंगाया था।

भारत में खनिज संपत्ति और औद्योगिक मांग पूर्ति—देश के विस्तार और जनसंख्या को देखते हुए भारत की खनिज संपत्ति कुछ विशेष अधिक नहीं है। भारत में औद्योगिक खनिज वस्तुओं का उत्पादन इस प्रकार है—

(१) वे खनिज पदार्थ जिनका निर्यात करके भारत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर प्रभाव डालता है—

लोहा टिटानियम अभ्रक

(२) वे खनिज जिनका भारत से निर्यात महत्त्वपूर्ण है—

मैंगनीज़	स्टीयेटाइट
बाक्साइट	सिलिका
मैगनेसाइट	बेरिलियम
रिफ्रैक्टरी खनिज	कोरनडम
प्राकृतिक घर्षक पदार्थ	मोनाजाइट
जिप्सम	

भारत सरकार ने अभी हाल में दो फ्रांसीसी कम्पनियों के साथ एक १५-वर्षीय समझौता किया है। इसके अनुसार एक कारखाना स्थापित किया जावेगा ताकि भारत की मोनाजाइट बालू का विश्लेषण हो सके। ट्रावनकोर के किनारे पर मोनाजाइट बालू बहुलता से पाई जाती है और इसके उचित विश्लेषण से थोरियम, सेरियम तथा अन्य दुर्लभ वस्तुएँ प्राप्त की जा सकती हैं। इस समय भारत में गैस की बत्ती बनाने तथा धातु गलाने के उद्योग के लिए इन वस्तुओं को बाहर से मंगाया जाता है। इस कारखाने के चालू हो जाने से भारत की यह समस्याएँ बहुत कुछ सुलझ जाएँगी। ऐसा अनुमान है कि अणु शक्ति के उत्पादन में प्रयुक्त यूरेनियम को भी इससे प्राप्त किया जा सकता है।

(३) वे खनिज जिनके उत्पादन में भारत आत्मनिर्भर है।

कोयला	चूने का पत्थर व डोलामाइट
सीमेंट बनाने की सामग्री	जिप्सम
सोना	सीसे बनाने की बालू
अल्युमिनियम	बोरक्स
तांबा	पिराइट
क्रोम	नाइट्रेट (शोरा)
भवन निर्माण के पत्थर	फासफेट
संगमरमर	जिरकन
स्लेट	तेजाब व संखिया
खनिज रंग (Mineral Pigments)	बेरटीज

औद्योगिक मिट्टी	वहुमूल्य मणियां
नमक व क्षार	वेनाडियम

(४) वे खनिज जिन्हें भारत वाहर से मंगाता है।

चाँदी	टंगस्टन
निकल	मोल्वेडिनम
खनिज तेल	प्लेटिनम
गंधक	ग्रेफाइट
सीसा	अस्फाल्ट
जस्ता	पोटाश
टीन	फ्लूराइड
पारा	सुरमा

भारत में गंधक की विशेष कमी रहती है। यद्यपि इस समय इसकी वार्षिक मांग ६२ हजार टन से अधिक नहीं है परन्तु रासायनिक व खाद उद्योगों की उन्नति व विकास के साथ-साथ निकट भविष्य में गंधक की मांग वहुत वढ़ जायेगी। भारत में गंधक विल्कुल ही नहीं होता और अपनी मांग पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र व इटली पर निर्भर रहता है। देश के विभाजन के पहिले वलूचिस्तान से थोड़ी वहुत गंधक प्राप्त होती थी परन्तु अव यह प्रदेश भी पश्चिमी पाकिस्तान में सम्मिलित है। सन् १९५१-५२ में भारत ने १·१६ करोड़ रुपये मूल्य की ७,४५,६१८ हण्डरवेट गंधक आयात की।

इसके पहिले के वर्षों में गंधक के आयात के आँकड़ों को देखने से साफ जाहिर होता है कि पिछले कुछ वर्षों में औद्योगिक विकास के साथ-साथ गंधक का आयात भी वढ़ता रहा है—सन १९३८ में भारत ने केवल २२,९६४ टन गंधक आयात किया परन्तु आयात की मात्रा सन १९४६ में ४०,५७९ टन और सन् १९५० में ५६,४८८ टन हो गई। सन् १९५२-५३ में भारत ने २·५ करोड़ मूल्य का १४,७८,८१८ हण्डर-वेट गन्धक आयात किया।

गन्धक की वढ़ती हुई मांग पूर्ति के लिए जिप्सम, पिराइट, घटसिला में तांवा गलाने वाली कम्पनी से छोड़ी हुई गैसों, जोधपुर में सोडियम सल्फेट की राशि, काठियावाड़ के नमक क्षेत्रों और आसाम में पाये जाने वाले गन्धक मिले कोयले से गन्धक निकालने का उद्योग शुरू किया जाना चाहिए।

भारत सरकार के भूगर्भतत्व अन्वेषण विभाग ने विहार के शाहावाद जिले में पिराइट से गन्धक निकालने की सम्भावना में खोज करना शुरू कर दिया और गन्धक प्राप्त करने के अन्य स्रोतों पर विचार किया जा रहा है। इस समय भारत को प्रति-वर्ष १ लाख टन सलफ्यूरिक ऐसिड की आवश्यकता होती है जो कि आयात किये हुए गन्धक से वनाया जाता है। देश में गन्धक का अभाव है परन्तु पाइराइट खनिज विस्तृत रूप से पाया जाता है और विहार, मैसूर, वम्बई, पंजाव और मद्रास में इस का भंडार निहित है। सम्पूर्ण भंडार ७,५०,००० टन के लगभग होने का अन्दाज है।

हाल में ही विहार के अमजोर स्थान पर ३० से ६० हजार टन का पाइराइट भंडार पता चला है। इसमें गन्धक का अंश ४५ प्र. श. तक होता है।

देश में सीसे का उत्पादन भी काफी नहीं होता है। साधारणतया भारत में १७,००० टन सीसे की आवश्यकता रहती है परन्तु देश में इस वस्तु का उत्पादन केवल १५०० टन से अधिक नहीं है। इसलिए संयुक्तराष्ट्र अमरीका, आस्ट्रेलिया, मेक्सिको, और जापान से सीसे का आयात करना पड़ता है।

सीसे का आयात (हण्डरवेट में)

१६४८-४६	१,६४,८४६	१६५०-५१	३,११,७३८
१६४६-५०	१,४८,१०६	१६५१-५२	१,५४,१६४

भारत में सीसे की खानें राजस्थान के उदयपुर व जयपुर स्थानों में पाई जाती हैं और केवल १२ वर्ष पहिले सन् १६४३ से इन खानों पर काम शुरू हुआ।

भारत में रासायनिक व इंजीनियरिंग उद्योगों के लिए निकल की मांग रहती हैं। परन्तु देश में निकल की एक भी खान नहीं है और न भविष्य में इसकी खानों का पता लगने की कोई आशा ही है। भारत में प्रतिवर्ष १००० टन निकल आयात किया जाता है और यह सब का सब कनाडा से आता है। नेपाल में निकल की खानों के कुछ चिन्ह मिले हैं और भविष्य में इन खानों के विकसित होने की आशा है।

भारत में प्रतिवर्ष ४००० टन टीन और १२००० टन टीन की चद्दरों की मांग रहती है। भारत के विजली, टीन के डिब्बों तथा दवाई निर्माण उद्योग में टीन की सबसे अधिक खपत रहती है। भारत में इस समय टीन की कोई भी खान नहीं है और इसलिए भारत को मलाया, सिंगापुर तथा अन्य देशों से टीन का आयात करना पड़ता है।

भारत में टीन का आयात (हन्डरवेट में)

१६४८-४६	६६,५६६	१६५०-५१	८५,७६२
१६४६-५०	७१,३६४	१६५१-५२	७३,०३७

भारत में जस्ता भी वाहर से मंगवाया जाता है। यद्यपि राजस्थान, काश्मीर और नेपाल में जस्ते की खानें स्थित हैं फिर भी भारत में जस्ते का उत्पादन बिल्कुल नहीं होता अतः भारत रोडेशिया, आस्ट्रेलिया, संयुक्त राष्ट्र और हालैंड से जस्ता मंगवाता है।

जस्ते का आयात (हन्डरवेट में)

१६४८-४६	७,५७,८०५	१६५१-५२	४,१७,८३०
१६४६-५०	६,०६,८१८	१६५२-५३	४,६१,१४६
१६५०-५१	७,४८,२७५		

भारत के खनिज उत्पादन उद्योग में कई दोष हैं। मैंगनीज, अभ्रक, ऐवोनाइट, क्रोमाइट, रिफ्रेक्टर आदि खनिज पदार्थों को केवल निर्यात के वास्ते खानों से निकाल

जाता है। यदि यही नीति जारी रही तो शीघ्र ही भारत की खानों में महत्त्वपूर्ण धातुओं व खनिज की भारी कमी पड़ जायेगी। दूसरा बड़ा दोष यह है कि भारत के औद्योगीकरण व खनिज सम्पत्ति उत्पादन में कोई सामंजस्य या संतुलन नहीं है। उचित अन्वेषण व निरीक्षण के उपरान्त देश की खनिज सम्पत्ति का नियमित तथा आयोजित उपभोग होना चाहिए। देश की खनिज सम्पत्ति को पूरी तरह प्रयोग में लाने के लिए आयात निर्यात दोनों पर ही भारी कर लगा देने चाहिएँ। इस प्रकार कच्ची मैंगनीज, क्रोम, अभ्रक, टिटेनियम जैसे खनिज तथा फोसफेट व रिफ्रेक्टरी वस्तुओं के बेतरतीब निर्यात पर रोक लगाई जा सकेगी। आयात पर प्रतिबन्ध लगाकर देश की खानों की उन्नति की जा सकेगी। अतएव देश की खनिज सम्पत्ति के उपभोग की उचित व्यवस्था होना अति आवश्यक है।

लोहा (Iron Ore)

इस समय लोहा सबसे महत्त्वपूर्ण खनिज धातु है और आधुनिक सभ्यता का आधार है। वर्त्तमान आर्थिक व्यवस्था में मशीनों का प्रयोग अधिकाधिक बढ़ रहा है और कोयला, तेल अथवा जल शक्ति से संचालित ये विविध मशीनें लोहे से ही बनती हैं। लोहे की सहायता से आधुनिक मशीन युग आ सका है। दूसरे प्रकार से यूँ कहा जा सकता है कि मशीनों के बढ़ते हुए प्रयोग से लोहे की मांग बहुत बढ़ गई है। इस प्रकार लोहा व वर्त्तमान सभ्यता का अटूट सम्बन्ध है।

लोहे के उत्पादन में भारत का बड़ा प्रमुख स्थान है। राष्ट्रमंडलीय देशों में लोहा उत्पादन के दृष्टिकोण से इसका दूसरा स्थान है। संसार के लोहा उत्पादक देशों में भारत का नवां स्थान है। ब्राजील को छोड़कर उत्तम प्रकार के लोहा भंडार वाले देशों में भारत का स्थान सर्वप्रथम है। भारत में प्रतिवर्ष ३० लाख टन कच्चा लोहा खानों से निकाला जाता है।

सन् १९५३ में दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों से जहाँ पर संयुक्त राष्ट्र संघ की आर्थिक परिषद काम कर रही थी ७५६३ हजार टन कच्चा लोहा प्राप्त हुआ। इसमें विभिन्न देशों का उत्पादन इस प्रकार था—

भारत	३६१२००० टन
जापान	१५३६००० ,,
फिलिपाइन	१२१२००० ,,
मलाया	१८०,००० ,,
हांगकांग	१२३,००० ,,

विभिन्न प्रदेशों के कच्चे लोहे में धातु का अंश इस प्रकार है—

भारत	६५ प्रतिशत
जापान	५५ ,,
फिलीपाइन	५५ ,,
मलाया	६५ ,,
हांगकांग	४५ ,,

प्रमुख भारतीय खनिज पदार्थों का उत्पादन व मूल्य (१९३९, १९४७, १९५४)

खनिज पदार्थ	मात्रा की इकाई	१९३९		१९४७		१९५४	
		मात्रा	मूल्य (रु०)	मात्रा	मूल्य (रु०)	मात्रा	मूल्य (रु०)
कोयला	टन	२७,७६६,११२	६,८७,२३,९१६	३०,१४४,५०५	४३,७७,२०,२४५	३६,८८०,८१०	५३,९०,६४,८५०
मैंगनीज	,,	८४४,६६३	१३,६९,७७९	४५१,०३४	२,०७,४७,५६४	१,४१३,८४७	१९,५४,१७,४५२
अभ्रक (निर्यात)	हण्डरवेट	१९८.३६८	१,५३,८२,०८२	१९२,६७१	४,६५,८९,१९३	३३४,८५३	६,५७,२९,६०९
सोना	औंस	३१४,५१५	३,२४,३४,३६४	१७१,७०५	४,८९,५४,६३९	२३९,१६८	५,६२,०६,२१४
कच्चा लोहा	टन	३,१६६,०४७	५२,२०,६००	२,४९८,४५६	८०,६५,८०५	४,३०८,२७३	२,८९,३५,०३६
ताम्बा	,,	३६०,६२४	४७,८९,३४०	३२३,०३५	६०,३५,११८	३४२,७५०	१,८७,२२ ६२९
जिप्सम	,,	७१,२१०	१,६७,७५२	५०,५६९	४,६६,२८३	६१२,१२०	४१,५९,३८८
सीसा	,,	—	—	३२१	४,२३,७२०	१,७९०	२३,०८,२४३
जस्ता	,,	—	—	—	—	३,९७४	१०,८०,९९६
बाक्साइट	,,	८,९७७	१७,०२१	१९,९०६	१,५८,४९३	७४,७४७	८,२७,७८५
हीरा	कैरट	१,६०४	५८,३१७	१२७४	१,७२,६५२	१९५५	४,७४,२३६
पन्ना	,,	—	—	—	—	५०९,१८०	६,७०,४०६
चाँदी	औंस	२२,९४६	३३,३६१	१२,४२२	५४,७२५	१६१,१८५	६,६७,६८०
नमक	टन	१,४९८,९८८	८३,५९,५०५	१,५४०,३५३	२,४६,८९,७९४	२,५१६,७२५	४२५,६४,०००
ग्रेफाइट	,,	९३६	३२,६२२	१२३५	१.५५,३१७	१,४७९	१,३६,५६१

स्वतन्त्रता के बाद से भारत में खनिज पदार्थों का उत्पादस बराबर बढ़ रहा है। सन् १९४७ में खनिज तेल को छोड़ कर अन्य खनिज पदार्थों का मूल्य ६४ करोड़ रुपये था और सात साल बाद सन १९५४ में इहीं खनिज पदार्थों का कुल मूल्य ११३ करोड़ रुपये था—करीब-करीब दुगना।

इस उत्पादन की मात्रा से बढ़ कर भारत का विस्तृत लोह भंडार है जिसको अभी तक छुआ भी नहीं गया है। भारतीय भूगर्भ अन्वेषण विभाग के अनुसार भारत के विविध क्षेत्रों में ३,००० लाख टन लोहा सन्निहित है। अमरीकी खोज मिशन ने सन् १९४२ में भारत की खनिज सम्पत्ति का अन्वेषण किया था। उनके अनुसार केवल सिंघभूम जिले में ही ३०,००० लाख टन लोहे का भंडार है। इसके अलावा वस्तर राज्य में भी ७२४० लाख टन लोहा पृथ्वी के गर्भ में छिपा है। लोहे के इन सब भंडारों में उच्चकोटि का लोहा पाये जाने की उम्मीद है और ऐसा अनुमान है कि कच्ची धातु में ६० प्रतिशत तक लोहे का अंश होगा।

भारत में कच्चे लोहे का भंडार २१०,००० लाख टन के लगभग है। यह विश्व भंडार का एक चौथाई है और संसार के अन्य किसी देश के मुकावले सब से ज्यादा है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा तैयार की गई अविकसित राष्ट्रों की सूची में कोई १५ राज्य हैं जिनमें केवल भारत और मेक्सिको ऐसे हैं जो कच्चा लोहा घरेलू खपत के लिये निकालते हैं। अन्य देशो में कच्चा लोहा प्रधानतया निर्यात के लिए निकाला जाता है। भारत के लोह भंडार का व्योरा इस प्रकार है—

हेमाटाइट लोहा	१७,६३०० लाख टन
मेगनाटाइट लोहा	१६,७०० ,, ,,
लियोनाइट लोहा	२०,००० ,, ,,

इस भंडार का तीन-चौथाई बिहार उड़ीसा और मध्य प्रदेश मे निहित है— ८०,००० लाख टन बिहार-उड़ीसा में और ७०,००० लाख टन मध्य प्रदेश में। भारत के अधिकतर कच्ची धातु में लोहे का अंश वहुत अधिक है—६४ प्रतिशत तक।

कच्चे लोहे का भंडार (लाख टन)
(६० प्रतिशत लोह अंश)

१. हेमाटाइट लोहा	अनुमानित	सम्भावित
बिहार-उड़ीसा :	२७,०००	८०,०००
सिंघभूम	१०,४७०	—
क्योंजहार	६,८८०	—
वोनाई	६,४८०	—
मयूरभंज	१७०	—
मध्य प्रदेश :	१५,५००	३०,०००
लोहारा	२००	—
पीपल गांव	३०	—
असोला देवलगांव	२०	—
दल्ली रायहारा पहाड़ी	१,२००	—
वैलादिला	६,१००	—
रौघाट	७,४००	—
जब्वलपुर	५५०	—

बम्बई :	७०	
गोआ-रत्नगिरि		
हैदराबाद :	३६०	
मद्रास, आन्ध्र, मैसूर :		
बेलद्रुती (कुरनूल)	७०	
मैसूर	१,२००	१०,०००
सन्दूर (बेलारी)	१,३००	२५००
कुल योग	४५,५००	१२,२५००
२. मेगनेटाइट लोहा :		
मद्रास, आन्ध्र मैसूर :		
सलेम-त्रिचनापली	३,०५०	१०,०००
मैसूर	१,३००	२०००
बिहार-उड़ीसा :		
सिंघभूम-मयूरभंज	२०	
पालामान	१०	
हिमाचल प्रदेश :		
मण्डी	२५०	
कुल योग	४६३०	१२,०००
३. लिमोनाइट लोहा		
बंगाल :		
रानीगंज कोयला क्षेत्र		५,०००

लोहे के प्रकार और उत्पादन क्षेत्र—लोहे की खान का महत्व केवल लोहे की उत्तमता पर ही निर्भर नहीं रहता है। बल्कि खानों की स्थिति और खान खोदने की सहूलियत या कठिनाई के अनुसार ही विविध क्षेत्रों में लोहे की खानों का विकास हुआ है। इस दृष्टिकोण से भारत की खानें बड़े अच्छे प्रदेश में स्थित हैं। लोहे के क्षेत्रों के आस-पास ही कोयला भी उपलब्ध है और लोहा गलाने व साफ करने में प्रयुक्त चूने के पत्थर व डाजमाइट भी निकटवर्ती प्रदेशों में पाये जाते हैं।

भारत की खानों से ४ प्रकार का लोहा प्राप्त होता है—मेगनाटाइट, लेटराइट, लोहे की मिट्टी मिले पत्थर और हेमाटाइट। भारत का हेमाटाइट लोहा सबसे उत्तम प्रकार का होता है और इसी प्रकार के अमरीकी लोहे की अपेक्षा भारत के इस लोहे में धातु का अंश अधिक रहता है तथा कोटि भी उच्चतर होती है।

यद्यपि अच्छी प्रकार का लोहा भारत के विभिन्न प्रदेशों में पाया जाता है रन्तु सबसे महत्वपूर्ण खानें उड़ीसा सिंघभूम, क्योंझहार, बेनाई और मयूरभंज

जिलों में स्थित हैं। उत्पादन की दृष्टि से कम महत्व के क्षेत्र मध्य प्रदेश, मद्रास और मैसूर में स्थित हैं।
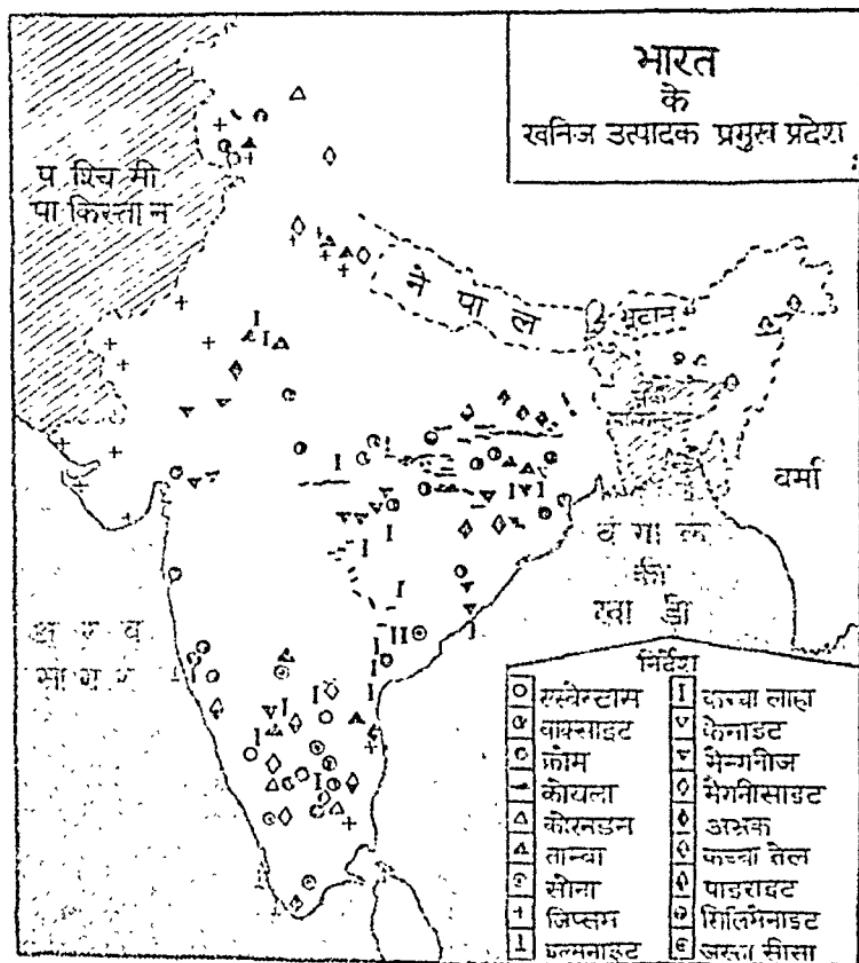
चित्र ४४

कच्चे लोहे का उत्पादन (हजार टन)

	१९५१	१९५२	१९५३
सिंघभूम (बिहार)	१,७६५	१,६५८	९९१८
मयूरभंज (उड़ीसा)	१,०५०	१,०८४	१,६६६
क्योन जहार (उड़ीसा)	७७३	६१८	
वेलारी	३१	१४२	७७
अन्य	३८	१२४	१८४
	३,६५७	३,९२६	३,८४५

दूसरी पंच-वर्षीय योजना के अन्तर्गत सन् १९६०-६१ तक लोहे का उत्पादन बढ़कर १२५ लाख टन हो जायेगा।

इन सभी क्षेत्रों में टाटा इस्पात कम्पनी, वर्ड एंड कम्पनी और भारतीय लोहा व इस्पात कम्पनी की तरफ से ही अधिकतर लोहा खानों से निकाला जाता है।

उड़ीसा के लोह क्षेत्र—उड़ीसा के लोहा उत्पादक तीन क्षेत्र हैं—मयूरभंज, सिंघभूम और क्योनजहार।

मयूरभंज में उच्च कोटि के लोहे का विस्तृत भंडार है जो तीन प्रमुख खानों से प्राप्त होता है। ये खानें गुरुमाहीसनी, सुलेमपत और बदाम पहाड़ नामक उच्च-भूमियों में स्थित हैं। पूर्वी रेल मार्ग की शाखाओं द्वारा इन तीनों प्रदेशों को इस्पात के मुख्य केन्द्र टाटानगर से सम्बद्ध कर दिया गया है। इन प्रदेशों से कोयला, चूने के पत्थर व डालमाइट उत्पादक क्षेत्र भी समीप हैं। भारत के कुल उत्पादन का एक तिहाई लोहा इन क्षेत्रों से निकाला जाता है।

चित्र ४५

सिंघभूम में सबसे अधिक लोहा निकाला जाता है और कलहान राज्य के पनसीरा, बूरू, गुआ, बूदाबूरू, तथा नोआमेन्दी स्थानों पर उच्च कोटि का हेमाटाइट लोहा निकाला जाता है। मयूरभंज राज्य के लोहे की अपेक्षा यहाँ के लोहे में धातु का अंश अधिक है। विभिन्न खानें पूर्वी रेल मार्ग की शाखाओं द्वारा एक दूसरे से सम्बद्ध हैं।

कीनझार जिले में दो खानें पायी जाती हैं। एक बार्गया बूरू पहाड़ी में और दूसरी उत्तर-पूर्वी भाग में। दूसरी खान वास्तव में सिंघभूम की नोआमुन्दी खान के ही भाग है। इसके करीब में ही मैंगनीज व डालमाइट भी उपलब्ध है।

मध्यप्रदेश में भी कच्चे लोहे का भंडार है परन्तु अभी तक कुछ विशेष खानें नहीं खोदी गई हैं। इस समय यहाँ का कुल उत्पादन ८०० टन है और दो खानों से प्राप्त किया जाता है। ये खानें लोहारा तथा चन्दा जिले के पीपल गांव में स्थित हैं। दुर्ग जिले में दाली व राजहारा की पहाड़ियों तथा बस्तर राज्य के प्रदेशों में लोहा प्राप्त करने की बहुत संभावनाएँ हैं।

मैसूर राज्य में लोहे के उत्पादन के लिए बाबाबूदन पहाड़ी की किम्मानगुन्दी खान विशेष महत्त्वपूर्ण है। इसमें ६० प्रतिशत लोहा होता है। मैसूर के अन्य क्षेत्रों में भी लोहे का भंडार निहित है परन्तु अभी तक उसे खोदा नहीं गया है। गोआ

और बम्बई के रत्नगिरी क्षेत्र में भी लोह उत्पादन की विशेष संभावनाएँ हैं। हाल में मद्रास के सलेम, त्रिचनापली, सन्दूर और कुरनूल जिलों में लोहे की खानों का पता चला है। अनुमानतः सलेम और त्रिचनापली में ३०४० लाख टन, कुरनूल में ३० लाख टन और सन्दूर में १३०० लाख टन लोहे का भंडार निहित है। इन खानों को खोदकर दक्षिणी भारत में एक विशाल इस्पात उद्योग स्थापित किया जा सकता है।

भारत में कोक बनाने वाला कोयला बहुत कम मिलता है। इसलिए उपलब्ध लोहे का पूरा उपभोग नहीं हो पाता। अतः बहुत-सा कच्चा लोहा भारत से जापान, संयुक्त राष्ट्र और ग्रेट ब्रिटेन को निर्यात कर दिया जाता है।

भारत से कच्चे लोहे का निर्यात व्यापार अपेक्षाकृत हाल में ही शुरू हुआ है। सन् १९४९-५० तक भारत से केवल एक लाख २३ हजार रुपये मूल्य का ४००० टन कच्चा लोहा जापान को भेजा जाता था परन्तु तब से निर्यात बराबर बढ़ता ही जा रहा है।

कच्चे लोहे का निर्यात

	मात्रा (टन)	मूल्य (रुपये)
१९५२-५३	८१००२५	३.७० करोड़
१९५३-५४	१२६१९७७	५.७९ ,,
१९५४-५५	९०८४९९	३.८४ ,,

भारतीय कच्चे लोहे के प्रमुख ग्राहक जापान, पश्चिमी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया और बेल्जियम हैं। इनमें जापान का स्थान सर्वप्रधान है परन्तु जापानी मंडी में भारतीय लोहे को फिलीपाइन, कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, मलाया तथा गोआ की स्पर्धा का सामना करना पड़ता है।

मैंगनीज़ (Manganese)

आजकल के उद्योग-धंधों में मैंगनीज़ का बहुत महत्व है। इसे मिला कर लोहा व इस्पात को कठोर बनाते हैं। ब्लाकों की पालिश और रासायनिक उद्योग में प्रयुक्त कपड़ा धोने के पाऊडर बनाने में भी यह धातु प्रयोग की जाती है। बिजली और शीशे के उद्योग में भी इसकी बहुत मांग रहती है।

रूस और गोल्ड कोस्ट के बाद मैंगनीज़ उत्पादन में भारत का तीसरा स्थान है। वास्तव में इस धातु का उपयोग भारी इस्पात वस्तु निर्माण में ही अधिक होता है। व्यापार में हेरफेर के कारण तथा लड़ाई के दिनों में अस्त्र-शस्त्र निर्माण उद्योगों में वृद्धि तथा बाद में अवनति की दशाओं के कारण इसकी मांग अस्थिर-सी है। कभी बढ़ जाती है तो कभी कम हो जाती है।

मैंगनीज का उत्पादन (१९५३)

विश्व	१०८ लाख टन
रूस	५० ,,
भारत	१६ ,,
दक्षिणी अफ्रीका	८ लाख ६५ हजार टन

भारत में मैंगनीज़ की खानों में लगभग १०,००० मनुष्य काम करते हैं। ये लोग आसपास के प्रदेशों से ही आते हैं और अनपढ़ व साधारण मजदूरों से ही इस धातु की खोदाई हो सकती है।

भारत में मैंगनीज उत्पादन के क्षेत्र—भारत के मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, वम्बई और मैसूर प्रदेशों में मैंगनीज निकाला जाता है। सन् १९५४ में भारत के विभिन्न प्रदेशों से कुल मिलाकर १४१३८४७ टन मैंगनीज निकाला गया।

भारत में मैंगनीज का अटूट भंडार है। अनुमानतः भारत के भूगर्भ में १००० लाख टन उच्च कोटि का और २००० लाख टन निम्न कोटि का मैंगनीज निहित है।

भारत के विभिन्न प्रदेशों में मैंगनीज के उत्पादन का वितरण (१९५०-५१)
(टनों में)

प्रदेश	उत्पादन	प्रदेश	उत्पादन
मध्य प्रदेश	६,४६,४६५	वम्बई	६१,५९८
मद्रास	३३,८०९	मैसूर	५,३२३
उड़ीसा	७९,६९१	संपूर्ण भारत	९०२,०००

दूसरी योजना का लक्ष्य है कि सन् १९६०-६१ तक मैंगनीज़ का उत्पादन २० लाख टन हो जाये।

मध्य प्रदेश में सबसे अधिक मैंगनीज उत्पन्न होता है और बालाघाट, भंडारा, छिन्दवाड़ा, नागपुर और जबलपुर जिलों में इसकी खानें पाई जाती हैं। इस राज्य में भारत के कुल उत्पादन का ६० प्रतिशत मैंगनीज़ निकाला जाता है। विजगापट्टम वन्दरगाह खुल जाने से मैंगनीज़ उत्पादन को विशेष प्रगति प्राप्त हुई है। वाल्टेयर रायपुर रेल द्वारा इस खनिज को विभिन्न उत्पादन केन्द्रों से वन्दरगाह तक पहुँचाया जाता है। इस वन्दरगाह के खुलने से पहले मध्य प्रदेश को मैंगनीज़ के निर्यात के लिये वम्बई या कलकत्ते पर निर्भर रहना पड़ता था। मध्य प्रदेश से वम्बई या कलकत्ते तक धातु ले जाने में इतना अधिक खर्चा बैठता था कि अन्तर्राष्ट्रीय मंडियों में द्वितीय श्रेणी के मैंगनीज़ का दाम बहुत बढ़ जाता था। फलतः भारत के इस प्रकार के मैंगनीज़ को विदेशों के हाथ बेचना बहुत कठिन होता था। परन्तु अब नये वन्दरगाह तथा नये रेलमार्ग के खुल जाने से मध्य प्रदेश के मैंगनीज़ का निर्यात बहुत बढ़ गया है और मैंगनीज़ के बढ़ते हुए निर्यात के कारण विजगापट्टम वन्दरगाह में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। निम्न तालिका से विजगापट्टम, वंबई और कलकत्ता से मैंगनीज के निर्यात के आंकड़े स्पष्ट हो जायेंगे।

मैंगनीज़ के व्यापार में विविध वन्दरगाहों का भाग (टनों में)

साल	विजगापट्टम	वम्बई	कलकत्ता	मारमागोआ
१९३०	४,५००	२९७,७३८	३००,२११	१७०,५७७
१९३५	४१२,६८३	६४,१००	२२५,५०४	१६२,४११
१९३९	३३७,३४९	५५,४६६	२६१,५७५	१२८,२२६
१९५१	६१०,३१२	—	१६५,४४८	३६७,५९६

विस्तृत भंडार है परन्तु यातायात के साधनों की असुविधा तथा खपत के स्थानों से दूर स्थिति के कारण इनमें खान खोदने के उद्यम ने कोई विशेष प्रगति नहीं की है। देहरादून जिले में कालसी स्थान पर, अलमोड़ा जिले में बागेश्वर स्थान पर और टीहरी गढ़वाल में पोखारी स्थान पर भी तांबे का भंडार पाया गया है। इन पर शीघ्र ही काम शुरू हो जाएगा।

सन् १९३८ के बाद से भारत में तांबे की उत्पादन मात्रा बहुत कुछ स्थायी सी है।

भारत में तांबे का उत्पादन

वर्ष	मात्रा (टनों में)	वर्ष	मात्रा (टनों में)
१९३८	२,८८,१२७	१९४६	३,५२,७१८
१९४०	४,०१,२९३	१९४८	३,२२,३८२
१९४२	३,६३,१६६	१९५०	३,६०,३०८
१९४४	३,२६,०१७		

भारत, संयुक्त राष्ट्र, कनाडा, रोडेशिया, जापान और पोर्त्तगीज पूर्वी अफ्रीका से तांबे को आयात भी करता है। सन् १९५१ में भारत में ७,४८,९५८ हन्डरवेट तांबा बाहर से मंगवाया गया।

भारत में तांबे का उद्योग बहुत कुछ पीतल बनाने के उद्योग पर निर्भर है। हाल में अल्युमिनियम की वस्तुओं की लोकप्रियता बढ़ जाने से पीतल के वर्त्तनों का उद्योग बहुत कुछ गिर सा गया है और इसीलिए तांबे की मांग भी कम हो गई है।

सोना (Gold)

भारत में सोने को सिक्के ढालने के लिए और आभूषण बनाने के लिए उपयोग किया जाता है। भारत के विविध खनिज पदार्थों में मूल्य के दृष्टिकोण से सोने का तीसरा स्थान है। परन्तु संसार के कुल उत्पादन का केवल २ प्रतिशत भाग ही भारत की खानों से प्राप्त होता है। लोहे के अतिरिक्त केवल सोना ही एक ऐसा खनिज है जो भारत के विभिन्न प्रदेशों में विस्तृत रूप से पाया जाता है। सन् १९५४ में भारत की विविध खानों से २,३९,१६८ औंस सोना पैदा हुआ।

उत्पादन के क्षेत्र—भारत में सोने के उत्पादन के दृष्टिकोण से मैसूर, हैदराबाद, मद्रास, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा राज्यों का स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण है। परन्तु इनमें सबसे बढ़कर मैसूर राज्य की कोलार खान है। इस खान से भारत का ९९ प्रतिशत सोना प्राप्त होता है।

कोलार खान में चार स्थानों से सोना निकाला जाता है। यह प्रदेश बंगलोर से ४० मील दूर स्थित है और समुद्रतल से इसकी ऊँचाई २,८०० फीट है। इसमें ४ मील लम्बी सोने की पट्टी सी पाई जाती है जिसे चार स्थानों पर खोद कर सोना निकाला जाता है। इस कार्य में करीब २३,००० मनुष्य लगे हुए हैं और ९२ मील

दूर शिवसमुद्रम् से बिजली का प्रबन्ध किया गया है। कोलार प्रदेश की दो खानें—चैंपियन रीफ और ओरिगम—संसार की सबसे गहरी खानों में से हैं और उनकी औसत गहराई ६,००० फीट है। यहाँ पर काम करने वाले मजदूरों में सभी प्रदेशों के लोग सम्मिलित हैं। केवल २६ प्रतिशत मजदूर मैसूर के आसपास वाले भागों के हैं। इनमें से आधे मजदूर निम्न या शूद्र जाति के हैं। कोलार खान से सोना निकालने का काम सन् १८८२ में शुरू हुआ। तबसे लेकर सन् १६४३ तक कुल मिलाकर २०६ लाख औंस सोना निकाला गया। परन्तु अब धीरे-धीरे सोने के उत्पादन में कमी होती जा रही है।

बंगलौर से ६० मील पश्चिम में बेलारा की खान से भी थोड़ा सोना प्राप्त किया जाता है। कुछ दिनों तक इस पर काम बन्द था पर मैसूर सरकार ने अब इसे फिर से खोल दिया है।

कुछ समय पहले हैदराबाद के रायचूर जिले और बम्बई के धारवार प्रदेश से काफी सोना निकाला जाता था परन्तु अब ये प्रदेश बिल्कुल बन्द से हैं। परन्तु हैदराबाद से हट्टी क्षेत्र में सब यंत्रादि लग चुके हैं और शीघ्र वहां से भी सोना निकाला जाने लगेगा। मद्रास के अनन्तपुर प्रदेश में भी सोने की कई चट्टानें विद्यमान हैं परन्तु अभी तक सोना नहीं निकाला जाता। सलेम और चित्तूर प्रदेशों में भी सोने के विस्तृत भंडार का पता लगा है। सरकार की ओर से इस दिशा में खोज हो रही है।

भारत के अन्य बहुत से भागों में गंगवार या नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी के साथ सोना मिला हुआ पाया जाता है। इसको निकालने का उद्योग विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं है और वहीं की स्थानीय जनता के प्रयत्न की बात है। उड़ीसा का सिंघभूम प्रदेश, पंजाब का अम्बाला क्षेत्र, उत्तर प्रदेश का बिजनौर जिला और आसाम में ब्रह्मपुत्र की घाटी इस प्रकार के सोना प्राप्त करने के लिए विशेषतया उल्लेखनीय हैं। परन्तु इस प्रकार प्राप्त किये गए सोने का वार्षिक मूल्य ३०० पौंड से अधिक नहीं होता।

भारत ग्रेट ब्रिटेन, अदन, कुवैत, हांगकांग और बेलजियम से सोना आयात करता है।

अभ्रक (Mica)

भारत में संसार का सबसे अधिक अभ्रक उत्पन्न होता है और विश्वव्यापी उत्पादन का ८० प्रतिशत भाग यहीं से प्राप्त होता है। अति प्राचीन काल से भारत में दवाई बनाने, सजावट करने और आभूषण आदि में जड़ने के लिए धातु का उपयोग होता रहा है। अभ्रक में कई गुण पाये जाते हैं। यह पारदर्शक, लचीला, मुड़नेवाला तथा ताप व विद्युत-निरोधक होता है। तोड़ने पर इसकी पतली-पतली महीन पट्टियाँ सी निकल आती हैं। अतः इसे कई उपयोग में लाते हैं। विद्युत निरोधक होने के कारण इसकी सहायता से वायुयानों में तीव्र शक्ति की मोटरें लगाई गई हैं और प्रत्येक रेडियो मशीन में काफी अभ्रक काम में आता है। रेडियो स्टेशन पर उपयुक्त

प्रत्येक किलोवाट बिजली के लिए ८ पौण्ड अभ्रक की आवश्यकता होती है। परन्तु आजकल इसका युद्ध व सैनिक दृष्टिकोण से विशेष महत्त्व है और विद्युत उद्योग तो इसी पर निर्भर है। बेतार के तार व रेडियो द्वारा बातचीत, हवाई यन्त्र शास्त्र और मोटर गाड़ियों के विकास में इस धातु का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। वास्तव में इन उद्योगों की आधारशिला तो अभ्रक ही है। इसके अलावा इसे चूल्हों के अग्रभाग, लालटेन की चिमनी, नेत्ररक्षक चश्मे आदि बनाने में भी प्रयोग करते हैं। अग्नि से न जलने वाले पदार्थों, छत्तें डालने के सामान और सजावट के सुन्दर कागज तथा खप्परों में मिलाया जाता है। अतः इसका औद्योगिक महत्व स्पष्ट है।

भारत में कच्ची अभ्रक को ठीक करने व काटने छांटने में बहुत अधिक नुकसान होता है। ७० से ८० प्रतिशत तक कच्ची धातु को हजारीबाग व नेल्लोर की खानों में वैसे ही डाल दिया जाता है और उसके ढेर से लग जाते हैं। इस रद्दी अभ्रक को संयुक्त राष्ट्र आयात करता है और इससे महीन चूर्ण बनाकर विद्युत निरोधक वस्तुएँ बनाने में प्रयोग करता है।

उत्पादन क्षेत्र—यद्यपि अभ्रक काफी विस्तृत रूप से पाया जाता है परन्तु इसके उत्पादन व व्यापार के दो प्रमुख क्षेत्र हैं। (१) बिहार की पट्टी का क्षेत्रफल १५०० वर्गमील और यह ८० मील से अधिक लम्बी है। यह पट्टी हजारीबाग, गया, मुंघेर और मानभूम के जिलों में से टेढ़ी होकर फैली हुई है। और (२) आन्ध्र में नेल्लोर का जिला।

वास्तव में बिहार राज्य को अभ्रक का मुख्य स्रोत कहा जा सकता है। संसार के लिए यह अभ्रक का विशाल भंडार है। भारत के कुल उत्पादन का ८० प्रतिशत भाग बिहार से ही प्राप्त होता है। यहाँ का अभ्रक बढ़िया माणिक मेल का होता है और यह या तो बिल्कुल साफ या हल्के धब्बों वाला होता है। संसार में इस मेल का अभ्रक सबसे श्रेष्ठ होता है और विद्युत-उद्योग में बहुत काम आता है। बिहार में अभ्रक उत्पादन के लिए गया, हजारीबाग और मुंघेर के जिले विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

आन्ध्र के नेल्लोर जिले में गुंटूर, कवाली, आत्माकुर और रायपुर स्थानों पर अभ्रक को खोद कर निकाला जाता है। ये खानें तटीय मैदान में स्थित हैं और करीब ६० मील तक फैली हैं। यहाँ के अभ्रक का रंग कुछ काला धब्बेदार-सा होता है और बिहार के अभ्रक की अपेक्षा निम्नकोटि का होता है। इसे विद्युतमय अभ्रक भी कहते हैं। इन खानों से कभी ३ गज व्यास के टुकड़े भी निकल आते हैं जिनसे पतली पट्टियाँ काटी जा सकती हैं। राजस्थान में इसका भंडार छितरा-बितरा है।

व्यापार—भारत में अभ्रक की माँग बहुत कम है, इसलिए उत्पादन का अधिकतर भाग निर्यात कर दिया जाता है। या यूँ कह सकते हैं कि निर्यात के लिए ही भारत में अभ्रक निकाला जाता है।

भारत के निर्यात व्यापार का यह प्रधान अंग है और सन् १९५१-५२ में १३ करोड़ रुपये मूल्य का अभ्रक बाहर भेजा गया। परन्तु अब इसका निर्यात बराबर कम होता जा रहा है।

अभ्रक का निर्यात

१९५२-५३	९ करोड़
१९५३-५४	८ ,,
१९५४-५५	७ ,,

१८वीं सदी से पहिले अभ्रक का एक मात्र स्रोत रूस था। पश्चिमी संसार की मांग पूर्ति रूसी अभ्रक से ही हुआ करती थी परन्तु १९वीं सदी के अन्त में भारतीय अभ्रक के सामने रूसी अभ्रक को अन्तर्राष्ट्रीय मंडी से हटना पड़ा। दूसरे महायुद्ध तथा उसके बाद के वर्षों में भारतीय अभ्रक की बड़ी मांग रही। सन् १९५३-५४ में भारत से ३ लाख हन्डरवेट अभ्रक निर्यात किया गया और इससे ८ करोड़ रुपये की आय हुई। संयुक्त राष्ट्र अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन भारतीय अभ्रक के प्रधान ग्राहक हैं। जापान, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, स्वीडन, इटली, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, स्विजरलैण्ड, मिश्र और चीन भी भारतीय अभ्रक मंगवाते हैं।

इधर पिछले दो वर्षों से भारतीय अभ्रक का निर्यात कम होता जा रहा है। इसका सबसे प्रधान कारण तो ब्राजील के अभ्रक की स्पर्धा है परन्तु इसके अलावा यातायात का खर्च इतना अधिक पड़ जाता है कि निर्यात लाभप्रद नहीं रहता। संयुक्त राष्ट्र सरकार ने युद्ध के दिनों में इकट्ठी की हुई अभ्रक को अब मंडियों में बेचना शुरू कर दिया है और उद्योग-धन्धों में अभ्रक के चूर से बना मिकानाइट अधिकाधिक प्रयोग होने लगा है जिससे भारतीय अभ्रक चादरों की मांग कम हो गई है। मांग में कमी का सबसे बड़ा प्रभाव हजारीबाग, गया, मुंगेर और भागलपुर के कोई २०० कारखानों पर पड़ा है। इनमें बहुत से तो बन्द कर दिए गए। कोई ५० हजार मजदूर बेकार हो गये।

निर्यात के मुख्य बन्दरगाह कलकत्ता, मद्रास और बम्बई हैं। कलकत्ते से ८० प्रतिशत निर्यात व्यापार होता है। शेष १४ प्रतिशत मद्रास और १ प्रतिशत बम्बई से बाहर भेजा जाता है।

विभिन्न बन्दरगाहों का अभ्रक निर्यात व्यापार में भाग (हजार हन्डरवेट में)

	कलकत्ता	मद्रास	बम्बई
१९५०-५१	२८०	१२७	१४
१९५१-५२	३०४	१०४	२१२

भारतीय अभ्रक के व्यापार की कुछ समस्याएँ—ग्रेट ब्रिटेन में कनाडा और ब्राजील से अभ्रक के आयात के कारण भारतीय अभ्रक की मांग पर असर पड़ा है। पिछले कुछ दिनों से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में ब्राजील के अभ्रक की ओर से स्पर्धा बढ़ रही है और यही नहीं बल्कि ब्राजील इस चेष्टा में संलग्न है कि वह भारत में कच्चा अभ्रक भेजकर उसकी काट छांट करावे। अतः भारत के अभ्रक उत्पादन व्यापार को ठीक रूप से व्यवस्थित रखने के लिए ब्राजील से भारत में अभ्रक के आयात पर प्रतिबन्ध लगाना अत्यावश्यक है।

दूसरी समस्या यह है कि कृत्रिम अभ्रक अब खूब बनने लगा है। आजकल

प्रत्येक किलोवाट बिजली के लिए ८ पौण्ड अभ्रक की आवश्यकता होती है। परन्तु आजकल इसका युद्ध व सैनिक दृष्टिकोण से विशेष महत्त्व है और विद्युत उद्योग तो इसी पर निर्भर है। बेतार के तार व रेडियो द्वारा बातचीत, हवाई यन्त्र शास्त्र और मोटर गाड़ियों के विकास में इस धातु का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। वास्तव में इन उद्योगों की आधारशिला तो अभ्रक ही है। इसके अलावा इसे चूल्हों के अग्रभाग, लालटेन की चिमनी, नेत्ररक्षक चश्मे आदि बनाने में भी प्रयोग करते हैं। अग्नि से न जलने वाले पदार्थों, छत्तें डालने के सामान और सजावट के सुन्दर कागज तथा खप्परों में मिलाया जाता है। अतः इसका औद्योगिक महत्व स्पष्ट है।

भारत में कच्ची अभ्रक को ठीक करने व काटने छांटने में बहुत अधिक नुकसान होता है। ७० से ८० प्रतिशत तक कच्ची धातु को हजारीबाग व नेल्लोर की खानों में वैसे ही डाल दिया जाता है और उनके ढेर से लग जाते हैं। इस रद्दी अभ्रक को संयुक्त राष्ट्र आयात करता है और इससे महीन चूर्ण बनाकर विद्युत निरोधक वस्तुएं बनाने में प्रयोग करता है।

उत्पादन क्षेत्र—यद्यपि अभ्रक काफी विस्तृत रूप से पाया जाता है परन्तु इसके उत्पादन व व्यापार के दो प्रमुख क्षेत्र हैं। (१) बिहार की पट्टी का क्षेत्रफल १५०० वर्गमील और यह ८० मील से अधिक लम्बी है। यह पट्टी हजारीबाग, गया, मुंघेर और मानभूम के जिलों में से टेढ़ी होकर फैली हुई है। और (२) आन्ध्र में नेल्लोर का जिला।

वास्तव में बिहार राज्य को अभ्रक का मुख्य स्रोत कहा जा सकता है। संसार के लिए यह अभ्रक का विशाल भंडार है। भारत के कुल उत्पादन का ८० प्रतिशत भाग बिहार से ही प्राप्त होता है। यहां का अभ्रक बढ़िया माणिक मेल का होता है और यह या तो बिल्कुल साफ या हल्के धब्बों वाला होता है। संसार में इस मेल का अभ्रक सबसे श्रेष्ठ होता है और विद्युत-उद्योग में बहुत काम आता है। बिहार में अभ्रक उत्पादन के लिए गया, हजारीबाग और मुंघेर के जिले विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।

आन्ध्र के नेल्लोर जिले में गुंटूर, कवाली, आत्माकुर और रायपुर स्थानों पर अभ्रक को खोद कर निकाला जाता है। ये खानें तटीय मैदान में स्थित हैं और करीब ६० मील तक फैली हैं। यहां के अभ्रक का रंग कुछ काला धब्बेदार-सा होता है और बिहार के अभ्रक की अपेक्षा निम्नकोटि का होता है। इसे विद्युतमय अभ्रक भी कहते हैं। इन खानों से कभी ३ गज व्यास के टुकड़े भी निकल आते हैं जिनसे पतली पट्टियां काटी जा सकती हैं। राजस्थान में इसका भंडार छितरा-बितरा है।

व्यापार—भारत में अभ्रक की मांग बहुत कम है, इसलिए उत्पादन का अधिकतर भाग निर्यात कर दिया जाता है। या यूं कह सकते हैं कि निर्यात के लिए ही भारत में अभ्रक निकाला जाता है।

भारत के निर्यात व्यापार का यह प्रधान अंग है और सन् १९५१-५२ में १३ करोड़ रुपये मूल्य का अभ्रक बाहर भेजा गया। परन्तु अब इसका निर्यात बराबर कम होता जा रहा है।

अभ्रक का निर्यात

१९५२-५३	९ करोड़
१९५३-५४	८ ,,
१९५४-५५	७ ,,

१८वीं सदी से पहिले अभ्रक का एक मात्र स्रोत रूस था। पश्चिमी संसार की मांग पूर्ति रूसी अभ्रक से ही हुआ करती थी परन्तु १९वीं सदी के अन्त में भारतीय अभ्रक के सामने रूसी अभ्रक को अन्तर्राष्ट्रीय मंडी से हटना पड़ा। दूसरे महायुद्ध तथा उसके बाद के वर्षों में भारतीय अभ्रक की बड़ी मांग रही। सन् १९५३-५४ में भारत से ३ लाख हन्डरवेट अभ्रक निर्यात किया गया और इससे ८ करोड़ रुपये की आय हुई। संयुक्त राष्ट्र अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन भारतीय अभ्रक के प्रधान ग्राहक हैं। जापान, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, स्वीडन, इटली, नीदरलैंण्ड, बेल्जियम, स्विजरलैण्ड, मिश्र और चीन भी भारतीय अभ्रक मंगवाते हैं।

इधर पिछले दो वर्षों से भारतीय अभ्रक का निर्यात कम होता जा रहा है। इसका सबसे प्रधान कारण तो ब्राजील के अभ्रक की स्पर्धा है परन्तु इसके अलावा यातायात का खर्च इतना अधिक पड़ जाता है कि निर्यात लाभप्रद नहीं रहता। संयुक्त राष्ट्र सरकार ने युद्ध के दिनों में इकट्ठी की हुई अभ्रक को अब मंडियों में बेचना शुरू कर दिया है और उद्योग-धन्धों में अभ्रक के चूर से बना मिकानाइट अधिकाधिक प्रयोग होने लगा है जिससे भारतीय अभ्रक चादरों की मांग कम हो गई है। मांग में कमी का सबसे बड़ा प्रभाव हजारीबाग, गया, मुंगेर और भागलपुर के कोई २०० कारखानों पर पड़ा है। इनमें बहुत से तो बन्द कर दिए गए। कोई ५० हजार मजदूर बेकार हो गये।

निर्यात के मुख्य बन्दरगाह कलकत्ता, मद्रास और बम्बई हैं। कलकत्ते से ८० प्रतिशत निर्यात व्यापार होता है। शेष १४ प्रतिशत मद्रास और १ प्रतिशत बम्बई से बाहर भेजा जाता है।

विभिन्न बन्दरगाहों का अभ्रक निर्यात व्यापार में भाग (हजार हन्डरवेट में)

	कलकत्ता	मद्रास	बम्बई
१९५०-५१	२८०	१२७	१४
१९५१-५२	३०४	१०४	२१२

भारतीय अभ्रक के व्यापार की कुछ समस्याएँ—ग्रेट ब्रिटेन में कनाडा और ब्राजील से अभ्रक के आयात के कारण भारतीय अभ्रक की मांग पर असर पड़ा है। पिछले कुछ दिनों से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में ब्राजील के अभ्रक की ओर से स्पर्धा बढ़ रही है और यही नहीं बल्कि ब्राजील इस चेष्टा में संलग्न है कि वह भारत में कच्चा अभ्रक भेजकर उसकी काट छांट करावे। अतः भारत के अभ्रक उत्पादन व्यापार को ठीक रूप मे व्यवस्थित रखने के लिए ब्राजील से भारत में अभ्रक के आयात पर प्रतिबन्ध लगाना अत्यावश्यक है।

दूसरी समस्या यह है कि कृत्रिम अभ्रक अब खूब बनने लगा है। आजकल

कृत्रिम अभ्रक से पर्टीनक्स, बैकलाइट, पैनसोलिन और फर्मोनाइट आदि वस्तुएं बनाई जाती हैं। कृत्रिम अभ्रक से प्राकृतिक अभ्रक के प्रति स्पर्धा लगी रही है।

फिर भी अभ्रक उद्योग का भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। विज्ञान की प्रगति व विकास से इसकी मांग के महत्त्व पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ रहा है। यदि इसके मूल्य को उचित स्तर पर रखा जा सका तो इसकी मांग उत्तरोत्तर बढ़ती जाएगी। भारतीय अभ्रक मात्रा में ही अधिक नहीं है बल्कि प्रकार में भी सबसे अच्छा होता है। इसके टुकड़ों का विस्तार बड़ा तथा मिलावट रहित होता है। इसमें चूर-चूर हो जाने का भी दोष नहीं होता। अतः भारतीय अभ्रक की मांग तो रहेगी ही परन्तु देश में इसकी खपत बढ़ाने की बड़ी जरूरत है। भारत में कच्चे अभ्रक से वस्तु निर्माण के लिए एक कारखाना खोलने की बहुत जरूरत है

उद्योग को उचित स्तर पर लाने तथा प्रोत्साहन देने के लिए बिहार सरकार ने हजारीबाग में विद्युत शक्ति की व्यवस्था की है और खान खोदने के नवीनतम तरीकों का प्रयोग शुरू किया है। अभ्रक के चूरे तथा टूटफूट का प्रयोग करने के लिए निजी तौर से बिहार में एक मेकानाइट कारखाना भी चालू किया गया है।

नमक (Salt)

भूगर्भ शास्त्रियों का विचार है कि पृथ्वी के नीचे नमक के पर्त का मूल जल में है क्योंकि प्रारम्भिक शैलों में नमक का अंश नहीं पाया जाता है। कदाचित लवण का वृहत एवं गुप्त पर्त प्राचीन समुद्रों के उथल-पुथल से जम गया है और उसके उपरान्त पृथ्वी के आकस्मिक परिवर्तन से ठोस नमक के चट्टान (जैसे कि टेक्सास व लुसियाना में मिलते हैं) ऊपर आ गए। नमक संसार के प्रत्येक भाग में पाया जाता है। नमक के अभाव का कारण इसके उत्पादन में दोष और यातायात की अड़चन है। अनुमानतः ३५०,००० घन मील से अधिक में नमक की चट्टानें संसार के सारे भागों में व्याप्त हैं। अगर समुद्र का सारा नमक निकाल लिया जाय तो १७० मील लम्बा चौड़ा और उतना ही ऊँचा नमक का विशाल पर्वत बन जायगा।

बहुत कम मनुष्य जानते हैं कि नमक का उपयोग पैर के जूतों के चमड़े से लेकर सिर की टोपी के रंग तक में होता है। नमक के रासायनिक-विधान से १३ प्रमुख रासायनिक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक कामों में इसका प्रयोग होता है। कांच, रंग, प्लास्टिक, कलई, स्टार्च इत्यादि के उत्पादन में यह एक आवश्यक वस्तु है। यह हल के उपरी भाग को सशक्त करने व कपड़े के रंग को पक्का करने, ऊन के उद्योग व साबुन बनाने इत्यादि अनेक कामों में आता है।

भारत में नमक प्रायः तीन स्रोतों से प्राप्त किया जाता है—(१) समुद्र के पानी से (२) झीलों और सोतों के जल से (३) नमक के पहाड़ों से। भारत में नमक उत्पादन के मुख्य प्रदेश बम्बई, मद्रास और राजस्थान हैं। बम्बई और मद्रास के किनारों पर समुद्री खारे पानी से भारतवर्ष के कुल उत्पादन का दो तिहाई अंश

प्राप्त होता है। विभिन्न प्रदेशों में नमक क्षेत्र का विस्तार तथा उत्पादन निम्न-लिखित तालिकाओं से स्पष्ट हो जायेगा—

नमक क्षेत्र (१९५४)

राजस्थान	७३४५ एकड़
बम्बई	२०,२११ ,,
सौराष्ट्र	१८,३६६ ,,
कच्छ	७८०२ ,,
ट्रावनकोर कोचीन	९०५ ,,
मद्रास	८२६५ ,,
आन्ध्र	८२८८ ,,
उड़ीसा	३२७० ,,
पश्चिमी बंगाल	३८५ ,,
मण्डी (हिमाचल प्रदेश)	२२०० वर्ग गज

भिन्न-भिन्न राज्यों में नमक का वितरण

राज्य	हजार मन की संख्या में	
	१९५४	१९५५ (अगस्त तक)
१. आन्ध्र	४३,२०	२६,८५
२. आसाम	२०,३१	१३,४६
३. अजमेर	१,३७	९३
४. विहार	८०,९०	५७,६४
५. बम्बई	१,०२,१७	७५,९७
६. भोपाल	१,५८	१,०१
७. जम्मू काश्मीर	५,९१	३,००
८. मद्रास	१,०४,५८	६४,८९
९. मैसूर	१२,५६	८,६९
१०. मध्य प्रदेश	३६,३८	२७,६५
११. मध्य भारत	१३,२०	९,५३
१२. राजस्थान	२१,७२	११,९३
१३. पंजाब	१६,२२	११,३३
१४. सौराष्ट्र	६,०३	१३,७६
१५. ट्रावनकोर-कोचीन	२३,१२	१४.१२
१६. उत्तर प्रदेश	८३,२६	४९,६२
१७. पेप्सू	४,०९	२,१७
१८. उड़ीसा	२४,०४	१६,९१
१९. पश्चिमी बंगाल	५२,२५	३९,५४

२०. देहली	६,६६	४,४८
२१. हिमाचल प्रदेश	१,५८	७५
२२. कच्छ	६६	१,०५
२३. मनीपुर	२८	१२
२४. त्रिपुरा	१,१२	८१
२५. विन्ध्य प्रदेश	५,०६	३१,२६
२६. हैदराबाद	३०,८०	१६,५५
कुल	६,६६,५३	४,७६,०५

बम्बई में कच्छ केरन, काठियावाड़ और सूरत से मंगलौर तक बम्बई राज्य के तट से नमक निकालने का उद्योग होता है। कैम्बे की खाड़ी के पूर्व में धर्संना और छारवाद तथा काठियावाड़ के ओखा स्थानों पर बहुत अधिक नमक तैयार किया जाता है। प्रायः नमक तैयार करने का मौसम जनवरी से जून तक रहता है। कच्छ के छोटे रन पर स्थित खारी पानी के कुओं से भी बहुत अधिक नमक निकाला जाता है। इस प्रदेश के पानी में नमक का अंश बहुत अधिक रहता है और धूप में पानी को सुखा कर नमक तैयार किया जाता है।

मद्रास में नमक तैयार करने का धंधा पूर्वी तट पर केन्द्रित है और गंजाम के किले से लेकर धुर दक्षिण तूतीकोरिन तक तटीय प्रदेशों के निवासियों का यह मुख्य उद्यम है। मालाबार के उदीपी जिलों में भी नमक बनाया जाता है। इस प्रकार इन विभिन्न केन्द्रों से मिलाकर मद्रास राज्य देश के कुल उत्पादन का ३० प्रतिशत भाग उत्पन्न करता है। औसत रूप से मद्रास का वार्षिक उत्पादन १३० लाख मन है। इस मात्रा का ८० प्रतिशत भाग तो राज्य में ही खप जाता है, शेष १० प्रतिशत भाग उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पश्चिमी बंगाल और मैसूर को भेज दिया जाता है।

पश्चिमी बंगाल के समुद्री किनारे वाले प्रदेशो में समुद्र के खारे पानी से नमक तैयार करने का काम कुछ छोटे कारखानों में होता है। वैसे नमक तैयार करने का काम इस प्रदेश का घरेलू धंधा है। कुछ विशेष स्थानों में कृत्रिम रूप से नमक तैयार किया जाता है फिर भी बंगाल को अपने घरेलू उपभोग के लिए अदन, पोर्ट सइद और लालसागर के बन्दरगाहों से नमक आयात करना पड़ता है। पश्चिमी बंगाल, मद्रास और भारत के पश्चिमी किनारे से भी नमक मंगवाता है। सुन्दरबन प्रदेश में नमक तैयार करने की विशेष सुविधाएँ हैं। इस भाग में बड़े-बड़े कारखानों को स्थापित करके नमक बनाने के उद्योग को बढ़ावा दिया जा सकता है। इसी प्रकार धूप में सुखाकर नमक तैयार करने के लिए मिदनापुर के कोन्टाई तट पर सम्यक् संम्भावनाएँ हैं। मद्रास व बम्बई का नमक निम्नकोटि का होता है और अदन के नमक के मुकाबले इसे लोग कम पसन्द करते हैं। कलकत्ता क्षेत्र में जो आसाम, पश्चिमी बंगाल, बिहार और उड़ीसा से मिलकर बनता है, इसे लोग कम पसन्द करते हैं।

भारत में नमक बनाने के केन्द्र और उत्पादन
पश्चिमी पाकिस्तान
मंडी
डीडवाना
सांभर
पंचभद्रा
खारागोदा
कान्दला
नाठापुर
बहाला
उरान
अन्तरंग
नौपादा
पैनुगुड्डरू
पकाला
ऐटीपुर
कुदालोर
वेदारनिवम
भालीपुरम
तूतीकोरिन
बर्मा
उत्पादन
करोड़ मन
० १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९
१९४७
१९४८
१९४९
१९५०
१९५१
१९५२
१९५३
१९५४

चित्र ४६
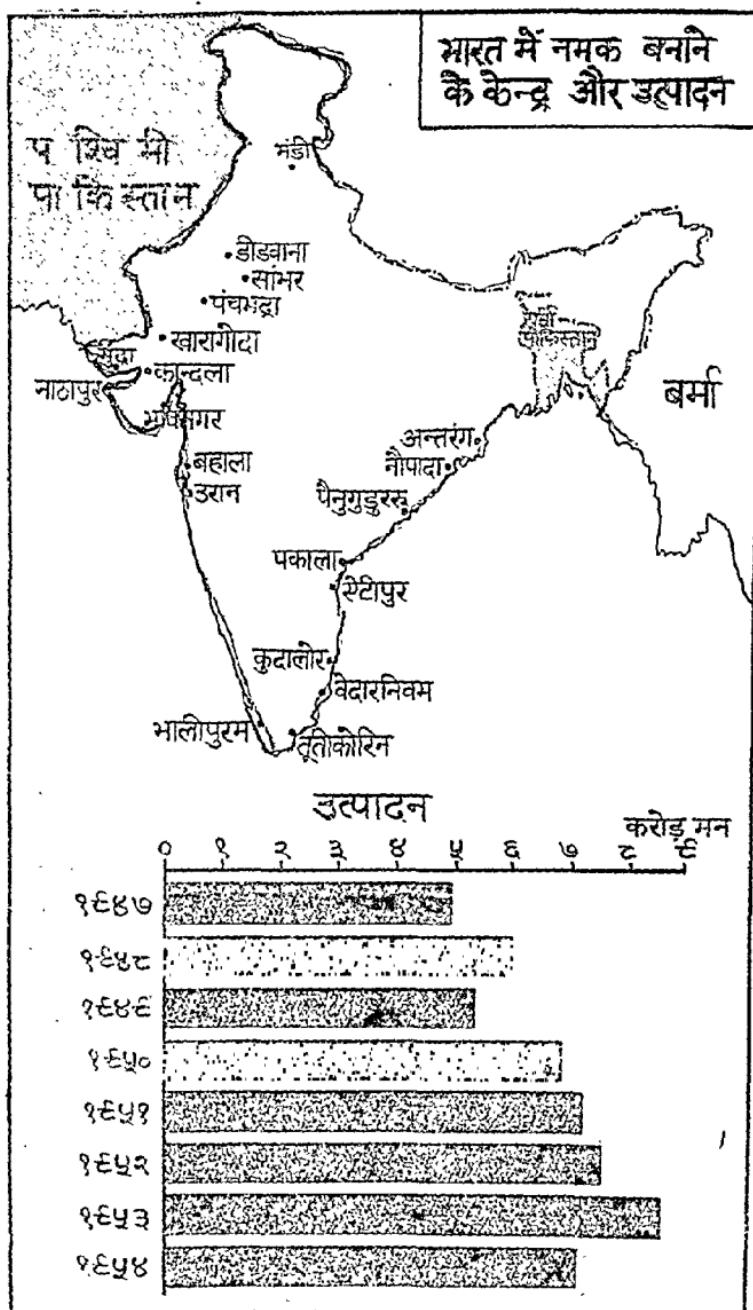
नमक प्राप्त करने का दूसरा स्रोत राजस्थान की खारी झीलें व कुएँ हैं। इस प्रदेश की साम्भर झील सबसे बड़ी है और ९० वर्गमील क्षेत्रफल में फैली हुई है। इस झील से प्रतिवर्ष २·५ लाख टन नमक प्राप्त होता है। यहां के पानी में नमक का अंश अधिक होने का मुख्य कारण दक्षिण पश्चिमी हवायें हैं। ये हवायें कच्छ केरन से नमक के कणों को उड़ाकर ले आती हैं और इस प्रदेश की भूमि पर इकट्ठा कर देती हैं। वर्षा के जल के साथ ये कण झील के पानी में समा जाते हैं। राजस्थान का नमक पूर्वी पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश और मध्य भारत को भेजा जाता है।

भारत में औद्योगिक उपभोग के लिये नमक की मांग बहुत कम है। कुल मात्रा का चार पंचमांश घरेलू भोजन में इस्तेमाल होता है। इसके विपरीत संयुक्त राष्ट्र में नमक की तीन-चौथाई मात्रा का उपयोग उद्योग-धंधों के लिये होता है। अतः भारत में उद्योग-धंधों के विकास के साथ-साथ नमक की मांग का बढ़ना स्वाभाविक है।

नमक की आन्तरिक खपत

(लाख मन)

	१९५३	१९५४
(क) मनुष्य, कृषि तथा पशु के लिए :	५८६	६०९
अनुज्ञापित निर्माणशालाओं द्वारा :		
(ख) अअनुज्ञापित निर्माणशालाओं द्वारा	५३	५५
(ग) उद्योग	५१	५४
	६९०	७१८

देश के विभाजन के पहले भारत को पंजाब की नमक की पहाड़ी और सीमान्त प्रदेश के कोहाट जिले का पहाड़ी नमक उपलब्ध था। परन्तु अब पहाड़ी नमक के वे स्रोत पाकिस्तान में स्थित हैं। पूर्वी पंजाब के मंडी राज्य में भी पहाड़ी नमक का भंडार प्रस्तुत है। आजकल भारत का अधिकतर पहाड़ी नमक यहीं से प्राप्त होता है। भारत सरकार का भूगर्भ तत्व विभाग इस दृष्टि से खोज कर रहा है कि किस प्रकार इस नमक का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

अब भारत नमक के उत्पादन में बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो गया है।

नमक का वार्षिक उत्पादन

(लाख मन)

	१९४७	१९५३	१९५४	१९५५
१. सरकारी उद्योग	१७०	१५२	१५१	१४५
२. निजी उद्योग	५१७	८६१	७३९	७४२

सन् १९४८ में भारत ने १०० लाख टन नमक बाहर से मंगवाया था परन्तु सन् १९५१ में भारत में आयात की मात्रा कुल २५ लाख टन ही रह गई।

यह कमी भारत की नमक संबंधी मांग पूर्ति में बढ़ती हुई आत्मनिर्भरता की द्योतक है।

भारतीय नमक उद्योग का उत्तरोत्तर विकास हो रहा है। सन् १९५४ में लगी रकम तथा मजदूरों की संख्या का व्योरा इस प्रकार था।

पूंजी	...	रु० १० करोड़
जन-शक्ति		
दक्ष व अदक्ष कर्मी मजदूरों की प्रति दिवस संख्या	...	१९५४
सरकारी उद्योग	४,५००	
निजी उद्योग	२५,३००	
कुल	२९,८००	

इस समय भारत अदन, पश्चिमी पाकिस्तान, ग्रेट ब्रिटेन, मिश्र और पूर्वी अफ्रीका से पहाड़ी व सफ़ेद चूर्ण किया हुआ नमक मंगवाता है। परन्तु साथ-साथ भारत से नमक जापान व पाकिस्तान को भी जाता है। नमक के निर्यात को बढ़ाने के लिये इस समय भारत सरकार बड़े प्रयत्न कर रही है और नमक की कोटि भी सुधर रही है। इस दृष्टि से तूतीकोरिन में उच्च कोटि का नमक तैयार किया जाने लगा है।

निर्यात (लाख मन)

देश	१९४८	१९५३	१९५४
जापान	...	६८·१	५३·८
पूर्वी पाकिस्तान	१७	२·५	...
पूर्वी अफ्रीका	...	०·१	०·४
मोलडीव द्वीप	...	०·२	०·१
नेपाल	१०	९·१	७·०
	२७	८०·०	६१·३

शोरा (Saltpetre)

विभिन्न उद्योगों में शोरे की बड़ी मांग रहती है। शीशा बनाने में, भोजन को ठीक तरह से अधिक समय तक रखने में और भूमि को खाद रूप देने में शोरा बहुत अधिक प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा बारूद बनाने में भी इसका प्रयोग होता है। भारत में बिहार और उत्तर प्रदेश के राज्य शोरा उत्पादन के लिये विशेष प्रमुख हैं। उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में इसका उद्योग केंद्रित है परन्तु उत्पादन का अधिक भाग निर्यात कर दिया जाता है। आसाम के चाय के बागीचों में खाद देने के लिये केवल थोड़ी-सी मात्रा रख ली जाती है। भारत से शोरा मंगवाने वाले प्रमुख देश संयुक्त राष्ट्र, चीन, ग्रेट ब्रिटेन, मारीशस, लंका और स्ट्रेट्स सेटलमेंट्स हैं। सन् १९५० में भारत में ७००० टन शोरा निकाला गया।

बाक्साइट (Bauxite)

बाक्साइट खनिज का महत्व इसलिए है कि उससे अल्युमिनियम प्राप्त होता है। इसे फिटकरी, सीमेन्ट बनाने तथा मिट्टी का तेल साफ करने में प्रयोग करते हैं। भारत में इसका भंडार यत्र-तत्र पाया जाता है—बिहार, बम्बई, मध्य प्रदेश, काश्मीर और मद्रास प्रमुख क्षेत्र हैं। देश में सब प्रकार के बाक्साइट का भंडार २५०० लाख टन है जिसमें से करीब २८० लाख टन उच्चकोटि का बाक्साइट है और १०० साल तक ५०००० टन अल्युमिनियम का वार्षिक उत्पादन हो सकता है। देश में अल्युमिनियम बनाने वाली सबसे पुरानी कम्पनी सन् १९४३ में बिहार के मूरी स्थान पर खोली गई। हाल में अल्युमिनियम कारपोरेशन आफ इण्डिया लिमिटेड खोला गया है। इसकी कार्यक्षमता ५००० टन है परन्तु अभी तक सबसे अधिक उत्पादन ३००० टन हो पाया है। देश में अनुमानतः १५०००–२०००० टन अल्युमिनियम की प्रतिवर्ष आवश्यकता होती है। दूसरी योजना के अन्त तक देश में अल्यूमिनियम का उत्पादन १७५ हजार टन हो जायेगा।

चाँदी (Silver)

चांदी अलग से और सोना, सीसा तथा तांबा आदि धातुओं के साथ मिली हुई दोनों प्रकार से पायी जाती है। भारत में चांदी से आभूषण, खाने के बर्तन और सिक्के बनाये जाते हैं। इस प्रकार भारत में संसार के अन्य सब देशों की अपेक्षा चांदी की अधिक मांग रहती है। सन् १९५४ में भारत ने ८०,९५३ औंस चांदी उत्पन्न की।

चांदी प्राप्त करने के मुख्य क्षेत्र मैसूर में कोलार की सुवर्ण खान और बिहार का मानभूम क्षेत्र है। पहले मद्रास के अनन्तपुर जिले से काफी चांदी प्राप्त की जाती थी परन्तु अब उत्पादन बिल्कुल खत्म हो चुका है। सन् १९५१ में भारत का कुल उत्पादन केवल १७००० औंस था। अतः भारत, ग्रेट ब्रिटेन, बेलजियम और पश्चिमी जर्मनी से चांदी मंगवाता है। सन् १९५१-५२ में भारत ने विदेशों से १,६७,००० औंस चांदी आयात की।

क्रोमाइट (Chromite)

विविध उद्योगों में इस धातु की मांग बहुत अधिक रहती है। इसकी सहायता से लोह मिश्रित क्रोम, क्रोम मिश्रित इस्पात और क्रोमाइट ईंटें बनायी जाती हैं। इसका प्रयोग क्रोमियन नमक तैयार करने में बहुत अधिक होता है। क्रोमियम नमक चमड़ा साफ करने व रंगने के कार्यों में काम आता है।

क्रोमाइट का मुख्य उत्पादक प्रदेश मैसूर है। यहां देश के कुल उत्पादन का ३५ प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। भारत का कुल वार्षिक उत्पादन १९००० टन है और मैसूर में ७००० टन क्रोमाइट प्राप्त होता है। मैसूर में शिमोगा और हसन की खानें विशेष महत्वपूर्ण हैं और इनसे धातु का उत्पादन बराबर बढ़ रहा है। मैसूर के बाद उड़ीसा के क्योनजहार जिले का स्थान आता है। यहां से भारत के कुल

उत्पादन का एक-तिहाई भाग प्राप्त होता है। इस प्रदेश का वार्षिक उत्पादन ५००० टन है। बिहार के रांची व भागलपुर जिलों में भी क्रोमाइट धातु मिलती है। बिहार के सिंघभूम से भारत के कुल उत्पादन का अष्टमांश प्राप्त होता है।

प्रायः उत्पादन की संपूर्ण मात्रा विदेशों को निर्यात कर दी जाती है। ग्रेट ब्रिटेन, नार्वे, स्वीडन, जर्मनी और संयुक्त राष्ट्र भारत से क्रोमाइट आयात करने वाले मुख्य प्रदेश हैं। मद्रास और कलकत्ता निर्यात के प्रमुख बन्दरगाह हैं। परन्तु भारत के क्रोमाइट को यूरोप की मंडियों में रोडेशिया और न्यूकैलीफोर्निया के क्रोमाइट की स्पर्धा का सामना करना पड़ता है। देश में इस्पात उद्योग के विकास के साथ-साथ क्रोमाइट की खपत भी बढ़ती जायेगी। सब प्रकार के क्रोमाइट का भंडार १३,२०,००० टन है।

सुरमा (Antimony)

मुलायम धातुओं के साथ मिलाने के लिए सुरमे का बड़ा महत्व है। इस समय भारत में सुरमे का उत्पादन बहुत अधिक नहीं है परन्तु इसका भविष्य बड़ा उज्जवल है और इस उद्योग के विकास की बड़ी संभावनायें हैं। मैसूर के चितालदुर्ग प्रदेश से बहुत अधिक सुरमा निकाला जा सकता है। देश का उत्पादन बराबर बढ़ रहा है। सन् १९४७ में केवल २३५ टन सुरमा निकाला गया था परन्तु सन् १९४८ में उत्पादन की मात्रा ३७० टन हो गई। सुरमे का कुछ भंडार कांगड़ा जिले में निहित है।

टंगस्टन (Tungsten)

इसे वोलफार्म भी कहते हैं और कठोर इस्पात तथा बिजली के बल्वों के अन्दर का तार बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है। यद्यपि उड़ीसा के सिंघभूम, राजस्थान के मारवाड़ और मध्य प्रदेश में यह धातु कच्चे रूप में पाई जाती है परन्तु इसकी मात्रा बहुत कम है। यदि उत्पादन कम है तो उपभोग भी बहुत ही कम है। भारत में इसकी वार्षिक खपत ५० टन से अधिक नहीं है।

जिप्सम (Gypsum)

इससे रासायनिक खाद तथा कई प्रकार के विशेष कागज बनाये जाते हैं। भारत के सीमेन्ट उद्योग में भी इसको प्रयोग करते हैं और ऐसी धारणा है कि इससे गन्धक का तेजाब (Sulphuric acid) भी तैयार किया जा सकता है।

सिन्दरी खाद कारखाने का प्रधान कच्चा माल जिप्सम है। इस खनिज पदार्थ को थोड़ी बहुत मात्रा में सीमेन्ट तथा पलस्तर उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। भारतीय उत्पादन का अधिकांश भाग तो राजस्थान, मद्रास और सौराष्ट्र से प्राप्त होता है परन्तु इसकी थोड़ी बहुत मात्रा आंध्र, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, काश्मीर, जम्मू, कच्छ तथा भूटान में भी उपलब्ध है।

हाल में नैनीताल जिले में नाहल नदी के बराबर-बराबर जिप्सम का विस्तृत भंडार पाया गया है। अभी तक उत्तर प्रदेश में जिप्सम का भंडार २ लाख टन है परन्तु इस नई खोज के फलस्वरूप यह भंडार बहुत बढ़ गया है। सन् १९६०-६१ तक भारत में जिप्सम का उत्पादन १८ लाख ६० हजार टन हो जाने की आशा है।

राजस्थान के बीकानेर, जोधपुर और जैसलमेर क्षेत्रों में इस खनिज के विस्तृत भंडार हैं और इस समय देश के कुल उत्पादन का ८० प्रतिशत भाग इन्हीं क्षेत्रों से प्राप्त होता है। मद्रास के त्रिचनापली प्रदेश के निकट भी जिप्सम का भंडार पाया जाता है।

ग्रेफाइट (Graphite)

ग्रेफाइट को तीन प्रकार से प्रयोग किया जाता है—कागज पर लिखने की काली पेन्सिल बनाने में, मशीनों के लिये चिकना करने की वस्तु निर्माण करने में और कई प्रकार के रंग व पालिश बनाने में। भारत के ट्रावनकोर, गोदावरी, विजगापट्टम, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, अजमेर मारवाड़ क्षेत्रों में इसका विस्तृत भंडार उपस्थित है परन्तु अभी तक इसका पूर्ण उपभोग नहीं हो पाया है। सन १९५० में भारत में केवल १००० टन ग्रेफाइट निकाला गया।

ऐसबेस्टोस (Asbestos)

यह रेशम की तरह रेशेदार खनिज है और प्रायः पट्टियों में पाया जाता है। इसको अग्नि से बचने वाले कपड़ों आदि के निर्माण में प्रयोग करते हैं। ताप निरोधक सीमेन्ट बनाने तथा मोटर उद्योग में अन्दर पलस्तर करने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। भारत में ऐसबेस्टोस बहुत थोड़ी मात्रा में प्राप्त होता है और मैसूर के बंगलौर जिला, राजस्थान में अजमेर मारवाड़ा और आन्ध्र का कुड़ापा प्रदेश इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं।

प्रतिवर्ष भारत को ऐसबेस्टोस की वस्तुएँ आयात करनी पड़ती हैं। भारत में ऐसबेस्टोस के उद्योग के विकास की काफी संभावनाएँ हैं।

हीरा (Diamond)

भारत में हीरे जवाहरात का उद्योग सदियों पुराना है परन्तु युद्ध के बाद के दिनों में इस उद्योग की बड़ी अवनति हुई। युद्ध के पूर्व प्रायः लोग इसके क्रय-विक्रय पर ५ करोड़ रुपये प्रतिवर्ष खर्च करते थे परन्तु युद्धोपरान्त यह केवल २ करोड़ रुपये रह गया। पिछले दो वर्षों से इसकी दशा फिर सुधर रही है। सन् १९५३-५४ में हीरे जवाहरात की मांग ३ करोड़ रुपये की रही। पालिश किये हुए बहुमूल्य पत्थरों की मांग मध्यपूर्व तथा यूरोप में बढ़ रही है। सन् १९५३-५४ में १ करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात निर्यात किए गए। इस उद्योग में कोई ५०,००० कारीगर लगे हुए हैं और कोई ५ लाख लोग आश्रित हैं।

देश में केवल १७ लाख रुपये मूल्य के हीरे जवाहरात प्रतिवर्ष प्राप्त हो सकते हैं। युद्ध पूर्व कोई ३ करोड़ रुपये मूल्य के जवाहरात बाहर से विशेषतया लन्दन की मण्डी से आयात किये जाते थे और इन पर आयात कर नहीं देना पड़ता था। सन् १९४७ से यह आयात बन्द कर दिया गया है। सन् १९५३ से केवल २५ लाख रुपये मूल्य का वार्षिक आयात मंजूर किया गया है परन्तु इस पर २० प्रतिशत की दर से आयात कर लगा दिया गया है। दूसरी बात यह है कि भारतीय राजे महाराजे जो पहिले इसके प्रधान ग्राहक थे अब स्वयं ही अपने जवाहरातों को विक्रय करना चाहते

हैं। तीसरे बेल्जियम, हालैण्ड और इजराइल से जवाहरात चोरी-चोरी आकर भारतीय मण्डियों में बिकते हैं।

देश में औद्योगिक विकास के साथ-साथ यन्त्रादि में हीरे की मांग बढ़ने की आशा है। इस समय विश्व उत्पादन का ७० प्रतिशत संयुक्त राष्ट्र अमरीका में खप जाता है। देश के उत्पादन में वृद्धि करने के लिए हाल में एक रूसी विशेषज्ञों का दल आया था जिसने पन्ना राज्य तथा आंध्र प्रदेश का निरीक्षण किया। उनके विचार से मशीनों के प्रयोग द्वारा प्रतिवर्ष १००० करोड़ रुपये मूल्य के हीरे जवाहरात प्राप्त हो सकते हैं।

हीरे काटने का काम बम्बई में केन्द्रित है जो कि इसकी प्रधान मण्डी भी है। पन्ने और अन्य रंगीन जवाहरातों का केन्द्र जयपुर है। दक्षिण भारत में त्रिचनापली स्थान पर कृत्रिम रूप से हीरों का निर्माण कार्य विकसित हो रहा है।

हीरे की खानें मद्रास के अनन्तपुर, बेलारी, गुदारी और गोदावरी जिलों में; उड़ीसा के सम्बलपुर जिले में और मध्य प्रदेश के चन्दा जिलों में पाई जाती हैं। उत्तर प्रदेश के बुन्देलखंड भाग में भी हीरे की कई खाने हैं।

भारत में शक्ति के साधन व स्रोत

देश के औद्योगिक विकास व उन्नति के लिए शक्ति के सस्ते साधन उपलब्ध होने चाहियें। शक्ति प्रदान करने के मुख्य साधन व स्रोत बिजली, कोयला, लकड़ी का ईंधन, तेल, स्प्रिट, हवा और जल हैं।

भारत में बिजली का वार्षिक उत्पादन २५,००० लाख इकाई है। इस प्रकार भारत में प्रति मनुष्य पीछे बिजली का उपभोग अधिक से अधिक ७ इकाई है। यह मात्रा मेक्सिको के एक चौथाई और बलगेरिया की एक-तिहाई है। मेक्सिको व बलगेरिया दोनों ही काफी पिछड़े हुए देश हैं। अतः स्पष्ट है कि विद्युत सभ्यता के अनुसार भारत का स्थान बहुत नीचा है। जहां तक बिजली के उपभोग का संबंध है भारत का स्थान चीन व अबीसीनिया की तरह है।

बिजली की खपत

उपयोग के प्रकार	कुल का प्रतिशत	लाख किलोवाट घंटे
१. घरेलू : निवास स्थानों की रोशनी और छोटी मशीन	१२·३	६,६०५·१६
२. व्यापारिक हल्की और छोटी हल्की मशीनें	७·१	३,६६१·०७
३. औद्योगिक बिजली (बिजली, ट्राम, ट्रेन तथा जलकल)	७५·३	४२,११८·७७
४. सार्वजनिक स्थानों का प्रकाश	१·५	८१४·४५
५. सिंचाई	३·८	२,१४१·३८

सन् १९५३-५४ में ६६,६७१·८७ लाख किलोवाट घंटे बिजली तैयार हुई और उसमें से ५५६७०·८३ लाख किलोवाट घंटे बिजली विविध उपभोक्ताओं को बेची गई। सन् १९६०-६१ तक प्रति व्यक्ति पर बिजली का उपभोग २५ इकाई से बढ़कर ५० इकाई हो जाएगा। प्रथम योजना के आरम्भ में बिजली के उपभोग का प्रति व्यक्ति पर औसत १४ इकाई था। सन् १९५०-५१ में भारत में ६·६ अरब किलो घंटे बिजली तैयार की जाती थी जो कि प्रथम योजना काल में बढ़कर सन् १९५५-५६ में ११ अरब किलो घंटे हो जाएगी। और दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त में २२ अरब किलो घंटे हो जाएगी। दूसरी योजना काल में (१९५६-६१) ४२ विद्युत केन्द्र स्थापित किए जाएँगे जिनमें से २३ जल-विद्युत योजनायें होंगी और

चित्र ४७
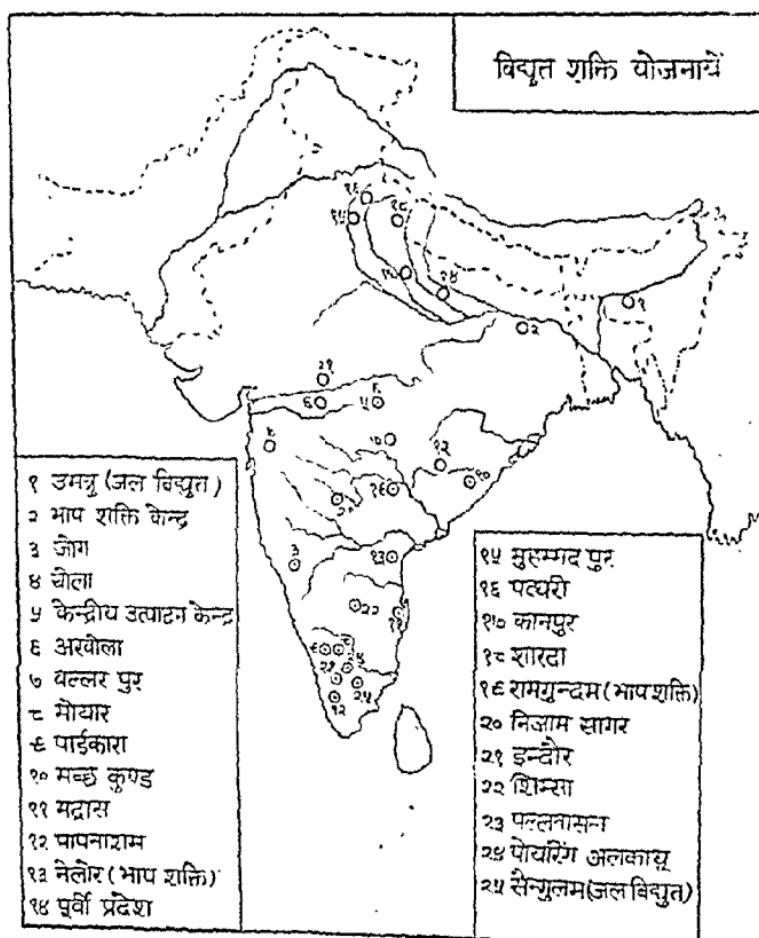
१६ कोयला या भाप बिजली की। इनकी उत्पादन क्षमता क्रमशः २१ लाख किलोवाट और ८ लाख किलोवाट होगी।

भारत में बिजली उत्पादन के लिए कोयला, लकड़ी व खनिज तेल की मांग पूर्त्ति की दशा बहुत अच्छी नहीं है। बिजली उत्पादन तथा उपभोग की प्रगति का ज्ञान निम्न तालिका से हो जाएगा।

बिजली की प्रगति के सूचनांक
(१६३६=१००)

	१६४७	१६५३
संस्थापित क्षमता		
भाप से	१४२·१	२५७·७
तेल से	११२·५	२०७·७
जल से	१११·३	१६५·४
उत्पादन		
भाप से	१६७·०	३४४·३
तेल से	१४६·०	२१७·०
जल से	१६७·८	२२२·८
कोयले की खपत	१७२·६	३२४·०
तेल की खपत (ईंधन के रूप में)	१४५·८	१६२·७
अधिक से अधिक मांग	१५३·३	२४५·८
बिजली का उपयोग		
घरेलू अथवा निवास सम्बन्धी	२०६·२	४२१·६
व्यापारिक और छोटे इंजन	२३८·२	४५४·६
औद्योगिक	१६२·४	२६६·५
परिवहन	१२८·६	१६६·८
सिंचाई	१६४·७	३३२·७
सड़कों तथा सार्वजनिक स्थानों की रोशनी	१०७·०	१७४·८
जलकल	१६४·२	२३४·२

कोयला (Coal)

भारत में सब खनिज पदार्थों की अपेक्षा कोयले का मूल्य व मात्रा अधिक रहती है। अंग्रेजी कामनवेल्थ के देशों में कोयला उत्पादन के दृष्टिकोण से भारत का दूसरा स्थान है और संसार के कोयला उत्पादक राष्ट्रों में भारत का आठवां नम्बर है। भारत में कोयला निकालने का काम सन् १६४३ में शुरू हुआ। इससे पहिले भारत कोयले का आयात करता था। इस समय देश का ८२ प्रतिशत कोयला बंगाल बिहार से प्राप्त होता है।

भारत में कोयले का भंडार व उत्पादन—भारत में विविध प्रकार के कोयले का भंडार ६००,००० लाख टन है। साधारणतया यह तहों में पाया जाता है और तहों की मोटाई एक फीट से लेकर १००० फीट तक रहती है।

भारत में कोयले का भंडार (लाख टन)

१. दार्जिलिंग और पूर्वी हिमालय	१०००
२. गिरीडिह्-देवघर	२५००
३. रानीगंज-झरिया	२,५६,५००
४. सोन घाटी	१००,०००
५. छत्तीसगढ़ और महानदी	५००,०००
६. सतपुड़ा प्रदेश	१०,०००
७. वार्धा घाटी	१,८०,०००
	६००,०००

इस भंडार में से केवल ५०,००० लाख टन कोयला उच्चकोटि का।

भारत का सम्पूर्ण कोयला भंडार गोंडवाना युग का है। टरशियरी युग का कोयला तथा लिगनाइट का भंडार आसाम, काश्मीर, राजस्थान, मद्रास और कच्छ में पाया जाता है। हाल ही में सिक्किम राज्य की रंगीत घाटी में एक कोयला क्षेत्र का पता चला है। देश में १००० फीट की गहराई तक एक फुट या उससे अधिक मोटाई की परतों में पाया जाने वाला कोयले का भंडार ६००,००० लाख टन है जिसका ब्योरा इस प्रकार है:—

टरशियरी कोयला	४५,००० लाख टन
गोंडवाना कोयला (४ फीट से अधिक मोटाई की परतों में)	२००,००० ,,
गोंडवाना कोयला (४ फीट से कम और १ फुट से ज्यादा मोटाई की परतों में)	२५५,००० ,,

गोंडवाना कोयला क्षेत्र का भंडार निम्नलिखित तीन पेटियों में बंटा हुआ या व्यवस्थित है:—

(१) बंगाल, बिहार में दामोदर और सोन की घाटी।

(२) उड़ीसा-मध्यप्रदेश में महानदी की घाटी।

(३) हैदराबाद-मध्य प्रदेश में गोदावरी और वार्धा की घाटी।

इन तीनों पेटियों में कोई ८० खानें पाई जाती हैं जिनमें से सबसे प्रमुख निम्नलिखित हैं:—

इन खानों को रेलमार्गों द्वारा संबंधित किया जा रहा है। हाल में भूगर्भतत्व विभाग ने दक्षिणी आरकाट ज़िले में लिगनाइट कोयले के भंडार का पता लगाया है। कोयला भंडार १६ वर्गमील में फैला है और इसके कोयले की तहों की मोटाई ३२ फीट तक है। भारत की हाल की खोजों में यही सबसे विस्तृत भंडार है। परन्तु इस बात की अभी भी खोज होनी है कि इसे किस उपयोग में लाया जा सकता है—ईंधन के लिये या कृत्रिम खनिज तेल प्राप्त करने के लिये।

कोयले और कोक का उत्पादन (हजार टन)

कोयला :	१९५१	१९५२	१९५३
बंगाल	९६४५.६	१०,३३८.४	१०,२२६.२
विहार	१८,५८८.३	१९,२८६.३	१९०११.९
विन्ध्य प्रदेश	७४३.९	७९६.२	८७८.६
मध्यप्रदेश व उड़ीसा	३६८४.४	३९०८	४०१३.८
हैदराबाद	१२९९.२	१४३४.२	१३३१.१
अन्य	४९९.१	५३८.३	५१७.६
	३४,४३०.५	३६,३०१.९	३५,९७९.२
कोक	३,३३७.७	३,३९६.१	३५३५.४

रानीगंज—भारत की सबसे पुरानी कोयले की खान है और करीब ६०० वर्गमील में फैली हुई है। भारत का लगभग एक-तिहाई कोयला यहीं से प्राप्त होता है। भारत की ये सबसे गहरी खान है और २५०० फीट की गहराई तक कोयले की तहें पाई जाती हैं। पूर्वी रेलमार्ग व उसकी शाखायें इसको अन्य प्रदेशों से मिलाती हैं।

झरिया—कोयले की दूसरी बड़ी खान है। यह कलकत्ते से १४० मील पूर्व में स्थित है और लगभग १७५ वर्गमील क्षेत्रफल में फैली हुई है। यह रानीगंज से १६ मील पश्चिम में स्थित है। यहां से भारत का आधे से अधिक कोयला प्राप्त होता है। दो हजार फुट की गहराई तक कोयले की तहें पाई जाती हैं। पूर्वी रेलमार्ग इसे भी अन्य प्रदेशों से मिलाता है। कोयले की मात्रा, निकटता तथा उपलब्ध कोयले की उच्चकोटि के कारण यह खान भारत की सबसे प्रमुख खान हो गई है। दिल्ली से कलकत्ता तक गंगा की समस्त घाटी में औद्योगिक काम धंधों में झरिया का कोयला ही प्रयोग किया जाता है।

झरिया के समीप ही बोकारो की खान है जो २५० वर्गमील क्षेत्रफल में विस्तृत है। उत्तरी करनपुरा की कोयले की खान बहुत विस्तृत है और उसका क्षेत्र-फल ४५० वर्गमील है। यद्यपि इस समय इसका विशेष महत्व नहीं है परन्तु इसका भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। सन् १९३० में उत्तरी व दक्षिणी करनपुरा खानों में से भारत का दो प्रतिशत कोयला प्राप्त हुआ था। गिरीडिह की खान अपेक्षतः छोटी है परन्तु इससे प्राप्त कोयला बहुत बढ़िया तेल का होता है और अधिकतर धातु गलाने में प्रयोग किया जाता है।

कोयला मिल ही नहीं पाता। इसलिए यदि कोयले के उत्पादन में २३० लाख टन की वृद्धि करना है जैसा कि दूसरे आयोजन का लक्ष्य है तो उचित यातायात की व्यवस्था करनी होगी। दूसरी बात यह है कि देश में उत्कृष्ट कोटि के कोयले का भंडार सीमित है और कोयले के वैज्ञानिक उपभोग में ही इस उद्योग का भविष्य निहित है। अपेक्षाकृत मामूली कोयले को धोकर तथा अच्छे मेल के कोयले के साथ मिलाकर प्रयोग करना होगा। कोयले के चूर से जमाई हुई ईंटें बनाने की भी आवश्यकता है ताकि कम से कम कोयला खराब जाये परन्तु इस सब में काफी खर्च की आवश्यकता है जो कि केवल सरकार द्वारा ही किया जा सकता है।

भारत में कोयले का उपयोग—भारत में कोयला बिजली उत्पन्न करने के लिये, रेलों को संचालित करने के लिये, जहाजों व भाप आदि से चलने वाले अन्य उद्योग धंधों तथा धातु गलाने, शीशा व सीमेंट तैयार करने और घरों को गर्म रखने व भोजन तैयार करने में प्रयोग किया जाता है। वार्षिक उपभोग का ३३ प्र. श. भाग तो केवल रेलों द्वारा ले लिया जाता है। बहुत थोड़े कोयले से गैस तैयार की जाती है। वास्तव में रेलें लोहा व इस्पात उद्योग तथा पीतल के कारखाने अधिक कोयला उपभोग करते हैं। यद्यपि पक्के कोयले या पत्थर के कोयले की घरेलू आवश्यकताओं के लिये लोकप्रियता बढ़ाने का पूरा प्रयत्न किया जा रहा है परन्तु फिर

चित्र ४९—बंगाल, बिहार और मध्य प्रदेश के एक भाग की कोयले की खानें। इस प्रदेश में रेलमार्गों का जाल सा बिछा हुआ है।

को छोड़कर अपने खेतों पर काम करने चले जाते हैं। इस प्रकार खेती के काल में खानों पर मजदूरों की कमी हो जाती है और अब इस समस्या को बिजली के द्वारा हल किया जा रहा है। अब कोयला बाहर निकालने व काटने के लिये बिजली की शक्ति का प्रयोग होता है।

कोयला उद्योग में लगे व्यक्तियों की संख्या

१९५३	३३७,७९६		
१९५४	३३२,३२०		
१९५५ (प्रथम ६ महीने)	३४६,४९३	भूमि के नीचे काम करने वाले	१९०,३७९
		सतह पर काम करने वाले	१५३,९६७

भारत के मजदूर बहुत कुशल भी नहीं होते। अतः प्रति मजदूर पर उत्पादन का औसत बहुत कम रहता है। ग्रेट ब्रिटेन में प्रति मजदूर पर कोयले का औसत उत्पादन २९० टन जमीन के ऊपर और ३०० टन खान के भीतर होता है। इसके विपरीत भारत में कोयला उत्पादन की औसत मात्रा जमीन के ऊपर १३० टन और जमीन के नीचे १८० टन है। एक तो यह मात्रा ही बहुत कम है और दूसरे यह बराबर घटती जा रही है। सन् १९३८ में प्रति मजदूर पर उत्पादन का औसत १४१ टन था परन्तु सन् १९४८ में यह केवल ९२ टन ही रह गया। इस कमी के ३ कारण हैं—(१) काम करने के घंटे कम हो गये हैं (२) ऊपरी तहों का कोयला खतम हो जाने से अधिक गहराई की नीची तहों को काटना पड़ता है और (३) कोयला खोदने आदि के पुराने यंत्रों का अभी भी प्रयोग हो रहा है, यद्यपि घिस जाने के कारण अब वे बेकार से हो गये हैं।

पहले भारत से बहुत-सा कोयला निर्यात किया जाता था परन्तु अब उसमें भी कमी हो गई है। लंका, मलाया, स्टेट्स सेटलमेंट, पेनांग, अदन और पेरिस भारत से कोयला मंगवाते थे परन्तु दूसरे महायुद्ध के पहिले जापानी, आस्ट्रेलियन और दक्षिणी अफ्रीकन कोयले की स्पर्धा के कारण भारत के निर्यात व्यापार को विशेष हानि पहुंची है।

कोयले के निर्यात में कमी का प्रधान कारण अन्य देशों में कोयले का बढ़ता हुआ उत्पादन, जहाजों तथा रेल के इंजनों में तेल का अधिकाधिक प्रयोग, मुद्रा विनिमय की कठिनाई और युद्ध पूर्व की मंडियों का पुनर्विकास है। भारत सरकार कोयले के निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा अर्जन की ओर सक्रिय रूप से ध्यान दे रही है।

अब पाकिस्तान और आस्ट्रेलिया भारतीय कोयले के पक्के ग्राहक हैं। सन् १९५१-५२ में पाकिस्तान, जापान, आस्ट्रेलिया, लंका, बर्मा और सिंगापुर को कुल मिलाकर २३ लाख टन कोयला भारत से भेजा गया। परन्तु अकेले पाकिस्तान में ही प्रति वर्ष ३४ लाख टन कोयले का आयात किया जाता है। यदि भारत व पाकिस्तान के बीच ठीक राजनीतिक व यातायात संबंध स्थापित हो जायें तो यह सारी की सारी मात्रा भारत से ही भेजी

रानीगंज	बंगाल
झरिया, बोकारो, करनपारा और गिरीडिह	बिहार
पंच घाटी और कहान घाटी	मध्य प्रदेश
उमरिया, सोहागपुर	विन्ध्य प्रदेश
सिंगरैनी और कोटागुदाम	हैदराबाद

परन्तु कोक बनाने लायक उत्तम किस्म का कोयला केवल झरिया, बोकारो, गिरडिह और रानीगंज में ही निकाला जाता है। इसका भंडार अनुमानतः २०,००० लाख टन है।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र, रूस, ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी की अपेक्षा भारत का कोयला भंडार बहुत कम है।

उपभोग के दृष्टिकोण से भारतीय खानों से प्राप्त कोयला निम्नलिखित ५ प्रकार का होता है।

१. धातु गलाने लायक कोक कोयला—यह झरिया, रानीगंज, बोकारो और गिरीडिह के क्षेत्रों में पाया जाता है।

२. उच्चकोटि का भाप बनाने लायक कोयला—यह रानीगंज, बोकारो, करनपुरा, तलचर, मध्य भारत, मध्य प्रदेश और सिंगरेनी क्षेत्रों में निकाला जाता है।

३. टरशियरी कोयला जो आसाम, राजस्थान और पूर्वी पंजाब की खानों से प्राप्त किया जाता है।

४. निम्न श्रेणी का भाप बनाने वाला कोयला।

५. लिगनाइट—यह राजस्थान में बीकानेर और मद्रास के दक्षिणी आरकाट में पाया जाता है।

कोयला उत्पादन के क्षेत्र—भूगर्भ तत्व के अनुसार भारत के कोयला उत्पादक क्षेत्रों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है :—

(१) गोंडवाना चट्टानें जो बंगाल, बिहार, उड़ीसा, हैदराबाद, मध्य प्रदेश और मध्य भारत में पाई जाती हैं।

(२) आसाम व राजस्थान के टरशियरी कोयला क्षेत्र। आसाम की गारो पहाड़ियों में उच्चकोटि का कोयला मिलता है और भारत सरकार के संरक्षण में इस प्रदेश का निरीक्षण शुरू हो गया है। गौहाटी से ४० मील दूर उत्तरी कामरूप जिले में भूटान धुली नामक स्थान पर कोयले के एक क्षेत्र का पता चला है। यह कोयला क्षेत्र १ वर्गमील में फैला है।

राज्य के अफसरों का कहना है कि यहां का कोयला बहुत ही उत्तम कोटि का है। जब इन प्रदेशों में काम शुरू हो जायेगा तो आसाम कोयले के दृष्टिकोण से आत्मनिर्भर हो जायेगा और निर्यात भी कर सकेगा। रीवा, मध्य प्रदेश के पथकेरा और कोपी तथा बिहार के हुतार स्थानों में कोयले की नई खानों का पता चला है।

इन खानों को रेलमार्गों द्वारा संबंधित किया जा रहा है। हाल में भूगर्भतत्व विभाग ने दक्षिणी आरकाट जिले में लिगनाइट कोयले के भंडार का पता लगाया है। कोयला भंडार १६ वर्गमील में फैला है और इसके कोयले की तहों की मोटाई ३२ फीट तक है। भारत की हाल की खोजों में यही सबसे विस्तृत भंडार है। परन्तु इस बात की अभी भी खोज होनी है कि इसे किस उपयोग में लाया जा सकता है—ईंधन के लिये या कृत्रिम खनिज तेल प्राप्त करने के लिये।

कोयले और कोक का उत्पादन (हजार टन)

कोयला :	१९५१	१९५२	१९५३
बंगाल	९६४५.६	१०,३३८.४	१०,२२६.२
बिहार	१८,५८८.३	१९,२८६.३	१९०११.९
विन्ध्य प्रदेश	७४३.९	७९६.२	८७८.६
मध्यप्रदेश व उड़ीसा	३६८४.४	३९०८	४०१३.८
हैदराबाद	१२६९.२	१४३४.२	१३३१.१
अन्य	४९९.१	५३८.३	५१७.६
	३४,४३०.५	३६,३०१.९	३५,९७९.२
कोक	३,३३७.७	३,३९६.१	३५३५.४

रानीगंज—भारत की सबसे पुरानी कोयले की खान है और करीब ६०० वर्गमील में फैली हुई है। भारत का लगभग एक-तिहाई कोयला यहीं से प्राप्त होता है। भारत की ये सबसे गहरी खान है और २५०० फीट की गहराई तक कोयले की तहें पाई जाती हैं। पूर्वी रेलमार्ग व उसकी शाखायें इसको अन्य प्रदेशों से मिलाती हैं।

झरिया—कोयले की दूसरी बड़ी खान है। यह कलकत्ते से १४० मील पूर्व में स्थित है और लगभग १७५ वर्गमील क्षेत्रफल में फैली हुई है। यह रानीगंज से १६ मील पश्चिम में स्थित है। यहां से भारत का आधे से अधिक कोयला प्राप्त होता है। दो हजार फुट की गहराई तक कोयले की तहें पाई जाती है। पूर्वी रेलमार्ग इसे भी अन्य प्रदेशों से मिलाता है। कोयले की मात्रा, निकटता तथा उपलब्ध कोयले की उच्चकोटि के कारण यह खान भारत की सबसे प्रमुख खान हो गई है। दिल्ली से कलकत्ता तक गंगा की समस्त घाटी में औद्योगिक काम धंधों में झरिया का कोयला ही प्रयोग किया जाता है।

झरिया के समीप ही बोकारो की खान है जो २५० वर्गमील क्षेत्रफल में विस्तृत है। **उत्तरी करनपुरा** की कोयले की खान बहुत विस्तृत है और उसका क्षेत्रफल ४५० वर्गमील है। यद्यपि इस समय इसका विशेष महत्व नहीं है परन्तु इसका भविष्य बड़ा उज्ज्वल है। सन् १९३० में उत्तरी व दक्षिणी करनपुरा खानों में से भारत का दो प्रतिशत कोयला प्राप्त हुआ था। गिरीडिह की खान अपेक्षतः छोटी है परन्तु इससे प्राप्त कोयला बहुत बढ़िया मेल का होता है और अधिकतर धातु गलाने में प्रयोग किया जाता है।

कोयला मिल ही नहीं पाता। इसलिए यदि कोयले के उत्पादन में २३० लाख टन की वृद्धि करना है जैसा कि दूसरे आयोजन का लक्ष्य है तो उचित यातायात की व्यवस्था करनी होगी। दूसरी बात यह है कि देश में उत्कृष्ट कोटि के कोयले का भंडार सीमित है और कोयले के वैज्ञानिक उपभोग में ही इस उद्योग का भविष्य निहित है। अपेक्षाकृत मामूली कोयले को धोकर तथा अच्छे मेल के कोयले के साथ मिलाकर प्रयोग करना होगा। कोयले के चूर से जमाई हुई ईंटें बनाने की भी आवश्यकता है ताकि कम से कम कोयला खराब जाये परन्तु इस सब में काफी खर्च की आवश्यकता है जो कि केवल सरकार द्वारा ही किया जा सकता है।

भारत में कोयले का उपयोग—भारत में कोयला बिजली उत्पन्न करने के लिये, रेलों को संचालित करने के लिये, जहाजों व भाप आदि से चलने वाले अन्य उद्योग धंधों तथा धातु गलाने, शीशा व सीमेंट तैयार करने और घरों को गर्म रखने व भोजन तैयार करने में प्रयोग किया जाता है। वार्षिक उपभोग का ३३ प्र. श. भाग तो केवल रेलों द्वारा ले लिया जाता है। बहुत थोड़े कोयले से गैस तैयार की जाती है। वास्तव में रेलें लोहा व इस्पात उद्योग तथा पीतल के कारखाने अधिक कोयला उपभोग करते हैं। यद्यपि पक्के कोयले या पत्थर के कोयले की घरेलू आवश्यकताओं के लिये लोकप्रियता बढ़ाने का पूरा प्रयत्न किया जा रहा है परन्तु फिर

चित्र ४९—बंगाल, बिहार और मध्य प्रदेश के एक भाग की कोयले की खानें। इस प्रदेश में रेलमार्गों का जाल सा बिछा हुआ है।

गों छोड़कर अपने खेतों पर काम करने चले जाते हैं। इस प्रकार खेती के काल में खानों पर मजदूरों की कमी हो जाती है और अब इस समस्या को बिजली के द्वारा हल किया जा रहा है। अब कोयला बाहर निकालने व काटने के लिये बिजली की शक्ति का प्रयोग होता है।

कोयला उद्योग में लगे व्यक्तियों की संख्या

१६५३	३३७,७६६		
१६५४	३३२,३२०		
१६५५ (प्रथम ६ महीने)	३४६,४६३	भूमि के नीचे काम करने वाले	१६०,३७६
		सतह पर काम करने वाले	१५३,६६७

भारत के मजदूर बहुत कुशल भी नहीं होते। अतः प्रति मजदूर पर उत्पादन का औसत बहुत कम रहता है। ग्रेट ब्रिटेन में प्रति मजदूर पर कोयले का औसत उत्पादन २६० टन जमीन के ऊपर और ३०० टन खान के भीतर होता है। इसके विपरीत भारत में कोयला उत्पादन की औसत मात्रा जमीन के ऊपर १३० टन और जमीन के नीचे १८० टन है। एक तो यह मात्रा ही बहुत कम है और दूसरे यह बराबर घटती जा रही है। सन् १६३८ में प्रति मजदूर पर उत्पादन का औसत १४१ टन था परन्तु सन् १६४८ में यह केवल ६२ टन ही रह गया। इस कमी के ३ कारण हैं—(१) काम करने के घंटे कम हो गये हैं (२) ऊपरी तहों का कोयला खतम हो जाने से अधिक गहराई की नीची तहों को काटना पड़ता है और (३) कोयला खोदने आदि के पुराने यंत्रों का अभी भी प्रयोग हो रहा है, यद्यपि घिस जाने के कारण अब वे बेकार से हो गये हैं।

पहले भारत से बहुत-सा कोयला निर्यात किया जाता था परन्तु अब उसमें भी कमी हो गई है। लंका, मलाया, स्टेट्स सेटलमेंट, पेनांग, अदन और पेरिस भारत से कोयला मंगवाते थे परन्तु दूसरे महायुद्ध के पहिले जापानी, आस्ट्रेलियन और दक्षिणी अफ्रीकन कोयले की स्पर्धा के कारण भारत के निर्यात व्यापार को विशेष हानि पहुंची है।

कोयले के निर्यात में कमी का प्रधान कारण अन्य देशों में कोयले का बढ़ता हुआ उत्पादन, जहाजों तथा रेल के इंजनों में तेल का अधिकाधिक प्रयोग, मुद्रा विनिमय की कठिनाई और युद्ध पूर्व की मंडियों का पुनर्विकास है। भारत सरकार कोयले के निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा अर्जन की ओर सक्रिय रूप से ध्यान दे रही है।

अब पाकिस्तान और आस्ट्रेलिया भारतीय कोयले के पक्के ग्राहक हैं। सन् १६५१-५२ में पाकिस्तान, जापान, आस्ट्रेलिया, लंका, बर्मा और सिंगापुर को कुल मिलाकर २३ लाख टन कोयला भारत से भेजा गया। परन्तु अकेले पाकिस्तान में ही प्रति वर्ष ३४ लाख टन कोयले का आयात किया जाता है। यदि भारत व पाकिस्तान के बीच ठीक राजनीतिक व यातायात संबंध स्थापित हो जायें तो यह सारी की सारी मात्रा भारत से ही भेजी जा सकती है।

कोयले का निर्यात (समुद्र से)

	मात्रा (टन)	मूल्य (रुपये)
१६५२-५३	२० लाख	७.३६ करोड़
१६५३-५४	११ लाख ७ हजार	४.१० ,,
१६५४-५५	११ लाख ६ हजार	३.६३ ,,

भारत में कोयले को जलाकर शक्ति उत्पन्न की जाती है। इससे बहुत-सा कोयला सदा के लिये नष्ट हो जाता है। इसलिये कोयले से बिजली शक्ति तैयार करना अधिक लाभप्रद है। इस प्रकार न केवल शक्ति ही उत्पन्न होती है बल्कि अन्य बहुत से गौण पदार्थ भी मिल जाते हैं। बिजली के अधिक उत्पादन व उपभोग से उद्योग-धंधों में उपभुक्त दो-तिहाई कोयले और कोयले की खानों की मंडियों में प्रयुक्त चार-पंचमांश कोयला बचाया जा सकता है।

खान खोदते समय बहुत-सा कोयला चूर हो जाता है। इसमें से कुछ तो उठा लिया जाता है पर अधिक भाग प्रायः नष्ट हो जाता है। वैसे तो भारत का अधिकतर कोयला एक इंच से भी कम मोटा होता है पर चूर्ण कोयले को कोई भी नहीं लेता। इधर कुछ दिनों से इस चूरे की थकिया तैयार करने का काम शुरू किया गया है। इससे कोयले का चूरा भी प्रयोग में आ सकेगा।

मजदूरों की कमी की समस्या को हल करने के लिए भारत सरकार ने स्त्रियों को जमीन के नीचे काम करने की आज्ञा दे दी है। सरकार ने एक कोयला नियंत्रण विधान' भी चालू किया है जिसके अनुसार कोयले की खानों के मालिकों को कम से कम एक निश्चित मात्रा अवश्य ही उत्पन्न करनी होगी और मजदूरों को रखने व मजदूरी देने में भी सरकार के कानूनों का पालन करना होगा।

खनिज तेल (Petroleum)

मूल्य के दृष्टिकोण से भारत के खनिज पदार्थों में तेल का पांचवां स्थान है। खनिज तेल से प्राप्त वस्तुओं का भारत के अनेक उद्योग-धंधों के लिए बड़ा महत्व है। परन्तु प्रयोग से पहिले खनिज तेल को साफ करना पड़ता है। और इसको छानने पर अनेक गौण वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। तेल साफ करने के अधिकतर कारखाने तेल उत्पादक क्षेत्रों के समीप पाये जाते हैं और इनमें बहुत अधिक कच्चा तेल एक साथ ही साफ किया जा सकता है।

खनिज तेल से प्राप्त होने वाली वस्तुओं में मुख्य गैसोलीन, या पैट्रोल, जलाने का तेल, मिट्टी का तेल और अनेक चिकना करने के पदार्थ हैं। ये वस्तुएँ जहाजों, रेलों, औद्योगिक कारखानों तथा घरेलू धंधों मे प्रयोग की जाती हैं। परन्तु तेल के उत्पादन के विचार से भारत का स्थान नगण्य है। सन् १६५४ में कच्चे तेल का उत्पादन ७२० लाख गैलन था।

उत्पादन-क्षेत्र—भारत में तेल-उत्पादक क्षेत्र केवल एक है जो कि आसाम में हिमालय के पूर्वी सिरे पर स्थित है। यह क्षेत्र आसाम के उत्तरी-पूर्वी सिरे से ब्रह्मपुत्र

और सूरमा की घाटियों के पूर्वी सिरे तक विस्तृत है। यहाँ पर वे ही चट्टानें पायी जाती हैं जो ईरान व कैस्पियन सागर के तेल-क्षेत्रों में। लखीमपुर जिले का डिगबोई तेल क्षेत्र उत्तरी आसाम में स्थित है और २३ वर्गमील में विस्तृत है। भारत में यह क्षेत्र सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस प्रदेश में डिगबोई, वपापुंग, और हंसापुंग पर तेल निकाला जाता है। हाल में ही डिगबोई में एक तेल साफ करने का कारखाना स्थापित किया गया है। इस उद्योग में ज्यादातर आसाम, पश्चिमी बंगाल, नेपाल और उत्तर प्रदेश के मजदूर काम करते हैं। आसामी मजदूरों की संख्या २२ प्रतिशत है। सूरमा घाटी में निम्नकोटि का कुछ तेल बदारपुर, मसीमपुर और पथरिया स्थानों पर निकाला जाता है। बदारपुर में कुछ दिनों से उत्पादन की मात्रा घटती जा रही है। आसाम के तेल क्षेत्र से प्राप्त तेल में मोम का अंश अधिक रहता है। भारत से इस प्रकार से प्राप्त मोम को निर्यात कर देते हैं और प्रतिवर्ष ३ करोड़ रुपये मूल्य की विदेशी मुद्राएँ प्राप्त होती हैं।

आसाम के तेल-क्षेत्र रेलों व नदियों द्वारा कलकत्ता से मिले हुए हैं। ये मार्ग पूर्वी पाकिस्तान द्वारा गुजरते हैं। हाल में पश्चिमी बंगाल और आसाम के बीच एक सीधा रेलमार्ग बनाया गया है। आसाम रेलमार्ग डिग्बोई की ओर उत्तर में सदिया तक जाता है। रेल की एक शाखा द्वारा डिगबोई डिब्रूगढ़ से मिला हुआ है। डिब्रूगढ़ नदी का एक बन्दरगाह है। कछार का तेलक्षेत्र आसाम रेलमार्ग की मुख्य लाइन पर स्थित है।

भारत के एक मात्र खनिज तेल क्षेत्र डिगबोई (आसाम) से भारत की मांग पूर्ति का केवल १० प्रतिशत तेल प्राप्त होता है। इसलिए भारत को ७० करोड़ रुपये मूल्य का तेल प्रतिवर्ष बाहर से मंगाना पड़ता है। भारत को तेल भेजने वाले मुख्य देश ईरान, बहरीन द्वीप, साउदी अरब, संयुक्त राष्ट्र, सुमात्रा और सिंगापुर है। सन् १९५२-५३ में भारत ने २,४३,४०,००० गैलन पेट्रोल और २६,४८,००,००० गैलन मिट्टी का तेल बाहर से मंगाया। इनका मूल्य क्रमशः २५·१७ और २१.६६ करोड़ रुपये था। इस मांग की भविष्य में और बढ़ने की आशा है और इसीलिए तेल उत्पादन में विस्तार की ओर सरकार ने ध्यान देना शुरू किया है। फलस्वरूप हाल में ही एक और तेल क्षेत्र का पता चला है जो आसाम के नोहोरकटिया प्रदेश में है। अबतक की गई खुदाई बड़ी ही उत्साहवर्द्धिनी है। ब्रह्मपुत्र, गंगा की तलहटी में, सौराष्ट्र, राजस्थान और पंजाब में तेल के क्षेत्रों का पता लगाने के लिए जांच पड़ताल जारी है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में सरकार एक कारखाना खोलने का विचार कर रही है जिसमें कोयले से तेल बनाया जाएगा और प्रतिवर्ष लगभग ३० लाख टन तेल प्राप्त हो सकेगा। इसके सहारे रसायन उद्योग भी विकसित हो सकेगा।

सन् १९५४ के प्रारम्भ में डिगबोई तेल क्षेत्र का दैनिक उत्पादन १८०,००० गैलन था परन्तु पास में तेल के अन्य कुओं के पता चलने पर दैनिक उत्पादन की मात्रा २५०,००० गैलन हो गई है और कम्पनी की योजना का लक्ष्य इसको बढ़ाकर ३ लाख गैलन कर देना है। अभी हाल में ६३ करोड़ रुपये की लागत पर तीन और

तेल शोधक कारखाने खोले जा रहे हैं। स्टैंडर्ड वैक्युम और वर्माशेल के कारखाने तो बम्बई के पास ट्राम्बे द्वीप में स्थित हैं और उनमें उत्पादन शुरू भी हो गया। कैल्टक्स का कारखाना जो प्रतिवर्ष ५ लाख टन तेल साफ कर सकेगा विशाखापटनम में लगाया जा रहा है। इन तीनों की उत्पादन क्षमता प्रतिवर्ष ३,८७,५०,००० टन कच्चे तेल की होगी। इस प्रकार भारत की मांगपूर्ति का अधिकांश देश के भीतर से ही प्राप्त हो सकेगा। फिर भी आगामी कुछ वर्षों तक भारत तेल की मांगपूर्ति के २५ प्रतिशत के लिए आसाम पर ही निर्भर रहेगा।

भारत में सम्भावित तेल भण्डार निम्नलिखित क्षेत्रों में हो सकते हैं :—

(१) हिमालय की निचली पहाड़ियों के आधार पर जो काशमीर से त्रिपुरा तक विस्तृत हैं और जिसके अन्तर्गत कांगड़ा, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, आसाम व मनीपुर के प्रदेश शामिल हैं।

(२) राजस्थान, कच्छ और सौराष्ट्र से समुन्वित पश्चिमी रेगिस्तान।

(३) सिन्ध गंगा का मैदान जो पंजाब से लेकर पश्चिमी बंगाल तक फैला है।

(४) गुजरात तथा पूर्वी तटवर्त्ती मैदान।

(५) सुन्दरवन और समुद्र की तलहटी।

भारत में गन्ने और तिलहन से कृत्रिम तेल बनाने की भी सम्यक् सम्भावनाएँ हैं। भारत के चीनी के कारखानों से प्रतिवर्ष २½ लाख टन शीरा यूं ही फेंक दिया जाता है। इससे उच्चकोटि की स्प्रिट व अलकोहल तैयार किया जा सकता है। खनिज तेल के साथ मिलाकर इसे विविध प्रकार की मोटर गाड़ियों में प्रयोग किया जा सकता है। सन् १९४८ में भारत सरकार ने एक विधान द्वारा अलकोहल स्प्रिट का उद्योग अपने अधिकार में कर लिया और यह निश्चय किया कि २५ प्रतिशत से अधिक मात्रा में यह स्प्रिट न मिलाई जावे। इस समय शक्ति देने वाली अलकोहल स्प्रिट का वार्षिक उत्पादन ४५ लाख गैलन है और विशेषकर उत्तर प्रदेश व विहार में बनाई जाती है। नासिक में एक नया कारखाना खोला गया जो १० लाख गैलन स्प्रिट प्रतिवर्ष बनाएगा। प्रथम योजना काल में इसकी उत्पादन की मात्रा एक सौ लाख गैलन हो जानी चाहिए थी और भविष्य में यह ३०० लाख गैलन तक बढ़ सकती है। भारत में तिलहन से जलाने का तेल भी बनाया जा सकता है।

जल-विद्युत (Hydro-Electricity)

देश की उन्नति के लिए सस्ती शक्ति का होना बहुत आवश्यक है। सन १९४६ में भारत में कुल उत्पादित बिजली की मात्रा १४ लाख किलोवाट थी। इसमें से ४,६४,००० किलोवाट बिजली जल से उत्पन्न की जाती थी।

भारत में जलशक्ति की संभावित उत्पादन मात्रा ४०० लाख किलोवाट है।

भारत की संभावित जलशक्ति

कुल	३५०-४०० लाख किलोवाट
दक्षिणी भारत—पश्चिम की ओर वहने वाली नदियाँ	३७ ,,
पूर्व की ओर वहने वाली नदियाँ	६८ ,,
मध्य भारत की नदियाँ ...	३६ ,,
गंगा की तलहटी में हिमालय से निकलने वाली नदियाँ	१०० ,,
सिन्धु की तलहटी में हिमालय से निकलने वाली नदियाँ	१०० ,,

परन्तु इस समय संभावित शक्ति भंडार का केवल एक प्रतिशत भाग ही उपभोग किया जा रहा है। इससे ही भारत में जलशक्ति के भण्डार का अन्दाज लगाया जा सकता है। संसार के विभिन्न देशों में विकसित जलशक्ति और संभावित जलशक्ति का प्रतिशत अनुपात निम्न तालिका से स्पष्ट हो जावेगा।

देश	प्रतिशत	देश	प्रतिशत
रूस	३४	स्वीडन	२७
फ्रांस	३२	नार्वे	५३
जर्मनी	५४	कनाडा	३४
स्विटजरलैंड	६७	संयुक्त राष्ट्र	२४
		भारत	१

अत: भारत में जल विद्युत शक्ति के उत्पादन की संभावनाएँ वहुत अधिक हैं। पूरा विकास हो जाने पर भारत में संसार के सब देशों की अपेक्षा अधिक जलशक्ति उत्पन्न की जा सकेगी। निम्न तालिका से यह स्थिति स्पष्ट हो जावेगी—

	जल भण्डार व उसका उपयोग (दस लाख एकड़ फीट में)
उपस्थित जल राशि	१३३५·६६
जल का वर्तमान उपभोग	७६·६५
(अ) सिंचाई	७३·९२
(आ) जल शक्ति	१.६७
(इ) अन्य उपयोग	०·०६
आयोजित उपयोग	२८१·५३
(अ) सिंचाई	१४३·२५
(आ) जलशक्ति	१५०·५७
(इ) अन्य उपयोग	४२·७
शेष अनुपभुक्त राशि	९६८·७८

सन १९५३ के अन्त में संस्थापित जलशक्ति की क्षमता ७३१००० किलोवाट थी जो कि संभावित शक्ति की केवल २ प्रतिशत है। सन् १९५४ में देश में तैयार की गई कुल विजली का ५० प्रतिशत जल विद्युत था। ६७ प्रतिशत सरकारी

जल विद्युत केन्द्र मैसूर, मद्रास, ट्रावनकोर कोचीन, उत्तर प्रदेश और पंजाब में हैं निजी जल-विद्युत उद्योग के शतप्रतिशत केन्द्र बम्बई राज्य में ही पाये जाते हैं।

जल-विद्युत शक्ति की एक विशेषता यह है कि इसमें शक्ति उत्पादक वस्तु का नाश नहीं होता। केवल जल के घनत्व को प्रयोग किया जाता है, जल की मात्रा वैसी ही बनी रहती है। इसके विपरीत यदि हम जलशक्ति का उत्पादन न करें तो इससे न तो कुछ बचत होती है और न कुछ संचय ही। केवल जल की निहित शक्ति बेकार चली जाती है। परन्तु भारत में जल-विद्युत के विकास व उत्पादन में कठिनाइयां हैं। शक्ति के उत्पादन के लिए जल का प्रवाह व संचय सतत होना चाहिए। परन्तु भारत की वर्षा मौसमी है। इसलिए अधिक व्यय द्वारा निर्मित जलाशयों का होना अत्यावश्यक है। देश के बहुत से पहाड़ी प्रदेशों में जहाँ वर्षा की मात्रा बहुत अधिक है, जलाशय निर्माण की सुविधाएँ पाई जाती हैं। इन्हीं का लाभ उठाकर बम्बई, मद्रास, मैसूर, काश्मीर, उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब में जलविद्युत उत्पादन का विशेष विकास हुआ है। पश्चिमी भारत में कोयला बिलकुल भी नहीं पाया जाता है परन्तु कोयले की यह कमी पश्चिमी घाट की जलविद्युत उत्पादन की सुविधाओं से पूरी हो जाती है।

जलविद्युत उत्पादन के क्षेत्र—बम्बई के पश्चिमी घाट पहाड़ों में तीन बड़े जल-विद्युत उत्पादन केन्द्र हैं। ये केन्द्र लोनावला, नीलामूला और आन्ध्र घाटियों में स्थित हैं। साधारणतया पश्चिमी घाट की वर्षा का पानी तेज बहने वाली नदियों के द्वारा बंगाल की खाड़ी की ओर वह जाता है। पूर्व वाहिनी यह नदियाँ दो सौ से ५ सौ फीट की ऊँचाई के बीच सैंकड़ों मील नीचे गिरती हैं। चतुर इंजीनियरों की सहायता से यह पानी पूर्व से पश्चिम की ओर लाया जाता है और फिर बड़े-बड़े जलाशयों में इकट्ठा किया जाता है। बाद में इसे ऊँचाई से नीचे की ओर गिराकर शक्ति तैयार करते हैं। "टाटा जल-विद्युत व्यवस्था" का यही भेद है।

लोनावला का जल-शक्ति केन्द्र भोरघाट के शिखर पर स्थित है और यहाँ पर वर्षा का जल लोनावला, वलपों और शिरापटा नामक तीन झीलों में इकट्ठा किया जाता है। जलाशयों से पाइप के द्वारा इस पानी को पहाड़ की तलहटी में स्थित खोपोली स्थान पर गिराते हैं, जहाँ इससे शक्ति तैयार की जाती है। **"आन्ध्र घाटी बिजली कम्पनी"** आंध्र नदी पर बसे हुए शिवपुरी स्थान में स्थित है। यहाँ पर नदी के बीच बाँध बनाकर पानी इकट्ठा कर लिया गया है। बम्बई के दक्षिण-पूर्व में नीलामूला नदी से सन् १९२७ में बिजली उत्पादन का काम शुरू किया गया और इसका कार्यालय भीरा में स्थित है। इन तीनों योजनाओं की उन्नति व विकास का श्रेय बम्बई की टाटा कम्पनी को है। इन तीनों केन्द्रों से उत्पन्न बिजली बम्बई, थाना, कल्याण और पूना में रोशनी, उद्योग-धन्धों, यातायात तथा अन्य बहुत से घरेलू कामों में उपयोग की जाती है।

पिछले कुछ दिनों में दक्षिण भारत के विभिन्न स्थानों पर जल-विद्युत उत्पादन करने का प्रबन्ध किया गया है। इस समय सब मिलाकर दक्षिण भारत में

२,३०,००० किलोवाट बिजली तैयार की जाती है यद्यपि २० लाख किलोवाट बिजली और तैयार हो सकती है। मद्रास में इसका आधा भाग उत्पन्न किया जाता है और शेष आधा भाग मैसूर, ट्रावनकोर व कोचीन में। इस शक्ति की सहायता से दक्षिणी भारत के कुओं से सिंचाई के लिए जल निकाला जाता है। इस समय दक्षिण भारत में कुल १५०० बिजली के पम्पदार कुएँ हैं जिनसे १ लाख एकड़ भूमि को सींचा जाता है। उत्पादित शक्ति का १० प्रतिशत भाग दक्षिण भारत के गाँवों में प्रयोग किया जाता है। मद्रास, ट्रावनकोर, मैसूर और कोचीन में अल्युमिनियम, सूती वस्त्र, मशीनों के पुर्जे, खाद और बिजली व रासायनिक उद्योगों के कारखानों में इसी शक्ति का उपभोग किया जाता है। भविष्य में दक्षिण भारत की रेलों में विद्युत के प्रयोग से करीब १० लाख टन कोयले की बचत हो सकेगी और दक्षिण भारत की रेलों को कोयले के लिए उत्तरी भारत पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा।

भारत की सबसे पहली जलविद्युत योजना मैसूर में कावेरी नदी पर बनाई गई। इसका उद्देश्य कोलार के सुवर्ण क्षेत्रों को सस्ती शक्ति प्रदान करना था। इसका शक्ति उत्पादन केन्द्र शिवसमुद्रम में स्थित है और कोलार की स्वर्ण की खानों से ९२ मील दूर है। इस समय इसकी सहायता से कोलार प्रदेश के अलावा बंगलौर तथा २०० अन्य नगरों को बिजली पहुँचाई जाती है।

ट्रावनकोर में जल विद्युत उत्पादन का एक केन्द्र पल्लिवसाल में स्थित है और करीब २२,५०० किलोवाट बिजली उत्पन्न करता है।

मद्रास में जलशक्ति उत्पादन के तीन केन्द्र—**पाईकारा, मैटूर और पापनाशम** में स्थित हैं। **पाइकारा जल-विद्युत योजना** सन् १९३२ में शुरू की गई। नीलगिरि जिले की पाइकारा नदी के जल से बिजली पैदा की जाती है। कोयम्बटूर, इरोड, त्रिचनापली, नगापट्टम, मदूरा और विरुथनगर इस जलशक्ति का उपभोग करते हैं।

मैटूर जलविद्युत योजना—कावेरी पर मैटूर बाँध के बिलकुल नीचे स्थित है। मैटूर बाँध संसार के बड़े बाँधों में से एक है और प्रधानतः सिंचाई के लिए बनाया गया था। सिंचाई के लिए निश्चित पानी के कुछ अंश से जल-विद्युत भी तैयार की जाती है। इससे सलेम, त्रिचनापली, तंजोर, उत्तरी आरकाट, दक्षिणी आरकाट और चित्तूर को शक्ति प्रदान की जाती है। मैटूर जल-विद्युत केन्द्र को इरोड में स्थित पाइकारा केन्द्र से मिला दिया गया है।

मद्रास में पश्चिमी घाट के तल में टिनीवली, जिले के पापनाशम के ऊपर **ताम्रपानी** नदी पर भी जल-विद्युत उत्पन्न करने का केन्द्र है। इस केन्द्र से टिनीवली, कोयलपट्टी, मदुरा, तेनकासी और राजपलायम को बिजली पहुंचाई जाती है। वास्तव में गांवों में बिजली पहुँचाने के लिए मद्रास का स्थान सर्वप्रथम है। इस राज्य के लगभग १५०० गाँवों को बिजली की सुविधा प्राप्त है। इसके अलावा सूती कपड़ों की मिलों, सीमेंट, इस्पात, अल्यूमिनियम, कागज व रेल के कारखानों में भी जलविद्युत शक्ति का प्रयोग होता है।

उत्तरी भारत में भी कई योजनाओं पर काम हुआ है विशेषकर काश्मीर, पूर्वी पंजाब और उत्तर प्रदेश में। यहाँ जल-विद्युत के साधनों से बिजली उत्पन्न की जाती है। काश्मीर में श्रीनगर से ३८ मील दूर बारामूला में जलविद्युत उत्पादन का केन्द्र है। यहाँ पर झेलम नदी के पानी से बिजली तैयार की जाती है।

पूर्वी पंजाब की उहल नदी से ५०,००० किलोवाट बिजली तैयार की जाती है और पूर्वी पंजाब की रेल तथा अमृतसर व लुधियाना के कई उद्योग-धंधों को शक्ति
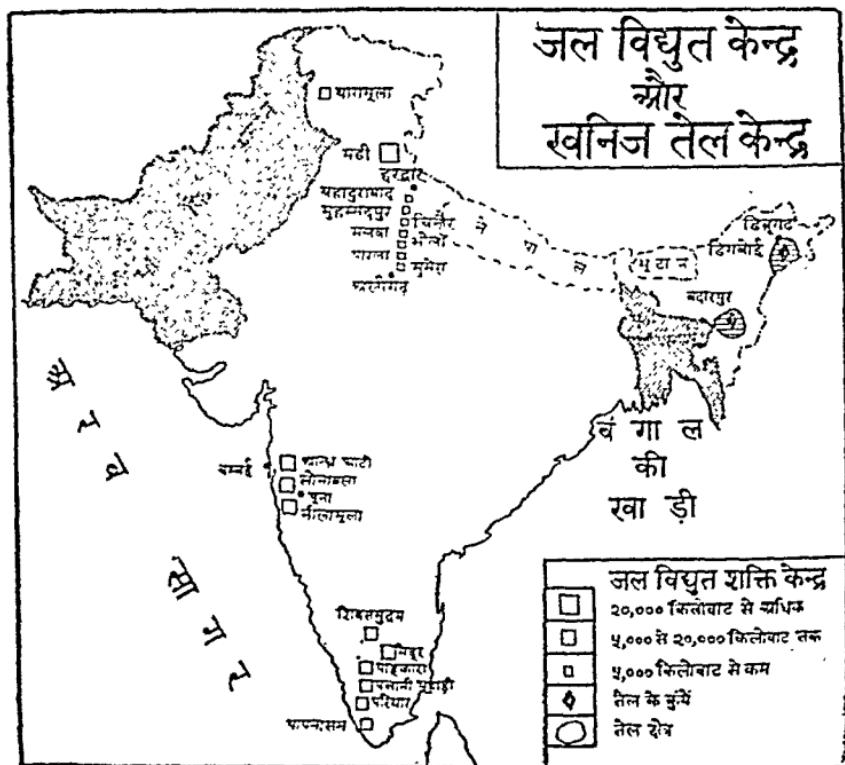
चित्र ५०—भारत में जल-विद्युत व खनिज तेल का वितरण। दक्षिणी भारत के पश्चिमी भाग में जल-विद्युत उत्पादन केन्द्रों की स्थिति ध्यान देने योग्य है।

देती है। उहल मंडी राज्य की एक छोटी नदी है, परन्तु इससे उत्पन्न बिजली से गुरदासपुर और फिरोजपुर के बीच के नगरों तथा शिमला, अम्बाला, पटियाला और गुजरांवाला इत्यादि को रोशनी प्राप्त होती है। निकट भविष्य में इस योजना के विकास से सहारनपुर, मेरठ, दिल्ली तथा करनाल, पानीपत व रोहतक के जिलों को बिजली मिल सकेगी। इस योजना से पंजाब को ३ लाभ होंगे— (१) पंजाब के नगरों में बिजली की रोशनी का प्रबन्ध हो जावेगा (२) विभिन्न उद्योग-धन्धों को सस्ती औद्योगिक शक्ति मिलेगी और (३) पानी को इकट्ठा होने से रोक कर तथा सिंचाई के लिए अधिक पानी प्रदान कर खेती के धन्धे को सहायता दी जावेगी।

हाल में उत्तरी गंगा प्रदेश में कई जलविद्युत उत्पादक योजनाएँ चालू की गई हैं। इनसे उत्तर प्रदेश की कृषि व उद्योग-धन्धों को लाभ पहुँचेगा। गंगा की नहर में हरिद्वार से मेरठ तक १२ जल-प्रपात पाए जाते हैं। इनकी ऊंचाई १० से १५ फुट तक है। सन् १९२६ में प्रान्तीय सरकार ने इनसे बिजली उत्पन्न करने की एक योजना बनाई थी और आजकल जल से विद्युत उत्पन्न करने के सात कारखाने निम्नलिखित सात स्थानों पर स्थित हैं—बहादुराबाद, मोहम्मदपुर, चितौरा, सलावा, मोला, पालरा और सुमेरा। इन सात केन्द्रों से उत्पन्न बिजली गंगा की ऊपरी तलहटी के १४ जिलों को तारों द्वारा भेजी जाती है और इसकी सहायता से यन्त्र संचालित कुएँ व उद्योग-धन्धे चलाए जाते हैं तथा रोशनी का प्रबन्ध होता है। उत्तर प्रदेश के बनबासा स्थान पर स्थित सरदार जल-विद्युत केन्द्र की विकास योजना का भविष्य बड़ा उज्जवल है। इसके पूरा होने पर ७०० इकाई बिजली उत्पन्न की जा सकेगी।

इसके अलावा विभिन्न बहुधन्धी योजनाओं के पूरा होने पर ९० लाख किलोवाट और जल-विद्युत देश के भिन्न-भिन्न भागों को प्राप्त हो सकेगी।

प्रश्नावली

१. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :—

   (अ) भारत में जलविद्युत शक्ति का विकास।

   (आ) अभ्रक को खानों से प्राप्त करने का उद्यम।

२. भारत में लोहा कहाँ-कहाँ पाया जाता है और इसके वितरण का क्या कारण है? आजकल इस खनिज का क्या उपभोग है और भारत में इसके विकास की क्या संभावनाएँ हैं?

३. भारत के किन प्रदेशों में चूने के पत्थर की चट्टानें पायी जाती हैं? इनका व्यापारिक महत्व क्या है और भारत में इनका किस प्रकार उपयोग किया जाता है?

४. भारत में पत्थर के कोयले की सम्पत्ति का पूर्ण विवरण दीजिए। इस कोयले के मुख्य दोष क्या हैं?

५. भारत संघ में अभ्रक खान से कहाँ निकाला जाता है? अभ्रक उत्पादन के विषय में भारत संघ की भूमंडल के अन्य देशों से तुलना कीजिए।

६. जलविद्युत शक्ति के उत्पादन के लिए कौन-सी दशाओं का होना जरूरी है? भारत में इस शक्ति का कैसा विकास हुआ है और भविष्य में क्या संभावनाएँ हैं?

७. भारत के उद्योग-धन्धों के लिए जलविद्युत, कोयला व खनिज तेल की शक्ति का आपेक्षिक महत्व बतलाइये?

८. भारत में टीन, खनिज तेल, मैगनीज व अभ्रक के उत्पादन के स्रोत पर एक संक्षिप्त-लेख लिखिए और इनमें होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विवरण दीजिए।

६. भारत के विभिन्न जलविद्युत उत्पादन केन्द्रों का विवरण दीजिए और प्रत्येक का औद्योगिक महत्व व उपयोग वतलाइए ?

१०. भारत में कोयले की मुख्य खानें कहाँ पाई जाती हैं ? इनमें कौन-सी खानों में सबसे अच्छा कोयला प्राप्त होता है ? भारतीय कोयला औद्योगिक उपभोग के लिए कहाँ तक उपयुक्त है।

११. भारत के एक मानचित्र पर उन स्थानों को दिखलाइये जहाँ जल शक्ति का पानी सिंचाई के लिए प्रयोग किया जाता है। इन स्थानों पर कौन से शिल्प उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं ?

१२. भारत के किन क्षेत्रों में निम्नलिखित पदार्थ खानों से निकाले जाते हैं—मैंगनीज, तांबा, अभ्रक और नमक। प्रत्येक का व्यापारिक उपभोग भी वतलाइये।

१३. भारत के अधिकतर जलविद्युत उत्पादक केन्द्र दक्षिणी भारत में स्थित हैं। इसका क्या कारण है ? जलविद्युत के विकास के लिए किन भौगोलिक दशाओं का होना आवश्यक है ?

१४. भारत के खनिज भंडार का विवरण दीजिए और वतलाइए कि इस समय उनका क्या उपयोग हो रहा है ?

अध्याय : नौ

प्रमुख उद्योग-धंधे

पिछले कुछ वर्षों में भारत में कई उद्योग-धन्धे स्थापित हो गए हैं। भारत के विभिन्न उद्योगों का आपेक्षिक महत्व उनमें लगे हुए मजदूरों की संख्या के अनुसार निश्चित होता है। सन् १९५१ में विभिन्न उद्योग-धन्धों में कोई ४० लाख मजदूर काम करते थे।

भारत में उद्योग-धन्धों का वितरण (१९५०)

उद्योग	कारखानों की संख्या	उद्योग	कारखानों की संख्या
सूती वस्त्र	४५४	शीशा	१०९
पटसन	१०५	रासायनिक	२५०
चीनी	१६०	कागज	१८
लोहा व इस्पात	४	दियासलाई	१०७
सीमेंट	२३	ऊनी कपड़ा	४४
साबुन	१६	रेशमी वस्त्र	९०

भारत में उद्योग-धन्धों का वितरण बड़ा ही विषम है। देश के प्रमुख औद्योगिक प्रदेश निम्नलिखित हैं:—

(१) हुगली घाटी—देश के पटसन के सभी कारखाने यहीं स्थित हैं। कुल मिलाकर देश के एक-तिहाई कारखाने यहीं केन्द्रित हैं।

(२) बम्बई सूती व्यवसाय केन्द्र—इस प्रदेश के मुख्य केन्द्र बम्बई, अहमदाबाद और शोलापुर हैं।

(३) छोटा नागपुर प्रदेश—इसका मुख्य केन्द्र जमशेदपुर है और लोहा व इस्पात उद्योग इसी प्रदेश में केन्द्रित हैं।

(४) मद्रास और मैसूर का नीलगिरि क्षेत्र—सूती वस्त्र व्यवसाय के लिए यह प्रदेश विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि कुछ विशेष उद्योग-धन्धे कुछ खास स्थानों या प्रदेशों में केन्द्रित हो जाते हैं। यह बात सूती वस्त्र, पटसन, चीनी, कागज, दियासलाई, ऊन, रेशम, चमड़ा और इस्पात के उद्योग के विषय में खास तौर पर लागू होती है। परन्तु केन्द्रीकरण या स्थानीकरण की यह नीति अब अच्छी नहीं समझी जाती। वर्तमान विशेषज्ञों का विचार है कि विभिन्न प्रदेशों में जनसंख्या के वितरण के

अनुसार ही उद्योग-धन्धों का स्थानीकरण होना चाहिए। विकेन्द्रीकरण की नीति एक और कारण से भी आवश्यक है। वह यह कि सभी राज्यों को औद्योगिक प्रगति के लिए पूरा मौका मिलना चाहिए। सूती वस्त्र व्यवसाय में ही बम्बई, दिल्ली, बड़ौदा, मैसूर, अजमेर व मध्य भारत में वहाँ की जनसंख्या की मांग से कहीं अधिक कपड़ा तैयार होता है जबकि आसाम, उड़ीसा, आन्ध्र और पूर्वी उत्तर प्रदेश में कपड़े का उद्योग बहुत कम विकसित हुआ है। इसी तरह पश्चिमी बंगाल और उत्तर प्रदेश में सूती कपड़े की और मिलें खोली जानी चाहियें क्योंकि वहाँ के घरेलू उपभोग के लिए बाहर से सूती कपड़ा मंगवाना पड़ता है। इसी आधार पर अन्य राज्यों की जनसंख्या के अनुसार सूती कपड़े की नई मिलें खोली जानी चाहिएं।

भारत के इस्पात, रेशम, चीनी, दियासलाई और कागज के उद्योगों में भी

चित्र ५१
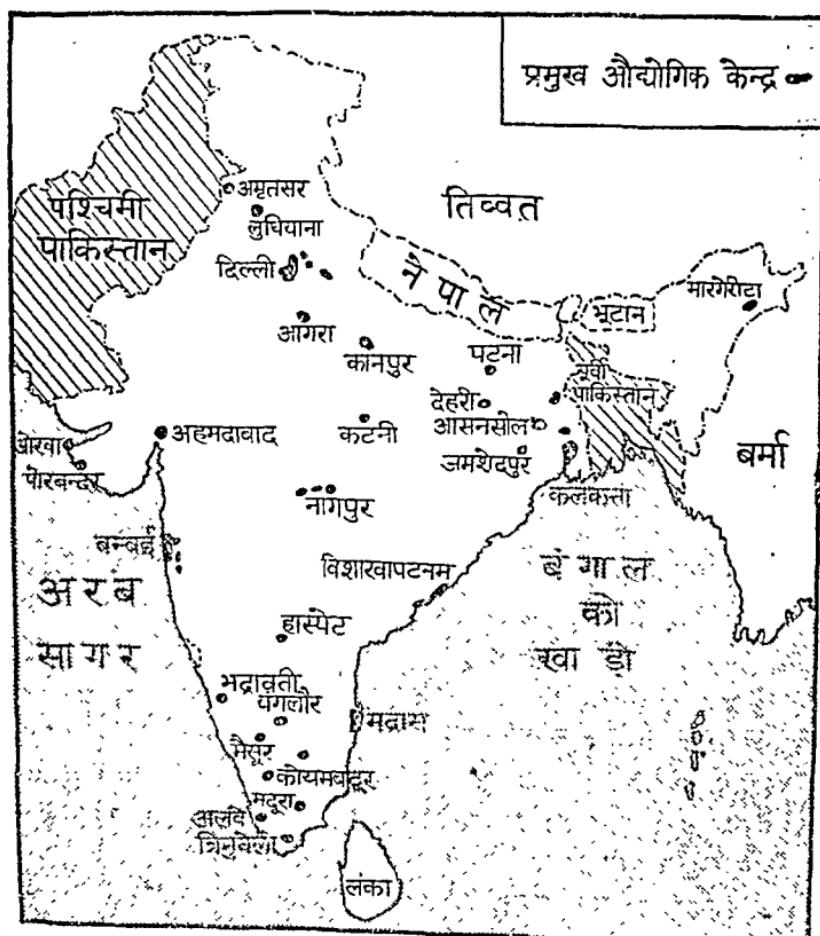
विकेन्द्रीकरण का काफी क्षेत्र है। परन्तु पटसन और ऊनी वस्त्र व्यवसाय को अभी कुछ समय तक सुविधाजनक स्थानों में केन्द्रीभूत रखना ही पड़ेगा।

भारत के प्रमुख उद्योग-धंधों पर भारतीय व यूरोपियन दोनों ही प्रकार के मालिकों का आधिपत्य है। भारत के शिल्प उद्योगों में विदेशी पूंजीपतियों ने ६० करोड़ से अधिक रुपया लगाया हुआ है। बंगाल की पटसन मिलें, आसाम के चाय के बगीचे, सोने व कोयले की खानें, यन्त्र-निर्माण कारखाने और कानपुर के ऊनी वस्त्र व चमड़े के कारखाने प्रधानतः यूरोपियनों के अधिकार में हैं। भारत के पूंजीपति उद्योग-धंधों में धन लगाने से हिचकते हैं या उचित मात्रा में पूंजी नहीं लगाते। इसलिए देश के औद्योगिक विकास में रुकावट पड़ती है और देश में विदेशी पूंजी के लिए अवसर मिलता है। भारत में विदेशी पूंजी के होने का यही कारण है। इसके अलावा देश में भारी मशीनों व विशेषज्ञों की कमी है। इनके लिए हमें विदेशी राष्ट्रों की सहायता पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। पिछले कुछ वर्षों से देशी पूंजीपति नये उद्योगों में रुपया लगाने की हिम्मत करने लगे हैं और उनकी इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप भारत के सूती वस्त्र, इस्पात, चीनी, सीमेंट और अन्य छोटे-छोटे उद्योग-धंधों की काफी उन्नति हुई है। भारत के विभिन्न स्थानों में उच्च औद्योगिक शिक्षा के केन्द्र खोले जा रहे हैं। इनसे निकट भविष्य में भारतीय उद्योग-धंधों को विशेषज्ञ मिल सकेंगे और विदेशी राष्ट्रों पर निर्भरता कम हो जावेगी।

भारत के उद्योग-धंधों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है—

(१) **सरकारी उद्योग** – गोलाबारूद व हथियार के कारखाने, अणु शक्ति की प्रयोगशाला, नदी घाटी योजनायें तथा रेलें।

(२) **सरकार द्वारा संरक्षित उद्योग**—जो लगभग १० वर्ष तक पूंजीपतियों के हाथ में ही रहेगी परन्तु उनके विकास का उत्तरदायित्व सरकार पर है। इसके अन्तर्गत कोयला, लोहा व इस्पात, हवाई जहाज, टेलीफोन, टेलीग्राफ और वायरलेस, पोत निर्माण तथा खनिज तेल के उद्योग शामिल हैं।

(३) **पूंजीपतियों द्वारा अधिकृत निजी उद्योग**—इन पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण जरूर है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित १८ उद्योग शामिल हैं—

वस्त्र उद्योग, पटसन, ऊनी कपड़े, चमड़ा, चीनी, चाय, मोटर, ट्रैक्टर, यंत्र और बिजली का सामान, मशीनों के कलपुर्जे, धातु और सीमेंट।

सरकार द्वारा चलाई गई औद्योगिक योजनाओं का ब्योरा इस प्रकार है—

(१) **सिंदरी खाद कारखाना** सन् १९५१ से खाद तैयार कर रहा है। इस के उत्पादन का लक्ष्य ३,६५,००० टन प्रतिवर्ष है। सन् १९५५ में ३२०२६२ टन माल तैयार हुआ।

सिंदरी कारखाने की उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जा रहा है। इसमें कोई ७ करोड़ रुपये का खर्च आएगा और इसके उत्पादन में कोई ६० प्रतिशत की वृद्धि

हो जाएगी। दैनिक उत्पादन में वृद्धि इस प्रकार होगी—

यूरिया : ७० टन ; अमोनियम सल्फ़ेट नाइट्रेट : ४०० टन। यह काम दू.. योजना के प्रारम्भिक काल में ही पूरा हो जाएगा। चालू होने से अब तक इसका उत्पादन १० लाख टन रहा है और इस प्रकार भारत के खाद्यान्न उत्पादन में बढ़ोत्तरी के साथ-साथ करीब ३३ करोड़ रुपयों की विदेशी मुद्राओं की बचत रही है।

इसकी गौण उपज खड़िया को इस्तेमाल करने के लिए पास में ही एक सीमेंट कारखाना खोला गया है जिसमें करीब ३०० टन सीमेंट प्रतिदिन तैयार होता है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत दो और खाद के कारखाने खोले जायेंगे तथा मद्रास राज्य में निवेली के लिगनाइट भंडार को उपयोग करने के लिए एक और कारखाना खोला जाएगा जिसमें प्रति वर्ष ७०,००० टन नाइट्रोजन तैयार कि.. जावेगा।

(२) **हिन्दुस्तान टेलीफोन तार कारखाना**—पश्चिमी बंगाल के रूपनरायनपुर में स्थापित किया गया है और १९५४ से ही इसका वार्षिक उत्पादन ४७० मी.. तार हो गया है। इधर उत्पादन क्षमता में वृद्धि कर दी गई है और सन् १९५५-५६ में ५५० मील तार तैयार होने की आशा है। सन् १९५६ के अन्त तक इस कारखाने का वार्षिक उत्पादन बढ़ कर १००० मील तार हो जाएगा और तब देश की मांग पूर्ति के बाद निर्यात करना भी सम्भव होगा।

इस सिलसिले में बंगलौर के समीप दूरवानी नगर के स्वसंचालित टेलीफोन यन्त्र कारखाने का उल्लेख असंगत न होगा। इस कारखाने से देश में संदेश संचार साधनों के प्रसार में बड़ी सहायता मिली है।

(३) **चितरंजन का रेलइंजन कारखाना**—इसमें सन् १९५६ से १२० इन्जन तथा ५० बायलर प्रतिवर्ष बनने लगेंगे। थोड़े समय में ही, इस कारखाने से ३०० वां इंजन बनकर भारतीय रेलों को दिया जावेगा।

(४) **उत्तर प्रदेश का सूक्ष्ममापक यन्त्र कारखाना**—इसने सन् १९५२-५३ में २१०० पानी मीटर तैयार किये।

(५) **हिन्दुस्तान पोत निर्माण क्षेत्र**—विशाखापटनम में है और सन् १९५१-५२ से आज तक ६३,००० टन भार के जहाजों का निर्माण कर चुका है। इसमें १० जहाजों को बनाया जा रहा है और शीघ्र ही तीन और जहाजों पर काम शुरू हो जायेगा। सन् १९५५ में इस पोत निर्माण क्षेत्र ने तेल से चलने वाले दो जहाजों का निर्माण किया। दूसरी पंचवर्षीय योजना में १० करोड़ रुपये खर्च करके इसको और भी बढ़ाया जायेगा।

(६) **हिन्दुस्तान वायुयान कारखाना**—बंगलौर में है और एशिया में इसका बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस कारखाने ने भारतीय विमान चालकों के लिए

२२. सीमेंट उद्योग के लिए कौन से कच्चे माल की आवश्यकता होती है ? इस उद्योग के मुख्य केन्द्र बतलाइये और इसके विकास की संभावनाएँ इये।

२३. भारत के पटसन उद्योग की वर्तमान दशा और भावी संभावनाओं का वर्णन कीजिए।

२४. कच्चे माल की उपलब्धता और स्थानीकरण की भौगोलिक परिस्थितियों के दृष्टिकोण से भारतीय लोहा व इस्पात उद्योग का वर्णन कीजिए।

अध्याय : : दस

यातायात के साधन

देश की सफल आर्थिक व व्यापारिक उन्नति के लिए यातायात की सुविधाओं का होना बड़ा आवश्यक है। राष्ट्रीय समृद्धि के लिए जल, थल व वायु यातायात का सम्यक् विकास होना चाहिये। देश के लिए यातायात के साधन उतने ही महत्व के हैं जितनी शरीर के लिए रक्त-संचालन की धमनियाँ। जैसे उचित रक्त-संचालन न होने से शरीर के अंग शक्तिहीन व दुर्बल हो जाते हैं वैसे ही यातायात के साधनों की उचित व्यवस्था न होने से देश का विकास रुक जाता है। यातायात की व्यवस्था के द्वारा देश की प्राकृतिक सम्पत्ति व आर्थिक साधनों का पूरा उपभोग हो सकता है। १९वीं शताब्दी के मध्य तक यातायात की पूरी सुविधाएँ न होने के कारण भारत में कोई विशेष उद्योग-धन्धों की उन्नति भी नहीं हुई थी। इस समय जल, थल व वायु यातायात की काफी उन्नति हो गई और फलतः उद्योग-धंधे भी बढ़ रहे हैं। देश के औद्योगीकरण से पहिले ही देश की यातायात व्यवयस्था का विकास होना जरूरी है। यदि यह नहीं होता तो औद्योगीकरण के रास्ते में अनेक बाधाएँ तथा संकट आयेंगे। यातायात व्यवस्था का महत्व तो युद्धकाल में स्पष्ट हुआ था जबकि भारतीय आर्थिक जीवन में इसी कमी के कारण बड़ी उलट फेर हो गई थी। तब से अब तक भारतीय रेलों का पुनर्निर्माण चल रहा है और भारतीय रेलों की दशा पहिले से बहुत अच्छी हो गई है। सन् १९५४ में भारत में प्रथम श्रेणी की रेलों की लम्बाई ३४,४०६ मील थी और इसमें ८३८ करोड़ रुपये की पूँजी लगी हुई है।

परन्तु केवल रेलों द्वारा इतने बड़े देश की यातायात व्यवस्था को नहीं सम्हाला जा सकता है। अकेले कोयला उद्योग की मांग के लिए ही भारतीय रेलें पर्याप्त नहीं होतीं। रेल मार्गों की कमी ही के कारण पश्चिमी भारत में चूने के पत्थर के भंडार का उपभोग नहीं हो पाया है। दूसरी योजना में कोयला और इस्पात उद्योग के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इसके लिए रेल व्यवस्था का विकास बहुत जरूरी है।

परन्तु साथ-साथ सड़कों, नाव्य नदियों और समुद्री यातायात पर भी ध्यान देना जरूरी है। भारत में अच्छी सड़कों के अभाव में मोटर यातायात ने विशेष तरक्की नहीं की है। भारत में प्रति ११८८ व्यक्ति पर एक मोटर गाड़ी का औसत पड़ता है जबकि संयुक्त राष्ट्र अमरीका में प्रति तीन व्यक्ति पर एक मोटर गाड़ी का औसत है। संयुक्त राष्ट्र में इस्पात का सबसे अधिक उपभोग मोटर उद्योग द्वारा किया जाता है। इसके साथ और बहुत से गौण उद्योग शुरू हो जाते हैं। भारत में कोयला और इस्पात का सब

से अधिक उपभोगी रेलें ही हैं। सड़कों के निर्माण में सीमेंट की जरूरत होगी और जहाज तथा मोटर बनाने में इस्पात की जरूरत पड़ेगी। अतएव यातायात के विकास से औद्योगीकरण में भी सहायता मिलेगी। और औद्योगीकरण के साथ-साथ यातायात व्यवस्था का विकास अवश्यम्भावी हो जाएगा।

देश में राष्ट्रीय सड़कों के निर्माण के साथ-साथ मोटर यातायात को प्रोत्साहन देने की भी आवश्यकता है। इसके लिए जरूरी है कि मोटर उद्योग को संरक्षण प्रदान किया जाए तथा मोटर कर में काफी कमी कर दी जावे।

भारत में यातायात सम्बन्धी आंकड़े

सड़कें	२६८,००० मील
पक्की सड़कें	१०५,००० मील
कच्ची सड़कें	१६३,००० ,,
जलमार्ग	५,२०० ,,
जहाज	४८०,००० टन
समुद्र पार व्यापार में	२७१,४३८ टन
तटीय व्यापार में	२०८,५६२ ,,
रेल मार्ग	३४,४०६ मील
लगी हुई पूंजी	८६४·६८ करोड़ रुपये
हवाई मार्ग	२७,००० मील
प्रति मास उड़ान के मीलों का औसत	२१,००,०००
प्रति मास सफर किये हुए यात्रियों की संख्या	४७,०००
प्रति मास ढोये हुए माल का औसत भार	१५,६५८,७५० पौंड
प्रति मास परिवहन की हुई डाक का औसत भार	८६१, ६६६ ,,
नागरिक उड्डयन विभाग द्वारा कायम हवाई अड्डे	७८
उड़ान सिखाने के क्लब	११

भारत में यातायात के चार साधन हैं :—

(१) रेलमार्ग (२) सड़कें (३) जल मार्ग और (४) वायु मार्ग।

रेलमार्ग

यातायात के सभी साधनों में रेलों का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है। भारतीय रेल व्यवस्था एशिया में सबसे बड़ी और संसार के सरकारी संगठनों में दूसरे नम्बर की है। इसमें कोई १० लाख मनुष्य काम करते हैं। शुरू-शुरू में सैनिक यातायात के लिए ही रेलें बनाई गई थीं परन्तु बार-बार अकाल पड़ने से रेलों की लाइनें विभिन्न प्रदेशों को बढ़ा दी गईं। रेलों के बन जाने से देश के व्यापार में संतुलन व समानता आ गई है। देश का औद्योगीकरण भी इन्हीं रेल-मार्गों के सहारे संभव हो सका है। रेलों के बनने से खेती को प्रोत्साहन मिला है और उद्योग-धंधों की तो नींव-सी पड़ गई है।

उत्तर भारत में गंगा व उसकी सहायक नदियों के विस्तृत मैदान में रेलें बनाने की विशेष सुविधाएँ हैं। आबादी काफी घनी है और भूमि समतल है इसीलिए रेलों का जाल-सा बिछा हुआ है। परन्तु देश के अन्य भागों में कुछ आर्थिक दोषों के कारण रेलों का अधिक विकास नहीं हुआ है। उत्तर के पहाड़ व पश्चिमी घाट श्रेणियों के बीच से रेल-मार्ग निकालना बड़ा ही दुर्लभ है। सतपुड़ा और विंध्याचल की पहाड़ियाँ तो नीची हैं और उनके ऊपर से या उनके बीच दर्रों के ज़रिये रेल-मार्ग निकाले जा सकते हैं। थार के रेगिस्तान में आबादी बहुत कम है और आर्थिक उन्नति के साधन भी विशेष नहीं हैं। अतः वहाँ रेलों की कमी है। इस प्रकार भारत की रेलें आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार ही प्रभावित होती हैं।

भारत की पहली रेल सन् १८५३ में चालू हुई। यह रेल-मार्ग बम्बई और थाना के बीच २० मील की दूरी को सम्बन्धित करने के लिए बनाया गया था। मुद्रा की कमी के कारण रेल-मार्गों का विकास बहुत धीरे-धीरे होता रहा। लेकिन १८८० के बाद सरकार ने यह सोचा कि देश में पड़ने वाले अकाल पर काबू पाने के लिए रेल-मार्गों का बनाना अनिवार्य है अतः सरकारी धन की सहायता से कई अन्य रेल-मार्ग व उनकी शाखाएँ बनाई गईं। सन् १९४७ में देश के विभाजन के पहले ४३००० मील लम्बी रेलें थीं। परन्तु इस समय केवल ३४,७०५ मील लम्बी रेलें हैं। इनमें से बड़ी लाइन के रेल-मार्गों की लम्बाई १५८३२ मील है तथा छोटी लाइन के रेल-मार्ग १५२६० मील लम्बे हैं। देश के विभिन्न भागों में इनकी पटरियों के बीच की चौड़ाई भी अलग-अलग है :—५ फीट ६ इंच चौड़ी लाइन को बड़ी लाइन कहते हैं; ३ फीट ३⅜ इंच चौड़ी लाइन को छोड़ी लाइन और २ फीट ६ इंच चौड़ाई को संकरी लाइन के नाम से पुकारते हैं। पटरियों के बीच की चौड़ाई की यह विभिन्नता और बड़ी-बड़ी नदियों के ऊपर पुलों की कमी के कारण भारतीय रेलें अधिक विकसित नहीं हो पाई हैं। इसके साथ-साथ एक तीसरी कमी यह है कि काश्मीर व नेपाल में रेलों का सर्वथा अभाव-सा है। भारत को और रेलों की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र, कनाडा और इंगलैण्ड की अपेक्षा भारत काफी पीछे है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाएगा :

प्रति व्यक्ति पर रेल द्वारा यात्री मील का औसत (१९५३-५४)

देश	प्रति व्यक्ति पर यात्रा का औसत	प्रति व्यक्ति पर यात्री मील
आस्ट्रेलिया	५७·५	२६५
कनाडा	१·९	१९३
फ्रांस	११·६	३७५
भारत	३·४	१०३
इटली	८·१	२९०
जापान	४०·९	५९९
संयुक्त राज्य	१९·४	४०९
संयुक्त राष्ट्र अमरीका	२·९	१९८

रेल यात्रियों पर प्रति व्यक्ति के अनुसार खर्च (१६५३-५४)

	(रुपये)
आस्ट्रेलिया	४८·६
कनाडा	२७·२
फ्रांस	४०·१
भारत	२·७
इटली	१४·७
जापान	१७·६
दक्षिणी अफ्रीका	१६·३
संयुक्त राज्य	३०·१
संयुक्त राष्ट्र अमरीका	२५·१

भारतीय रेलों पर प्रतिवर्ष ५००० लाख लोग सफर करते हैं और करीब ८०० लाख टन बोझा लाया ले जाया जाता है। धीरे-धीरे रेलों में यात्रियों की सुविधाओं तथा रेल-मार्गों के प्रसार की ओर ध्यान दिया जा रहा है। रेलों द्वारा यात्रा तथा भार वहन में बराबर वृद्धि होती जा रही हैं जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट हो जायेगा।

प्रथम श्रेणी की भारतीय रेलों पर रेल यात्रा प्रति व्यक्ति पर

वर्ष	रेल यात्रा के मील प्रति व्यक्ति पर
१६३८-३६	५०·००
१६४८-४६	११२·४५
१६४६-५०	११४·६८
१६५०-५१	११८·१२
१६५१-५२	११०·६०
१६५२-५३	१०३·६०
१६५३-५४	१०२·७७

भारतीय रेलों पर माल का यातायात

(लाख टन)

वर्ष	प्रारम्भिक टन भार	टन मील
१६४७-४८	६६८	२०११७
१६४८-४६	७८५	२२३८७
१६४६-५०	८७७	२५११६
१६५०-५१	६१४	२६६६३
१६५१-५२	६६७	२६६६६
१६५२-५३	६७१	२८६०६
१६५३-५४	६८१	२६४३६

स्पष्ट है कि रेलों द्वारा माल का यातायात सन् १९५१ में केवल ९६७ लाख टन था और प्रथम योजना के पहिले तीन वर्षों में वढ़ोत्तरी केवल १४ लाख टन रही परन्तु पिछले दो वर्षों में माल यातायात में १७० लाख टन की वढ़ोत्तरी रही है। सन् १९५५-५६ रेलों द्वारा लगभग ११५० लाख टन माल इधर उधर ले जाने का अनुमान है। यह मात्रा पिछले वर्ष की अपेक्षा ९२ लाख टन अधिक है। दूसरी योजना के अन्तर्गत देश के औद्योगीकरण के साथ-साथ रेलों द्वारा माल का यातायात ५१ प्र. श. अधिक हो जायेगा। प्रथम योजना के अन्त में १२०० लाख टन माल यातायात के लक्ष्य को पार कर सब १९६०-६१ में रेलों द्वारा ढोये गए माल की मात्रा १८१० लाख टन हो जाने की आशा है।

सन् १९५०-५१ में भारतीय रेलों पर सफर करने वाले यात्रियों की संख्या १२७९० लाख थी। सन् १९५१-५२ और सन १९५२-५३ में यह संख्या कुछ कम रही। परन्तु सन १९५४-५५ में यात्रियों की संख्या १२३४० लाख रही। अनुमान है कि सन् १९५५-५६ में यात्रियों की संख्या १३१६० लाख रहेगी जो अब तक सबसे अधिक है। पिछले साल की अपेक्षा यह ६.५ प्रतिशत अधिक है और सन् १९३८-३९ की अपेक्षा ढाई गुना है।

भारत के वर्तमान रेल-मार्गों को ६ वर्गों में बांट दिया गया है :—

१. उत्तरी रेल-मार्ग, २. उत्तरी-पूर्वी रेलमार्ग, ३. पूर्वी रेल-मार्ग, ४. पश्चिमी रेल-मार्ग, ५. मध्यवर्ती रेल-मार्ग और ६. दक्षिणी रेल-मार्ग।

इस वर्गीकरण के पहले भारत में प्रमुख रेल-मार्ग तथा बहुत से देशी राज्यों की रेलें थीं। उन नौ रेल-मार्गों का नाम इस प्रकार था—(अ) ईस्ट इंडियन रेलवे (ब) बंगाल नागपुर रेलवे (स) अवध तिरहुत रेलवे (द) आसाम रेलवे (ई) साउथ इण्डियन रेलवे (एफ) मद्रास और साउथ मरहठा रेलवे (जी) बम्बई बड़ोदा सेंट्रल इण्डिया रेलवे और (एन) पूर्वी पंजाब रेलवे। इस नये वर्गीकरण का उद्देश्य छोटी-छोटी विभिन्न रेलवे लाइनों को मिलाकर एक विस्तृत क्षेत्र बना देना है जिससे रेल संचालन व आर्थिक उन्नति में कम से कम खर्च और अधिक से अधिक सुविधा के साथ सहायता मिल सके।

१. उत्तरी रेल-मार्ग (Northern Railway)—४०६४ मील लम्बा है और पूर्वी पंजाब, पेप्सू, दिल्ली, उत्तरी व पूर्वी राजस्थान तथा बनारस तक उत्तर प्रदेश से होकर फैला हुआ है। इस प्रकार इस रेल-मार्ग के अन्तर्गत पूर्वी पंजाब रेलवे, जोधपुर रेलवे, बीकानेर रेलवे और ईस्ट इंडियन रेलवे का पश्चिमी भाग मिला दिया गया है। बड़ी लाइन रेल-मार्ग की लम्बाई ३९०५ मील, छोटी लाइन की लम्बाई २०१० मील तथा संकरी लाइन की लम्बाई १२८ मील है। इसका प्रधान कार्यालय दिल्ली में है। इस रेल-मार्ग की निम्नलिखित शाखाएं बड़ी लाइनें हैं—

(अ) दिल्ली से अटारी तक की ३३३ मील लम्बी शाखा जो मेरठ, सहारनपुर अम्बाला, लुधियाना, जालन्धर और अमृतसर होकर जाती है। अमृतसर से एक उप-शाखा पठानकोट होती हुई काश्मीर जाती है।

(आ) दिल्ली से भटिन्डा होती हुई फिरोजपुर तक। इस शाखा की लम्बाई २४१ मील है।

(इ) दिल्ली से कालका तक। यह अम्बाला होकर जाती है और फिर कालका से शिमला तक एक संकरी लाइन जाती है।

(ई) दिल्ली से बनारस तक। यह शाखा अलीगढ़, कानपुर, इलाहाबाद और मुगलसराय होती हुई जाती है।

(उ) सहारनपुर से बनारस तक। यह मार्ग लखनऊ व जंघई होकर जाता है।

२. **उत्तरी-पूर्वी रेल-मार्ग** (North Eastern Railway)—४७६६ मील लम्बी है और छोटी लाइन है। यह उत्तर प्रदेश के उत्तरी भाग और उत्तरी विहार, पश्चिमी बंगाल तथा आसाम के उत्तरी भाग में फैली हुई है। पहले की अवध तिरहुत रेलवे व आसाम रेलवे को मिलाकर इस रेल-मार्ग को बनाया गया है। इसका प्रधान कार्यालय गोरखपुर में है। इस मार्ग का प्रदेश खेती के दृष्टिकोण से विशेष उन्नत है और गन्ना, तम्बाकू, चाय और चावल का व्यापार इसी के द्वारा होता है। इस रेल मार्ग का विविध मोटर योग्य सड़कों तथा गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियों से भी संचालन संपर्क रहता है। इसकी प्रमुख शाखाएँ निम्नलिखित हैं—

(अ) गोरखपुर से अमीन गांव (आसाम) तक। यह छपरा व कटिहार होती हुई जाती है और सिलगुरी में नई रेलवे लाइन से मिल जाती है। पूर्वी पाकिस्तान के बन जाने से आसाम और पश्चिमी बंगाल के बीच का सीधा रेल मार्ग हाथ से निकल गया है। सन् १९५० में कटिहार और सिलगुरी को रेल द्वारा मिला दिया
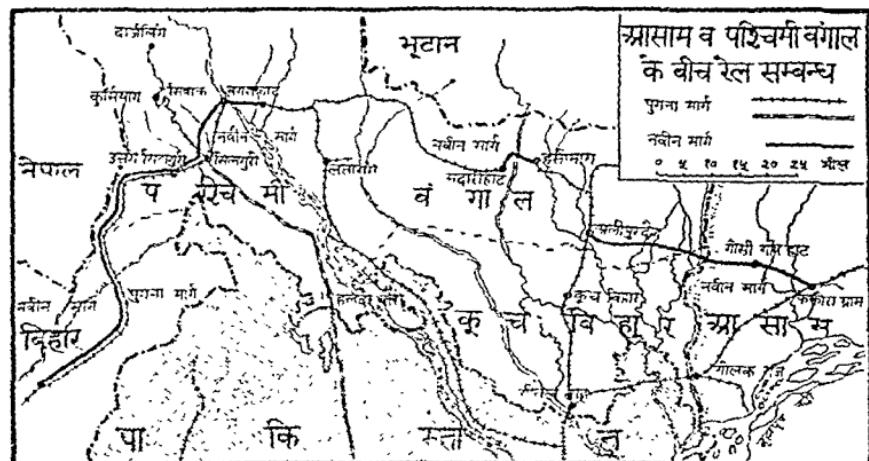
चित्र ५६—पूर्वी पाकिस्तान के बन जाने से आसाम भारत से बिल्कुल अलग हो गया और इसलिए भारत की भूमि पर से होते हुए एक रेल-मार्ग का बनाना अनिवार्य हो गया है।

गया। यह मार्ग दलदली व रोगग्रस्त भूमि से होकर जाता है। सिलगुरी से मदारीहाट तक रेल-मार्ग पहले ही से था। मदारीहाट से फकीराग्राम तक एक नई रेल बना दी गई।

(आ) गोरखपुर से लखनऊ होती हुई कानपुर तक। इसकी कुल लम्बाई ५३० मील है। लखनऊ से एक शाखा बरेली तक जाती है।

(इ) गोरखपुर से सारन होती हुई बनारस तक।

(ई) मनीपुर रोड होती हुई पन्डू से गौहाटी व तिनसुखिया तक। इसकी लम्बाई ३२५ मील है। यह मार्ग ब्रह्मपुत्र की घाटी के साथ-साथ आगे बढ़ता है और इसलिए संपूर्ण मार्ग में कहीं भी पुल द्वारा ब्रह्मपुत्र नदी को पार नहीं करना पड़ता।

यह सम्पूर्ण रेल-मार्ग कानपुर, लखनऊ और बनारस में उत्तरी रेल-मार्ग से मिल जाता है।

३. पूर्वी रेल-मार्ग (Eastern Railway)—इसकी लम्बाई ५६७४ मील से भी अधिक है और मुगलसराय और हुगली के बीच में गंगा के पूर्वी मैदान में चलता है। पश्चिमी बंगाल, छोटा नागपुर, मध्यप्रदेश का पूर्वी भाग और मद्रास का आंध्र प्रदेश इसी की शाखाओं द्वारा सम्बद्ध है। बंगाल नागपुर रेलवे और ईस्ट इंडियन रेलवे के पूर्वी भाग को मिलाकर इसको बनाया गया है। इस पर सबसे अधिक यात्री सफर करते हैं और सब से अधिक माल ढोया जाता है। इसी मार्ग से ले जाये जाने वाले माल में कोयला, लोहा, मैंगनीज, पटसन, अभ्रक और इसी प्रकार की अन्य खनिज वस्तुओं का महत्व बहुत अधिक है। वास्तव में पूर्वी गंगा के मैदान में इस रेल-मार्ग के द्वारा विविध आर्थिक लाभ होते हैं। इसके द्वारा प्रतिदिन ५३८,००० मुसाफिर सफर करते हैं और १४३,५०० टन माल ढोया जाता है। इस आर्थिक क्रियाशीलता का कारण यह है कि कलकत्ता बन्दरगाह है और इस प्रदेश में उद्योग धंधों का केंद्रीकरण भी विशेष है। इसका प्रधान कार्यालय कलकत्ते में है। इसकी मुख्य शाखाएँ निम्नलिखित हैं :—

(अ) हावड़ा से मुगलसराय तक। यह शाखा गया व डेहरी ओनसोन होती हुई जाती है।

(आ) हावड़ा से मुगलसराय तक। यह शाखा पटना होती हुई जाती है। इसकी लम्बाई ४११ मील है।

ये दोनों ही लाइनें मुगलसराय में उत्तरी रेल से मिल जाती हैं और फिर उनके द्वारा दिल्ली, सहारनपुर व उसके आगे तक भी चली जाती हैं।

(इ) हावड़ा से किउल तक। यह शाखा २५४ मील लम्बी है और बरहरवा, साहिबगंज, भागलपुर व जमालपुर होकर जाती है।

इन सभी शाखाओं को कई उप-शाखाओं द्वारा एक दूसरे से मिला दिया गया है।

(ई) हावड़ा से नागपुर तक। यह मार्ग ७०३ मील लम्बा है और टाटानगर-बिलासपुर और रायपुर इसी मार्ग पर केन्द्रित हैं। इस शाखा के मार्ग में पड़ने वाले

क्षेत्र खनिज पदार्थों में धनी हैं तथा औद्योगिक विकास में आगे बढ़े हुए हैं। इनके द्वारा कोयला, मैंगनीज, लोहा आदि का अपनयन होता है। टाटानगर जैसा प्रमुख इस्पात केन्द्र भी इसी मार्ग पर स्थित है। टाटानगर को बोनाई, कयोनजहार और सिंघभूम की लोहे व मैंगनीज़ की खानों से सम्बन्धित करने के लिए कई छोटी-छोटी उप-शाखाओं का निर्माण हो गया है।

(उ) हावड़ा से वाल्टर तक। यह शाखा बालासोर, कटक, बरहामपुर और विजयानगरम होकर जाती है और कुल ५४७ मील लम्बी है। यह शाखा मद्रास तक भी चली जाती है।

इसकी एक उप-शाखा जो रायपुर और वाल्टेयर को मिलाती है, बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। इस लाइन के बन जाने से पूर्वी रेलवे का महत्व बहुत बढ़ गया है। निर्यात की जो वस्तुएँ पहले कलकत्ता तक ले जाई जाती थीं अब वे वाल्टेयर से ही बाहर भेज दी जाती हैं। इस शाखा पर करीब २०० लाख यात्री और १८० लाख टन माल को लाया ले जाया जाता है।

पूर्वी रेल मार्ग व उसकी शाखायें कलकत्ता बन्दरगाह को उसके पृष्ठ प्रदेश पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, विन्ध्य प्रदेश और मद्रास से मिलाती हैं। पश्चिमी बंगाल और बिहार के चावल व पटसन उत्पादन क्षेत्रों, उड़ीसा और मध्य प्रदेश के जंगलों, बिहार और पश्चिमी बंगाल की कोयले की खानों, मध्य प्रदेश, बिहार और उड़ीसा की लोहे की खानों और अभ्रक की खानों तथा टाटानगर के इस्पात कारखाने, सिंदरी का खाद कारखाना, चित्तरंजन में इंजन बनाने के कारखाने और विशाखापटनम में पोत-निर्माण क्षेत्रों से होकर जाने के कारण इस रेल-मार्ग का विशेष महत्व है। विशाखापटनम के बन्दरगाह को भी इसी के द्वारा पहुँचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसके मार्ग में अनेक धार्मिक व सैर करने वाले नगर भी स्थित हैं।

दामोदर घाटी योजना और हीराकुड बाँध योजना के पूरा हो जाने पर इस क्षेत्र की औद्योगिक उन्नति के साथ-साथ इस रेल-मार्ग का महत्व बढ़ जावेगा।

४. पश्चिमी रेल-मार्ग (Western Railway)—पश्चिमी रेलवे की स्थापना ५ नवम्बर १९५१ को की गयी। पुरानी बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे (जिसके मीटर गेज के कुछ छोटे टुकड़े बाद में उत्तर और पूर्वोत्तर रेलवेज़ में मिला दिये गये), सौराष्ट्र, जयपुर और राजस्थान (उदयपुर) रेलवेज, जोधपुर रेलवे का मारवाड़ जंकशन से फुलाद तक का १६ मिल का टुकड़ा तथा संकरी लाइन कच्छ स्टेट लाइन (७२ मील) और कच्छ के आयोजित कांधला बन्दरगाह को मिलाने वाला डीसा—गांधीधाम का हाल में बनाया और खोला गया टुकड़ा इसमें शामिल है। इसकी लम्बाई ५५७६ मील से अधिक है।

पश्चिमी रेलवे अहमदाबाद, इन्दौर, राजकोट, भावनगर आदि की सूती कपड़े की मिलों, लाखेरी, सेवालिया, द्वारका और पोरबन्दर के सीमेन्ट के कारखानों तथा मीठापुर की केमिकल फैक्टरियों वगैरह की सेवा करती है। इस रेलवे को भारत

साम्भर, खारगोधा, कुड़, लवनपुर आदि नमक के प्राचीनतम क्षेत्रों की यातायात ऐजेंसी के रूप में काम करने का सौभाग्य तो विरासत में मिला है ही, पश्चिमी तट के दूसरे बड़े बन्दरगाह कांधला (जिसकी नींव भारत के प्रधान मन्त्री ने १० जनवरी १९५२ को रखी) की उन्नति में और उदयपुर की उदीयमान जस्त की फैक्टरी को, जो स्वेज के पूर्व में अपनी किस्म की अकेली फैक्टरी है, माल वगैरह पहुँचाने में भी यह रेलवे सहायक होगी। इन जिम्मेदारियों के अतिरिक्त, बम्बई जैसे बड़े औद्योगिक नगर की रोजमर्रा की जरूरतों को, चाहे वे मांस, दूध सब्जी, फल वगैरह के यातायात की हों, चाहे बम्बई की बिजली से चलने वाली लोकल गाड़ियों से नगर के लगभग ४ लाख व्यक्तियों को लाने ले जाने की हों, घड़ी-जैसी नियमितता से अन्जाम देना भी इसी रेलवे के जिम्मे है।

यद्यपि आज पश्चिमी रेलवे की आर्थिक सेवाओं का स्थान प्रमुख है, तथापि उन दर्शकों, यात्रियों और इतिहासकारों की, जो इस रेलवे पर स्थित महत्त्वपूर्ण स्थानों की यात्रा करते हैं, आवश्यकताओं का महत्व भी कम नहीं है। आम्बेर, मांडु, फतहपुर सीकरी, आगरा, चित्तौड़ और उदयपुर के नाम से ही बड़ी-बड़ी बातें याद हो आती हैं। पवित्र तीर्थस्थानों के यात्रियों की आवश्यकताओं का अपना महत्व है। यह ५५२२ मील से भी अधिक लम्बी है और बम्बई, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा मध्य भारत से होकर गुजरती है। इस मार्ग को बम्बई बड़ौदा सेंट्रल इंडिया रेलवे, सौराष्ट्र रेलवे, राजस्थान रेलवे, और जयपुर रेलवे को मिलाकर बनाया गया है। इस मार्ग के द्वारा कपास व सूती कपड़े का व्यापार बहुत अधिक होता है। बम्बई, अहमदाबाद और बड़ौदा के औद्योगिक केन्द्र इसी मार्ग पर पड़ते हैं। देश विभाजन के बाद कराची के हाथ से निकल जाने पर इस मार्ग पर यात्रियों की भीड़ व माल का भार बहुत अधिक हो गया है। इस मार्ग के द्वारा लगभग १ करोड़ टन माल और ८० लाख मनुष्य आते जाते हैं। इसका प्रधान कार्यालय बम्बई में है। इसकी मुख्य बड़ी लाइनें निम्नलिखित हैं :—

(अ) बम्बई से दिल्ली तक। यह ८६१ मील लम्बी है और सूरत, बड़ौदा, रतलाम, नागदा, बयाना होकर जाती है। बयाना से एक लाइन आगरा को जाती है और आगरा व कानपुर के बीच छोटी लाइन द्वारा सम्बन्ध है।

(आ) बम्बई से अहमदाबाद। यह शाखा ३०९ मील लम्बी है और सूरत व बड़ौदा होकर जाती है। सूरत भुसावल से एक उप-शाखा द्वारा मिला हुआ है और भुसावल नागपुर से सम्बन्धित है।

प्रमुख छोटी लाइनें इस प्रकार हैं :—

(अ) अहमदाबाद से दिल्ली तक। इस शाखा की लम्बाई ५३९ मील है और आबू रोड, वियम्बर, जयपुर और अलवर रास्ते में पड़ते हैं। अजमेर से एक उप-शाखा खंडवा तक जाती है।

(आ) पोरबन्दर से डोहाला, राजकोट से वेरावल, कान्धला से भुज और सुरेन्द्रनगर से ओखा तक अन्य शाखायें हैं।

५. **मध्यवर्ती रेल-मार्ग** (Central Railway)— इसकी सम्पूर्ण लम्बाई ५४२७ मील से भी अधिक है और यह मध्य भारत, मध्य प्रदेश तथा मद्रास के उत्तरी पश्चिमी भाग से होकर जाती है। जी० आई० पी० रेलवे, सिन्धिया रेलवे, धौलपुर रेलवे और निज़ाम राज्य रेलवे को मिलाकर यह रेल-मार्ग बना है। इसकी प्रमुख शाखायें निम्नलिखित हैं:—

(अ) बम्बई से दिल्ली तक। यह शाखा ९५८ मील लम्बी है और भुसावल, खांडवा, इटारसी, भोपाल, झांसी, आगरा, मथुरा होकर जाती है। इटारसी एक उप-शाखा द्वारा इलाहाबाद व नागपुर से भी सम्बन्धित है।

(आ) बम्बई से रायपुर तक। रास्ते में पूना व वादी पड़ते हैं और कुल लम्बाई ४४३ मील है। यह शाखा आगे बढ़कर बंगलौर तक भी चली जाती है।

(इ) दिल्ली से बेजवादा तक। इटारसी, नागपुर, वार्धा और काजीपत होती हुई यह लाइन मद्रास तक चली जाती है। एक उप-शाखा द्वारा काजीपत हैदराबाद से सम्बन्धित है।

इस मार्ग से बम्बई, मध्य प्रदेश और भोपाल को विशेष लाभ पहुँचता है। मध्य प्रदेश की कपास व मैंगनीज़ तथा भोपाल की लकड़ी इसी मार्ग द्वारा व्यापार में आती हैं। साधारणतया इस पर ५०० लाख यात्री सफर करते हैं और ११० लाख टन माल लाया ले जाया जाता है। इसका प्रधान कार्यालय बम्बई में है।

१६ अप्रैल, १८५३ ई० के दिन भारतवर्ष में सर्वप्रथम रेल, बम्बई से थाना तक २१ मील दूर चली थी। 'दि ग्रेट इंडियन पेनिन्सुला रेलवे" (वर्तमान मध्य रेलवे) जो इस छोटे से रूप में उत्पन्न हुई थी, सालोसाल बढ़ती गयी। गत १०० वर्ष के जीवन में एक के बाद एक उसमें क्रम से अनेक प्रशंसनीय उन्नतियाँ हुई हैं। उसके सीमा-फैलाव के लिए अगम्य और अवेद्य पर्वतों को भेद कर जाने के लिए सुरंगें खोदी गयी हैं। और अनेक बड़ी-बड़ी नदियों के आरपार पुल बनाए गए हैं। यात्रा शीघ्र और सुविधाजनक बनाने के लिये अच्छे डिब्बे और बड़े इंजन समनुविधान करके बनाये गये हैं। माल (असबाब) के बढ़ते हुए यातायात के लिए नवीन और उत्तम प्रकार के माल के डिब्बे काम में लाये गये हैं। मनुष्य की प्राकृतिक भूल करने की वृत्ति को विकसित (इम्प्रूव्ड सिग्नेलिंग प्रैकटिसेज़) सांकेतिक योजना द्वारा विफल करके यात्रा सुरक्षित करने का प्रयत्न किया गया है।

जी. आई. पी. रेलवे जिसका आरम्भ सन् १८५३ में बंबई और थाना के बीच के २१ मील के भाग से हुआ था, अब बम्बई से उत्तर में दिल्ली, कानपुर और इलाहाबाद तक, पूर्व में बेजवादा और दक्षिण में रायचूर और हैदराबाद तक फैली हुई है।

थाना तक लाइन चालू करने के तुरन्त बाद ही भोर और थल घाट के पहाड़ी रेलमार्ग बनाये गये थे जिससे अगम्य पश्चिमी घाट को भेद कर भारत के मध्य का द्वार खुला था। भोर घाट के १७ मील लम्बे विस्तृत ढालू रेल-मार्ग में २७ सुरंगें हैं,

और थल घाट के १० मील विस्तृत ढालू मार्ग में १३ सुरंगें हैं। इन दोनों घाटों को बनाने में १० साल लगे थे और १,३५,००,००० रुपये से अधिक व्यय हुआ था।

इन पर्वतीय भागों में दो रेल मार्गों के बीच कम अन्तर होने से उत्पन्न हुई अड़चनों को हटाना, कुछ सुरंगों को चौड़ा करना और नई सुरंगें बनाना हाल ही में आवश्यक समझा गया था। १० नई सुरंगें बनाई गई थीं, पूर्व-स्थित ६ सुरंगें चौड़ी की गई थीं, और २ सुरंगें खुले कटन में परिणत कर दी गई थीं। इन कामों में लगभग २३ करोड़ रुपया व्यय हुआ था और काम ५ साल, सन् १६४६ से १६५१ तक चालू रहा था। इस काम के करने में हाल ही की आविष्कारिक इंजीनियरिंग युक्तियां प्रयोग की गई थीं।

भारतवर्ष में सब से प्रथम रेलवे लाइन होने के अतिरिक्त, भारतवर्ष में सर्व-प्रथम विद्युत-चालित रेलों का प्रयोग करने का अनुपम मान भी जी. आई. पी. रेलवे को है। ३ फरवरी १६२५ के दिन विक्टोरिया टर्मिनस से कुर्ला तक हारबर ब्रांच लाइन विद्युत-चालित करके यातायात के लिये चालू की गई थी। बंबई भाग की उप-नगरीय रेलों को विद्युत-चालित करने के पश्चात ही बंबई से पूना और बंबई से इगतपुरी तक मून (मेन) लाइन की रेलों को विद्युत चालित किया गया था। आज सारे भारतवर्ष में सब से अधिक दूरी तक विद्युत चालित रेल की लाइनें मध्य रेलवे के पास हैं।

६. दक्षिण रेल-मार्ग (The Southern Railway)—मैसूर रेलवे मद्रास और साउथ मरहठा रेलवे तथा साउथ इण्डिया रेलवे को मिलाकर यह रेल-मार्ग बनाया गया है। इसकी कुल लम्बाई ६,०२४ मील है। इसमें छोटी व बड़ी दोनों ही प्रकार की लाइनें मिली हुई हैं। इसका प्रधान कार्यालय मद्रास में है और मद्रास, मैसूर, ट्रावनकोर-कोचीन तथा दक्षिणी बंबई और हैदराबाद के कुछ भाग इसके मार्ग में पड़ते हैं। इसकी बड़ी लाइन वाली शाखायें निम्नलिखित हैं—

(अ) मद्रास से वाल्टेयर तक। नेल्लोर और बेजवादा होती हुई यह शाखा २६८ मील लम्बी है। इसके द्वारा मद्रास और कलकत्ते के बीच संबंध स्थापित होता है।

(आ) कुड़ापा द्वारा मद्रास से रायपुर तक। इसकी लम्बाई ३५१ मील है और यह लाइन मद्रास व बंबई को मिलाती है।

(इ) मद्रास से बंगलौर तक। इसकी कुल लम्बाई २२२ मील है।

(ई) जलारपत से मंगलौर तक। यह शाखा ४२३ मील लम्बी है और सलेम, ईरोड, कोयम्बटूर व टेलीचरी से होकर जाती है। जलारपत बंगलौर और उटकामंड से भी मिला हुआ है।

छोटी लाइन की प्रमुख शाखायें निम्नलिखित हैं:—

(अ) पूना से हरिहर तक। यह पूरा मार्ग ४१५ मील है। मद्रास से बंबई तक आने का यह वैकल्पिक मार्ग है। हरिहर से एक लाइन बंगलौर तक जाती है।

चित्र ६०
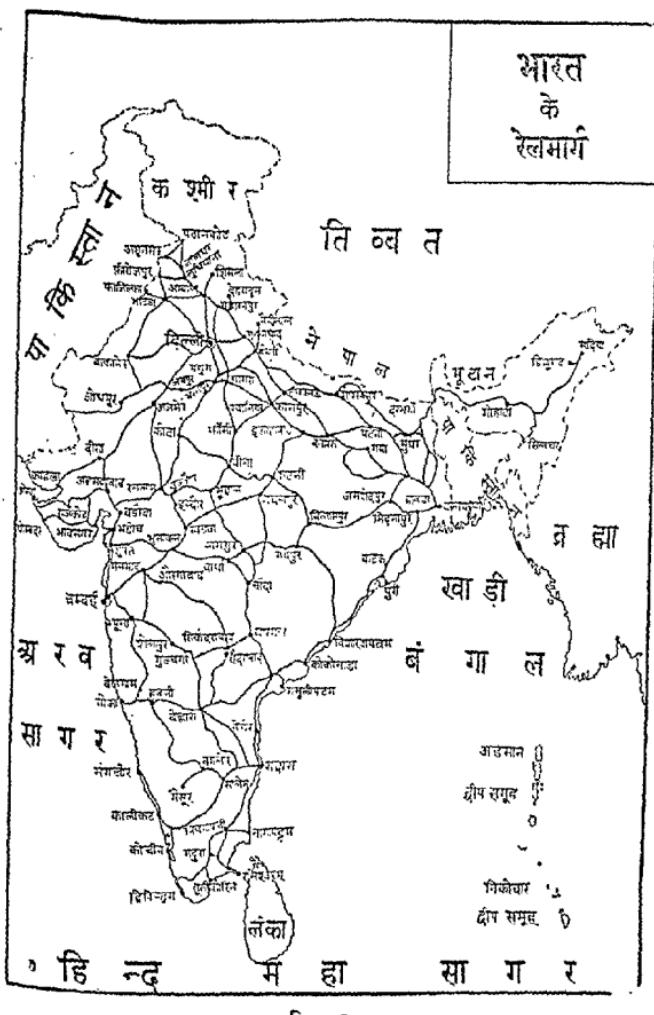
(आ) गुन्टाकाल से मसूलीपटम तक। यह लाइन ३२० मील लम्बी है और बेजवादा होकर जाती है।

(इ) मद्रास से धनुषकोटी तक। तंजोर और त्रिचनापली होता हुआ यह मार्ग ४२२ मील लम्बा है।

(ई) मद्रास से ट्रिवन्ड्रम तक। यह शाखा त्रिचनापली, विरुधनगर, मदुरा और क्यूलन होती हुई ५१२ मील का फासला पार करती है। विरुधनगर से एक उपशाखा तूतीकोरिन तक जाती है।

सड़कें

कई शाखाएं व उप-शाखाएं मद्रास, कोचीन, तूतीकोरिन, अल्लपी, पयूलन और कालीकट को मिलाती हैं। खाद्यान्न, कपास, तिलहन, नमक, चीनी, तम्बाकू, लकड़ी और खाल व चमड़े इस मार्ग पर चलने वाली विभिन्न वस्तुएं हैं।

भारत में सड़कों की कुल लम्बाई २,५०,००० मील है। देश की जन-संख्या व विस्तार को देखते हुए यह बहुत कम है। इस कुल लम्बाई में केवल ९७,००० मील लम्बी सड़कें ही पक्की हैं। भारत की सड़क व्यवस्था कितनी पिछड़ी है यह इसी बात से समझा जा सकता है कि भारत में प्रति एक लाख निवासियों पर सड़कों की लम्बाई ३ मील है जबकि संयुक्त राष्ट्र अमरीका में २५०० मील, फ्रांस में ६३४ मील तथा संयुक्त राज्य में ४०० मील सड़कों का अनुपात है। पक्की सड़कों की इस कमी के कारण गांव प्रदेशों में बड़ी असुविधा रहती है। सड़कों की कमी के कारण भारत के बहुत से उपजाऊ क्षेत्र बिना खेती के पड़े हुए हैं क्योंकि यदि खेती की जाय तो उसे मंडी तक पहुँचाने के लिये काफी दिक्कत व खर्चा उठाना पड़ता है। फ्रांस, जर्मनी, संयुक्त राष्ट्र, ग्रेट ब्रिटेन और इजरायल में सड़कों के बनाने से ही कृषि का विकास हुआ है। भारत में अभी भी बहुत से गांव अकेले अलग पड़े हुए हैं। मोटर-गाड़ियों के भारत
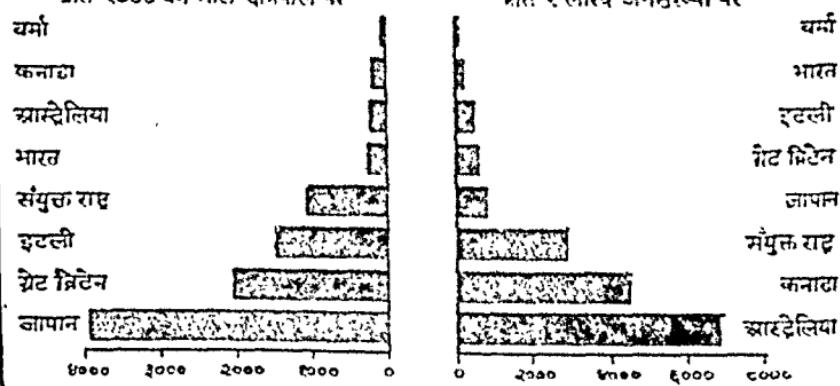
चित्र ६१—भारत और अन्य देशों में सड़कों की लम्बाई। भारत का सड़क यातायात बहुत पिछड़ी हुई दशा में है। प्रति वर्गमील क्षेत्रफल पर १/५ मील सड़क का औसत है।

में बढ़ने से इन सड़कों की दशा में सुधार हो गया है और नई सड़कें भी पक्की बनाई जा रही हैं। आजकल देश के बहुत से भागों में मोटर यातायात ही गमनागमन का मुख्य साधन है। फिर भी अन्य देशों की अपेक्षा भारत में सड़क यातायात बहुत पिछड़ी हुई दशा में है। सड़कों की उन्नति बहुत कुछ मोटर-गाड़ियों की संख्या पर निर्भर

रहती है। भारत में प्रति १ लाख जन-संख्या पर केवल ६० मोटर-गाड़ियों का औसत पड़ता है। संयुक्तराष्ट्र अमरीका में मोटर-गाड़ियों का, औसत २६,०००, कनाडा में १७,०००, आस्ट्रेलिया में १७,००० और ग्रेट ब्रिटेन में ६००० है। यही कारण है कि भारत की सड़कें इतनी पिछड़ी हुई हैं। साथ-साथ यह भी कहा जा सकता है यहां की सड़कों की हीन दशा के कारण ही यहाँ पर मोटर-गाड़ियों की संख्या इतनी कम है। भारत की अधिकतर सड़कें कच्ची हैं जो जून से सितम्बर तक वर्षा के कारण दलदली हो जाती हैं। भारत की सड़कों की अविकसित दशा का अनुमान इसी बात से लग सकता है कि भारत की १ लाख जनसंख्या पर सड़कों की लम्बाई का औसत ३ मील पड़ता है जबकि संयुक्तराष्ट्र, फ्रांस और ग्रेट ब्रिटेन में यह औसत क्रमशः २५०००,६३४ और ४०० मील है।

उत्तर प्रदेश, काश्मीर, मध्यभारत और ट्रावनकोर में नई सड़कों का काफी विस्तार हुआ है। कई राज्यों में मोटर यातायात की व्यवस्था सरकारी संरक्षण में है। दिल्ली, कलकत्ता, आगरा, इलाहाबाद, नागपुर, हैदराबाद, मदुरा, ट्रिवनड्रम और

चित्र ६२

इंदौर सड़क यातायात के प्रमुख केन्द्र हैं और इन स्थानों से कई सड़कें भिन्न-भिन्न स्थानों को जाती हैं। वास्तव में भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में सड़क यातायात का उन्नत होना बड़ा आवश्यक है। भारत को अपनी आर्थिक प्रगति में रेलों से काफी सहायता मिली है। अब देश के भीतरी भागों की उन्नति के लिये नई सड़कों का बनाना और कच्ची सड़कों को पक्का करके मोटर योग्य बनाना बहुत आवश्यक है। इसके यह अर्थ नहीं कि सड़कें रेलों से स्पर्धा करेंगी और रेलों का स्थान ले लेंगी; बल्कि अच्छी सड़कों के बन जाने से रेलों को सहायता मिलेगा और दोनों की सहायता से भारत आर्थिक उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होगा।

देश की रेलों की कुल लम्बाई के ४० प्रतिशत अंश के बराबर पक्की सड़कें हैं। इन पर बसें व मोटर-लारियां चलती हैं और भीतर के गांवों व शहरों तथा रेल स्टेशनों को आपस में मिलाती हैं। वास्तव में छोटी-छोटी यात्राओं के लिये तो मोटरों का महत्व बहुत अधिक है। इनके द्वारा शीघ्र व सस्ते दामों पर आया जाया जा सकता है। इसके अलावा मोटर-गाड़ियां किसी भी दशा में जा सकती हैं। रेलों की भांति वे पटरियों पर आश्रित नहीं होतीं। सड़क द्वारा यातायात सस्ता भी पड़ता है क्योंकि उन्हें न तो स्टेशनों की ही आवश्यकता होती हैं और न विस्तृत मैदानों की ही। इसलिए कभी-कभी रेलों और मोटरो के बीच स्पर्द्धा उठ खड़ी होती है। परन्तु बड़े-बड़े नगरों व उनके समीपवर्ती प्रदेशों में जहां सड़कें रेल-मार्गों के समानान्तर चलती हैं प्रायः ५० मील के फासले तक तो यह स्पर्धा रहती है फिर उसके आगे नहीं। साधारणतया भारत की पक्की सड़कें-रेल-मार्गों की सहायक व पूरक हैं। भारत में शाखान्तरित सड़कों की अधिक आवश्यकता है जो मुख्य सड़कों व रेल-मार्गों को सहायता पहुँचा सकें और लाखों गांवों को व्यापार के मार्गो के साथ संपर्क में ला सकें। भारत सरकार ने पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सड़कों पर १०५ करोड़ रुपये खर्च करने की योजना की है। सन् १९४३ में एक नागपुर योजना तैयार की गई जिसके अनुसार २० वर्ष की अवधि में इतनी सड़कें बनाने की बात थी कि विकसित खेतिहर प्रदेश का कोई भी गांव मुख्य सड़क से ५ मील से अधिक दूर न रह जाये। प्रथम पंच-वर्षीय योजना के प्रारम्भ में भारत में ९७००० मील लम्बी पक्की सड़कें और १,४७,००० मील लम्बी कच्ची सड़कें थीं। प्रथम योजना काल में ६००० मील लम्बी पक्की सड़कों का और २०,००० मील लम्बी कच्ची सड़कों का और निर्माण हुआ। केन्द्रीय सरकार की राजपथ निर्माण योजना के अन्तर्गत ६४० मील सड़कों व पुलों का निर्माण हुआ तथा २५०० मील लम्बी सड़कों की दशा में सुधार किया गया। प्रथम योजना के अन्त तक नागपुर योजना के लक्ष्य का तृतीयांश पूरा हो चुका होगा।

दूसरी योजना के अन्तर्गत, सन् १९५६ से १९६१ तक की अवधि में प्रथम योजना काल में शुरू की गई सड़कों को पूरा किया जायेगा और साथ-साथ ६०० मील लम्बी और सड़कों पर निर्माण कार्य शुरू होगा तथा ६० पुल बनाये जायेंगे; १७०० मील सड़कों को सुधारा जायेगा और ३७५० मील सड़कों को चौड़ा किया जावेगा। यह तो हुआ राजपथ सम्बन्धी विवरण। इसके अलावा केन्द्रीय सरकार

मार्ग का विस्तार १०४४ मील है। यही सड़क आगे बढ़ जाती है और १००० मील के बाद स्थित चुंगकिंग को मिलाती है। स्टिलवेल रोड की सहायता से भारत व चीन के व्यापार को प्रोत्साहन मिल सकता है।

भारत व पाकिस्तान के बीच का बहुत-सा व्यापार सीमान्त मार्गों द्वारा ही होता है।

जल-मार्ग

बहुत प्राचीन काल से भारत के उत्तरी भाग में नाव्य नदियों की बहुलता ौर समतल भूमि के कारण अधिकतर व्यापार जल-मार्गों द्वारा ही होता रहता है। ्तरी भारत की नदियों की कुल लम्बाई २०,००० मील के लगभग है परन्तु केवल ००० मील का फासला ही यन्त्र चालित-नाव चलाने योग्य है। रेलों के निर्माण के से भारत का बहुत अधिक आन्तरिक व्यापार इन्हीं नदियों द्वारा होता था। परन्तु ों के बन जाने से जल मार्गिक व्यापार को विशेष हानि पहुँची है। आज कल जल- ों द्वारा आन्तरिक व्यापार बहुत कम महत्व का है। रेलों की अपेक्षा नदियों द्वारा ार १ प्रति शतांश से अधिक नहीं होता। इस समय केवल २५ लाख टन माल ही ारा प्रतिवर्ष लाया ले जाया जाता है। इस समय १५५७ मील नदियों पर यन्त्र त नावें चलाई जा सकती हैं। और ३५८७ मील नदियों पर बड़े-बड़े बजरे चल कते हैं। प्रथम योजना काल में सरकार ने एक गंगा-ब्रह्मपुत्र परिषद् की स्थापना की। इस परिषद् ने छिछले जल में उचित प्रकार की नाव चलाने की तीन योजनाओं र काम शुरू किया। इनमें से दो तो ऊपरी गंगा तथा आसाम की सहायक नदियों हैं और तीसरी आसाम में ब्रह्मपुत्र नदी पर। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि ंगा ब्रह्मपुत्र नदियों पर नाव्यता प्रोत्साहित की जायेगी। इस काल में बकंधिम नहर का विकास होगा और इसे मद्रास पोताश्रय तक मिला दिया जायेगा। पश्चिमी तट की नहरों का भी विकास होगा।

नदियों द्वारा बहुत काफी माल ढोया जा सकता है। इसलिए नदियों द्वारा यातायात व्यवस्था की उन्नति की विशेष संभावनाएँ हैं। भारत में रेलों द्वारा याता-यात की सारी मांग कदापि भी पूरी नहीं हो सकती। बहुत सी महत्त्वपूर्ण वस्तुओं को शीघ्र से शीघ्र ही इधर उधर ले जाना होता है। कच्चा माल न मिलने ,अक्सर उद्योग-धंधों का उत्पादन रुक जाता है। भविष्य में औद्योगिकरण की जनाओं के पूरा होने पर यातायात की अड़चनें उत्पन्न होने का डर है। अतः जल ातायात का संयोजित विकास राष्ट्रीय हित में है। जल मार्गों से रेलों को सहायता मिलनी चाहिए। वास्तव में दोनों यातायात एक दूसरे के पूरक हैं न कि स्पर्धा-जनक। रेलों के द्वारा तो कम भारी सामान ढोया जाता है जिसको जल्दी से जल्दी ठीक तौर पर पहुँचाना होता है। इसके विपरीत जलमार्गों के द्वारा कम मूल्य का ज्यादा भारी सामान ढोया जाता है जिसे उसी समय इधर उधर ले जाना सम्भव होता है जब यातायात का खर्च कम हो। भारत में जल मार्गों के विकास में सबसे बड़ी रुकावट यह रही है कि यह राजकीय विषय रहा है। विभिन्न राज्यों की अलग-

गंगा पर स्थित प्रमुख नगर हरिद्वार, कानपुर, इलाहाबाद, मिर्जापुर, बनारस, गाजीपुर, पटना, मुंगेर, मुर्शिदाबाद और कलकत्ता हैं। जमुना पर स्थित दिल्ली, मथुरा और आगरा के नगर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

गंगा बांध योजना (Ganges Barrage Project)—४०० वर्ष पहले गंगा के मुहाने के पास भगीरथी इसकी बड़ी प्रमुख शाखा थी परन्तु अब यह केवल एक छोटे से नाले के समान रह गई है। इसका मुख्य कारण गंगा के जल की दिशा-परिवर्तन है। भारी बाढ़ अथवा भूगर्भ में होने वाले किसी विशेष परिवर्तन के कारण गंगा बिल्कुल पूर्व की ओर बहने लगी और पूर्वी पाकिस्तान के फरीदपुर जिले में गोलान्दो स्थान पर ब्रह्मपुत्र नदी से मिल गई। तभी से भागीरथी शाखा का महत्व बिल्कुल ही घट गया है। इसी कालान्तर में भागीरथी की सहायक दामोदर नदी का मुहाना ७० मील खिसक गया है। इससे भगीरथी की तलहटी में रेत भर गई और
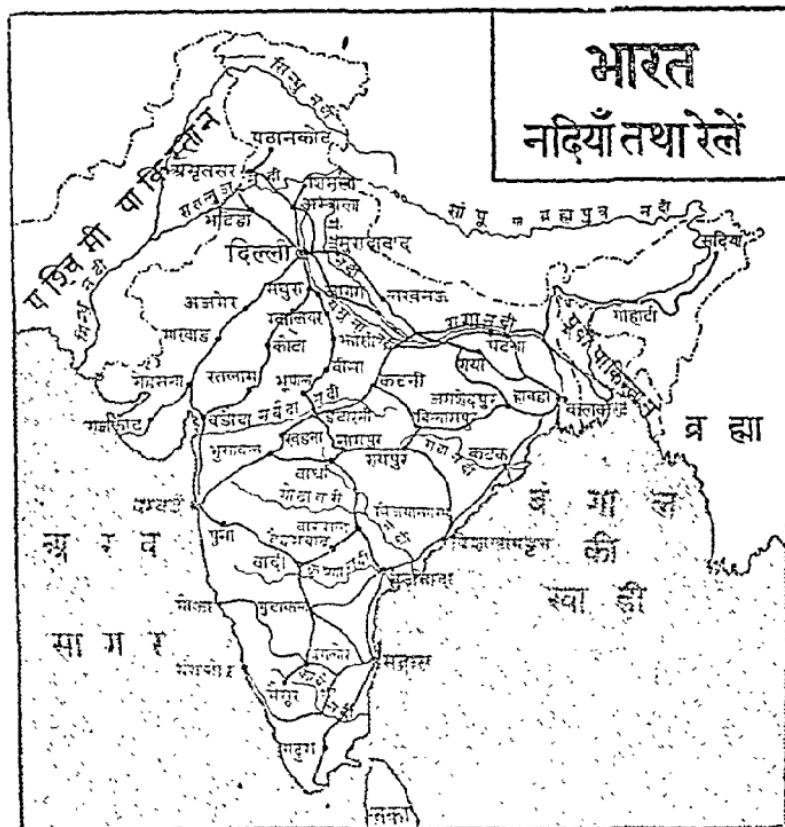
चित्र ६४

अब उसमें केवल वर्षा ऋतु का ही पानी भरता है गंगा के सबसे निचले भाग में, जिसे हुगली कहते हैं, अक्सर ज्वारभाटे आया करते हैं और इससे तलहटी का बहुत भाग रेत से भर जाता है।

गंगा के मीठे पानी के कम आने से और ज्वारभाटे की अधिकता के कारण हुगली नदी का पानी खारा हो गया है। इसी कारण कलकत्ता को पीने के लिए मीठा पानी प्राप्त करने की कठिनाई रहती है। दूसरे, भगीरथी के सूख जाने से कलकत्ता
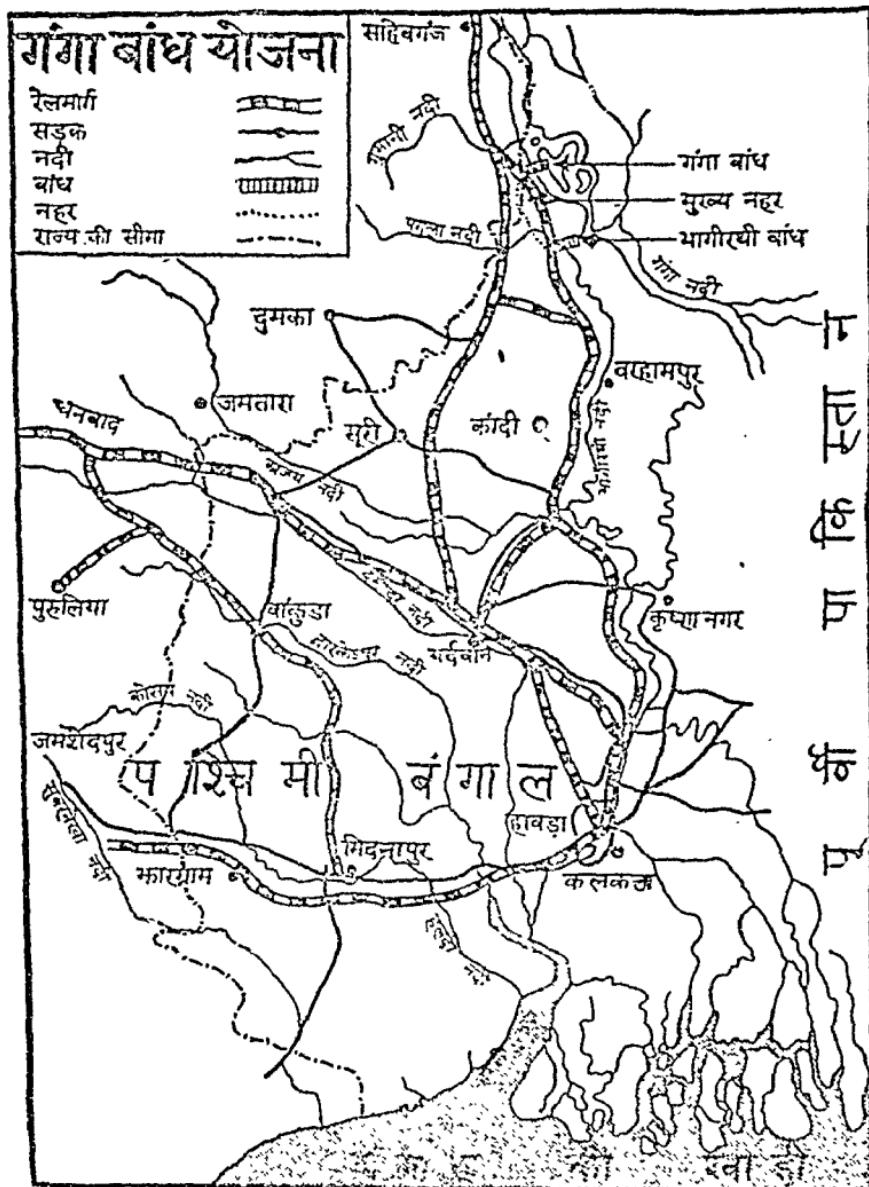
चित्र ६५

और उत्तरी भारत के बीच कोई नाव्य जल-मार्ग नहीं रह गया है। अतः कलकत्ता और उत्तरी मैदान के बीच जल-मार्ग की व्यवस्था पर काम हो रहा है। इसके अनुसार भगीरथी की वलहटी को काम में लाया जायेगा।

इस योजना के अनुसार गंगा नदी पर बिहार में स्थित साहिबगंज से २४ मील नीचे राजमहल स्थान पर एक बांध बनाया जावेगा। इसकी सहायता से गंगा नदी के पानी को एक नहर द्वारा भगीरथी की तलहटी में डाल दिया जावेगा। इस योजना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

(१) बंगाल बिहार की सीमा पर गंगा नदी के आरपार बांध बनाया जावेगा परन्तु अभी तक स्थान का निश्चय नहीं हुआ है।

(२) इस प्रकार भगीरथी और पश्चिमी बंगाल की अन्य नदियों में अधिक जल की व्यवस्था हो सकेगी।

(३) कलकत्ता और गंगा के बीच का जल-मार्ग नाव्य हो जायगा।

(४) हुगली नदी में अधिक पानी आ जायेगा और इसके फलस्वरूप यह नदी नाव चलाने के योग्य बनी रह सकेगी।

इस समय भगीरथी की दशा के कारण कलकत्ता के बन्दरगाह को बड़ी असुविधा हो रही है। हुगली में स्टीमर जहाजों का चलाना दिन-पर-दिन खतरनाक होता जा रहा है। इस योजना के पूरा हो जाने पर दो लाभ होंगे—(१) भगीरथी में साल भर बराबर पानी बना रहेगा और (२) हुगली नदी के पानी का खारापन भी जाता रहेगा।

ब्रह्मपुत्र—संसार की सब से लम्बी नदियों में से है। यह करीब १८०० मील लम्बी है और तिब्बत में मानसरोवर झील के थोड़ा पूर्व में १६००० फीट की ऊंचाई से निकलती है। हिमालय के उत्तरी ढालों के नीचे-नीचे पूर्व की ओर बहती हुई यह आसाम में प्रवेश करती है और एकाएक दक्षिण पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। आसाम की घाटी को पार करने के बाद यह नदी फिर दक्षिण की ओर मुड़ जाती है और पूर्वी पाकिस्तान के पबना जिले के दक्षिणी-पूर्वी सिरे पर गंगा में मिल जाती है।

ब्रह्मपुत्र का आसाम के आर्थिक जीवन में विशेष महत्व है। इसके द्वारा आसाम का तेल, चाय, लकड़ी और पटसन कलकत्ता जाने वाली गाड़ियों तक लाया जाता है। इस नदी में साल भर बराबर स्टीमर जहाज चल सकते हैं और मुहाने से ८०० मील ऊपर डिब्रूगढ़ तक यह नदी नाव्य है। परन्तु नाव चलाने के दृष्टिकोण से इसमें कुछ दोष भी पाये जाते हैं जिनका दूर करना बहुत ही आवश्यक है। इसमें पाये जाने वाले दोष निम्नलिखित हैं:—

(अ) बालू की शिलायें, किनारे व द्वीप बन जाते हैं जिनसे नाव व स्टीमर चलाने में बड़ी असुविधा व खतरा रहता है।

(आ) वर्षा ऋतु में इसका प्रवाह बड़ा तेज हो जाता है और स्टीमर जहाजों के लिए बड़ी खतरनाक परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इस नदी में हर साल बाढ़ आती है और आसपास की भूमि पर मिट्टी जम जाती है। इसके कारण इसके आसपास की भूमि कृषि के दृष्टिकोण से बड़ी उपजाऊ हो गई है। कृषि व व्यापार के दृष्टिकोण से ब्रह्मपुत्र का गंगा के बाद दूसरा स्थान है।

दक्षिणी भारत की प्रमुख नदियां नर्मदा, ताप्ती, महानदी, कृष्णा, गोदावरी और कावेरी हैं। नर्मदा व ताप्ती पश्चिम की ओर प्रवाहित होती हैं परन्तु पश्चिमी घाट की अधिक ऊंचाई के कारण अन्य नदियां पूर्व की ओर बहती हैं। इन नदियों के निचले हिस्से में वर्षा ऋतु में नाव चलाई जा सकती हैं।

भारत में नाव्य नहरें बहुत कम हैं। भारत की प्रमुख नाव चलाने योग्य नहरें निम्नलिखित हैं:—

(१) बंगाल की सरकुलर और पूर्वी नहरें। (२) हरिद्वार से कानपुर तक २७५ मील लम्बी गंगा नहर। (३) मद्रास के पूर्वी तट के समानान्तर २६० मील लम्बी बकिंघम नहर (उड़ीसा की तटीय नहर)।

इनके अलावा गोदावरी, कावेरी और कृष्णा के डेल्टा प्रदेश में नाव्य नहरों द्वारा ही यातायात होता है। कोचीन और क्विलन के बीच पश्चिमी तट के जलाशय में भी नावें चलाई जा सकती हैं।

भारत में जल-मार्गों की बहुत अधिक आवश्यकता है। देश में बहुत-सी कठिनाइयां हैं परन्तु फिर भी उपस्थित जल-मार्गों में बहुत से हेर-फेर किये जा सकते हैं। जल-मार्गों की उन्नति से देश को दो लाभ होंगे—(१) रेलगाड़ियों में भीड़भाड़ कम हो जायेगी और (२) बहुत से प्रदेशों की फसल व्यापारिक मंडियों तक पहुंच सकेगी। आजकल ऐसे बहुत से प्रदेशों की फसल मंडियों तक आ भी नहीं पाती।

देश की नदियों की नाव्यता व जल यातायात की संभावनाओं की खोज के लिए कई निरीक्षण व अध्ययन समय-समय पर होते रहे हैं। फरवरी सन् १६५० में संयुक्त राष्ट्र संघ के 'एशिया व सुदूरपूर्व के लिए आर्थिक कमीशन' (Economic Commission for Asia and Far East) ने भारतीय जल-मार्गों के विकास की संभावनाओं में जांच-पड़ताल के लिए एक विशेषज्ञ समिति भेजी थी। उस विशेषज्ञ समिति ने निम्नलिखित जल-मार्गों के भावी विकास के बारे में अपनी खोज की—

(१) गंगा पर बक्सर से इलाहाबाद तक।

(२) घाघरा पर बहरामघाट तक।

(३) ताप्ती पर ओरकपुर तक।

(४) भगीरथी पर।

(५) महानदी व उड़ीसा की तटीय नहर।

(६) बकिंघम नहर।

(७) ताप्ती पर काकरापार और उससे भी ५० मील ऊपर तक। उनकी रिपोर्ट पर भारत सरकार विचार कर रही है। नदियों द्वारा यातायात के प्रश्न पर विचार करने और विविध राज्य सरकारों के काम में सामंजस्य लाने के लिए भारत सरकार ने एक 'गंगा ब्रह्मपुत्र जल यातायात बोर्ड' की स्थापना की है।

समुद्री मार्ग

भारत की तट रेखा ३५०० मील लम्बी है और दुनिया के हर कोने से व्यापारिक जहाज यहां से होकर गुजरते हैं। भारत के पांच प्रमुख बन्दरगाह कलकत्ता,

विजगापट्टम, मद्रास, बम्बई और कोचीन हैं। इन्हीं पांच केन्द्रों से भारत के समुद्री मार्ग शुरू होते हैं। भारत के दृष्टिकोण से चार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक मार्ग अधिक महत्वपूर्ण हैं और वे हैं—(१) स्वेज़ नहर मार्ग (२) केप मार्ग (३) आस्ट्रेलिया मार्ग और (४) सिंगापुर मार्ग।

१. **स्वेज़ मार्ग**—इस मार्ग के खुलने से भारत और यूरोप के बीच व्यापार बहुत बढ़ गया है। बी. आई. एस. एन. और पी. एण्ड ओ. कम्पनी के जहाज इस मार्ग पर भारत यूरोपीय व्यापार के साधन हैं। भारत इस मार्ग से भोजन की वस्तुएं व कच्चा माल भेजता है तथा तैयार किया हुआ माल मंगवाता है।

२. **केप मार्ग**—इसके द्वारा भारत और दक्षिणी व पश्चिमी अफ्रीका के बीच व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है। कभी-कभी भारत से दक्षिणी अमरीका जाने वाले जहाज भी इसी मार्ग द्वारा आते-जाते हैं। इस मार्ग से भारत को कपास, कोयला व चीनी प्राप्त होती है।

३. **अस्ट्रेलियन मार्ग** का महत्व धीरे-धीरे बढ़ रहा है। भारत व आस्ट्रेलिया के बीच होने वाला व्यापार इसी के द्वारा होता है। ऊन, गेहूँ, घोड़े, डिब्बों में बन्द फल तथा अन्य भोजन सामग्री भारत में आती है और पटसन, चाय तथा तिलहन भारत से बाहर जाती है। भारत-आस्ट्रेलिया के व्यापार के लिए ब्रिसबेन, सिडनी और मेलबोर्न के बन्दरगाह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

४. **सिंगापुर मार्ग** का महत्व स्वेज मार्ग से कुछ कम है इस मार्ग से भारत चीन व जापान के सम्पर्क में आता है। इसके द्वारा भारत, कनाडा व न्यूजीलैंड के बीच भी सम्बन्ध स्थापित होता है। दूसरे महायुद्ध से पहले इस मार्ग पर इन्डोचीन एस. एन. कम्पनी, एन. वाई. कैसा और ओ. एस. कैसा कम्पनियों के जहाज चलते थे। इस मार्ग से भारत में सूती व रेशमी वस्त्र, लोहा व इस्पात, मशीनें, चीनी मिट्टी के बर्तन, खिलौने, रासायनिक पदार्थ, कागज व लोहे के अन्य सामान आते हैं। भारत से निर्यात होने वाली कच्ची कपास, पिग आयरन, मैंगनीज, पटसन, चमड़ा और अभ्रक इसी मार्ग से दूसरे देशों को जाता है। [देखिये चित्र १]

अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री व्यापार में भारतीय जहाजों का भाग नगण्य है। कुल व्यापार का केवल २ प्रतिशत भाग ही भारतीय जहाजों द्वारा होता है। तटीय व्यापार में भी भारतीय पोतों का स्थान केवल बीस प्रतिशत ही है। स्पर्धा के कारण भारतीय जहाजी कम्पनियां जहाज चलाने में लाचार हैं। दूसरे महायुद्ध से पहले भारत के समुद्री व तटीय व्यापारिक मार्गों पर अंग्रेजी, फ्रांसीसी, जापानी व इटली जहाजी कम्पनियों के जहाज चला करते थे। स्वतन्त्रता के बाद से देश ने इस ओर ध्यान दिया और पिछले ४-५ सालों में कुछ प्रगति हुई है।

इस समय भारतीय जहाजों का कुल टन भार ४.७ लाख टन है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त में यह टनभार ६ लाख टन हो जाना चाहिये। सन् १९५६-५७ तक भारतीय व्यापारिक जहाजी बेड़े में १,३२,००० टन के जहाज प्राप्त हो जायेंगे। इन जहाजों को भारतीय पोत निर्माण क्षेत्रों में या तो बनाया जा रहा है या

विदेशों से प्राप्त किया जायेगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य अगले ५ वर्षों में ४·४५ लाख टन भार के ७२ जहाजों को प्राप्त करना है। इस लक्ष्य के पूरा होते ही भारतीय व्यापारिक जहाजी वेड़े का टन भार १० लाख टन से अधिक हो जायेगा। अब सम्पूर्ण तटीय व्यापार तथा भारत-वर्मा और भारत-लंका व्यापार का ५० प्रतिशत अंश देशी जहाजों द्वारा ही होता है। सन् १६३६ में इनमें भारतीय जहाजों का अंश क्रमशः ३३ और ४० प्रतिशत था। दूसरे महायुद्ध से पहिले भारतीय जहाज देश के विदेश व्यापार में भी भाग लेते थे। भारतीय जहाजी कम्पनियों के जहाज भारत-संयुक्त राज्य-यूरोप तथा भारत-मलाया मार्ग पर यात्री और माल ले जाते हैं। भारत-संयुक्तराष्ट्र तथा भारत-आस्ट्रेलिया मार्ग पर ये जहाज माल ढोते हैं। इसको प्रोत्साहित करने के लिए भारत सरकार ने कम्पनियों को भरोसा दिलाया है कि यदि वे जहाजों की संख्या वढ़ालें तो सरकार उन्हीं के जरिये माल भेजा करेगी। सरकार की तरफ से कर्ज देने की भी व्यवस्था है। भारत के व्यापारिक जहाजियों ने मिलकर पूर्वी जहाजरानी कारपोरेशन वनाया है। इससे इस दिशा में काफी प्रोत्साहन मिलने की आशा है। सन् १६६०-६१ तक भारत के विदेशी व्यापार में भारतीय जहाजों का भाग १५ प्रतिशत हो जावेगा।

वायु यातायात

वर्तमान काल वायु का युग है और इसमें भारत का वड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। संसार के वायु यातायात सम्वन्धी प्रमुख देशों में भारत का चौथा स्थान है और भारत में दिन-प्रतिदिन हवाई यातायात की लोकप्रियता वढ़ रही है। अन्तर्राष्ट्रीय वायु यातायात में भारत का वड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। पूर्व व पश्चिम के वीच सभी हवाई मार्ग भारत की भूमि पर से होकर जाते हैं। इसके विस्तार व उपयुक्त जल-वायु के कारण यहां वायु यातायात के विकास की आदर्श दशाएं उपस्थित हैं।

भारत में कई वड़े हवाई अड्डे हैं:—वम्वई का सान्ताक्रूज, कलकत्ते का डमडम और दिल्ली का पालम तो अन्तर्राष्ट्रीय वायु-मार्गों के विश्राम स्थान हैं। इनका अन्तर्राष्ट्रीय महत्व है। इनके अलावा अहमदावाद, इलाहावाद, लखनऊ, मद्रास, नागपुर, पटना और विजगापट्टम के हवाई अड्डे काफी वड़े हैं। इनके अतिरिक्त १३ मध्यम और २२ अन्य छोटे-छोटे हवाई अड्डे या जहाजों के उतरने की पट्टियां हैं। इनके अलावा विभिन्न देशी राज्यों के संघ में २६ हवाई अड्डे हैं। निकट भविष्य में भारत सरकार निम्नलिखित स्थानों पर १४ नये हवाई अड्डे वनाने का आयोजन कर रही है:—अजमेर, अलीगढ़ वरहामपुर, कालीकट, कडालोर, देहरादून, हुगली, मंगलौर, नेल्लोर, ऊटकामंड, सलेम, रत्नगिरि, सागर और सूरत।

सन् १६५४ में हमारे यहां का नागरिक उड्डयन विभाग ७८ हवाई अड्डों को कायम रखता तथा चलाता रहा। सन्ताक्रूज (वम्वई), डमडम (कलकत्ता) तथा पालम (दिल्ली) ये तीन तो अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे हैं। इनके अलावा अन्य आठ प्रधान हवाई अड्डे अगरतल्ला, अहमदावाद, वेगमपेट, वंवई (जूहू), दिल्ली (सफदर जंग) गौहाटी, मद्रास और नागपुर में हैं।
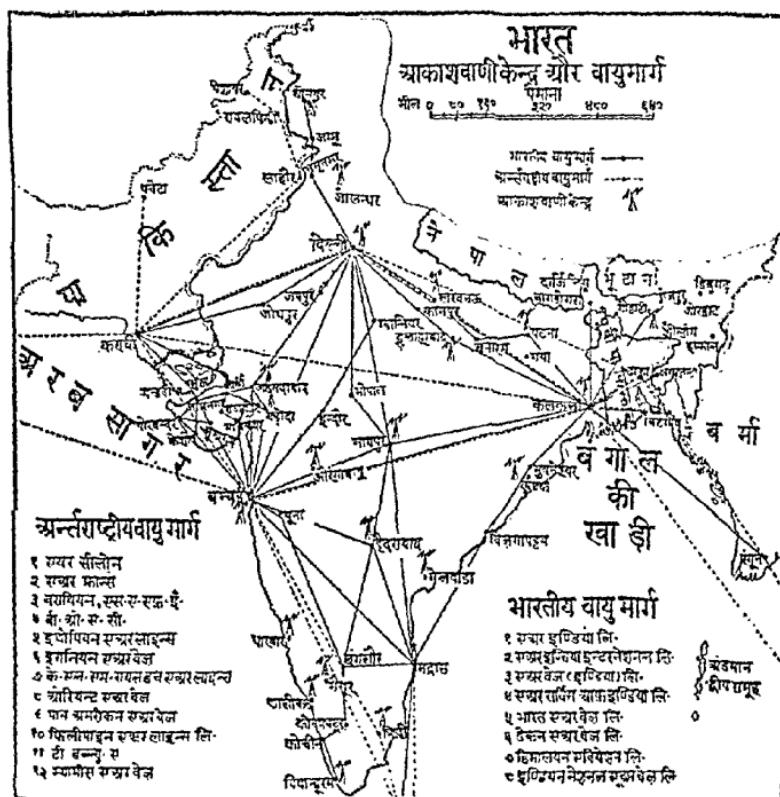
चित्र ६६—बम्बई, कलकत्ता और दिल्ली में विभिन्न वायु मार्गों का केन्द्रीभवन ध्यान देने योग्य है।

भारत में ३ प्रकार के वायु-मार्ग हैं—(१) देश के आरपार जाने वाले प्रधान मार्ग (२) प्रादेशिक मार्ग और (३) स्थानीय मार्ग। देश का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रधान मार्ग वह है जो बम्बई से कलकत्ते तक जाता है और इसका सम्पर्क विदेशी व अन्तर्राष्ट्रीय वायु-मार्गों से भी है। भारत के प्रादेशिक वायु-मार्ग बंगलौर, दिल्ली, हैदराबाद, नागपुर आदि को विदेशी अन्तर्राष्ट्रीय वायु-मार्गों के सम्पर्क में लाते हैं। स्थानीय वायु-मार्ग प्रादेशिक व प्रधान मार्ग को सहायता पहुँचाते हैं और देश के विभिन्न आन्तरिक भागों के बीच सम्पर्क स्थापित करते हैं। इनमें ट्रिवानड्रम-मद्रास, गौहाटी-कलकत्ता और दिल्ली-श्रीनगर मार्गों का विशेष महत्व है।

यह सब होने पर भी संयुक्त राष्ट्र और ग्रेट ब्रिटेन की अपेक्षा वायु-मार्गों का विकास भारत में बहुत कम हुआ है। निम्नलिखित तालिका से भारत में वायु याता-यात के विकास का अन्दाज लगाया जा सकता है :—

भारत में वायु यातायात की दिशा

वर्ष	उड़ान के घंटे (हजारों में)	उड़ान का विस्तार (हजार-मीलों में)	यात्रियों की संख्या (हजारों में)	ढोया हुआ माल (हजार पौंड में)	ढोयी हुई डाक (हजार पौंड में)	टन मील क्षमता (लाख में)	प्रति टन भार-आय (लाख में)
१९४७	५९	६३६२	२५५	५६४८	१४०५	१८६·०	१४३·६
१९४८	७९	१२,६४९	३४१	११,९७५	१५८३	२६३·२	१९३·०
१९४९	९४	१५,०९८	३५७	२२,५००	५,०३२	३६५.४	२३२·५
१९५०	११७	१८,८९६	४५३	८०,००७	८,३५६	५२२·५	३४४·१
१९५१	११९	१९,४९८	४४९	८७,६६५	७,१८२	५७४·०	३९०·२
१९५२	११९	१९,५४२	४३४	८६,०३८	८२७७	५६७·३	३७४·६
१९५३	११३	१९,०४७	३९६	८३,६७९	८,७६३	५५८·२	३६४·४

वास्तव में किसी देश की आर्थिक उन्नति व विकास पर वायु यातायात की प्रगति निर्भर रहती। अतएव जैसे-जैसे भारत आर्थिक उन्नति व समृद्धि की ओर अग्रसर होगा वैसे ही वायु यातायात भी अधिक उन्नति करता जायेगा। इस समय देश के भीतर हवाई यातायात की लोकप्रियता कम होने के दो कारण हैं—(१) पेट्रोल का दाम काफी अधिक है जिसके फलस्वरूप भारत जैसे गरीब देश में हवाई यातायात का मूल्य काफी अधिक पड़ता है। (२) देश का विस्तार तो बहुत अधिक है परन्तु अपेक्षाकृत औद्योगिक व व्यापारिक केन्द्र बहुत कम हैं।

पिछले कुछ दिनों से भारत में दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में रात के समय हवाई जहाजों द्वारा डाक ले जाने का काम शुरू किया गया है। नागपुर में डाक विनिमय के लिए हवाई जहाज मिलते हैं। इन डाक वायुयानों में कुछ यात्री भी सफर करते हैं।

प्रथम अगस्त सन् १९५३ को भारतीय वायु यातायात का राष्ट्रीयकरण हो गया। १५ जून १९५३ में एक विधान पास किया गया जिसके अनुसार १ अगस्त सन् १९५३ को देश की सारी वायु परिवहन कम्पनियों पर सरकार का अधिकार हो गया। इस उद्योग के राष्ट्रीयकरण के बाद वायु परिवहन सेवाओं को चलाने के लिए दो संस्थायें बनाई गई - आन्तरिक वायु उड़ानों के लिए इंडियन एयर लाइन कारपोरेशन और देश से बाहर की उड़ानों के लिए एयर इंडिया इन्टरनेशनल जिसके जहाज काहिरा, रोम, पेरिस, जेनेवा, लन्दन, अदन, नैरोबी, बैंकाक, सिंगापुर, लंका, बर्मा, नेपाल, पाकिस्तान और अफगानिस्तान तक जाते हैं।

भारतीय एयर लाइन्स कारपोरेशन के हवाई जहाज देश के सभी भागों को उड़ानें करते हैं और इनके वायु-मार्गों की लम्बाई १५,२०९ मील हैं। एयर इंडिया

इण्टरनेशनल के वायुयान १५ देशों को जाते हैं और उनके मार्गों की लम्बाई १६,६७३ मील है। दूसरी योजना के अन्तर्गत दोनों ही संस्थाओं की कार्यवाही में बढ़ोत्तरी की योजना है। दूसरी योजना की अवधि में ८ नये हवाई अड्डे बनाये जायँगे जो कि प्रथम योजना काल में बन कर तैयार हुए ६ हवाई अड्डों के अतिरिक्त होंगे। इनके अलावा बहुत-सी विदेशी कम्पनियाँ भी देश में उड़ान करती हैं। विदेशी कम्पनियों में निम्नलिखित बहुत प्रमुख हैं :—

(१) ब्रिटिश ओवरसीज़ एयर कारपोरेशन (B.O.A.C.)—माल्टा, काहिरा, बसरा, करांची और दिल्ली होते हुये लन्दन से कलकत्ता तक।

(२) ट्रान्स वर्ल्ड एयर लाइन (T.W.A.)—वाशिंगटन से बम्बई तक।

(३) एयर फ्रांस—काहिरा, करांची, कलकत्ता होते हुए पेरिस से सैगोन तक।

(४) डच एयर लाइन (K.L.M.)—कराची, कलकत्ता, सिंगापुर, बटाविया।

(५) पान अमरीकन वर्ल्ड एयरवेज—कराची, लन्दन व गैन्डर होते हुए कलकत्ता से न्यूयार्क तक ; बंगकाक, मेनीला और होनूलोलू होते हुए कलकत्ता से सैनफ्रांसिस्को तक।

(६) स्केन्डिनेवियन एयरवेज।

(७) सीलोन एयरवेज़।

(८) चीन नैशनल एयरवेज़।

(९) ईरान एयरवेज़—बम्बई से तेहरान तक।

(१०) पाकिस्तान एयरवेज़।

(११) ओरियन्ट एयरवेज़।

भारत और पाकिस्तान के बीच हवाई यातायात के मुख्य मार्ग निम्नलिखित हैं—

(अ) कराची-दिल्ली (आ) कराची-बम्बई (इ) ढाका-कलकत्ता (ई) कलकत्ता-चिटगांव (उ) ढाका-दिल्ली।

प्रश्नावली

१. भारत में वायु-यातायात के विकास का विस्तृत विवरण दीजिये।

२. भारत और ग्रेट ब्रिटेन के बीच हवाई उड़ानों के विकास पर एक छोटा-सा लेख लिखिए।

३. भारत के आन्तरिक व्यापार के दृष्टिकोण से यातायात के विभिन्न साधनों का वर्णन कीजिये और प्रत्येक का आपेक्षिक महत्व बतलाइये।

४. भारत के रेल-मार्गों के निर्माण व विकास पर आर्थिक दशाओं का क्या असर पड़ा है ? समझाकर लिखिये।

५. भारत के व्यापारिक विकास में रेल-मार्गों से क्या सहायता मिली है ? भारत में रेलों की अपेक्षा सड़कों व जल-मार्गों का अधिक विकास किया जाना चाहिये या नहीं। कारण देते हुए उत्तर लिखिये।

६. भारत के एक मानचित्र पर भारत के आन्तरिक वायु-मार्गों व हवाई अड्डों को दिखलाइये, विकास की संभावित दिशायें बतलाइये और लिखिये कि वायु-यातायात के विकास से भारत को क्या लाभ होगा ?

७. भारत के उत्तरी-पूर्वी सीमांत मार्गों का वर्णन कीजिए और एक मान-चित्र बना कर दिखलाइए। क्या बर्मा व चीन और भारत के बीच रेल अथवा सड़क द्वारा सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है ? इस प्रकार के मार्ग बन जाने से चिट-गांव व कलकत्ता के बन्दरगाहों पर क्या असर पड़ेगा ?

८. उत्तम प्रकार के यातायात के साधन के लिए कौन-सी बातें आवश्यक होती हैं ? सड़क व वायु-यातायात में ये बातें कहाँ तक पाई जाती हैं ? भारतीय दशाओं के दृष्टिकोण से इनका वर्णन कीजिये।

९. भारतीय रेल-मार्गों के नवीन वर्गीकरण का वर्णन कीजिये और उनसे भावी लाभ बतलाइये।

१०. हिन्द महासागर के प्रमुख व्यापारिक मार्गों को एक मानचित्र पर दिखलाइये और मुख्य बन्दरगाहों का वर्णन कीजिये।

११. "किसी देश के रेल-मार्ग वहाँ की भू-प्रकृति के अनुसार ही होते हैं।" उत्तर रेल-मार्ग का वर्णन करते हुए इस कथन की सत्यता बतलाइये।

१२. भारत के आन्तरिक व्यापार में जल-मार्गों के विकास से क्या प्रभाव पड़ता है ?

अध्याय : : ग्यारह

विदेशी व्यापार

विदेशी व्यापार का महत्व—देश के लिये विदेशी व्यापार का महत्व बहुत अधिक है। इनके कई कारण हैं :—(१) देश अपने यहाँ की अधिक उपज बाहरी राष्ट्रों के हाथ लाभ पर बेच सकता है। (२) अपने आन्तरिक विकास व आर्थिक उन्नति के लिए विदेशी राष्ट्रों से मशीनें व अन्य वस्तुएँ जो देश में नहीं होतीं, मंगवा सकता है। (३) अन्तर्राष्ट्रीय कर्त्तव्य को निभाने के लिए व कर्ज को चुकाने के लिए प्रत्येक देश को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भाग लेना पड़ता है। (४) व्यापार में विभिन्न प्रदेश के लोग एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं और उनके बीच पारस्परिक प्रेम बढ़ता है।

भारत का विदेशी व्यापार काफी विस्तृत है और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में भारत का स्थान बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। शांतिकाल में व्यापारिक राष्ट्रों में भारत का ५ वां स्थान रहता है। केवल संयुक्त राज्य, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रांस का विदेशी व्यापार इससे बढ़कर है। वास्तव में भारत की भौगोलिक स्थिति व प्राकृतिक साधन इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि इसका व्यापारिक महत्व स्वभावत: अधिक हो जाता है। संसार का अधिकतर इलमनाइट, अभ्रक, मोनाजाइट, जिरकान और पटसन का माल भारत से ही प्राप्त होता है। भारत से कच्चा लोहा, मैंगनीज, तिलहन, चाय और सूती कपड़े भी बहुत काफी मात्रा में निर्यात किये जा सकते हैं। इसके अलावा भारत में मशीनों, खनिज तेल, मोटर-गाड़ियों, धातुओं, रासायनिक पदार्थों, लम्बे रेशे की कपास, कच्चा पटसन और अनाज का उत्पादन मांग से कम होता है। अत: इन वस्तुओं को भारत बाहर से मंगवाता है।

भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताएं—(अ) भारत के विदेशी व्यापार में देश के विभाजन के बाद से कच्चे माल का आयात बढ़ गया है और कच्चे माल का निर्यात अपेक्षाकृत कम होता जा रहा है। यह व्यापारिक हेर-फेर दूसरे महायुद्ध काल में ही दिखाई पड़ने लगा था परन्तु देश के विभाजन के बाद से यह और भी प्रखर हो गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि पाकिस्तान बन जाने से देश के कच्चे माल के बहुत स्रोत हाथ से निकल गये हैं। साथ-साथ देश की औद्योगिक उन्नति हो जाने से देश में कच्चे माल की खपत बढ़ गई है। अत देश में उत्पन्न अधिकतर कच्चा माल देश के उद्योग-धंधों में ही खप जाता है और कहीं-कहीं तो बाहर से निर्यात के दृष्टिकोण से भारत से पटसन, कच्ची कपास, तिलहन, चपड़ा, चमड़ा व खालें, तम्बाकू और मसाले की मात्रा में भारी कमी हो गई है।

- - -

साथ-साथ कच्चे माल का आयात बढ़ गया है। वास्तव में कच्चे माल की निर्यात में कमी और आयात की वृद्धि भारत के विदेशी व्यापार की एक स्थायी विशेषता हो गई है। दिन प्रतिदिन जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती जायेगी और अधिक लोग शहरों में रहने लगेंगे, यह विशेषता और भी बढ़ती जायेगी।

(आ) भारत के विदेशी व्यापार की दूसरी विशेषता यह है कि तैयार माल का आयात दिन पर दिन घटता जा रहा है और भारत के उद्योग-धंधों द्वारा तैयार किये हुए माल के निर्यात में वृद्धि हो रही है। इस परिवर्तन का मुख्य कारण भारत सरकार की आर्थिक नीति है जिसका ध्येय भारत से निर्यात में उत्तरोत्तर वृद्धि करना है। साथ-साथ देश की औद्योगिक दशा में भी उन्नति हुई है जिसके फलस्वरूप अब भारत से तैयार माल बाहर भेजा जा सकता है।

भारत के विदेशी व्यापार की मुख्य प्रवृत्ति यह है कि निर्यात को बढ़ाया जावे, औद्योगीकरण के साथ आयात नीति का सामंजस्य रखा जावे, और व्यापार संतुलन को अनुकूल बनाये रखने के लिए निर्यात की मंडियों को दृढ़ बनाये रखने का प्रयत्न किया जावे। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने बहुत से यूरोपीय राष्ट्रों के साथ व्यापार समझौते किये हैं, विभिन्न देशों को व्यापार प्रतिनिधि मंडल भेजे गये और उनकी सिफारिशों पर काम किया गया। १९५५ में देश में अन्तर्राष्ट्रीय उद्योग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया और विभिन्न देशों के व्यापार प्रतिनिधि मंडलों को आमन्त्रित किया गया। विदेशों में स्थित विभिन्न भारतीय प्रतिनिधियों को बुलाया गया ताकि वे भारत की प्रगति को देख कर उन देशों के साथ भारत के व्यापार को प्रोत्साहित करें।

इसके अलावा देश में निर्यात परिषदों की स्थापना की गई जिनका लक्ष्य विभिन्न उद्योगों के उत्पादन और विदेशी मांग के बीच तारतम्य स्थापित करना है। सरकार ने निर्यात कर में कमी करके या बिल्कुल हटाकर भी देश से निर्यात को प्रोत्साहन दिया है।

देश में अनाज, खनिज तेल, रंग और पेंट का आयात घट गया है परन्तु मशीनों तथा औद्योगिक कच्चे माल का आयात बराबर बढ़ रहा है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के वर्षों में आयात व्यापार की दशा

(करोड़ रुपये में)

	१९५४-५५	१९५३-५४	१९५२-५३	१९५१-५२
तेल	९०·०	९२·४	८१·९	७९·५
मशीनें	८३·३	८७·७	९०·०	१११·९
खाद्य पदार्थ	६८·०	६३·६	१५५·५	२२८·१
कपास	५८·४	५२·८	७६·७	१३९·०
गाड़ियाँ	३३·८	२९·१	३३·४	३५·४
रसायन औषधियाँ	३१·९	२५·८	२५·०	३६·०

	१९५४-५५	१९५३-५४	१९५२-५३	१९५१-५२
धातुएँ—लोहा और इस्पात	३०·१	२४.२	२३·९	२२·५
अलौह धातुएँ	२६·१	१४·५	१९·४	२०·९
चीनी	२२·०	२·३	—	०·९
रंग	१९·७	१८·९	१०·९	१९·३
काटे छुरी	१७·७	१५·०	१४·३	१९·८
कृत्रिम रेशम का धागा	१४·४	१३·८	९·५	१९·८
कागज	१३·७	१२·८	१२·८	१४·९
विजली का सामान	११·३	१३·५	१५·३	१०·८
फल और सब्जी	९·५	९·९	९·३	१०·०
अन्य सामान	९·४	९·७	५·७	१०·८
ऊन	८·२	८·५	४·७	२·६
गिरी	७·४	३·८	२·३	२·३
अस्फाल्ट	६·८	३·५	७·१	३·१

(इ) देश के विभाजन से पहले भारत का अधिकतर व्यापार ग्रेट ब्रिटेन और उसके राज्यों के साथ होता था। इसका मुख्य कारण था साम्राज्यवादिता। ग्रेट ब्रिटेन और उसके राज्यों से भारत में आने वाली वस्तुओं की मात्रा व मूल्य इन प्रदेशों को निर्यात की गई वस्तुओं से कहीं अधिक होता था। इसके अलावा यूरोप, अमरीका और एशिया के विभिन्न देशों को भारत से निर्यात अधिक होता था और अपेक्षाकृत आयात कम।

(ई) भारत के विदेशी व्यापार की एक अन्य विशेषता यह है कि भारत का संयुक्त राष्ट्र, आस्ट्रेलिया और अन्य सुदूरपूर्वी देशों के साथ व्यापार बराबर बढ़ रहा है। भारत के विदेशी व्यापार में पाकिस्तान का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के वर्षों में निर्यात व्यापार की दशा

(करोड़ रुपये में)

	१९५४-५५	१९५३-५४	१९५२-५३	१९५१-५२
चाय	१४६·५	१०१·६	८०·२	९३·४
पटसन के सामान	१२४·०	११३·८	१२८·९	२६९·७
सूती वस्त्र	६६·२	७२·०	६९·६	५८·१
वनस्पति तेल	२१·४	६·२	२५·१	२२·८
कच्ची कपास	२०·१	१९·३	२९·०	२१·०
मैंगनीज	१९·१	३५·६	३७·९	१८·६
साफ किया हुआ चमड़ा और खालें	१९·०	२५·४	२०·४	२५·७
फल और सब्जी	१३·०	१३·९	१६·६	१३·४

व्यापारिक संतुलन में कमी के इस न्यूनीकरण का मुख्य कारण देश से निर्यात की उत्तरोत्तर वृद्धि है। अब भारत से सूती कपड़े, तेल, चाय, गोंद, रेजिन, लाख, ऊन और ऊनी कपड़े, तम्बाकू, फल तथा सब्जी अधिक मात्रा में बाहर भेजी जाती हैं। निर्यात की मात्रा में इस वृहत् वृद्धि के दो मुख्य कारण हैं—(१) भारतीय रुपये और अंग्रेजी पौंड के डालर के प्रति मूल्य में घटाव। इसकी वजह से भारतीय माल विदेशों से सस्ता पड़ने लगा और विशेषकर अमरीका का माल बहुत महंगा हो गया। अतएव भारत सरकार ने निर्यात को बढ़ावा दिया और आयात में कटौती कर दी।

(२) संयुक्त राष्ट्र अमरीका तथा विभिन्न यूरोपीय देशों में अस्त्र-शस्त्र बनाने की योजनाओं के कारण विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंडियों में स्पर्धा कम हो गई और भारतीय माल को लोकप्रिय होने का पर्याप्त क्षेत्र मिल गया।

दूसरी तरफ भारत में आयात की मात्रा दिन पर दिन गिरती जा रही है। इसके दो कारण हैं:—(१) भारत सरकार की प्रतिबंध लगाकर या कटौती करके आयात की मात्रा में कमी करने की नीति और (२) भारतीय रुपये के विनिमय मूल्य घट जाने व कोरिया के युद्ध के कारण विभिन्न विदेशी वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि। फलतः अधिक मूल्य देने पर भी आयात की हुई वस्तुओं की मात्रा कम हो गई। निम्नलिखित आंकड़ों से यह बात स्पष्ट हो जायेगी।

आयात का मूल्य

१६४८-४६	५८७.६६ करोड़ रुपया
१६५०-५१	५६५.६१ ,, ,,

सन् १६५२-५३ में भारत में आयात की हुई वस्तुओं का व्योरा और मूल्य इस प्रकार था:—

१६५२-५३ में भारत का आयात-व्यापार

	मूल्य (करोड़ रुपये)		मूल्य (करोड़ रुपये)
कच्ची कपास	७६.६७	रासायनिक पदार्थ व दवाइयां	२५
मशीनें	८७.८७	कच्चा पटसन	१६.४८
अन्न, दालें आदि	१५३.१५	कांटे छुरी आदि	१४.२६
तेल	८१.७८	बिजली का सामान	१३.८१
धातुएं	४३.११	फल व तरकारियां	३.६५
मोटरगाड़ियां व साइकलें	२८.१८		

सन् १६५२-५३ के आयात व्यापार की विशेषता यह रही कि खाद्यान्नों, कच्ची कपास और कच्चे पटसन में भारी कमी हुई। परन्तु खनिज संपत्ति, वनस्पति और प्राणिज तेलों, बिजली के सामान तथा धातुओं के आयात में थोड़ी-सी वृद्धि हुई।

सन् १६५४-५५ में भारत के विदेशी व्यापार में सभी तरह से वृद्धि हुई। आयात और निर्यात का मूल्य पिछले वर्ष की अपेक्षा क्रमशः ६१·४८ करोड़ और ५४·५६ करोड़ अधिक हो गया। इस प्रकार १६५४-५५ में भारतीय विदेशी व्यापार

का मूल्य पहिले से ११६ करोड़ रुपये अधिक रहा। सन् १९५३-५४ में विदेशी व्यापार का कुल मूल्य १,०७,२३२ करोड़ रुपये था और सन् १९५४-५५ में यह १,१८,८३६ करोड़ रुपये रहा।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार सन् १९५५ में पिछले वर्ष की अपेक्षा विदेशी व्यापार का मूल्य ६९ करोड़ रुपये अधिक रहा। घरेलू उत्पादन की बढ़ोत्तरी तथा विकास योजनाओं के लिए मशीनों की आवश्यकता के कारण ही विदेशी व्यापार में इतनी वृद्धि रही। आयात-निर्यात के मूल्य की वास्तविक स्थिति इस प्रकार रही—

(करोड़ रुपये में)

	१९५४	१९५५
निर्यात	५६३	६०४
आयात	६१६	६४४
कुल	११७९	१२४८

और व्यापार संतुलन में सन् १९५५ में ४० करोड़ की कमी रही जबकि सन् १९५४ में यह कमी ५३ करोड़ रुपये मूल्य की थी।

खेतिहर उत्पादन में बढ़ोत्तरी के कारण कच्ची कपास, अनाज, खनिज तेल, रेशों आदि का आयात घट गया और साथ-साथ मशीनों, धातुओं, गाड़ियों, कच्चे पटसन आदि का आयात पहिले से बढ़ा है। देश में तेल साफ करने के कारखानों में काम शुरू हो जाने से आयात ही कम नहीं हुआ बल्कि थोड़ा निर्यात भी शुरू हो गया। पटसन के तैयार माल का निर्यात भी पहिले से बढ़ गया है। वनस्पति तेल कच्ची कपास और चमड़े का निर्यात भी बढ़ा। मैंगनीज के निर्यात में कुछ कमी जरूर रही।

इस वर्ष से भारत के विदेशी व्यापार में कुछ विविधता भी आ गई। यद्यपि संयुक्त राज्य और संयुक्त राष्ट्र अमरीका भारत के विदेशी व्यापार में अभी भी बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं परन्तु उनके द्वारा आयात-निर्यात का मूल्य पहिले से कम हो गया है।

भारत से निर्यात

	१९५४	१९५५
संयुक्त राज्य को	३१·३ प्र. श.	२७·४ प्र. श.
संयुक्त राष्ट्र अमरीका को	१५·२ प्र. श.	१४·८ प्र. श.

भारत में आयात

	१९५४	१९५५
संयुक्त राज्य से	२३·७	२४·७
संयुक्त राष्ट्र अमरीका से	११·९	१३·८

पश्चिमी जर्मनी, जापान, कीनिया, फ्रांस, ईरान और पाकिस्तान से आयात बढ़ा परन्तु इटली, मिश्र, साऊदी अरब और सिंहापुर से आयात घटा। जापान, कनाडा,

भारत से सूती कपड़ा, पटसन की बनी हुई वस्तुएँ, गुड़, लोहा व इस्पात, कोयला, चाय, सीमेंट, कागज आदि वस्तुएँ पाकिस्तान को निर्यात की जाती हैं। सन् १९५१ में भारत ने समुद्र व स्थल के रास्ते पाकिस्तान से ९८ करोड़ रुपये मूल्य का सामान मंगवाया और इसके बदले पाकिस्तान को ३२ करोड़ रुपये मूल्य का सामान भेजा। इस प्रकार भारत पाकिस्तान के व्यापार संतुलन में भारत को ६६ करोड़ रुपये की कमी रही।

भारत व पाकिस्तान के बीच व्यापार सन् १९५१ के व्यापारिक समझौते के अनुसार है। इसके अनुसार भारत कपास व पटसन, गाय की खालें व चमड़ा तथा अनाज पाकिस्तान से मंगवावेगा और इसके बदले पाकिस्तान को कोयला, सूती कपड़ा व सूत, रासायनिक पदार्थ, पटसन की वस्तुएँ, टायर, ट्यूब, चमड़ा व जूते, इस्पात, सीमेंट आदि भारत से भेजा जायेगा।

पाकिस्तान के विश्व ग्राहकों में भारत का तीसरा स्थान है। इसका प्रधान कारण पटसन है जिसे पाकिस्तानी निर्यात का राजा कहा जा सकता है। सन् १९५४ में भारत ने पाकिस्तान से १७ करोड़ ८५ लाख रुपये मूल्य का सामान खरीदा जिसमें केवल पटसन का मूल्य १२ करोड़ रुपये था।

परन्तु पाकिस्तान भारत का अच्छा ग्राहक नहीं है। सन् १९५४ में भारत से पाकिस्तान ने १० करोड़ ५१ लाख रुपये मूल्य का भी सामान नहीं खरीदा। परन्तु पाकिस्तान अदृश्य आयात पर अधिक खर्च करता है।

बर्मा—भारत के विदेशी व्यापार में बर्मा का भाग काफी अधिक है। भारत के कुल आयात का ५ प्रतिशत भाग बर्मा से होता है और भारत को माल भेजने वाले देशों में इसका चौथा स्थान है। भारत से बर्मा को केवल २ प्रतिशत माल ही भेजा जाता है। अतः व्यापार के दृष्टिकोण से भारत हानि में रहता है। बर्मा से अधिकतर चावल, खनिज तेल व सागौन की लकड़ी भारत में आती है और इन्हीं तीनों वस्तुओं में बर्मा के निर्यात व्यापार का ८५ प्रतिशत भाग हो जाता है। भारत से बर्मा को भेजी जाने वाली वस्तुओं में सूती कपड़े व पटसन की वस्तुएँ सबसे प्रमुख हैं। कुल निर्यात के ४० प्र. श. भाग के बराबर तो ये ही दो प्रकार की वस्तुएं हो जाती हैं और इनके अलावा लोहा व इस्पात, चाय, चीनी व कोयला भी भारत से बर्मा को जाते है। भारतीय कोयले का बर्मा सबसे अच्छा ग्राहक है।

सन् १९५१-५२ में भारत ने बर्मा से २३ करोड़ रुपये मूल्य का सामान मंगवाया और २० करोड़ रुपये का माल निर्यात किया। अभी हाल में भारत ने बर्मा को बीस करोड़ रुपये का कर्ज दिया है जिसकी शर्त है कि उस रुपये से भारत में माल खरीदा जायेगा। इससे दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़ेगा।

भारत का बर्मा के साथ व्यापार (लाख रुपये मूल्य में)

	१९४८-४९	१९४९-५०	१९५०-५१	१९५१-५२
निर्यात	२३,४०	१४,१७	१४,१८	२३,३४
आयात	१०,५६	१४,६२	२२,४६	१९,७५

लंका से भारत नारियल की गिरी, गोले का तेल व चाय आयात करता है। भारत से बगैर साफ किया चावल, सूती कपड़े, मछली और कोयला निर्यात किया जाता है। भारतीय कोयले का लंका दूसरा महत्त्वपूर्ण ग्राहक है। भारत से लंका को भेजी जाने वाली अन्य वस्तुएं दालें, फल, सब्जी, मिर्चें, खली व खाद हैं।

मसाले, गुड़, अंडे, सुखाई हुई मछली, बीड़ी और तम्बाकू, कोयला, खाद खपरैल, आदि में लंका की मंडी में भारत का एकाधिपत्य है। लंका में सूती कपड़ों, प्याज, खोखले वर्तन, जूते, सिनेमा फिल्म, ग्रामोफोन के रिकार्ड तथा छपी हुई पुस्तकों की मांगपूर्ति का प्रधान स्रोत भी भारत ही है। सन् १९५५ के प्रथम सात महीनों में भारत से निर्यात की दिशा इस प्रकार थी:—

वस्तु	मात्रा	मूल्य (रुपये)
सूती कपड़े	२४० लाख गज	२८० लाख
सुखाई हुई मछली	१७५,९३१ हन्डरवेट	१६० ,,
मसाले	२१०,३१५ ,,	१४·४ ,,
चावल	३५८,०५० ,,	८१ ,,
दाल	२८८,९८६ ,,	६० ,,
बीड़ी	१२२९,५२९ पौंड	५४ ,,
कोयला	७८,२३५ टन	४७ ,,
प्याज	३४९,३८४ हन्डरवेट	४५ ,,
चीनी	१८८,२३६ ,,	३८ ,,
खपरैल	१२३ लाख	२३ ,,
अंडे	१२० ,,	१३ ,,
सिनेमा फिल्म	२४ लाख फुट	१३ ,,
गुड़	८२,१६२ हन्डरवेट	१५ ,,
रबड़ के टायर ट्यूब	७९,०००	१८ ,,
पटसन के वस्त्र	१७ लाख गज	११ ,,
पोर्टलैण्ड सीमेन्ट	२०१,१७७ टन	११ ,,
जूते	१०,१३४ दर्जन जोड़े	७ ,,
तम्बाकू	२७६,७७४ पौंड	६ ,,
तांबे और पीतल की चीजें	९५,२८२ हन्डरवेट	५ ,,
रसोई के वर्त्तन	९,३७३ ,,	४ ,,
किताबें	५२२,५०७	४ ,,

इसी काल में भारत ने लंका से जो वस्तुयें मंगवाई उनका व्योरा इस प्रकार है—

	मात्रा	मूल्य (रुपये)
नारियल की गिरी	२३,११९ टन	२१० लाख
नारियल का तेल	१४८,४७२ हन्डरवेट	९६ ,,

	मात्रा	(मूल्य रुपये)
अरेकानट	६६,४०१ ,,	३२ लाख
तम्बाकू	७६८,७०० पौंड	१३ ,,
काटा हुआ नारियल	१०,६२७ हन्डरवेट	५ ,,
अन्य तेल	६८,००० पौंड	५ ,,
चमड़ा व खालें	३,६८६ ,,	४ ,,
रवड़	१७३,००० पौंड	३ ,,
ग्रेफाइट	५,६६१ हन्डरवेट	१ ,,
मसाले	६१० ,	१ ,,
कोको की फली	३०० ,,	१ ,,
वहुमूल्य पत्थर व मणि	७१,००० कैरट	३२ हजार
पपेन	१४ हन्डरवेट	१२ हजार

परन्तु भारत में उद्योग-धंधों के विकास के साथ-साथ लंका से आने वाली सामग्री की मात्रा तथा आयात के मूल्य में वढ़ोत्तरी होने की आशा है। भारत के वढ़ते हुये सावुन तथा तेल-फुलेल उद्योग में गिरी, नारियल के तेल तथा अन्य तेलों की खपत हो सकती है। भारत के पेंसिल, रंग तथा वैटरी उद्योग के लिये लंका के ग्रेफाइट का अधिकाधिक आयात होने की संभावना है। भारतीय मिठाई व औषधि उद्योग की वढ़ती हुई मांग पूर्ति के लिए काटा हुआ नारियल, कोको की फली तथा पपेन का और अधिक आयात होगा। भारत में कच्चे रवड़ की कमी को भी लंका से आयात द्वारा पूरा किया जा सकता है। अतः भारत के औद्योगीकरण के साथ भारत में लंका से आयात की मात्रा वढ़ जावेगी।

जापान—इधर कुछ दिनों से भारत से जापान को निर्यात वरावर घटता जा रहा है। सन् १६५१-५२ में भारत-जापान व्यापार संतुलन में भारत को हानि रही। भारत ने जापान को १४ करोड़ रुपये मूल्य की वस्तुएँ निर्यात कीं और जापान से २५ करोड़ रुपये मूल्य की वस्तुएँ मंगवाईं। सन् १६५२-५३ में व्यापार संतुलन भारत के पक्ष में रहा है। भारत से ३२ करोड़ रुपये का सामान जापान गया और केवल १६ करोड़ रुपये का माल आयात किया गया। जापान से भारत में सूती कपड़े, कृत्रिम रेशम, रेशमी वस्त्र, ऊनी कपड़े, शीशा व शीशे के वर्त्तन, लोहे व इस्पात की मशीनें व यन्त्रादि, मिट्टी व चीनी के वर्त्तन, खिलौने, खेलकूद की चीजें, कांटा-छुरी आदि, रासायनिक पदार्थ, कागज व लिखने पढ़ने का सामान, रेशम, रवड़ की वस्तुएं, विजली के यन्त्र व औजार, रंग व वार्निश आदि वस्तुएं मंगाई जाती हैं। भारत से जापान को कपास, पिग आयरन, मैंगनीज, पटसन (कच्चा व तैयार) अभ्रक व चमड़ा निर्यात किया जाता है। जापान में आयात की हुई वस्तुओं का एक चौथाई भाग सिर्फ कपास का होता है।

पश्चिमी जर्मनी—साधारण समय में भारत जर्मनी से लोहा व इस्पात, पीतल व तांवा, लोहे के सामान, मशीनें, कलपुर्जे, शीशे के सामान, शराव, कागज, ऊनी

कपड़े, नमक व कम्बल आदि वस्तुएँ मंगवाया करता है। इसी प्रकार भारत से जर्मनी को निर्यात होने वाली वस्तुओं में कच्चा पटसन, अनाज, दाल, आटा, कपास, तिलहन, चमड़ा व खालें, लाख, नारियल की जटा की निर्मित वस्तुएँ, हड्डियाँ व सन का स्थान प्रमुख है। कुल निर्यात का एक चौथाई भाग केवल पटसन का होता है।

सन् १९४६ के जुलाई महीने में भारत व पश्चिमी जर्मनी के बीच एक व्यापारिक समझौता हुआ जिसके अनुसार निम्नलिखित वस्तुओं का आयात व निर्यात होगाः—

जर्मनी को निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ:—

(१) खेतिहर उपज—मूंगफली, चर्बीदार एसिड, मूंगफली का तेल, औद्योगिक अलसी और मसाले।

(२) चमड़ा व खालें—गाय की खालें, भैंस की खालें, बकरी की खालें, कच्चा चमड़ा, चमड़ा साफ करने की वस्तुएँ और चमड़े की कतरन।

(३) धातुएँ—मैंगनीज।

(४) रासायनिक पदार्थ व संबंधित वस्तुएँ—अभ्रक, नीबू की घास का तेल, चन्दन का तेल, कराया गोंद, इलमिनाइट, कास्टिक, मैंगनेसाइट।

(५) औषधियों की जड़ें—सनाई की पत्ती व फल, नक्स वामिक, नक्स अफ्रीका फेनल, इफीडरा, सरकुमा।

(६) अन्य वस्तुएँ—लाख की छड़ी और चपड़ा, वगैर साफ की गई ग्लेसरीन, रेंडी और मैंगनीज़ डाइआक्साइड।

(७) कपड़ा बनाने की वस्तुएँ—पटसन, जूट के रेशे, नारियल की जटा का रेशा व सूत, सूअर के बाल, गाय, बैल, भैंस के पूंछ के बाल, ऊन और कपास।

जर्मनी से आयात की वस्तुएँ:—

(१) रासायनिक पदार्थ और संबंधित वस्तुएँ—कोलतार के रंग, दवाइयां, सोडियम सलफाइड, ज़िन्क ऑक्साइड, एसिटिक और फार्मिक ऐसिड, सोडियम सलफड्रेट, वस्त्र व्यवसाय और रंगों के उद्योग के रसायन, ओइलिक ऐसिड, टिलोज और उससे प्राप्त वस्तुएँ रांगालिट (Rongalit), इगेपान टी पाउडर, (Igepon T powder), ऑक्सीजन निरोधक वस्तुएँ, उत्तेजक वस्तुएँ, फोटो खींचने का कागज, लिथोफोन, टिटानियम डाइऑक्साइड, बेंजील अलकोहल, बेंजील एसीटेट, बेंजोएट, सोडियम बेलजोट, (Lacquers) के लिये कृत्रिम कच्चा माल, ट्रिचलोरेथलीन (Trichlorethylene), प्लास्टिक बनाने की वस्तुएँ, रासायनिक प्रतिक्रियक वस्तुएँ,—प्रयोगशालाओं के लिये और कृत्रिम कपूर बनाने के लिये।

(२) शीशे के बर्तन—चद्दरों व प्लेटों के शीशे।

(३) मशीनें व धातु की वस्तुएँ—वस्त्र बनाने की मशीनें, कल पुर्जे, भारी हल व उनके भाग, छपाई की मशीनें, ट्रैक्टर, कागज बनाने की मशीनें, लोहे के कारखाने के भाग व मशीनें, औद्योगिक सिलाई की मशीनें, बिजली की मोटरें, टरबाइन जो भाप से चलते हैं और उनके कल-पुर्जे, बिजली उत्पादक यन्त्र, मोटर गाड़ियों के

भाग, लोहे की वस्तुएँ, भूसा काटने की मशीनें, डीज़ल इंजन व अन्य प्रकार की मशीनें।

(४) बिजली का सामान—बिजली से उपचार की मशीनें, इस्पात के ट्यूबदार खम्भे, कारबन के ब्रूश, तार, बिजली लगाने का सामान, टेलीफोन का सामान।

(५) प्रयोगशालाओं व डाक्टरों के यन्त्र—खुर्दबीन, आँख से देखने के यन्त्र, दूरबीन, एक्सरे का कैमरा, फोटो खींचने का समान, सर्वे करने व चश्मे के यन्त्र, चश्मों के भाग, रेखा-चित्र बनाने के यन्त्र, चीरफाड़ करने के यन्त्र, औद्योगिक घड़ियाँ, सिनेमा की मशीनें और अन्य विविध प्रकार के यन्त्रादि।

(६) लोहा व इस्पात—इस्पात की रोल की हुई वस्तुएँ—

भारत और पश्चिमी जर्मनी के बीच व्यापार

(लाख मार्क में)

वर्ष	जर्मनी से भारत को निर्यात	जर्मनी में भारत से आयात
१९३८	१०६५	१४१९
१९५०	७३९	१०४३
१९५१	२१३७	१२०४
१९५२	२२७२	१२४९
१९५५	२७६८	१६६३
१९५४	३७३१	१५२७
१९५५(प्रथम ६ माह)	२६९१	१३०७

संयुक्त राष्ट्र अमरीका—अमरीका के साथ भारत के व्यापार संतुलन में भारत हमेशा लाभ में रहा है। परन्तु इधर कुछ दिनों से निर्यात की अपेक्षा भारत में आयात अधिक होता है। भारत से संयुक्त राष्ट्र को निर्यात की जाने वाली मुख्य वस्तुएँ पटसन व पटसन की वस्तुएँ चमड़ा व लाख, चाय, चमड़ा व खालें, दरियाँ व कालीन, ऊन, चमड़ा, बगैर साफ किए गए फर और अभ्रक हैं। संयुक्त राष्ट्र से भारत में आयात की मुख्य वस्तुएँ, गेहूँ व रोटी के अन्य अनाज, अन्य भोजन की वस्तुएँ, रसायन, मशीनें, अनिर्मित तम्बाकू, धातुएँ व धातुओं की बनी हुई चीजें, खनिज तेल व उससे उत्पन्न वस्तुएँ, सूती वस्त्र व कपास हैं। भारत में इस समय निर्यात की अपेक्षा आयात की अधिकता का मुख्य कारण यह है कि भारत को अनाज बहुत अधिक मात्रा में मंगवाना पड़ता है। अतः भारत-संयुक्तराष्ट्र के बीच व्यापार संतुलन भारत में अनाज व मशीनों आदि की आवश्यकता तथा भारत से वस्तुओं की निर्यात शक्ति पर निर्भर रहेगा।

संयुक्त राष्ट्र से आयात का मूल्य (रुपयों में)		संयुक्त राष्ट्र को निर्यात का मूल्य (रुपयों में)	
१९४९-५०	९४·४१ करोड़	१९४९-५०	७९·७६ करोड़
१९५०-५१	११५·८२ ,,	१९५०-५१	११०·१० ,,
१९५१-५२	२८७·९१ ,,	१९५१-५२	१२९·९३ ,,
१९५२-५३	१८१·३२ ,,	१९५२-५३	११८·८९ ,,

सन् १९५२-५३ में भारत के आयात का सब से अच्छा स्रोत संयुक्त राष्ट्र अमरीका रहा है और भारत के ग्राहकों में उसका दूसरा स्थान है। सन् १९५३ में संयुक्त राष्ट्र से आयात में कमी के कारण व्यापार संतुलन भारत के अनुकूल रहा। ऐसा सन् १९४९ के बाद पहली बार हुआ। संयुक्त राष्ट्र अमरीका से आयात में कमी प्रधानतया अनाज, बिजली की मशीनें, तांबा, जस्ता तथा मोटरगाड़ियों की मांग में कमी के कारण रही है। भारत से संयुक्त राष्ट्र अमरीका को निर्यात की वस्तुओं पटसन, गोंद, ऊन तथा मसाले की मात्रा में भी कमी हो गई है। सन् १९५३ में भारत के अनुकूल व्यापार संतुलन का मूल्य ७६ लाख डालर रहा।

भारत के व्यापारिक समझौते—भारत ने कई देशों के साथ व्यापारिक समझौते किए हैं। भारत की विदेशी व्यापार नीति में इन समझौतों का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत सरकार की नीति यह है कि मुद्रा-विनिमय पर अधिक भार न दिया जाय और भारत की उपज के बदले आवश्यक वस्तुओं का विदेश से आयात किया जाय। यह समझौते साधारणतया दो प्रकार के हैं—(१) इन में दोनों देशों को वस्तु व मात्रा के विवरण द्वारा बांध दिया जाता हैं और (२) इनमें केवल व्यापार सुविधा प्रदान करते हुए आपस में समझौता हो जाता है। हाल में भारत ने चैकोस्लोवाकिया, मिश्र, फिनलैंड, जर्मनी, हंगरी, जापान, पाकिस्तान, पोलैंड, स्विटजरलैंड, रूस और यूगोस्लाविया के साथ व्यापारिक समझौते किये हैं। इन समझौतों की सहायता से भारत को वैज्ञानिक वस्तुएँ, अखबारी कागज, इस्पात की वस्तुएँ व मशीनें आदि उपलब्ध हो सकेंगी।

सन् १९४९ में भारत और पौलैंड के बीच एक व्यापारिक समझौता हुआ। इसके अनुसार भारत पोलैंड से मशीन के पुर्जे, रेल के डिब्बे, ट्रेक्टर, रसायन, खेती की मशीनें आदि मंगवायेगा। हाल में भारतीय रेलों के लिए २६०० बन्द माल ढोने के डिब्बों का आर्डर दिया गया है। इसके बदले में भारत से कच्चा लोहा, चमड़ा, चाय, सुखाई हुई खालें, कहवा आदि पोलैंड जायेगा।

भारत और नेदरलैंड की आर्थिक विशेपताओं के अनुसार दोनों देशों के बीच व्यापार बराबर बढ़ रहा है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट हो जायेगा—

(लाख रुपये)

वर्ष	नेदरलैण्ड से आयात	नेदरलैंड से निर्यात
१९४७-४८	२९७८९	५८२८२
१९४८-४९	५४६३३	७२४५५
१९४९-५०	४९६३४	७३३११
१९५०-५१	६६७७९	९५५०४
१९५१-५२	१०९७८८	७७३२२
१९५२-५३	१०८०३१	१०२४८०
१९५३-५४	११३०४२	६५३१७

नेदरलैंड में कच्चे माल की कमी है परन्तु वहाँ शिल्प उद्योग काफी विकसित हैं। इसलिए भारत से वहाँ कच्चा माल या अधूरी बनी हुई चीजें मंगवाई जाती हैं। नेदरलैंड का वस्त्र उद्योग इस दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। भारत से वहाँ कपास, ऊन, पटुआ, सूत, नारियल की बनी रस्सी, पटसन आदि भेजा जाता है। भारत से खनिज पदार्थ भी भेजे जाते हैं। सन् १९५४ में २० लाख रुपये मूल्य के खनिज भेजे गए। प्रतिवर्ष नेदरलैंड भारत से कोई २५० टन चमड़ा भी आयात करता है। नेदरलैंड से भारत में आयात की गई विभिन्न वस्तुओं का प्रतिशतांश इस प्रकार है—

अधूरी बनी वस्तुएँ	३३ प्र. श.
दैनिक उपभोग की वस्तुएँ	२४ प्र. श.
खाद्य पदार्थ	१४ प्र. श.
खनिज तेल की वस्तुएँ	१३ प्र. श.
मशीनें	१२ प्र. श.
खेती की आवश्यक वस्तुएँ	३ प्र. श.
गाड़ियाँ	१ प्र. श.

फ्रांस और भारत के बीच व्यापार का मूल्य सन् १९४९ में ७९ लाख पौंड था और सन् १९५४ में १९० लाख पौंड हो गया। सन् १९५५ के प्रथम ६ महीनों में दोनों देशों के बीच व्यापार का मूल्य १२४ लाख पौंड हो गया।

भारत में फ्रांस से आने वाली प्रधान वस्तुएँ लोहे व इस्पात का सामान, रेल के इंजन व डिब्बे, रसायन, सूत, मशीनों के कल पुर्जे आदि हैं। इसके विपरीत भारत से कहवा, चाय, तम्बाकू, मसाले, चमड़ा साफ करने की वस्तुएँ मैंगनीज, कच्चा लोहा, अभ्रक, खाल व चमड़ा, कच्ची कपास आदि फ्रांस भेजी जाती है।

भारत और आस्ट्रेलिया की आर्थिक दशा प्रायः एक-सी हैं। आस्ट्रेलिया से निर्यात की प्रधान वस्तुएँ ऊन, गेहूँ, मांस, आधार धातुएँ, दुग्धशाला की वस्तुएँ तथा फल हैं। सन् १९४९-५० के बाद के तीन वर्षो में भारत के साथ आस्ट्रेलिया के कुल व्यापार का मूल्य ६० करोड़ के आस-पास था परन्तु पिछले दो वर्षों में यह घट कर ३२ करोड़ ही रह गया है। इस कमी का प्रधान कारण यह था कि भारत खाद्यानों के उत्पादन में बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो गया और विश्व की अन्य मंडियों में माल उपलब्ध हो गया। भारत-आस्ट्रेलिया व्यापार का मुख्य कारण यह है कि भारत और आस्ट्रेलिया की वस्तुएँ एक दूसरे की पूरक हैं न कि स्पर्धाजनक। भारत से आस्ट्रेलिया पटसन के बोरे मंगवाता है और उनमें गेहूँ भर कर भारत भेजता है। इसी प्रकार आस्ट्रेलिया से भारत केसीन मंगवाता है और उसकी सहायता से प्लाइवुड के बक्स तैयार किये जाते हैं जिनमें भर कर चाय निर्यात की जाती है।

भारत से आस्ट्रेलिया को निर्यात की प्रधान वस्तुओं में पटसन और सूती वस्त्रों का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण है। इसके बाद चाय, वनस्पति तेल, कच्चे रेशे और तम्बाकू का स्थान आता है। सन् १९५४-५५ में ४ करोड़ रुपये मूल्य का कपड़ा निर्यात किया गया। तम्बाकू का भी निर्यात बढ़ रहा है।

कुछ वर्ष पहिले आस्ट्रेलिया से भारत में आयात की जाने वाली वस्तुओं में ६० प्रतिशत गेहूँ का आटा होता था परन्तु अब यह केवल ५० प्रतिशत रह गया है। परन्तु सीसा, जस्ता, दूध तथा उससे बनी वस्तुओं का आयात पहिले से दुगना हो गया है।

भारत में उद्योग धंधों के विकास के साथ-साथ भारत से पटसन की दरी, सिलाई मशीनें, सिगरेट का कागज तथा लालटेनें भी आस्ट्रेलिया को जाने लगी हैं। इसी प्रकार आस्ट्रेलिया से भारत में खेती की, खान खोदने की मशीनें आदि आने लगी हैं।

भारत और कनाडा के बीच व्यापार की विशेषता यह है कि भारतीय माल की कनाडा में मांग दिन पर दिन बढ़ रही है। सन् १९५४-५५ के आंकड़ों के अनुसार भारत से कनाडा को निर्यात का मूल्य १७·३७ करोड़ रुपये था और भारतीय निर्यात की मंडियों में कनाडा का चौथा स्थान है। इसके विपरीत इसी बीच में भारत ने कनाडा से १०·१३ करोड़ रुपये मूल्य का माल आयात किया और भारत को निर्यातक देशों में कनाडा का चौदहवां स्थान है तथा कनाडा के निर्यात की मंडियों में भारत का १७वां स्थान है। कनाडा में आयात के स्रोत देशों में भारत का छठा नम्बर है।

कनाडा भारत से प्रधानतया कच्चा माल और खाद्य पदार्थ प्राप्त करता है। सन् १९५४ में कनाडा को भारत से निर्यात की दिशा इस प्रकार थी—

चाय	५·१ करोड़ रुपये
पटसन की वस्तुएँ	४·४ ,, ,,
मूंगफली	१·० ,, ,,

इसके अलावा मसाले, सूती वस्त्र, दरियाँ गलीचे आदि भी यहाँ से कनाडा भेजे जाते हैं। भविष्य में भारत से कनाडा को निर्यात में वृद्धि होने की ही आशा है। सन् १९५५ के प्रथम ६ महीनों में इससे पिछले वर्ष की अपेक्षा कनाडा ने ३० प्रतिशत अधिक आयात किया।

इसके विपरीत भारत में कनाडा से आने वाली चीजें बराबर घटती जायेंगी। सन् १९५४ में भारत ने कनाडा से १½ करोड़ रुपये मूल्य का गेहूँ मंगवाया परन्तु यह मात्रा बराबर घटती ही जाएगी। इसी वर्ष भारत में ९० लाख रुपए मूल्य का अखबारी कागज कनाडा से मंगवाया गया परन्तु यह भी धीरे-धीरे कम होती जाएगी क्योंकि कनाडा में इसकी घरेलू खपत बढ़ रही है। हाँ, कनाडा से धातुएँ मंगाई जा सकती हैं परन्तु उनमें भी एक कठिनाई है कि भारत में डालर की कमी के कारण इनके आयात पर ज्यादा जोर नहीं दिया जाता।

फलतः भारत-कनाडा का व्यापार भारत के अनुकूल ही रहता है।

भारत का सीमांत व्यापार—पाकिस्तान, नेपाल, तिब्बत और चीन के साथ भारत का व्यापार सीमांत थल-मार्गों द्वारा होता है। इन देशों से भारत अनाज, पटसन, फल, ऊन, जिन्दा जानवर, कच्चा रेशम मंगवाता है और बदले में सूती कपड़े,

चीनी, चमड़े का सामान, चाय, रेशमी कपड़े, लोहे व इस्पात की वस्तुएँ व नमक निर्यात किया जाता है।

भारत का सीमान्त थल व्यापार
(करोड़ रुपये में)

प्रदेश	आयात			निर्यात		
	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५
पाकिस्तान	२१·२	१९·०	१८·७	१७·४	६·२	४·९
अफगानिस्तान	३·९	३·९	४·६	१·४	१·२	०·८
ईरान	—	—	—	—	—	—
बर्मा	—	०·१	—	—	०·१	—
कुल योग	२५·२	२३·०	२३·३	१८·८	७·५	५·७

भारत का पुनर्निर्यात व्यापार—भारत में पुनर्निर्यात व्यापार भी बहुत अधिक होता है। देश में बहुत-सी आयात की गई वस्तुएँ फिर से समीपवर्ती देशों को निर्यात कर दी जाती हैं। वास्तव में भारत बहुत-सी वस्तुओं को सिर्फ इसलिए मंगवाता है कि उन्हें आस-पास के देशों को भेज सके। इस दृष्टि से भारत की भौगोलिक स्थिति बड़ी ही महत्त्वपूर्ण है। भारत पूर्वी गोलार्द्ध के केन्द्र में स्थित है और इसलिए वह कीनिया, पूर्वी अफ्रीका, जापान, स्ट्रेटस सैटलमैंटस और चीन को फिर से निर्यात वितरण के लिए पश्चिमी देशों से कपास, रासायनिक पदार्थ, मशीनें, खनिज व धातुएँ आयात करता है।

प्रश्नावली

१. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में भारत का क्या स्थान है? भारत के विदेशी व्यापार में वृद्धि करने के उपाय बतलाइए।

२. भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताएँ बतलाइये।

३. सामुद्रिक व्यापार के दृष्टिकोण से भारत की संसार में क्या स्थिति है? समझाकर लिखिए और हाल में वायु-यातायात के विकास से भारत के व्यापार पर क्या असर पड़ेगा।

४. भारत व संयुक्त राष्ट्र अमरीका के बीच आयात निर्यात व्यापार का वर्णन कीजिए। इस व्यापार को किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है?

५. भारत के मिल कारखानों में तैयार की हुई वस्तुओं का निर्यात अरब, ईराक, ईरान व अफगानिस्तान को किया जा सकता है। विविध वस्तुओं की मांग को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार के व्यापार के विकास की संभावनाएँ बतलाइये?

६. भारत के सीमान्त प्रदेशों के साथ देश के व्यापार का वर्णन कीजिए और बतलाइये कि इसमें कैसे वृद्धि की जा सकती है ?

७. भारत और मध्य पूर्व के बीच व्यापार की क्या संभावनाएँ हैं ? क्या भारतीय वस्तुओं के लिए मध्यपूर्व की मंडियों में पर्याप्त क्षेत्र है ?

८. भारत के थल-मार्गों से किन वस्तुओं का व्यापार होता है ? उसमें विकास व वृद्धि के उपाय बतलाइये। इस व्यापार में भाग लेने वाले देश कौन-से हैं ?

९. भारत के विदेशी व्यापार पर एक लेख लिखिए और बतलाइये कि भारत कौन-सी वस्तुएँ और कहाँ से आयात करता है और भारत से कौन पदार्थ कहाँ भेजे जाते हैं ?

१०. भारत और ग्रेट ब्रिटेन के आयात-निर्यात व्यापार का विवरण दीजिए और बतलाइये कि दूसरे महायुद्ध से इस पर क्या प्रभाव पड़ा है ?

११. भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताओं का निरूपण कीजिए और बतलाइए कि आयात निर्यात व्यापार पर देश के विभाजन का क्या प्रभाव पड़ा है ?

बन्दरगाह व व्यापार केन्द्र

किसी देश की औद्योगिक उन्नति का अन्दाज वहाँ के नगरों की संख्या से लगाया जा सकता है। भारत का मुख्य पेशा खेती है और अधिकतर लोग खेती द्वारा ही अपना बसर करते हैं। इसीलिए भारत के गाँवों व शहरों की आवादी में संख्या का बड़ा अन्तर रहता है। भारत की कुल जनसंख्या का केवल १५ प्रतिशत भाग नगरों या उनके आसपास के भागों में पाया जाता है। भारत में ५,००,००० के लगभग जनसंख्या वाले प्रदेशों को कस्वा कहते हैं और १ लाख से ऊपर आवादी वाले कस्वों को शहर कहते हैं।

भारत में नगर में निवास करने वाली जनसंख्या का विन्यास

राज्य	नागरिक जनता का प्रतिशत	राज्य	नागरिक जनता का प्रतिशत
वम्बई	२४	विहार	५
पश्चिमी वंगाल	२२	मध्य प्रदेश	११
मद्रास	१६	दिल्ली	७८
उत्तर प्रदेश	१२	अजमेर	३७
पूर्वी पंजाव	१५	सौराष्ट्र	२५
आसाम	३	पेप्सू	१५
हैदरावाद	१३	काश्मीर	१०
मैसूर	१८	हिमाचल प्रदेश	३

भारत में १ लाख से अधिक पर २ लाख से कम और दूसरे २ लाख से अधिक जनसंख्या वाले केवल ४६ शहर हैं। उनके नाम व प्रदेश निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाएँगे :

भारत में २ लाख या अधिक जनसंख्या वाले नगर

नगर	जनसंख्या	नगर	जनसंख्या
कलकत्ता	३१,०६,०००	वनारस	२,६३,०००
हावड़ा	३,७६,०००	कानपुर	४,८७,०००
अहमदावाद	५,६१,०००	लखनऊ	३,८७,०००
वम्बई	२८,४०,०००	इलाहावाद	२,६१,०००
पूना	२,५८,०००	अमृतसर	३,६१,०००
शोलापुर	२,१३,०००	नागपुर	३,०२,०००
मद्रास	१४,२६,०००	दिल्ली	१६,४३,०००
मदुरा	२,३६,०००	वंगलौर	२,४८,०००
श्रीनगर	२,०८,०००	हैदरावाद	७,३६,०००
आगरा	२,८४,०००	इंदौर	२,०४,०००

२ लाख से कम जनसंख्या के नगर

नगर	जनसंख्या	नगर	जनसंख्या
भाटपारा	१,७७,०००	गया	१,०५,०००
सूरत	१,७१,०००	जमशेदपुर	१,४६,०००
कालीकट	१,२६,०००	पटना	१,७६,०००
कोयम्वटूर	१,३०,०००	जवलपुर	१,७८,०००
सलेम	१,३०,०००	अजमेर	१,४७,०००
त्रिचनापली	१,६०,०००	बड़ौदा	१,५३,०००
वरेली	१,८३,०००	भावनगर	१,०३,०००
झांसी	१,०३,०००	वीकानेर	१,२७,०००
अलीगढ़	१,१३,०००	जयपुर	१,७६,०००
मेरठ	१,६६,०००	जोधपुर	१,२७,०००
मुरादावाद	१,४२,०००	कोलार (सोने की खान)	१,३४,०००
सहारनपुर	१,०८,०००	लश्कर (ग्वालियर)	१,८२,०००
शाहजहांपुर	१,१०,०००	त्रिवेंद्रम	१,२८,०००
जालंधर	१,३५,०००	मैसूर	१,५७,०००
लुधियाना	१,१२,०००		

प्रमुख वन्दरगाह

वर्तमान काल में किसी देश के समुद्री व्यापार में वन्दरगाहों का वड़ा महत्त्व-पूर्ण स्थान है। वन्दरगाह वे मिलन-विन्दु हैं जहां कई व्यापारिक मार्ग—विदेशी व आंतरिक—आकर मिलते है और वाहर से आया हुआ माल अथवा देश से निर्यात होने वाला माल स्थानान्तरित किया जाता है। रेल, नाव्य जल-मार्गों व सड़कों की सहायता से देश के निर्यात का माल अन्दर के भागों से लाकर वन्दरगाहों में इकट्ठा किया जाता है और देश में वाहर से मंगाया हुआ माल इन्हीं साधनों की सहायता से देश के सव भीतरी भागों को भेज दिया जाता है।

वन्दरगाह का महत्व उसके पृष्ठ प्रदेश के विस्तार व उत्पादन शक्ति पर निर्भर रहता है। पृष्ठ प्रदेश उस सभी भूखण्ड को कहते हैं जिसकी उपज का निकास किसी विशेष वन्दरगाह द्वारा होता है। पृष्ठ प्रदेश का विस्तार यातायात के साधनों व सुविधाओं के अनुसार कम ज्यादा होता है। और पृष्ठभूमि का उत्पादन वहां की उपज वस्तुओं व जनसंख्या के घनत्व के आधार पर निर्धारित किया जाता है।

भारत में दो श्रेणी अथवा प्रकार के वन्दरगाह पाये जाते हैं—प्रधान व गौण। प्रधान व गौण वन्दरगाह के बीच निम्नलिखित वातों का अन्तर होता है—प्रधान वन्दरगाह में निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती है—

(१) पोताश्रय सुरक्षित होता है। (२) आवागमन के साधन सुविस्तृत होते हैं। (३) डाक, जेटी व लंगरस्थान का सुप्रवंध होता है। (४) स्थानान्तरण के लिये पर्याप्त सुविधाएं होती है। (५) रेलों व सड़कों द्वारा पृष्ठ प्रदेश के दूरस्थ स्थानों से

भी यातायात का प्रबंध होता है। (६) सुरक्षा व सैनिक दृष्टिकोण से वन्दरगाह उपयुक्त रहता है। (७) व्यापार व गमनागमन की अधिकता के कारण साल भर लगातार जहाजों की मांग रहती है।

भारत की तटरेखा ३,५०० मील लम्बी है और देश का विस्तार भी बहुत अधिक है। परन्तु उसकी तटरेखा बहुत कटी-फटी नहीं है और इसलिये उसके तट पर प्रधान या बड़े बन्दरगाह बहुत कम हैं। दक्षिणी भारत के बन्दरगाह के पोताश्रयों में आधुनिक विशालकाय जहाजों के खड़े होने के लिये पर्याप्त स्थान नहीं है। भारत के पश्चिमी तट पर मई से अगस्त तक मानसूनी हवायें इतनी प्रचंड रहती हैं कि बंबई व मरमागुआ को छोड़कर अन्य किसी भी बन्दरगाह का उपयोग नहीं हो सकता। पूर्वी किनारे पर लहरों द्वारा लाई हुई तथा नदियों द्वारा बहाई हुई बालू इकट्ठी हो जाती है। अतः समुद्र के पानी की पर्याप्त गहराई रखने के लिये बराबर झामो का प्रयोग करना पड़ता है।

बंबई, मरमागुआ, मंगलौर, टेलीचरी, माहे, कालीकट, कोचीन, तूतीकोरिन, नागापट्टम, पांडिचेरी, मद्रास, मसूलीपट्टम, विजगापट्टम, कोकानाडा और कलकत्ता भारत के प्रमुख बन्दरगाह हैं। परन्तु भारत के समुद्री व्यापार का ९० प्रतिशत से अधिक काम बंबई, कलकत्ता, कोचीन, मद्रास और विजगापट्टम के बन्दरगाहों द्वारा होता है। दक्षिणी भारत के बन्दरगाहों की पृष्ठभूमि सीमित है परन्तु अब रेलों व सड़कों द्वारा उनको विस्तृत करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भारत के समुद्री व्यापार का औसत २०० लाख टन प्रति वर्ष है और यहां के बन्दरगाहों में इससे अधिक काम हो भी नहीं सकता। यदि व्यापार को कुछ थोड़ा बहुत बढ़ाया भी जावे तो बन्दरगाहों में भीड़-भाड़ बढ़ जाती है। सन् १९५२-५३ में विभिन्न बन्दरगाहों द्वारा व्यापार के आंकड़े इस प्रकार हैं:—

	लाख टन		लाख टन
कलकत्ता	९६	कोचीन	१५
बंबई	७४	विजगापट्टम	१२
मद्रास	२१		

इन बन्दरगाहों में सामुद्रिक व्यापार के केन्द्रित होने के कई कारण हैं। भौगोलिक स्थिति के अतिरिक्त ऐतिहासिक प्राचीनता ने भी इनके व्यापारिक विकास में सहायता दी है। बंबई, मद्रास और कलकत्ता काफी समय से शासन के केन्द्र रहे हैं। फलतः वहां जनसंख्या का घनत्व बढ़ा और साथ-साथ व्यापारिक व औद्योगिक काम-धंधे का भी विकास हो चला। इसके अलावा १९ वीं शताब्दी के अन्त में रेलों का निर्माण इन्हीं बन्दरगाहों से शुरू किया गया। इस प्रकार राजनीति व यातायात के केन्द्रों से बढ़कर ये प्रमुख बन्दरगाह बन गये।

भारत के पश्चिमी तट के बन्दरगाह

काठियावाड़ के बन्दरगाह—ओखा, बेदीबन्दर, पोरबन्दर और भावनगर इस प्रदेश के प्रमुख बन्दरगाह हैं। बेदीबन्दर नाव नगर का एक छोटा-सा बंदरगाह है

परन्तु इसके द्वारा काफी तटीय व्यापार होता है। समुद्र छिछला है और इसलिये बड़े स्टीमर जहाजों को बन्दरगाह से २-३ मील दूर ठहरना पड़ता है। ओखा बड़ौदा राज्य में है और काठियावाड़ प्रायद्वीप के सुदूर उत्तरी पूर्वी सिरे पर इसकी स्थिति बड़ी ही अच्छी है। यद्यपि इस प्रदेश में समुद्र काफी गहरा है परन्तु बन्दरगाह तक पहुँचने का रास्ता बड़ा चक्करदार है। अतः जहाजों का चलाना बड़ा खतरनाक है। इसके अलावा यहां की जनसंख्या बहुत कम है और रेलों की कमी के कारण पृष्ठ प्रदेश अविकसित है। यह बन्दरगाह साल भर बराबर खुला रहता है और कर की कमी के कारण बहुधा बंबई से स्पर्धा करता है। यहां से तिलहन व कपास निर्यात किया जाता है और सूती वस्त्र व्यवसाय की मशीनें, मोटरगाड़ियां, चीनी व रासायनिक पदार्थ आयात किये जाते हैं।

इस समय काठियावाड़ कच्छ तट पर कोई भी प्रमुख बन्दरगाह नहीं है। करांची बन्दरगाह के पाकिस्तान में चले जाने से बम्बई और करांची के बीच के १००० मील लम्बे तट पर कोई भी ऐसा बन्दरगाह नहीं है जो इस पृष्ठ प्रदेश के व्यापार को कर सके। इसलिए भारत सरकार ने कांधला नामक एक छोटे से बन्दरगाह का विकास करने की योजना बनाई है। वास्तव में सन् १९४६ में ही भारत सरकार की बन्दरगाह समिति ने बम्बई और करांची के बीच एक बड़ा बन्दरगाह बनाने की आवश्यकता की ओर ध्यान दिलाया था। देश के विभाजन से यह आवश्यकता और भी प्रखर हो गई है क्योंकि करांची का बन्दरगाह हाथ से निकल गया। अतः सन् १९४८ में पश्चिमी तट पोताश्रय विकास समिति ने यह सिफारिश की कि कांधला में एक बड़ा बन्दरगाह बनाया जाये। कांधला का वर्तमान बन्दरगाह कच्छ राज्य के लिए सन् १९३० में बनाया गया था। यहां पर केवल एक जेटी है जिसमें साधारण विस्तार का केवल एक जहाज ही खड़ा हो सकता है। एक संकरी रेल इस को कच्छ के अन्य भागों से सम्बन्वित करती है। परन्तु इसमें विकास की पर्याप्त संभावनाएँ हैं।

कांधला एक समुद्री कटान पर बसा हुआ है और कच्छ की खाड़ी के पूर्वी सिरे पर स्थित है। अतः इसमें जहाज आसानी से आ-जा सकते हैं। और इसका पोताश्रय सुरक्षित एवं प्राकृतिक है। इसमें पानी की गहराई भी ३० फीट से अधिक है। इसलिए बड़े-बड़े समुद्री जहाज बड़ी आसानी से आ-जा सकते हैं। कांधला की समुद्री कटान के प्रवेश-द्वार पर एक रुकावट है—एक बालू की दीवार-सी है। इसके ऊपर से गहरी शाखा १३ फीट गहरी है और साल के किसी भी दिन ज्वारभाटे की कम से कम ऊँचाई १७ फीट रहती है। पिछले बीस साल में इस प्रदेश को गहरा करने की कभी भी जरूरत नहीं पड़ी। और बन्दरगाह की भौगोलिक स्थिति भी बड़ी उपयुक्त है। इसके द्वारा कच्छ, सौराष्ट्र, बम्बई के उत्तरी भाग, राजस्थान, पंजाब, काश्मीर और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के भागों की उपज का निकास उसी प्रकार से हो सकता है जिस प्रकार कराची से हुआ करता था। करांची की अपेक्षा कांधला से दिल्ली व हिसार के प्रदेश बहुत पास हैं। दिल्ली से कांधला ६५६ मील दूर है जब

कि कराची ७८३ मील और इस प्रकार हिसार कांधला की दूरी ६८८ मील और कराची ७३३ मील है। इनके अलावा कच्छ प्रदेश में औद्योगिक व खनिज वस्तुओं के विकास कि विशेष संभावनाएँ हैं। यहाँ पर मछली पकड़ने, सीमेंट व शीशा बनाने तथा जिप्सम, लिगनाइट और बाक्साइट निकालने का उद्यम काफी उन्नति कर
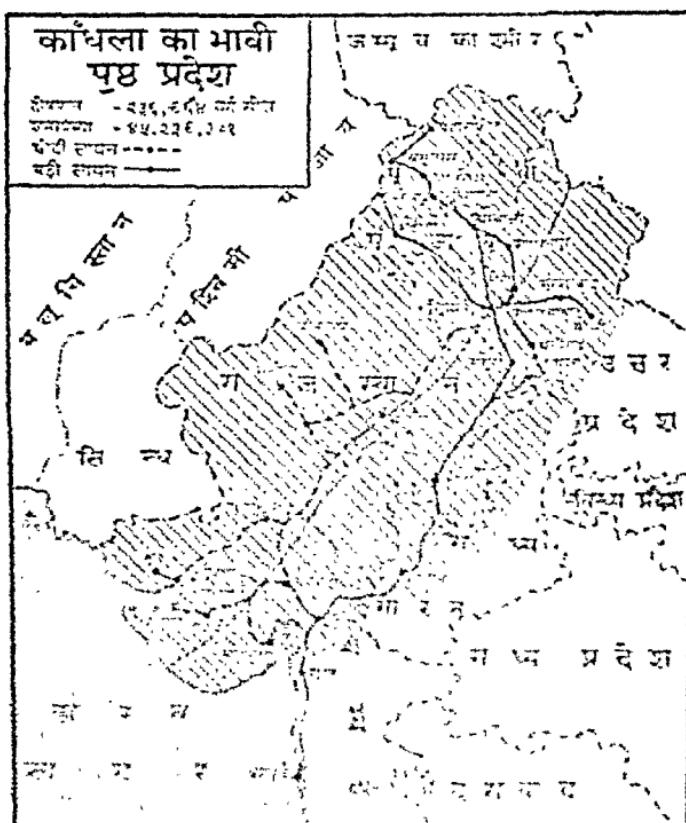
यह है कि यहाँ पर कई जगह पानी लोहा गलाने वाला है। इसलिए भाप से चलने वाले इंजनों का इस मार्ग पर चलना कठिन है। इस मार्ग के लिए विदेश से डीजल इंजन से चलने वाले इंजन मंगवाये गये हैं। इस समय भुज में एक हवाई अड्डा है और भारत सरकार कांधला में एक दूसरा हवाई अड्डा बनाने की सोच रही है।

सन् १९४९ से कांधला बन्दरगाह पर काम शुरू कर दिया गया। परन्तु विकास के कार्य में सब से बड़ी रुकावट जल की कमी की है। कच्छ एक सूखा प्रदेश है और वार्षिक वर्षा का औसत १२ इंच से अधिक नहीं है। इसलिए जल का प्रबन्ध होना बन्दरगाह के लिए बहुत जरूरी है। कांधला के आसपास वाले प्रदेशों में जमीन के नीचे जल की अपार जल-राशि है जिसे कुएँ खोद कर काम में लाया जा सकता है। इसके अलावा एक जलाशय भी है जिसमें ४४८० लाख घन फीट पानी इकट्ठा किया जा सकता है परन्तु केवल उसी साल जब अच्छी जलवृष्टि हो। अतः थोड़े प्रयत्न से इस असुविधा को काबू में लाया जा सकता है। साथ-साथ इस बन्दरगाह में पूर्ण विकास होने पर कई विलक्षण सुविधाएँ प्राप्त हो जायेंगी :—

(१) गहरे पानी में माल लादने-उतारने के चार स्थान।
(२) चार भंडार-गृह।
(३) बहाव में जहाजों के ठहरने के लिए ४ लंगर-स्थान।
(४) बड़े-बड़े टैंकर जहाजों के ठहरने का एक स्थान।
(५) छोटे-छोटे जहाजों के लिए एक तैरता हुआ शुष्क डाक।
(६) यात्री जहाजों पर चढ़ने उतरने का तैरता हुआ स्थान।

इन सुविधाओं की सहायता से इस बन्दरगाह से ८ लाख ५० हजार टन माल की उलट-फेर प्रतिवर्ष की जा सकेगी। इधर पानी की एक असुविधा भी बहुत कुछ दूर सी हो गई है। हाल में खोदे गए एक कुएँ से प्रति घण्टा ३५,००० गैलन पानी निकलता है।

कांधला बन्दरगाह सन् १९५६ में बनकर तैयार होगा। इसके बन जाने पर करांची की हानि की पूर्त्ति हो जाएगी। पूरा हो जाने पर इस बन्दरगाह पर ३० लाख टन माल प्रतिवर्ष लादा-उतारा जा सकेगा और यह मद्रास के बाद दूसरी श्रेणी का बन्दरगाह हो जाएगा। कांधला बन्दरगाह पर इस समय भी जहाज इत्यादि आते जाते हैं। इस समय यहाँ पर ८००,००० टन माल का हेर-फेर किया जा सकता है।

बम्बई—पश्चिमी घाट की तलहटी में बसा है। इसका पोताश्रय प्राकृतिक है और बिल्कुल समुद्र में स्थित है। बम्बई का पृष्ठ प्रदेश दक्षिण में हैदराबाद और पश्चिमी मद्रास से लेकर उत्तर में दिल्ली तक फैला हुआ है। इसके अन्तर्गत पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पूर्वी राजस्थान, मध्य प्रदेश, मध्य भारत और बम्बई राज्य सम्मिलित हैं। बम्बई शहर देश में दूसरे नम्बर का नगर है और इसकी उन्नति व महत्व का सबसे बड़ा कारण यह है कि यह यूरोप का सबसे समीपस्थ प्राकृतिक बन्दगाह है। पश्चिमी व मध्य रेलमार्गों द्वारा यह देश के सभी भीतरी भागों से घिरा हुआ है। भारत का सूती वस्त्र व्यवसाय बम्बई में ही केन्द्रित है। यद्यपि बम्बई से २०० मील

इर्द-गिर्द में न तो कोयला ही उपलब्ध है और न नाव्य जल-मार्गों की ही सुविधा है। फिर भी प्राकृतिक पोताश्रय होने के कारण बहुत अधिक व्यापार होता है। बम्बई की दूसरी सुविधा यह है कि इसका बन्दरगाह साल भर बराबर खुला रहता है। पश्चिमी भारत की सभी मुख्य उपज और विशेषकर दक्षिण की कपास के लिए बम्बई सबसे महत्त्वपूर्ण निकास द्वार है। यहाँ से तिलहन, ऊन व ऊनी वस्त्र, चमड़ा व खालें, मैंगनीज तथा अनाज निर्यात किया जाता है। देश में आयात किए गए सूती कपड़े, मशीनें, रेल के कल-पुर्जे, लोहा व इस्पात की वस्तुएँ, लोहे का सामान, चीनी, मिट्टी का तेल, रंग, कोयला और पेट्रोल आदि वस्तुएँ इसी बन्दरगाह पर आकर उतरती हैं।

सन् १९५२-५३ में बम्बई बन्दरगाह पर ५८ लाख टन आयात सामग्री आई और १७ लाख टन माल निर्यात हुआ। देश के विभाजन के बाद से करांची बन्दरगाह के पाकिस्तान में चले जाने से बम्बई बन्दरगाह का व्यापार बहुत अधिक हो गया है। सन् १९४७ के बाद से अब तक बम्बई में माल का हेर-फेर में १० लाख टन से अधिक बढ़ोत्तरी रही है।

बम्बई

चित्र ७०—बम्बई एक द्वीपस्थित बन्दरगाह है और प्रधान भूखंड से पुल द्वारा आने-जाने वाले रेल मार्गों की सहायता से सम्बन्धित है। बम्बई द्वीप का रूप एक पंजे के समान है—पंजे के दो बिन्दु तो मालाबार और कोलाबा बिन्दु कहलाते हैं और उनके बीच का रिक्त स्थान बैंक की खाड़ी से घिरा है।

मरमागुआ—कोनकन तट पर स्थित है और भारत के पुर्तगाली प्रदेश में मरमागुआ प्रायद्वीप के पूर्वी किनारे पर बसा है। इसके पृष्ठ प्रदेश के अन्तर्गत बम्बई का दक्षिणी भाग, हैदराबाद और मैसूर के क्षेत्र सम्मिलित हैं। यहाँ से निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ मैंगनीज, मूंगफली, कपास, नारियल आदि हैं।

कालीकट—कोचीन के ९० मील उत्तर में स्थित यह बन्दरगाह साल के कुछ ही महीनों में काम आता है। मानसूनी वर्षाकाल के शुरू में इस बन्दरगाह में जहाजों का आना-जाना बन्द-सा रहता है। तटीय समुद्र छिछला होने के कारण बड़े-बड़े जहाजों के लिए बिल्कुल बेकार है। इसी कारण जहाजों को तट से २ मील दूर लंगर

डालना पड़ता है। नारियल की जटा व उसके रेशे, गिरी कहवा, चाय, अदरक मूंगफली और मछली की खाद यहाँ से निर्यात की जाती है।

कोचीन—मद्रास राज्य में है और बम्बई व कोलम्बो के बीच सबसे महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह है। इसकी स्थिति इतनी अच्छी है कि इसके द्वारा दक्षिणी भारत की सारी उपज का निकास हो सकता है। बम्बई की अपेक्षा कोचीन अदन से ३०० मील पास पड़ता है। इसके तट के पीछे के भाग में तट रेखा के समानान्तर जलाशय फैले हुए हैं। इनके द्वारा कोचीन व ट्रावनकोर राज्यों में जलमार्गों की सस्ती व्यवस्था होती है। नारियल की जटा, सूत, चटाई व आसन, गिरी, नारियल का तेल, चाय और रबड़ यहाँ से निर्यात की जाती है। सन् १९५२-५३ में कोचीन बन्दरगाह से आयात निर्यात व्यापार की मात्रा १६,१५,४६३ टन थी। इनमें से १२ लाख टन तो आयात रहा तथा ३ लाख टन निर्यात। यह मात्रा सन् १९५१-५२ की अपेक्षा ३२,०१५ टन कम थी। इस कमी का प्रधान कारण खाद्यान्नों के आयात में १५०,००० टन की कमी है। यदि हम कुल आयात में से खाद्यान्नों के आयात की मात्रा १२,२४,८५१ टन निकाल दें तो अन्य व्यवसायिक आयात में १,१०,००० टन की वृद्धि स्पष्ट हो जायेगी। इसी प्रकार कोयले और तेल को अलग कर लेने पर निर्यात में भी ८००० टन की वृद्धि मालूम पड़ती है।

भारत के पूर्वी तट के प्रमुख बन्दरगाह

तूतीकोरिन—मद्रास राज्य का एक महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह है और भारत के प्रायद्वीप के दक्षिण पूर्वी भाग में सुदूर विन्दु पर स्थित है। इसका पोतश्रय छिछला है और इसी कारण झामों द्वारा इसे बराबर गहरा करना पड़ता है। यहाँ से कपास, चाय, सनाय की पत्तियाँ, इलाइची आदि वस्तुएँ बाहर भेजी जाती हैं। इस बन्दरगाह द्वारा लंका से काफी व्यापार होता है। सन् १९३८ में यहाँ से होने वाले विदेशी व्यापार का कुल मूल्य १० करोड़ रुपये था जिसमें से केवल ५ करोड़ ५ लाख रुपये का तो निर्यात व्यापार ही था।

चित्र ७१—मद्रास का पोताश्रय कृत्रिम है। अतः अक्तूबर-नवम्बर में चक्रवात (Cyclones) प्रचंडता के कारण जहाजों के आने जाने में बड़ी असुविधा रहती है।

मद्रास—देश का तीसरे नम्बर का शहर है और मद्रास राज्य का सबसे प्रमुख बन्दरगाह है। बम्बई, तूतीकोरिन, कालीकट व कलकत्ता से यह कई रेलमार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। यद्यपि मद्रास में कई प्रकार के उद्योग-धंधे हैं परन्तु व्यापार के दृष्टिकोण से कलकत्ता या बम्बई के

साथ इसकी कोई समता नहीं है। इसके पृष्ठ प्रदेश में संपूर्ण पूर्वी प्रायद्वीप का भाग सम्मिलित है परन्तु इस भाग में यूरोपियन देशों में मांग वाली वस्तुएँ अधिक नहीं होतीं। फिर कोरोमंडल व मालावार तट पर स्थित वहुत से छोटे-छोटे वन्दरगाह मद्रास के साथ स्पर्धा करते हैं। इसीलिए मद्रास से भारत का केवल ५ प्रतिशत व्यापार होता है। इसका पोताश्रय कृत्रिम है और इस कृत्रिम पोताश्रय के वनने से पहले मद्रास के तट पर लहरें टक्कर लेती थीं। यहाँ पर सूती कपड़े, लोहा व इस्पात, मशीनें, रंग, चीनी, चमड़े का सामान व कागज आदि वस्तुएँ आयात की जाती हैं। यहाँ से निर्यात की जाने वाली मुख्य वस्तुएँ तिलहन, कपास, कहवा, तम्वाकू, रवड़ व मछलियाँ हैं। यह एक औद्योगिक केन्द्र भी है परन्तु कोयले की कमी के कारण यहाँ विशेष असुविधा रहती है।

भारत के पूर्वी किनारे पर केवल मद्रास ही एक ऐसा वन्दरगाह है जिसमें २६ फीट की दूरी तक जहाज आ-जा सकते हैं। इस वन्दरगाह को तैयार करने में ३००० फीट की गहराई पर नीव डालकर दीवारें वनाई गई हैं। जिनसे २०० एकड़ जल प्रदेश को घेर लिया गया है। जव सन् १८६५ में यह पोताश्रय वन कर तैयार हुआ तो इसमें प्रवेश का केवल एक द्वार पूर्व की ओर था। इस प्रवेश द्वार से साल भर वरावर लहरें आती रहती थीं जिनके द्वारा माल के लादने-उतारने में वड़ी असुविधा होती थी। अतः सन् १६११ में इसके पोताश्रय को फिर से ठीक किया गया। इसके पुराने प्रवेश द्वार को वन्द कर दिया गया और जहाजों के आने जाने के वास्ते एक दूसरा मार्ग उत्तर की ओर खोल दिया गया तथा सुरक्षा के लिए एक दीवार-सी भी वना दी गई। इससे पोताश्रय में हर समय होने वाली असुविधा कम हो गई है। अव केवल भारी आँधियों में ही खतरा रहता है।

साधारणतया अक्तूबर-नवम्वर के महीने में वंगाल की खाड़ी में चक्रवात (Cyclones) उठते हैं और उनके प्रभाव से ११ फीट तक ऊँची लहरें उठने लगती हैं। गहरे समुद्र की लहरें किनारे तक पहुंचती-पहुंचती पानी में और हिलोरें पैदा कर देती हैं। ये हिलोरें पोताश्रय के समीप एक पानी की दीवार-सी खड़ी कर देती हैं और जहाजों को आगे-पीछे इतना हिलाती हैं कि वहुधा मजवूत से मजवूत रस्सियाँ भी टूट जाती हैं। इस प्रकार लंगर डाला हुआ एक जहाज भा रस्सी के टूट जाने पर अन्य जहाजों से टकराकर भारी हानि कर सकता है। इसलिए ऐसे मौसम में जहाजों को पोताश्रय छोड़ देने का आदेश दे दिया जाता है। इस प्रकार पूर्वी किनारे पर साल भर वरावर खुला रहने वाले एक वन्दरगाह की आवश्यकता है।

सन् १६५२-५३ में इस वन्दरगाह से २२ लाख टन का व्यापार हुआ जिसमें से निर्यात का मूल्य ३ लाख टन था और आयात १६ लाख टन।

विजगापट्टम—पिछले कुछ दिनों से इस वन्दरगाह का महत्व वहुत अधिक वढ़ गया है। तटीय व्यापार में लगे हुए सभी जहाज यहाँ रुक जाते हैं। कोरोमंडल तट पर मद्रास और कलकत्ता के लगभग वीच में यह वसा हुआ है। यह कलकत्ते से ५०० मील दक्षिण में है और मद्रास से ३२५ मील उत्तर में। मैंगनीज, मूंगफली,

मेरावोलन, चमड़ा व खालें यहाँ से निर्यात की जाने वाली मुख्य वस्तुएँ हैं। सूती कपड़े, लोहा, लकड़ी और मशीनें यहाँ पर आयात की जाती हैं। औसत यहाँ पर से प्रतिदिन २५०० टन माल निर्यात किया जाता है और लगभग ८०० टन माल यहाँ से देश में आयात किया जाता है। सन् १९५२-५३ में इस बन्दरगाह से १० लाख टन सामान निर्यात किया गया तथा १,५२,००० टन सामान आयात हुआ।

चित्र ७२—विजगापट्टम का बन्दरगाह व पोताश्रय

उड़ीसा और मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग की उपज के विकास के लिए कलकत्ते की अपेक्षा विजगापट्टम से कम समय लगता है और खर्चा भी कम बैठता है। इस बन्दरगाह के खुल जाने से कलकत्ते के व्यापार पर असर पड़ा है। हाल में यहाँ एक पोत-निर्माण क्षेत्र भी खुल गया। पूर्वी रेल मार्ग द्वारा यह बन्दरगाह मध्य प्रदेश में रायपुर से मिला हुआ है। इससे मध्य प्रदेश की मंडियों और बन्दरगाह के बीच की दूरी और भी कम हो गई है।
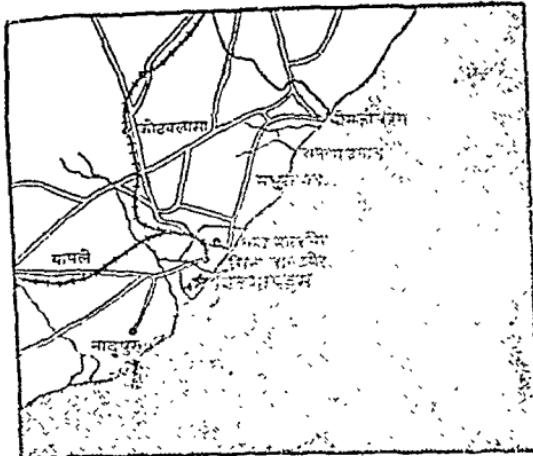
कलकत्ता—भारत का सबसे बड़ा नगर है और बंगाल की खाड़ी से कोई ८० मील दूर हुगली नदी के बाएँ किनारे पर बसा है। प्रधानतः यह गंगा के मैदान की व्यापारिक मंडी है परन्तु स्वेज से पूर्व के प्रदेश में यही सबसे बड़ा व्यापार केन्द्र है। इसके पृष्ठ प्रदेश के अन्तर्गत आसाम, बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, पूर्वी पंजाब के कुछ भाग, उड़ीसा व मध्य प्रदेश सम्मिलित हैं। और इन सभी भागों से कलकत्ता रेलों व सड़कों द्वारा मिला हुआ है। इन सभी प्रदेशों में वे वस्तुएँ खूब होती हैं जिनकी विदेशी मंडियों में मांग रहती है। इसके अलावा गंगा व ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा बड़े अच्छे जलमार्गों की व्यवस्था है। इनके द्वारा खेतिहर उपज कलकत्ते में आती हैं और उद्योग-धन्धों से निर्मित वस्तुओं के बदले में दी जाती है। वास्तव में कलकत्ते का व्यापार बहुत कुछ उसके आसपास के जलमार्गों पर निर्भर रहता है। देश के विभाजन के पहले कलकत्ते में पहुंचने वाले माल का एक चौथाई भाग जलमार्गों द्वारा आता था और जलमार्गों द्वारा लाए हुए माल का एक तिहाई भाग अकेले आसाम से आता था। इसीप्रकार कलकत्ते के अन्दर भेजे जाने वाले माल का एक तिहाई भाग नाव्य जलमार्गों द्वारा जाता था और इसका तीन-चौथाई हिस्सा अकेले आसाम को जाता था।

कलकत्ते का बन्दरगाह हुगली के किनारे-किनारे ५ मील तक फैला हुआ है परन्तु एक बड़ी असुविधा है कि नदी में मिट्टी भर जाती है दूसरी बात यह है कि अक्सर हुगली में ज्वारभाटे के कारण पानी की दीवार खड़ी हो जाती है। इन असुविधाओं के

होते हुए भी दूसरे महायुद्ध काल में कलकत्ता संसार का सबसे जल्दी माल लादने उतारने वाला वन्दरगाह था। इस समय वन्दरगाह व पोताश्रय को और भी सुविधाजनक बनाने का प्रयत्न हो रहा है। डायमंड हारवर और खिदिरपुर के बीच एक ३० मील लम्बी जहाजी नहर बनाने की योजना पर विचार किया जा रहा है। वास्तव में इस समय कलकत्ते का कोई गहरा पोताश्रय नहीं है। इसलिए ६००० टन से अधिक भार वाले जहाजों को खिदिरपुर से ४० मील दूर डायमंड हारवर पर रुक जाना होता है। पोताश्रय की सुविधाओं को बढ़ाने के लिए कलकत्ता और डायमंड हारवर के बीच एक जहाजी नहर बनाने की योजना पर सन् १९४५ से सोच-विचार किया जा रहा है। परन्तु इसमें असुविधाएँ व रुकावटें हैं :—

चित्र ७३—कलकत्ता व उसके आस-पास का प्रदेश

(१) इस योजना में वहुत अधिक व्यय होगा और इसके अलावा इसके मार्ग में पड़ने वाले सैकड़ों गांवों को नष्ट कर दिया जावेगा। इससे किसानों को बड़ी कठिनाई होगी और वहुत से धान के खेत नष्ट-भ्रष्ट हो जाएँगे।

(२) दूसरी समस्या हुगली नदी की है। अगर नहर बना दी जाती तो हुगली नदी पर कोई ध्यान नहीं देगा। इस समय नादिया व पश्चिमी बंगाल की सभी नदियों का पानी हुगली द्वारा ही समुद्र में जाता है। और यदि हुगली में जल-राशि की ओर ध्यान न दिया गया तो वर्षाकाल में बाढ़ें आवेंगी और सम्पूर्ण प्रदेश पानी से आच्छादित होकर अनुपजाऊ हो जावेगा।

इसलिए बजाय जहाजी नहर बनाने के हुगली में ही गंगा का और अधिक ताजा पानी देकर उसकी नाव्यता को बढ़ाना अधिक लाभप्रद है। भारत सरकार ने गंगा बैरेज योजना पर काम शुरू कर दिया है और काम पूरा होने पर हुगली नदी में बड़े-बड़े जहाज आ-जा सकेंगे। उस समय कलकत्ता वन्दरगाह और अधिक उन्नति कर जावेगा।

कलकत्ता व उसके आसपास के प्रदेश में भारत के सबसे अधिक उद्योग-धंधे केन्द्रित हैं। यहाँ की पटसन, कागज, सूती कपड़ा व चीनी की मिलों में तथा इंजी-

नियरिंग फैक्टरी में रानीगंज व झरिया का कोयला प्रयोग किया जाता है। कलकत्ता संसार का सबसे बड़ा पटसन व्यवसाय केन्द्र है। यहाँ के अन्य महत्त्वपूर्ण उद्योग-धंधे चावल की मिलें, सूती कपड़े की मिलें, चमड़ा साफ करने के कारखाने, सुगंधित वस्तु बनाने के कारखाने, लोहा व इस्पात उद्योग तथा दियासलाई बनाने के कारखाने हैं।
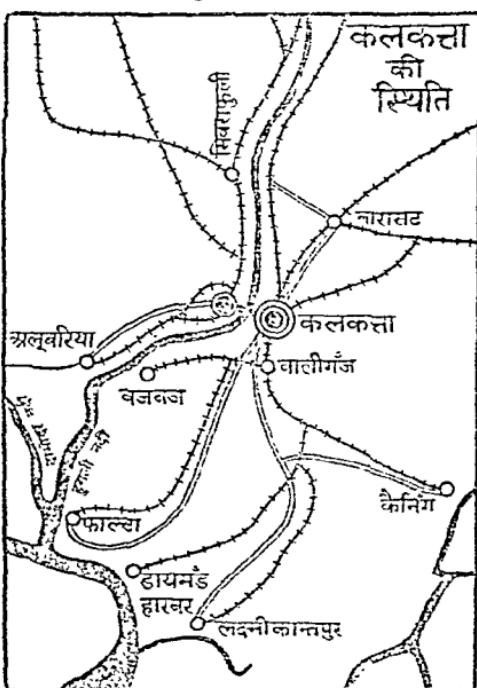
यहाँ से निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ पटसन, चाय, अभ्रक, कोयला, लोहा, मैंगनीज और चमड़ा हैं। लोहे व इस्पात की वस्तुएँ, चीनी, पेट्रोल, मोटरगाड़ियों, कागज, रासायनिक पदार्थों, शराब, नमक, रबड़ और साइकिलों का आयात इसी बन्दरगाह द्वारा होता है। सन् १९५२-५३ में कलकत्ता बन्दरगाह द्वारा ४१ लाख टन माल निर्यात किया गया तथा ५४ लाख टन आयात हुआ।

सन् १९४१ में कलकत्ते की कुल आबादी ३० लाख थी परन्तु देश के विभाजन के बाद से पूर्वी पाकिस्तान से बहुत अधिक लोग आ गये हैं। दूसरे महायुद्ध काल में भी यहाँ का कारबार बढ़ने से जनसंख्या बढ़ गई। फलत: अब कलकत्ते की आबादी काफी बढ़ गई है। लगभग ३६ लाख हो गई है।

व्यापारिक केन्द्र

भारत में ६ विभिन्न प्रकार के नगरों में व्यापारिक केन्द्र स्थापित हो गये हैं—धार्मिक नगरों में, प्राचीन राजधानियों में, बन्दरगाहों, स्वास्थ्यवर्धक केन्द्रों में, औद्योगिक नगरों व वर्तमान शासन केन्द्रों में।

भारत में धार्मिक नगरों की तो भरमार है। बनारस, पुरी, इलाहाबाद, मथुरा, आदि स्थान प्रमुख व्यापारिक केन्द्र बन गये हैं सिर्फ इसलिए कि वहाँ देश के हर कोने से तीर्थ के लिए यात्री आते हैं। नागपुर, पूना, मुर्शिदाबाद जैसी प्राचीन राजधानियाँ अभी तक व्यापार का केन्द्र बनी हुई हैं। प्राय: पहाड़ों पर या समुद्र के किनारे बहुत से स्वास्थ्यवर्धक केन्द्र पाये जाते हैं जिनमें मैदानी भागों से लोग घूमने फिरने के लिए जाते हैं। भारत का सबसे अधिक व्यापार बन्दरगाहों व औद्योगिक केन्द्रों में पाया जाता है क्योंकि इन स्थानों में रेल व जहाजों द्वारा आयात की सुविधा रहती है। इसी प्रकार शासन-प्रबन्ध की सुविधाओं के कारण भारत के बहुत से नगर व जिले, डिविजन व प्रांत के शासन केन्द्र होने की वजह से काफी उन्नति कर गये हैं।

भारत के आंतरिक व्यापार की मंडियाँ प्राय: उत्तर में गंगा के मैदान में पायी जाती हैं। गंगा व ब्रह्मपुत्र के किनारे पर ही इस प्रदेश के प्रमुख औद्योगिक नगर स्थित हैं। इसके अलावा इस मैदान में रेलों व सड़कों का एक जाल-सा बिछा हुआ है और रेलों के मिलन-बिन्दु पर भी नगर पाये जाते हैं।

उत्तर प्रदेश का क्षेत्रफल १,१०,००० वर्ग मील और जनसंख्या ५,५०,००,००० है। भारत के इस राज्य ने कृषि, उद्योग-धंधे और सड़क यातायात में काफी उन्नति की है। यहाँ की मुख्य खेतिहर फसलें गेहूँ, गन्ना, सरसों, चावल और दालें हैं। परन्तु खनिज सम्पत्ति के दृष्टिकोण से यह प्रदेश कोई विशेष धनी नहीं है। हाल में

भारत सरकार ने डंग कोयला क्षेत्र को बढ़ाने के लिए नेपाल सरकार से एक समझौता किया है। मिरजापुर जिले में सोन नदी के दक्षिणी किनारे पर एक सीमेन्ट का कारखाना बनाया जा रहा है। शक्ति उत्पादक अल्कोहल के लिए उत्तर प्रदेश विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यहाँ इस समय अल्कोहल बनाने के ९ कारखाने हैं जिनसे प्रतिवर्ष ९५ लाख गैलन अल्कोहल तैयार किया जाता है। कृत्रिम रेशम बनाने के दो कारखाने—एक इलाहाबाद के समीप और दूसरा देहरादून में—भी स्थापित किये जा रहे हैं। राज्य में देश की सबसे अधिक चीनी की मिलें पायी जाती हैं। इनके अलावा यहां पर कुछ सूती कपड़े की मिलें व कागज तथा शीशे के कारखाने भी पाये जाते है। उत्तर प्रदेश के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र इलाबाद,बनारस, कानपुर, गोरखपुर, लखनऊ, मिरजापुर, मुरादाबाद, अलीगढ़, आगरा, देहरादून, झांसी, मथुरा, सहारनपुर तथा बरेली हैं।

इलाहाबाद—उत्तर प्रदेश का प्रमुख रेल-केन्द्र है और कलकत्ता से ५६४ मील दूर है। यह गंगा और यमुना के संगम पर बसा है। इस नगर में तेल निकालने व आटा पीसने की कई मिलें हैं तथा शीशा बनाने के कारखाने भी हैं। रेलों, जल-मार्गों व सड़कों से यातायात की बड़ी सुविधा रहती है और इसीलिए आसपास के जिलों से ज्वार, बाजरा, अलसी, तम्बाकू इत्यादि वस्तुएँ निर्यात के वास्ते इलाहाबाद में इकट्ठी की जाती हैं।

बनारस—गंगा के किनारे पर बसा है और भारत का एक बड़ा नगर है। हिन्दुओं का तीर्थ-स्थान होने से यहाँ यात्री काफी आते हैं। यह एक प्रमुख औद्योगिक व व्यापारिक केन्द्र भी है और लकड़ी के खिलौने, जर्दा तम्बाकू, लाख की चूड़ियाँ, हाथी दांत की वस्तुएँ, रेशमी कपड़े, कम्बल की चदरें, अलसी, सरसों, चीनी और चना यहाँ के व्यापार की मुख्य वस्तुएँ हैं। यहाँ तेल निकालने व रेशमी वस्त्र बनाने के काई कारखने हैं। पीतल के काम के लिए भी बनारस बहुत प्रसिद्ध है। शहर से तीन मील की दूरी पर प्रसिद्ध विश्वविद्यालय है। यह प्राचीन संस्कृत शिक्षा का केन्द्र भी है।

कानपुर—उत्तरी भारत की प्रमुख मंडी है। यहां विभिन्न वस्तुएँ एकत्रित की जाती हैं और फिर आसपास के भागों में वितरण कर दी जाती हैं। पूर्वी, पश्चिमी और उत्तरी-पूर्वी रेल-मार्गो का यह प्रमुख केन्द्र भी है। उत्तर प्रदेश के अधिकतर उद्योग-धंधे यहाँ स्थापित हैं। यहाँ के दो सबसे प्रमुख उद्योग कपास को दबाना और बिनौले साफ करना है। इनके अलावा यहाँ पर चीनी व आटा की मिलें, लोहे गलाने की भट्टियां, रासायनिक वस्तुएँ, सूती कपड़े और तेल के कारखाने भी पाये जाते हैं। इस नगर की आबादी २,५०,००० से अधिक है।

गोरखपुर—राप्ती नदी के बायें किनारे पर बसा है और यहाँ का मुख्य उद्योग बढ़इगिरी है। नेपाल की सीमा से लकड़ी यहाँ लाई जाती है। नगर में चीनी बनाने के भी बहुत से कारखाने हैं।

लखनऊ—उत्तर प्रदेश की राजधानी और एक प्राचीन नगर है। अवध प्रदेश की बहुमूल्य खेतिहर उपज के वितरण का केन्द्र है और इसका महत्व दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। यहाँ पर लोहे गलाने की कई भट्टियाँ हैं और रेलों की मरम्मत के कारखाने हैं। यहाँ पर व्यापार की मुख्य वस्तुएँ चांदी-सोने का काम, हाथीदांत व लकड़ी पर नक्काशी का काम, मिट्टी के बर्तन व इत्यादि हैं। यहाँ का ज़री व चिकन का काम बहुत प्रसिद्ध है।

मिर्जापुर—उत्तर प्रदेश का प्रमुख औद्योगिक नगर है और गंगा के किनारे एक उपजाऊ प्रदेश के बीच में बसा है। यहाँ की प्रमुख वस्तुएँ दरियाँ व गलीचे, कालीन और रेशमी कपड़े हैं। यहाँ के पत्थर का काम भी बहुत प्रसिद्ध है।

मुरादाबाद—का नगर पीतल व कलई के वर्त्तनों के लिए बहुत प्रसिद्ध है। इसकी आबादी १ लाख १० हजार है।

आगरा—जमुना नदी के किनारे बसा है। और प्राचीन मुग़ल बादशाहों की राजधानी रहा है। यहां की दस्तकारी व उद्योग-धंधे काफी महत्त्वपूर्ण हैं। दरियां, जूते, पीतल के बर्त्तन, मुँह देखने के शीशों के फ्रेम और संगमरमर यहां की प्रसिद्ध वस्तुएं हैं। यह रेलों का प्रमुख केन्द्र और राजस्थान के लिए एकत्रीकरण व वितरण की मंडी है। शहर से एक मील की दूरी पर प्रसिद्ध ताजमहल स्थित है।

अलीगढ़—के ताले व चाकू तथा अन्य पीतल की वस्तुएं बहुत प्रसिद्ध हैं। यहाँ की चूड़ियां, शीशे के वर्त्तन व मक्खन अन्य व्यापारिक महत्व की वस्तुएं हैं। भारत में इस्लामी सभ्यता का यही केन्द्र है और अलीगढ़ विश्वविद्यालय बड़ा प्रसिद्ध है।

पूर्वी पंजाब का क्षेत्रफल ४८,००० वर्गमील है और यहां की आबादी १ करोड़ ३० लाख है। कुल आबादी का पंचमांश पश्चिमी पाकिस्तान से आए हुए शरणार्थी लोग हैं। देश के विभाजन से इस प्रदेश को विशेष हानि पहुँची है क्योंकि जनसंख्या के आधार पर इसे नहरों द्वारा सिंचित भूमि का उचित भाग नहीं मिला है। राज्य के सामने शरणार्थियों को फिर से बसाने का प्रश्न सबसे बड़ी समस्या है। यहां के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र अमृतसर, लुधियाना, जलन्धर और शिमला हैं।

अमृतसर—उत्तरी रेलमार्ग पर बसा है और कलकत्ता से ११४३ मील दूर है। यहां के कालीन व शाल-दुशाले बहुत प्रसिद्ध हैं। यहां के अन्य प्रमुख व्यवसाय सूती वस्त्र बनाना, एसिड व रासायनिक पदार्थों का निर्माण, मोजा-बनियान बुनना तथा चमड़े का काम है।

लुधियाना—मोजा, बनियान, स्वेटर, मफलर आदि बनाने के व्यवसाय का केन्द्र है। भारतीय सेना के लिए साफे यहीं पर तैयार किये जाते हैं।

शिमला—भारत सरकार की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी। तिब्बत व चीन के साथ पुनर्निर्यात व्यापार का केन्द्र शिमला ही है। और मार्च से अक्टूबर तक का मौसम व्यापारिक दृष्टिकोण से बड़ा महत्त्वपूर्ण होता है।

मध्य प्रदेश का क्षेत्रफल १ लाख ३० हजार वर्गमील है और आवादी १ करोड़ ७० लाख है। खनिज संपत्ति के दृष्टिकोण से यह भारत के धनी राज्यों में से है। यहां कोयला, बाक्साइट, लोहा, मैंगनीज़, तांबा, चूने का पत्थर आदि खनिज पदार्थों का अपार व विस्तृत भंडार है। परन्तु अभी तक इन खनिज पदार्थों का कोई विशेष उपयोग नहीं हो पाया है। नागपुर, अकोला, योटमल, कटनी, वार्धा, जवलपुर और अमरावती यहां की प्रमुख मंडियां हैं।

अकोला और अमरावती—कपास के व्यापार के केन्द्र हैं। **जवलपुर** में सीमेंट, शीशा, चूने और मिट्टी के वर्त्तनों का व्यवसाय केन्द्रित है। यहां पर वन्दूक बनाने का भी कारखाना है। इनके अलावा सूती वस्त्र वनाने, तांवा व पीतल के वर्त्तनों का धंधा भी काफी महत्त्वपूर्ण है। **कटनी** में वर्त्तन बनाने, पत्थर और अनाज के व्यवसाय का केन्द्र है। **नागपुर** मध्य प्रदेश की राजधानी है और प्रमुख व्यापारिक नगर है। यह मध्य व पूर्वी रेलमार्गों के मिलन-विन्दु पर वसा है और यहाँ का सूती वस्त्र व्यवसाय बहुत प्रसिद्ध है।

योटमल और वार्धा—कपास के व्यापार के केन्द्र हैं और यहाँ पर रुई साफ करने के कई कारखाने पाये जाते हैं।

पश्चिमी बंगाल बहुत घना बसा हुआ राज्य है। इसका क्षेत्रफल २८,००० वर्गमील है और इसकी कुल आवादी २ करोड़ १० लाख से अधिक है। छोटा होने पर भी यह बड़ा ही विकसित प्रदेश है। यहाँ के उद्योग-धंधे, विजली की व्यवस्था और यातायात के साधन बड़े ही उन्नत हैं। फिर भी इस प्रदेश की आर्थिक दशा बड़ी ही शोचनीय है और इसकी मुख्य समस्या आर्थिक निर्वाह की है। यह प्रदेश खाद्यान्नों की मांगपूर्ति के दृष्टिकोण से कमी का क्षेत्र है। यहाँ की वार्षिक मांग ४० लाख टन अनाज की है परन्तु यहाँ के कुल उपज की मात्रा ३५ लाख टन है। कच्चे पटसन की मांगपूर्ति के लिए इसे पूर्वी पाकिस्तान पर निर्भर रहना पड़ता है। इस समय पश्चिमी बंगाल की २१० लाख एकड़ भूमि पर खेती होती है। सन् १९५३ तक दामोदर घाटी योजना पर काम पूरा हो जाने पर करीव १२ लाख एकड़ भूमि पर खेती हो सकेगी। यहाँ के क्षेत्रफल के १४ प्रतिशत भाग में ही जंगल पाये जाते हैं। औद्योगिक दृष्टिकोण से वम्वई के बाद इसी प्रदेश का स्थान आता है। देश की सभी जूट मिलें यहीं पायी जाती हैं और बहुत से शीशा वनाने व रासायनिक उद्योग के कारखाने भी हैं। कलकत्ता, श्रीरामपुर, वरहामपुर और वर्दवान यहां के मुख्य व्यापारिक केन्द्र हैं। कलकत्ते के समीप स्थित श्रीरामपुर और **सल्किया** अच्छे औद्योगिक केन्द्र हैं। इन दोनों ही नगरों में सूती कपड़े की बहुत सी मिलें हैं। हुगली नदी पर **बाटानगर** एक नवीन औद्योगिक केन्द्र है और जूते बनाने के व्यवसाय का केन्द्र है।

बम्बई राज्य का क्षेत्रफल १ लाख ५२ हजार वर्गमील है और इसमें २ करोड़ ४० लाख से अधिक जनसंख्या निवास करती है। इस राज्य में प्राकृतिक साधनों का पूरा विकास किया गया है परन्तु भोजन के दृष्टिकोण से इस प्रदेश में कमी रहती है। यहाँ का सूती वस्त्र व्यवसाय राष्ट्रीय महत्व का है। परन्तु यहाँ की अधिकतर सूती

कपड़ा मिलें दो या तीन केन्द्रों में ही एकत्रित हैं। इस स्थानीकरण के कारण सूती वस्त्र उद्योग के लिए कई सामाजिक व आर्थिक समस्यायें उठ खड़ी हुई हैं। इस राज्य के मुख्य व्यापारिक केन्द्र बम्बई, अहमदाबाद, बेलगांव, बड़ौच, नासिक, पूना और सूरत हैं। **अहमदाबाद**—सावरमती नदी के बाएँ किनारे पर बसा हुआ है और कैम्बे की खाड़ी से ५० मील दूर है। भारत के सूती वस्त्र व्यवसाय केन्द्रों में इसका दूसरा स्थान है। यहां पर सूती कपड़ की करीब ८० मिलें हैं। **बेलगांव**—सूती व रेशमी कपड़े के व्यवसाय का केन्द्र है। **बड़ौच**—तटीय व्यापार का मुख्य केन्द्र है और पश्चिमी भारत का सबसे पुराना बन्दरगाह है। **नासिक**—के पीतल व तांबे के वर्त्तन बहुत विख्यात हैं। **सूरत**—एक समय प्रमुख बन्दरगाह था परन्तु इस समय सोने व चांदी की जरी के काम के लिए प्रसिद्ध है। यहां पर सूती कपड़े की भी कुछ मिलें हैं।

मद्रास राज्य का क्षेत्रफल १ लाख ४२ हजार ६२७ वर्गमील है। यहाँ के मुख्य व्यापारिक केन्द्र बन्दरगाह हैं। **मदुरा और त्रिचनापली** भीतर की ओर स्थित दो व्यापारिक केन्द्र हैं। मदुरा में कपड़ा बुनने की कई मिलें हैं। तांबे व पीतल के वर्त्तन भी बनाये जाते हैं। त्रिचनापली में सिगार बनाने के कई कारखाने हैं।
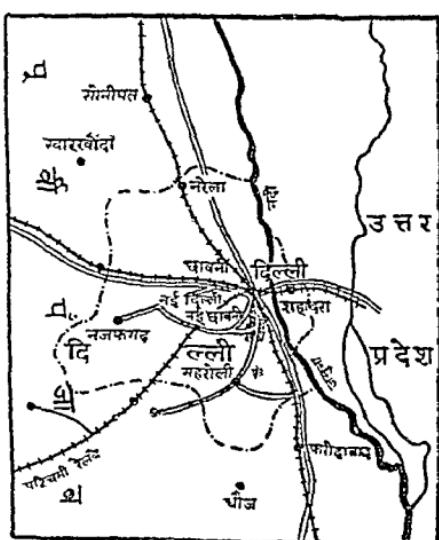
चित्र ७४—दिल्ली के आसपास का क्षेत्र और यातायात की सुविधाएँ

दिल्ली राज्य में स्थित दिल्ली नगर कई रेलमार्गों के मिलन स्थान पर बसा हुआ है। यह दिल्ली राज्य व भारत सरकार की राजधानी व शासन-केन्द्र है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पूर्वी पंजाब के सूती, रेशमी व ऊनी कपड़े की मंडी है। यहां पर सूत कातने व उससे कपड़ा बुनने की कई मिलें हैं। हाथी दांत पर नक्काशी करना, हीरे जवाहरात के जड़ाऊ गहने बनाना, फीते व बेल बनाना तथा सोने की जरी का काम करना यहाँ के अन्य महत्त्वपूर्ण व्यवसाय हैं।

आसाम भारत का सबसे पूर्वी राज्य है। इसकी सीमा पर दो भिन्न राज्य स्थित हैं—चीन व बर्मा और पाकिस्तान। अतः इसका सैनिक महत्व बहुत अधिक है। इसके दो-तिहाई क्षेत्रफल में यहाँ के आदि निवासी रहते हैं और उसे पहाड़ी व जंगली जातियों की कुल संख्या यहाँ की आबादी का एक-तिहाई है। इसका क्षेत्रफल ५५,००० वर्गमील है और इसकी कुल आबादी १ करोड़ है। इस प्रदेश में प्राकृतिक सम्पत्ति का अपार भंडार है और उनका विकास होने पर कई उद्योग-धन्धों की उन्नति की जा सकती है। इसकी ४० प्रतिशत भूमि पर जंगल पाये जाते हैं और बहुत-सी खेती योग्य भूमि बिल्कुल अछूती पड़ी है। यहाँ पर खनिज पदार्थ भी खूब

निहित हैं । देश का कुल खनिज तेल यहीं से प्राप्त होता है और केवल यही एक बात इसके महत्व के लिए काफी है । खोज करने पर यहाँ और भी खनिज तेल क्षेत्रों का पता लगाया जा सकता है । यहां की निहित सम्पत्ति को तो अभी तक छुआ तक नहीं गया है । यहाँ पर चूने का पत्थर, शीशा तैयार करने की बालू, इलमेनाइट, रगड़ने के पत्थर और सफेद मिट्टी भी पाई जाती है । जल विद्युत उत्पादन के भी सम्यक साधन उपस्थित हैं ।

खेती का धंधा ब्रह्मपुत्र की घाटी में ही सीमित है और यहाँ की प्रमुख उपज चावल व चाय है । कागज के लिए काष्ठमांड भी तैयार किया जाता है । **शीलांग और गोहाटी** यहाँ के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र हैं । शीलांग आसाम की राजधानी है और समुद्र तल से ४००० फीट की ऊंचाई पर खासी पहाड़ियों पर बसा हुआ है । यहाँ की आबादी ३०,००० से अधिक है और फल व अन्य पहाड़ी पदार्थों का व्यापार होता है । गोहाटी ब्रह्मपुत्र के बाएं किनारे पर बसा है और आसाम का सबसे प्रमुख नगर व बन्दरगाह है । इसकी आबादी ३५,००० से अधिक है और व्यापारिक केन्द्र, बन्दरगाह व रेलों का मिलन बिन्दु होने के नाते इसका महत्व बहुत अधिक है । रेशम, चाय और लकड़ी यहाँ के व्यापार की मुख्य वस्तुएँ हैं ।

उड़ीसा का क्षेत्रफल ३२ हजार वर्ग मील और आबादी ८० लाख है । प्राकृतिक साधनों की बहुलता होते हुए भी उनका उपभोग बहुत कम है और इसीलिए औद्योगिक विकास में यह राज्य बहुत पिछड़ा हुआ है । इस प्रदेश की अवनति के कारणों में निम्नलिखित विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—(१) उच्च मरण संख्या (२) अनपढ़ता की अधिकता (३) खेती के धंधे में केवल चावल की फसल पर निर्भरता (४) बाढ़ों की अधिकता (५) औद्योगीकरण की कमी और (६) यातायात के साधनों की अपर्याप्तता परन्तु राज्य में वन, खनिज व जल सम्बन्धी अपार सम्पत्ति है ।

यहाँ के एक-चौथाई निवासी आदिवासी हैं । कटक, सम्बलपुर, पुरी और बालासोर यहाँ के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र हैं । **कटक** उड़ीसा का शासन केन्द्र है और यहाँ की आबादी ७०,००० है । लाख की चूड़ियाँ, जूते, खिलौने, कंघे बनाना यहाँ का स्थानीय उद्योग है । मध्य प्रदेश या अन्य आसपास के क्षेत्रों से लकड़ी इकट्ठा करके पूर्वी रेल मार्ग द्वारा कलकत्ता भेजी जाती है । यह पूर्वी रेल मार्ग की मुख्य शाखा पर बसा है और उड़ीसा तटीय नहर द्वारा चांदबली से भी मिला है । कलकत्ता यहाँ से २५३ मील दूर है । **पुरी** हिन्दुओं का तीर्थ-स्थान है और खुला तटीय बन्दर है । चूंकि किनारे पर समुद्र का पानी छिछला है इसीलिए जहाजों को तट से ७ मील दूर लंगर डालना होता है । पीतल, चांदी और सोने के गहने बनाना यहां का मुख्य उद्योग है । सम्बलपुर रेशमी व सूती वस्त्र व्यवसाय का केन्द्र है ।

विविध नगर

जयपुर राजस्थान का शासन केन्द्र है और अपनी शिल्पकारी के लिए प्रसिद्ध है । यहां के मिट्टी व पीतल के बर्तन विशेष सुन्दर होते हैं । यहाँ की आबादी एक लाख

से अधिक है। जोधपुर में रेलों की मरम्मत का कारखाना तथा ऊनी व सूती कपड़े की मिलें हैं। यहाँ के पत्थर का काम वहुत प्रसिद्ध है। ग्वालियर मध्य भारत की राजधानी है और यहाँ की आवादी करीव एक लाख है। शहर का नाम लश्कर है। यहाँ पर सिगरेट वनाने के कारखाने हैं। चीनी मिट्टी वनाने और सूती कपड़े तैयार करने का धंधा भी काफी उन्नत है। इन्दौर मध्यभारत का सवसे वड़ा व्यापार केन्द्र है और यहां पर सूती कपड़े वनाने की मिलें, आटा पीसने की चक्कियाँ, पीतल की चद्दरें वनाने के कारखाने और धातु गलाने की भट्टियाँ पायी जाती हैं। यहां की आवादी एक लाख से अधिक है। वंगलौर मैसूर राज्य का मुख्य केन्द्र है और मद्रास से २२८ मील पूर्व में स्थित है। दरियाँ, कालीन, सूती कपड़े, ऊनी वस्त्र और चमड़े की वस्तुएँ वनाने के उद्योग यहाँ विशेष रूप से उन्नत हैं। साबुन, चमड़ा, मेज-कुर्सी और चीनी मिट्टी के वर्तन वनाने के भी कारखाने हैं। यहाँ की कुल आवादी ५ लाख के लगभग है। श्रीनगर काश्मीर की राजधानी है और रेशमी वस्त्र वनाना, फूल-पत्तियों की कढ़ाई और लकड़ी पर नक्काशी का काम यहाँ के मुख्य उद्योग हैं। वारामूला में जल-विद्युत उत्पादन की एक विशाल योजना है जिससे पूरी काश्मीर घाटी व श्रीनगर को शक्ति प्राप्त होती है। नगर की आवादी १ लाख ८० हजार है। यहाँ तक रेलमार्ग तो नहीं आता परन्तु अच्छी मोटर सड़कों द्वारा यह आसपास के सभी प्रदेशों से सम्वन्धित है। त्रिवेन्द्रम सुदूर दक्षिण-पश्चिम भारत में ट्रावनकोर-कोचीन राज्य का व्यापारिक केन्द्र है। व्यापारिक महत्व के अतिरिक्त यह उद्योग-धंधों व शिक्षा का भी केन्द्र है। यहाँ पर नारियल की जटा के रेशों से तैयार की हुई वस्तुएँ वड़ी प्रसिद्ध होती हैं। इसके अलावा पैंसिलें, हाथी दांत की वस्तुएँ, सीमेंट व सुपारी वनाने के भी कारखाने हैं।

प्रश्नावली

१. कांधला में एक वड़ा समुद्र द्वार वनाने की आवश्यकता क्यों पड़ी ? इस सम्वन्ध में सहायक व अड़चन डालने वाली भौगोलिक दशाओं का पूर्ण विवरण लिखिये।

२. वम्वई, कोचीन और विजगापट्टम वन्दरगाहों की स्थिति समझाइये और भारत का विदेशी व्यापार में इनका महत्व वतलाइये।

३. पृष्ठ प्रदेश से आप क्या समझते हैं ? कलकत्ता व वम्वई के पृष्ठ प्रदेश का विवरण दीजिए।

४. भारत के प्रमुख वन्दरगाहों में से प्रत्येक का व्यापार वर्णन करिये।

५. लखनऊ, वंगलौर, अमृतसर, मुरादावाद और शिलांग के महत्व का कारण वतलाइये।

६. तूतीकोरिन, लुधियाना, कानपुर, डिगवोई, अहमदावाद और मुर्शिदावाद के व्यापारिक महत्व का विवरण दीजिए।

७. वम्वई, जोधपुर, इलाहावाद, आसनसोल और दिल्ली का महत्व वतलाइये ?

८. वम्वई और विजगापट्टम के पृष्ठ प्रदेश का वर्णन कीजिए और वतलाइये कि इन प्रदेशों में यातायात के साधनों व व्यापारिक वस्तुओं के उत्पादन से इन वन्दरगाहों के व्यापार पर क्या असर पड़ा है ?

९. एक रेखाचित्र पर काठियावाड़ के मुख्य वन्दरगाहों को दिखलाइए और उनकी उन्नति के कारण वतलाइए ।

१०. कालिमपांग, डिब्रूगढ़, कानपुर, झरिया, विजगापट्टम और नागपुर की स्थिति व विकास का वर्णन कीजिए ।

११. "कलकत्ते का महत्व व व्यापार उसके पृष्ठ प्रदेश पर निर्भर रहता है ।" इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिए ।

१२. जमशेदपुर, जवलपुर, नागपुर, पटना, सूरत, आसनसोल, वनारस और वंगलौर के व्यापारिक महत्व को स्पष्ट कीजिए ।

१३. कलकत्ता वन्दरगाह को एक जहाजी नहर द्वारा समुद्र से मिला देने की योजना पर अपने विचार प्रकट कीजिए । जहाजी नहरों के क्या दोष होते हैं ?

१४. वम्वई से कलकत्ता तक की यात्रा में कौन-से वन्दरगाह पड़ेंगे ? प्रत्येक का आयात-निर्यात व्यापार वतलाइये ।

अध्याय : : तेरह
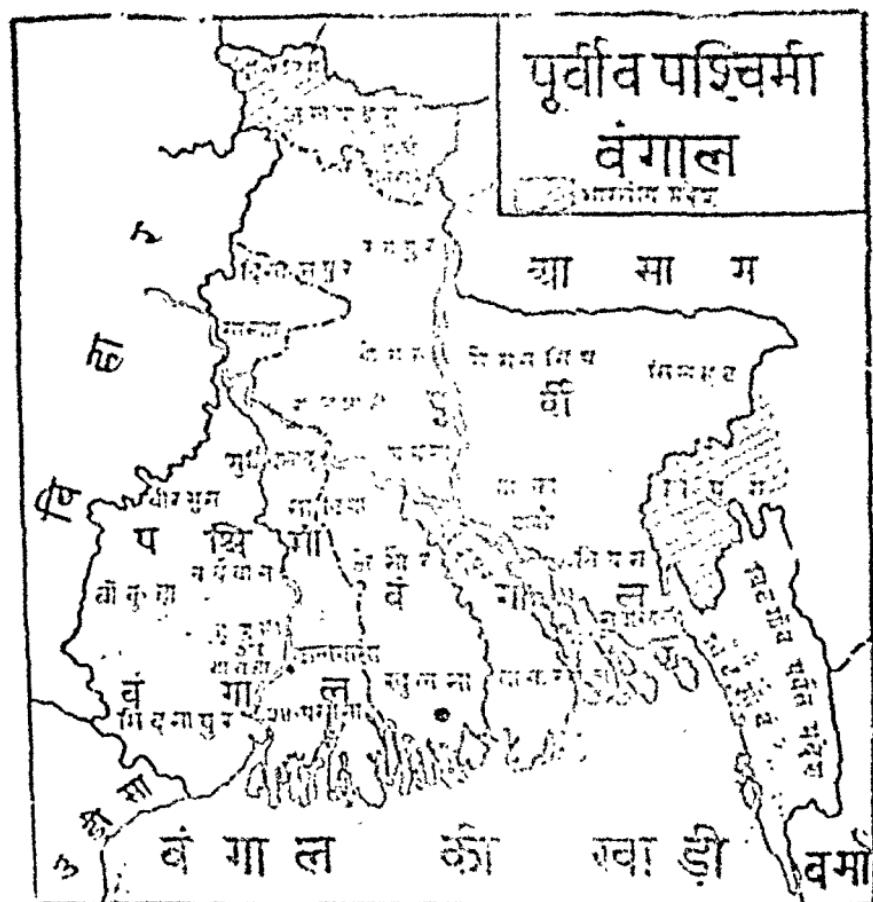
पाकिस्तान

चित्र ७५—बंगाल के विभाजन का चित्र—पूर्वी पाकिस्तान के अंतर्गत पूर्वी बंगाल और सिलहट सम्मिलित हैं।

क्षेत्रफल व विस्तार

पाकिस्तान का कुल क्षेत्रफल ३ लाख, ६४ हजार, ७३४ वर्गमील है और इसके अन्तर्गत चार प्रान्त शामिल हैं—पश्चिमी पंजाब, पूर्वी बंगाल, सिन्ध और उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त। इनके अलावा बलूचिस्तान और कई छोटे-छोटे राज्य भी सम्मिलित हैं। पश्चिमी पंजाब, सिन्ध, उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रान्त, बलूचिस्तान व राज्यों को मिलाकर पश्चिमी पाकिस्तान बना। पश्चिमी पाकिस्तान पश्चिम में अफगानिस्तान व ईरान से लगा हुआ है और इसके पूर्व में भारत संघ है। इसके दक्षिण व दक्षिण-पूर्व में अरब सागर है। प्रायः भूमि का ढाल दक्षिण-पूर्व की ओर है। इसलिए सभी नदियाँ अरब सागर में गिरती हैं। पूर्वी पाकिस्तान के अन्दर
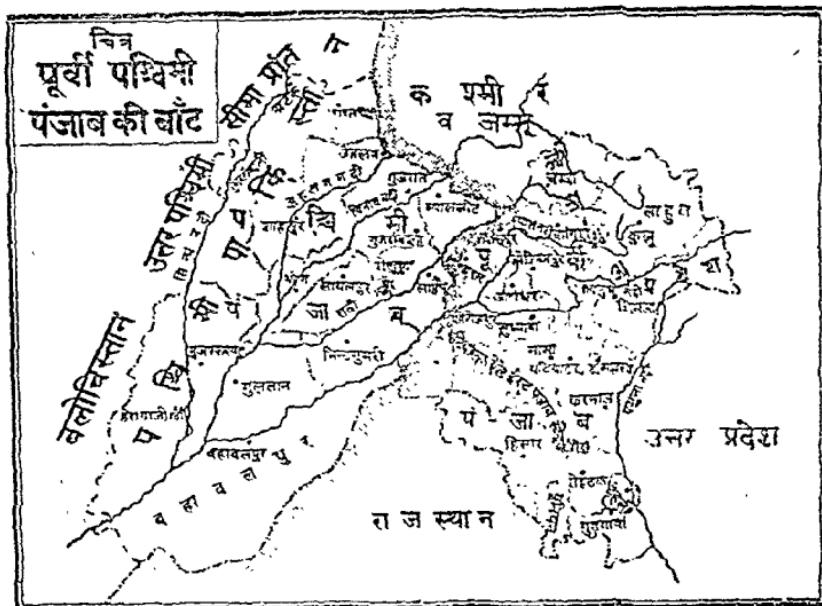
चित्र ७६—पंजाब का विभाजन—पूर्वी पंजाब भारत में आया और पश्चिमी पंजाब को पाकिस्तान में सम्मिलित कर दिया गया।

पूर्वी बंगाल व सिलहट के प्रदेश सम्मिलित हैं। क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से पूर्वी पाकिस्तान पश्चिमी पाकिस्तान का षष्ठांश है। पूर्वी पाकिस्तान चारों ओर से भारत संघ से घिरा है। इसके उत्तर व पश्चिम में बंगाल तथा पूर्व में आसाम है। दक्षिण में बंगाल की खाड़ी और दक्षिण-पूर्व में बर्मा है।

प्रान्त	क्षेत्रफल (वर्गमील में)
(अ) पूर्वी पाकिस्तान	५४,५०१
पूर्वी बंगाल	४६,८५१
सिलहट	४६५०

प्रान्त	क्षेत्रफल (वर्गमील में)
(आ) पश्चिमी पाकिस्तान	
पश्चिमी पंजाब	७६,७६६
सिन्ध	५३,४४७
उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश	३६,२५६
बलूचिस्तान	१३४,००२
केन्द्रीय राजधानी	८१२
	३६४,७३७

कुल मिलाकर पाकिस्तान का क्षेत्रफल बर्मा के क्षेत्रफल से कुछ कम है। मोटे तौर पर ग्रेट ब्रिटेन और फ्रांस के संयुक्त क्षेत्रफल के समान है। यह संसार का सबसे बड़ा मुस्लिम राष्ट्र है।

पाकिस्तान की तट रेखा काफी लम्बी है और खूब कटी-फटी है। बंगाल की खाड़ी में छिछली कटानें हैं और इनमें छोटी-छोटी नालियाँ व खाड़ियाँ पायी जाती हैं। इसके विपरीत अरब सागर की तरफ तटरेखा बहुत कुछ सपाट है।

जनसंख्या

सन् १९५४ में पाकिस्तान की कुल आबादी ७५८ लाख थी। इनमें से कोई ७ करोड़ आदमी प्रान्तों में निवास करते हैं। निम्न प्रान्तों व राज्यों में जनसंख्या का वितरण इस प्रकार है :—

प्रदेश	क्षेत्रफल (वर्ग मील)	जनसंख्या
पूर्वी पाकिस्तान	५४,५०१	४२,०६२,६१०
पंजाब और बहावलपुर	६३,१३४	२०,६५१,१४०
सीमा प्रान्त	६४,२५६	५,८६६,६०५
बलूचिस्तान	१३४,००२	१,१७४,०३६
कराची	५६६	१,१२६,४१७
कुल योग	३६४,७३७	७५,८४२,१६५

जनसंख्या का औसत घनत्व २०० मनुष्य प्रति वर्गमील है, परन्तु इसका वितरण बड़ा विषम है। पूर्वी बंगाल में एक वर्गमील में ७९२ मनुष्य रहते हैं जबकि बलूचिस्तान में केवल ६ मनुष्यों का ही औसत है। पाकिस्तान के ८० प्रतिशत मनुष्य मुसलमान हैं। सम्पूर्ण पाकिस्तान में सबसे घना बसा भाग पूर्वी पाकिस्तान का टिपरा जिला है। उसके बाद ढाका आता है। प्रति वर्गमील घनत्व क्रमशः १५०० और १४९२ व्यक्ति है।

जनसंख्या के दृष्टिकोण से पाकिस्तान का संसार में पांचवां स्थान है। केवल चीन, भारत, रूस और संयुक्त राष्ट्र की जनसंख्या इनसे अधिक है। ८० प्रतिशत गांवों में रहते हैं जबकि भारत में ग्रामवासियों की संख्या ६८ प्रतिशत है।

पाकिस्तान के विभिन्न भागों में जनसंख्या (१९५४)

पश्चिमी पाकिस्तान	१०६० लाख
पूर्वी पाकिस्तान	४२० लाख

पश्चिमी पाकिस्तान के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रान्त शामिल हैं :—

पश्चिमी पंजाब	१८८ लाख
सिन्ध	४४ ,,
सीमांन्त प्रदेश	५४७ ,,
बलूचिस्तान	६ ,,
कवायली भाग	२३८ ,,
वहावलपुर	१८ ,,
अन्य राज्य	८ ,,
कराची	११ ,,
	१०६० ,,

१९५५ में उपर्युक्त सभी राज्यों को मिलाकर पश्चिमी पाकिस्तान को परिवर्तित कर दिया गया है।
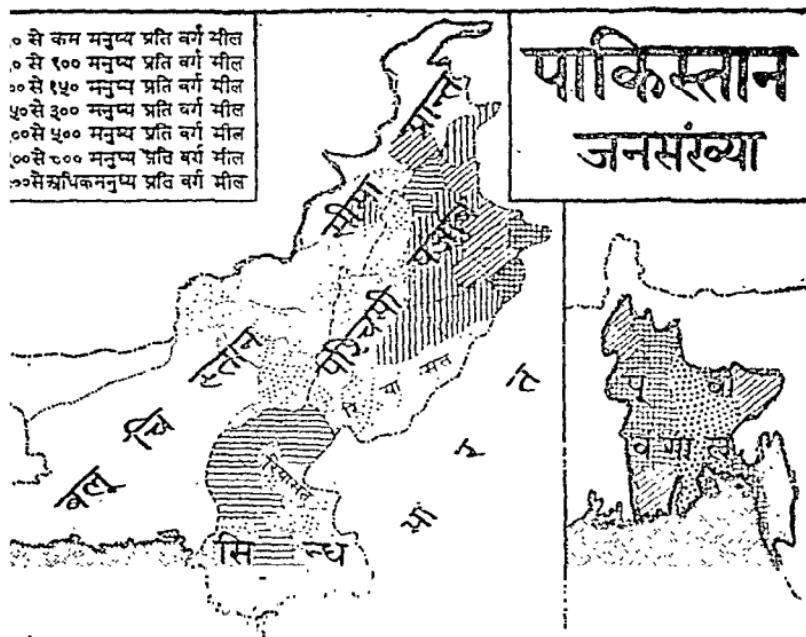
चित्र ७७—पूर्वी पाकिस्तान व पश्चिमी पंजाब के नहर द्वारा सिंचित प्रदेश की जनसंख्या का घनत्व ध्यान देने योग्य है।

पाकिस्तान के शासन की भाषा उर्दू है। परन्तु इसके अलावा तीन और भाषाएँ जाती हैं। पूर्वी बंगाल में बंगाली, सिन्ध में सिन्धी और सीमान्त प्रदेश में

पश्तो। यहाँ के ८० प्रतिशत लोग मुसलमान हैं। इस्लाम के द्वारा यहाँ के लोगों के बीच सामाजिक, नैतिक व कानूनी एकता स्थापित हो गई है। उर्दू यहाँ की राष्ट्र भाषा घोषित कर दी गई है यद्यपि हर प्रान्त की भाषा अलग-अलग है।

जाति के दृष्टिकोण से पाकिस्तान के लोग विभिन्न जाति के हैं जैसे इंडो आर्यन, सेमिटिक, मंगोल और द्रविड़। पश्चिमी पंजाब और उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त के लोग आर्य हैं। बलूच और सिन्धी लोग सेमेटिक वंश के हैं और पूर्वी बंगाल के लोगों में द्रविड़ व मंगोल जातियों का सम्मिश्रण है।

प्राकृतिक विभाग

भौगोलिक दृष्टिकोण से पाकिस्तान को ६ भागों में बांटा जा सकता है:—

पश्चिमी पाकिस्तान—
(१) शुष्क पठार
(२) उत्तरी पश्चिमी पहाड़ी भाग
(३) शुष्क मैदान
(४) रेगिस्तान

पूर्वी पाकिस्तान—
(५) नवीन डेल्टा विभाग—तर निम्न भूमि
(६) गंगा व ब्रह्मपुत्र का दुआब

(१) सारा का सारा बलूचिस्तान एक शुष्क पठार है और मानसूनी हवाओं के प्रभाव क्षेत्र के बाहर पड़ता। यहाँ की जलवायु विषम है। अतः अधिक सर्दी व अधिक गर्मी पड़ती है और वर्षा सूक्ष्म व अनिश्चित होती है। वर्ष भर में कुल सात इंच पानी गिरता है। पानी की कमी के कारण इस प्रदेश के थोड़े से भाग में ही खेती का धंधा होता है और वह भी 'करेज' रीति से। नदियों के बाढ़ के पानी को खेतों में पहुँचा कर खेती करते हैं। यहाँ की मुख्य फसलें ज्वार, बाजरा, गेहूँ और पशुओं का चारा है। मांग-पूर्ति के बाद बहुत थोड़ा अनाज बच जाता है और दूसरे यातायात की असुविधाओं के कारण आसानी से इधर-उधर भेजा भी नहीं जा सकता। फलों की विस्तृत उपज होती है और अंगूर, नाशपाती, आड़ू, खूबानी, सेब व खरबूजों को निर्यात कर दिया जाता है। शहतूत को भी उगाया जाता है। भौगोलिक दृष्टिकोण से यह प्रदेश ईरान के पठार का भाग है और इसकी सफेद कोह श्रेणी ईरान के पहाड़ी प्रदेश से सम्बन्धित है।

(२) उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश और पश्चिमी पंजाब का कुछ भाग शुष्क पहाड़ी क्षेत्र है। यहाँ की वार्षिक वर्षा २० इंच से अधिक नहीं है। पेशावर की घाटी और बन्नू के मैदान में जहाँ आबादी सबसे घनी है, सिंचाई की जाती है। मानसूनी हवायें यहाँ तक पहुँच ही नहीं पातीं और जो कुछ थोड़ी वर्षा होती है वह जाड़े की ऋतु में। यहाँ की भूमि व जलवायु में बड़े-बड़े पेड़ नहीं उग सकते परन्तु सूखी कांटेदार झाड़ियाँ खूब उगती हैं। गेहूँ, चना, ज्वार, बाजरा यहाँ की मुख्य फसलें हैं। यहाँ पर अंगूर, खरबूजे, नाशपाती, आड़ू, अंजीर, अखरोट व अनार खूब होते हैं और अधिकतर बाहर निर्यात कर दिये जाते हैं। पहाड़ियों की तलहटियों में

नदियों के पानी को सिंचाई के लिए रोक लेते हैं। नदियों के किनारे पर बाढ़ के पानी से खेती की जाती है।

(३) मैदान के अन्तर्गत सिन्धु व उसकी सहायक नदियों का मैदान आता है और पश्चिमी पाकिस्तान का उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी-भाग इसी के अन्तर्गत है। इस मैदानी भाग से होकर झेलम, चिनाव, सतलज, रावी और व्यास नदियाँ प्रवाहित होती हैं और सब जाकर सिन्धु नदी में मिल जाती हैं। इस मैदान का उत्तरी पूर्वी-भाग अपेक्षाकृत तर है और वहां बिना सिंचाई के खेती हो सकती है। वर्षा की मात्रा १० से २० इंच तक है। पश्चिमी मैदान बहुत सूखा है और वहाँ की सभी फसलें सिंचाई के सहारे उगाई जाती हैं। इस मैदान का दक्षिणी भाग नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना है और काफी सूखा है। पश्चिम में बलूचिस्तान के पठार से लेकर पूर्व में थार के रेगिस्तान तक यह मैदान फैला हुआ है। सिन्धु की घाटी में सिंचाई के सहारे खेती की जाती है। वर्षा तो १० इंच से भी कम होती है।

(४) सतलज से दक्षिण और सिन्ध प्रान्त के उत्तरी भाग में मरुस्थल की दशायें पायी जाती हैं। वास्तव में यह प्रदेश थार रेगिस्तान का पश्चिमी भाग है और वर्षा का औसत ५ इंच से भी कम रहता है।
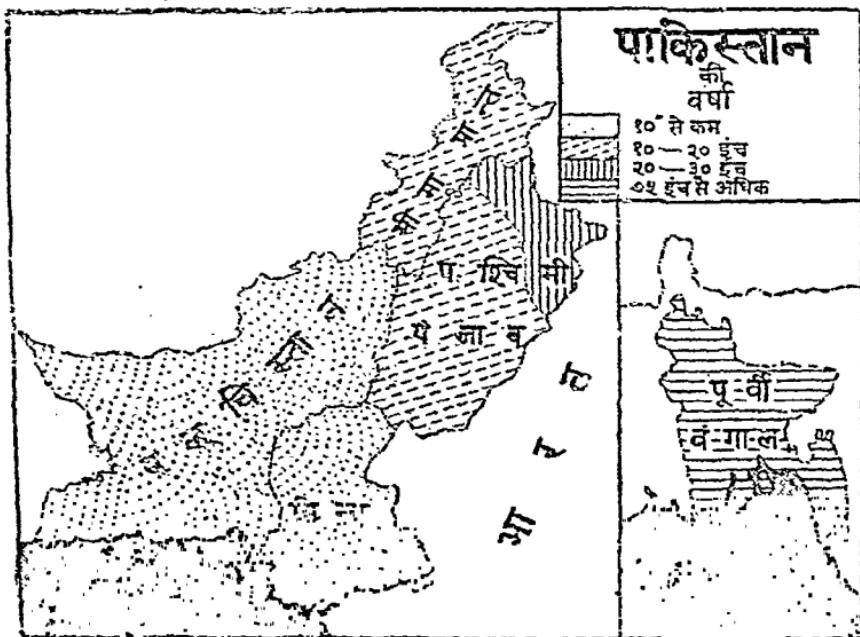
चित्र ७८—उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश को छोड़कर पश्चिमी पाकिस्तान निम्न वर्षा का प्रदेश है। खेती का धंधा सिंचाई पर निर्भर रहता है। पूर्वी पाकिस्तान में वर्षा का सालाना औसत ७५ इंच रहता है और साल भर बराबर खूब वर्षा होती है।

पश्चिमी पाकिस्तान की जलवायु बड़ी विषम है। सर्दियों में खूब ठंडक पड़ती है और पानी तक जम जाता है। गर्मियों में काफी गर्मी पड़ती है और औसत तापमान १२० डिग्री तक पहुंच जाता है। इस विषम जलवायु के कारण यहां के लोग मेहनती व ताकतवर होते हैं। उनका स्वास्थ्य खूब अच्छा और काम करने की शक्ति अधिक होती है।

(५) पूर्वी बंगाल का निचला भाग नवीन डेल्टा है। हर साल नदियों द्वारा बहाकर लाई हुई बहुत-सी मिट्टी इस भाग में इकट्ठी हो जाती है। यहाँ पर आम, अन्नास और केले खूब होते हैं। मानसून के दिनों में इस प्रदेश का बहुत अधिक भाग पानी के नीचे रहता है और बाढ़ हटने पर उपजाऊ मिट्टी की एक तह पड़ी रह जाती है। यह भाग नदियों का प्रदेश है और सड़कें बहुत कम हैं। इस प्रदेश के आर-पार कई नदियां बहती हैं और अन्त में बंगाल की खाड़ी में जाकर मिल जाती हैं।

वर्षा हर साल ७५ इंच से अधिक ही होती है और भूमि भी खूब उपजाऊ है। चावल, गन्ना और पटसन यहाँ की प्रमुख फसलें हैं। पूर्वी बंगाल की जलवायु उपोष्ण कटिबन्धीय है परन्तु वायुमण्डल में नमी की मात्रा बहुत अधिक रहती है।

(६) उत्तरी बंगाल वास्तव में गंगा-ब्रह्मपुत्र दुआब का ही एक भाग है। भूमि साधारणतया सपाट है। केवल कहीं-कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियां छितरी पायी जाती हैं।

पूर्वी पाकिस्तान में मानसूनी जलवायु पायी जाती है। गर्मी में उच्च तापमान और आर्द्रता यहां की विशेषता है। सर्दियां साधारण ठंडी होती हैं। जाड़ों में तापमान ६४° फ. और गर्मियों में ८४° फ. रहता है।

सिंचाई

पाकिस्तान का नहर सिंचाई के दृष्टिकोण से संसार में दूसरा स्थान है। यहाँ ३ करोड़ एकड़ भूमि पर नहरों द्वारा सिंचाई की जाती है। पश्चिमी पाकिस्तान के लिये तो सिंचाई आवश्यक है। यहाँ वर्षा केवल अनिश्चित ही नहीं है बल्कि उसकी मात्रा कभी कम कभी ज्यादा होती रहती है। सिन्ध व बलूचिस्तान में वर्षा का वार्षिक औसत १० इंच से भी कम है। पश्चिमी पंजाब व सीमान्त प्रदेश में १० से २० इंच तक वर्षा होती है। केवल पश्चिमी पंजाब के सुदूर-पूर्वी भाग में २० इंच से अधिक वर्षा होती है।

वर्षा की अनिश्चितता व विभिन्नता का यह हाल है कि साधारणतः हर पांचवें साल सूखा पड़ता है और हर दसवें साल अकाल की दशायें फैल जाती हैं। अतः पश्चिमी पाकिस्तान सिंचाई के साधनों पर निर्भर रहता है। भारत में केवल १८ प्रतिशत भूमि पर ही सिंचाई की जाती है। परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान की ३४ प्रतिशत भूमि सींची जाती है। पश्चिमी पंजाब तो एक नहर छावनी है। यहाँ पर सिंचाई के साधनों के लिये आदर्श दशायें पायी जाती हैं। इस प्रान्त में सिन्धु व उसकी सहायक नदियां हाथ की अंगुलियों की भांति फैली हुई हैं और केवल उत्तरी पूर्वी भाग

(उ) **ऊपरी बारी द्वाब नहर**—माधोपुर से निकलती है और भारत के अमृतसर जिले से होकर आती है तथा लाहौर और मांटगोमरी जिलों की भूमि को सींचती है। सम्पूर्ण पंजाब में इस नहर का बड़ा महत्व था और यह सब से पुरानी भी है।

पश्चिमी पंजाब की अधिकतर नहरों का स्रोत व नदियां पूर्वी पंजाब व काश्मीर में हैं। सब नहरों में कुल मिलाकर २,८५,००० गैलन पानी प्रति सैंकड़ बहता है और इनकी नालियों की कुल लम्बाई ५४,३०० मील है। इस दृष्टिकोण से **त्रिविध नहर योजना** विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह इंजीनियरिंग योग्यता का एक विलक्षण नमूना है। निचली बारी द्वाब नहर में काफी पानी नहीं रहता क्योंकि रावी का अधिकतर पानी माधोपुर में पूर्वी पंजाब की ऊपरी बारी द्वाब नहर में चला जाता है। इसलिये ऊपरी चिनाव नहर को बल्लोकी नामक स्थान पर निचली बारी द्वाब नहर से मिला दिया गया है। फिर ऊपरी चिनाव नहर के कारण निचली चिनाव नहर में काफी पानी नहीं पहुंच पाता। अतः ऊपरी झेलम नहर के पानी को निचली चिनाव में खामकी स्थान पर डाल देते है। यह कुल योजना सन १९३३ में बनकर तैयार हुई थी। इससे ४० लाख एकड़ भूमि सींची जाती है।

बहावलपुर राज्य में भी तीन नहरें हैं—बहावलपुर नहर, फोर्डवान नहर और सिदीकिया नहर। ये तीनों ही नहरें सतलज से निकलती हैं। बहावलपुर में एक नई सिचाई योजना तैयार हो रही है जिसकी सहायता से २ लाख ६० हजार एकड़ भूमि पर सिचाई द्वारा खेती हो सकेगी।

सिन्ध की औसत वार्षिक वर्षा केवल दो इंच है परन्तु सिर्फ सिचाई की सहायता से इस प्रदेश में १० लाख टन चावल व ज्वार बाजरा और ९० हजार टन कपास उत्पन्न की जाती है।

सिन्ध में ६० लाख एकड़ भूमि या ७४ प्रतिशत कृषि भूमि पर सिचाई की जाती है। सिंध की लायड बांध योजना विलक्षण है। बम्बई के भूतपूर्व गवर्नर लार्ड लायड के परिश्रम के फलस्वरूप यह बांध बना। इसीलिए इसका नाम उनके नाम के आधार पर रख दिया गया है। यह बांध सन् १९२३ में बनना शुरू हुआ था और ९ साल बाद सन् १९३२ में पूरा बन कर तैयार हुआ। सिन्ध नदी के आरपार सक्खर स्थान पर एक बांध बनाया गया है। इस प्रकार पानी को रोक कर नहरों द्वारा सिन्ध के विभिन्न भागों को पानी पहुँचाया जाता है। इस प्रकार नहरों व उनकी शाखाओं की कुल लम्बाई ७४,००० मील है। उत्तरी सिंध में इस बांध योजना की नहरों का पानी नहीं पहुँच पाता है। अतः वहां पर निम्नलिखित तीन नहरों द्वारा सिचाई होती है : (अ) रेगिस्तान नहर (आ) बेगारी नहर और (इ) अनहर वाह नहर। दक्षिणी सिंध में सिचाई की दो नहरें हैं : (अ) कराची नहर और (आ) फुलेली नहर। यहां की दो सब से बड़ी नहरें पूर्वी नारा और पोहरी क्रमशः २२६ मील और २०८ लम्बी हैं। इन सब नहरों की सहायता से सिन्ध जैसा मरुस्थली प्रदेश भी सुन्दर बगीचा बन गया है।

उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश में स्वात नदी से कई नहरें निकाली गई हैं जिनके द्वारा ४ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई होती है। सन् १९१४ में **ऊपरी स्वात नहर** बनाई गई। इसके द्वारा उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश की ७० प्र. श. भूमि सींची जाती है।

पश्चिमी पाकिस्तान में सिंचाई की नहरों को बढ़ाने की काफी संभावनाएँ हैं। इस समय चार योजनाओं पर काम हो रहा है—दो पश्चिमी पंजाब में और दो सिंध में। इसके अलावा सरकार ने दो बहुधन्धी योजनाओं पर काम आरम्भ किया है—एक उत्तरी पश्चिमी सीमांत प्रदेश के वारसक स्थान पर दूसरी पश्चिमी पंजाब के रसूल स्थान पर। इन सब योजनाओं पर काम पूरा होने से १२० लाख अतिरिक्त भूमि पर सिंचाई हो सकेगी।

उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश में **वारसक योजना** से १ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी और पेशावर जिले में ६०,००० एकड़ भूमि पर सिंचाई की जावेगी। इसके अलावा सीमान्त भागों में कई हजार एकड़ भूमि को भी सींचा जा सकेगा। कोहाट घाटी में इस योजना की बिजली से ट्यूब वेल बनाये जा सकेंगे। इस बिजली से मुलागिरि संगमरमर की खानों में खुदाई हो सकेगी। बिजली शक्ति उपलब्ध हो जाने पर पेशावर और कोहाट के समीप की कोयला संपत्ति, जिप्सम का भंडार, मुहम्मद जिले की तांबा संपत्ति तथा अन्य छोटे-छोटे उद्योगों का उपभोग व विकास हो सकेगा। नहरों द्वारा नाव्य जलमार्गों का भी प्रबंध हो जायेगा। अतः उत्तरी सीमान्त प्रदेश और पश्चिमी पंजाब के बीच यातायात का भी प्रबन्ध हो जायेगा।

पश्चिमी पंजाब में सिंचाई के लिए कई कुएँ भी खोदे जा रहे हैं। लायलपुर, झंग, शेखुपुरा और सरगोधा में शक्ति द्वारा चालित पम्पदार कुओं से सिंचाई की जाती है। बिलोचिस्तान में करेज विधि द्वारा सिंचाई की जाती है। यहाँ की ऊपरी भूमि मुलायम व छिद्रार है परन्तु नीचे की सतह कठोर व जल-निरोधक है। अतः वर्षा का पानी बीच की सतह में इकट्ठा हो जाता है। और ऊपरी सतह से २०-२५ फीट नीचे पानी का बहाव पाया जाता है। इस जलराशि को करेज के द्वारा ऊपरी सतह पर ले आते हैं। इस विधि के अनुसार सतह पर १५-२० गज की दूरी पर कुएँ बना देते हैं। और उन्हें नीचे एक नहर या नाली द्वारा मिला देते हैं। इस नहर द्वारा पानी बहता है और फिर जब सतह पर आ जाता है तो इसके द्वारा सिंचाई की जाती है।

कृषि

पाकिस्तान का सबसे महत्त्वपूर्ण उद्यम खेती है और वहां की नव-दशमांश जनसंख्या इसी पर निर्भर रहती है। खेती के दृष्टिकोण से पाकिस्तान को ६ प्रदेशों में बांटा जा सकता है—(१) उप-पहाड़ी उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश, (२) पश्चिमी पंजाब में गुजरात और स्यालकोट के उत्तरी-पूर्वी मैदान, (३) उत्तरी पश्चिमी पंजाब जिसके अन्तर्गत रावलपिण्डी, झेलम, अटक, मियांवाली, पेशावर,

कोहाट और वन्नू के जिले शामिल हैं, (४) पश्चिमी पंजाब के दक्षिणी-पश्चिमी मैदान जिसके अन्तर्गत गुजरांवाला, लाहौर, लायलपुर, मांटगोमरी, मुलतान, वहावलपुर, डेरा गाजीखान और डेरा इस्माइल खान के जिले सम्मिलित हैं, (५) निचला सिंध और (६) पूर्वी बंगाल। पाकिस्तान की १२३० लाख एकड़ भूमि में केवल ५ करोड़ ६० लाख एकड़ भूमि पर खेती होती है।

यहाँ की खेती की मुख्य फसलें, गेहूँ, चावल, मक्का, गन्ना, चाय, पटसन, कपास, तिलहन और तम्बाकू हैं। पाकिस्तान में मांगपूर्त्ति से अधिक उत्पादन होता है। अत: वहाँ की जनता की मांग को पूरी करने के बाद थोड़ा गेहूँ और बहुत काफी कपास व पटसन निर्यात किया जा सकता है।

खेती की विशेषताएँ—चूँकि बहुत अधिक लोग खेती के उद्यम में लगे हुए हैं इसलिए पाकिस्तान सरकार अपने यहाँ की खेती को सहकारी समितियों व मशीनों द्वारा चलाने की योजना पर सोच-विचार कर रही है। इससे किसानों की आर्थिक दशा सुधर जाएगी और उत्पादन की मात्रा भी बढ़ जावेगी। पश्चिमी पंजाब के कुछ भागों में मशीनो द्वारा खेती शुरू हो गई है। बिलोचिस्तान में फलों के बगीचों में मशीनों की सहायता ली जावेगी। सिंध में मशीनों द्वारा खेती करने की जरूरत नहीं होगी क्योंकि वहाँ की सिंचाई योजनाओं से उत्पादन अपने आप बढ़ जावेगा। चिटगांव के पहाड़ी क्षेत्र में चेन्गारी घाटी के प्रदेश में मशीनों द्वारा खेती की जावेगी। इस समय पूर्वी पाकिस्तान का डेल्टा प्रदेश बीमारियों से आच्छादित है और इसलिए वहाँ खेती का धंधा नहीं होता। संयुक्त राष्ट्र संघ की विश्व स्वास्थ्य समिति और भोजन व कृषि समिति की प्रेरणा व सहायता से कृषि के नये तरीकों द्वारा इस प्रदेश को खेती योग्य बनाने का प्रयत्न हो रहा है।

पाकिस्तान की ८५ प्र. श. कृषि भूमि पर खाद्यान्न फसलें ही उगाई जाती हैं। सन् १९५१-५२ में पाकिस्तान की कुल १२३० लाख एकड़ भूमि में से ५६० लाख एकड़ भूमि पर खेती होती थी। इसका आधा भाग पूर्वी पाकिस्तान में है। अत: पाकिस्तान को खाद्य फसलों का उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है। जरूरत इस बात की है कि खाद्यानों को उगाने वाली भूमि पर औद्योगिक फसलें उगाई जावें ताकि देश-विदेश में उनका अधिक मूल्य प्राप्त हो सके।

पाकिस्तान की खाद्य फसलें—पाकिस्तान में ३५० लाख एकड़ भूमि पर विविध खाद्य फसलें उगाई जाती हैं और खाद्यान्नों का कुल वार्षिक उत्पादन १२० लाख टन है। क्षेत्रफल का वितरण इस प्रकार है—चावल (२३० लाख एकड़ और उत्पादन ८० लाख टन), गेहूँ (१०० लाख एकड़ और उत्पादन ३० लाख टन)। बाकी भूमि पर मक्का, ज्वार, बाजरा और जौ की फसलें उगायी जाती हैं। चावल का वार्षिक उत्पादन ८० लाख टन है और गेहूँ का वार्षिक उत्पादन ३० लाख टन। इस प्रकार घरेलू उपभोग, बीज हानि व खेत के भंडार को लेकर पाकिस्तान में प्रतिवर्ष ४.५ लाख टन अनाज बढ़ती बच जाता है।

खेतिहर उत्पादन और क्षेत्रफल
(१९५३-५४)

	उत्पादन (हजार टन)	क्षेत्रफल हजार एकड़
चावल	६१५१	२४,५३३
गेहूँ	३५६०	१०,४००
कपास	२५२	३,०९४
गन्ना	१२६२६	६६२
चाय (हजार पौंड)	२३२	७५
पटसन (हजार गांठ)	४७७	७६०
बाजरा	४५५	२५८५
ज्वार	२८०	१५०४
मक्का	४३७	१०६७
जौ	१५६	६१३
चना	—	२४५८
राई	२७२	१६३१

चावल—पूर्वी पाकिस्तान के लोगों का मुख्य भोजन है। पाकिस्तान में २२० लाख एकड़ भूमि पर चावल की खेती की जाती है और इसका बड़ा अंश पूर्वी बंगाल
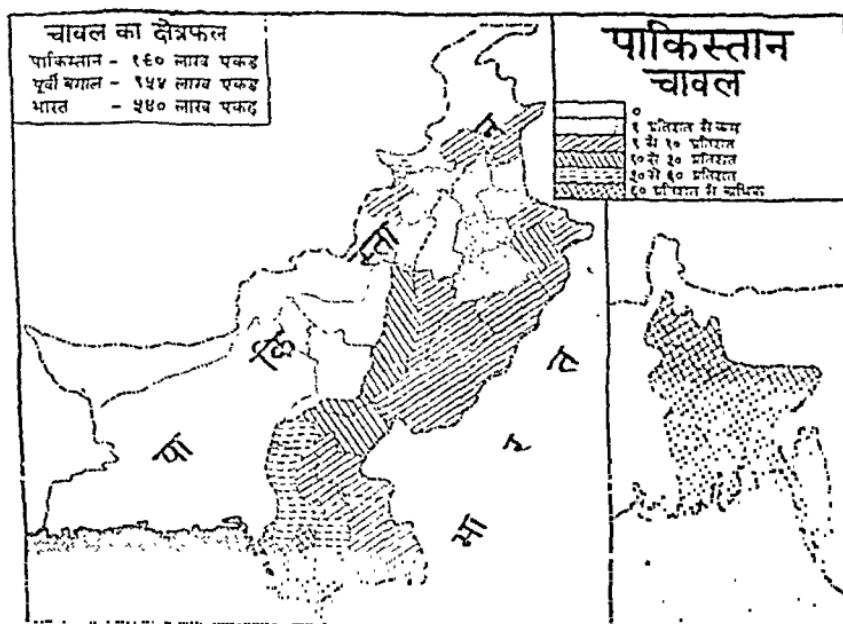
चित्र ८१—पूर्वी बंगाल में चावल की खेती का केन्द्रीभवन ध्यान देने योग्य है। ६० प्र० श० भूमि पर चावल की खेती होती है।

में है। पूर्वी बंगाल में २ करोड़ एकड़ भूमि पर चावल उगाया जाता है। सिन्ध और सिलहट में ३० लाख एकड़ भूमि पर चावल की खेती होती है। पश्चिमी पंजाब में भी ५ लाख एकड़ भूमि पर चावल उगाया जाता है। लेकिन पूर्वी पाकिस्तान के प्रत्येक जिले में ६० प्र० श० से अधिक कृषि भूमि पर चावल की ही खेती होती है।

पाकिस्तान में चावल का कुल उत्पादन ८० लाख टन है और इसमें ७० लाख टन चावल अकेले पूर्वी पाकिस्तान से ही प्राप्त होता है। परन्तु उत्पादन से मांग कोई तीन लाख टन अधिक है इसलिए पूर्वी पाकिस्तान को पश्चिमी पाकिस्तान से चावल मंगवा कर अपनी घरेलू मांग पूरी करनी पड़ती है।

पाकिस्तान में ८४ चावल मिलें हैं और वे सभी पूर्वी पाकिस्तान में केन्द्रित हैं।

गेहूँ के मुख्य उत्पादन क्षेत्र पश्चिमी पंजाब, सिन्ध और उत्तरी पश्चिमी सीमान्त प्रदेश हैं। इन तीनों क्षेत्रों में करीब १ करोड़ एकड़ भूमि पर गेहूँ उगाया जाता है और वार्षिक उत्पादन ४० लाख टन है।

गेहूँ का उत्पादन व क्षेत्रफल (१९५२)

क्षेत्र	उत्पादन हजार टन	क्षेत्रफल हजार एकड़
पश्चिमी पंजाब	३००७	७२८३
उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रांत	२६५	११०१
सिन्ध	२८९	१२०२
अन्य रियासतें	३२०	८८८
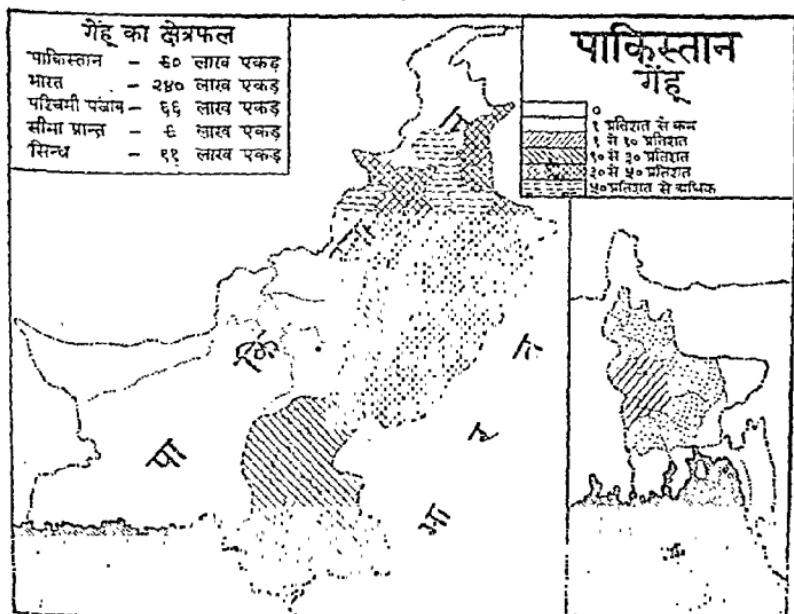
चित्र ८२—पश्चिमी पंजाब व पाकिस्तान के जिले में ३० प्र० श० से अधिक कृषि भूमि पर गेहूँ की फसल उगाई जाती है।

पश्चिमी पाकिस्तान में गेहूं नवम्बर-दिसम्बर के महीने में बोया जाता है और मई तक फसल काट ली जाती है। पश्चिमी पंजाब में गेहूँ की प्रति एकड़ उपज ७०० पौंड है और सिन्ध में ६०० पौंड। मुजफ्फरगढ़, अटक, झेलम और सियालकोट के जिलों में ५०-६० प्रतिशत कृषि भूमि पर गेहूँ बोया जाता है। पूर्वी पाकिस्तान में अधिक वर्षा के कारण गेहूँ की खेती संभव नहीं है फिर भी राजशाही, पबना और कुस्तिया के ज़िलों में थोड़ा बहुत गेहूँ उगाया जाता है। पूर्वी पाकिस्तान में ६४००० एकड़ भूमि से २०००० टन गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। पश्चिमी पाकिस्तान में मांग से अधिक गेहूँ उत्पन्न होता है और इसलिए निर्यात भी किया जाता है।

जौ, मक्का और दालें—पाकिस्तान की अन्य खाद्य फसलें हैं। जौ की उपज बहुत थोड़ी होती है और वह सबकी सब उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रांत से प्राप्त होती है। मरदान और पेशावर के जिले जौ उत्पादन के लिये विशेष उल्लेखनीय हैं। कुल ५,७१,००० एकड़ भूमि पर जौ की खेती होती है। इसमें से २,८८,००० एकड़ भूमि पश्चिमी पंजाब में और १,३८,००० एकड़ भूमि सीमाप्रांत में है। वार्षिक उत्पादन की मात्रा १,६१,००० टन है। सन् १९५२-५३ में १,१२,००० टन जौ उत्पन्न हुआ।

मक्का भी पश्चिमी पाकिस्तान और उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रांत में खूब विस्तृत रूप से उगाया जाता है। सन् १९५२ में १० लाख एकड़ भूमि में मक्का की खेती होती थी। पश्चिमी पंजाब और सिन्ध में मक्का की खेती का कुल क्षेत्रफल आधा-

चित्र ८३—सीमाप्रांत का मध्य भाग और पश्चिमी पंजाब का उत्तरी भाग मक्का उत्पादन का प्रधान केन्द्र है।
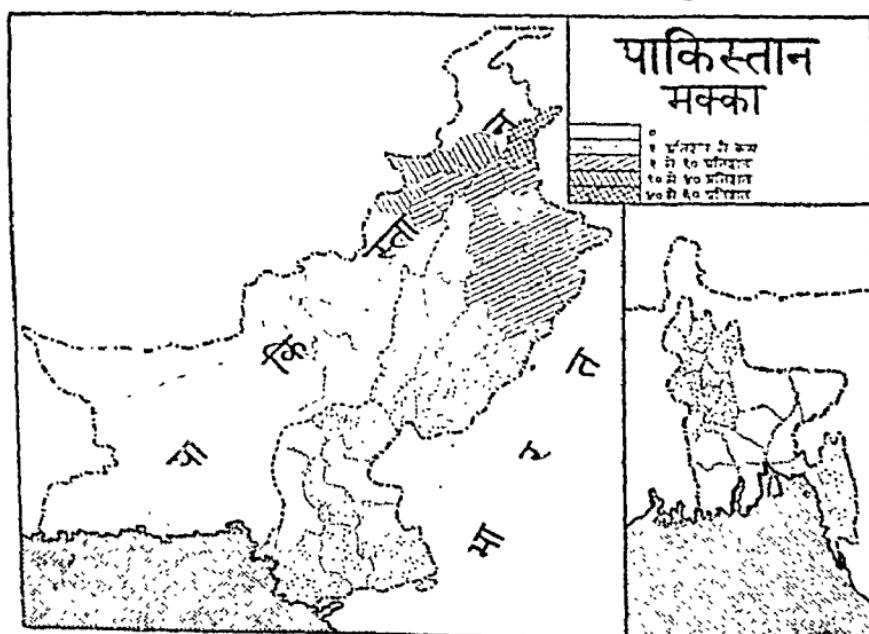
आधा बंटा हुआ है। औसत वार्षिक उत्पादन ४ लाख टन है। सन् १९५३ में कुल उत्पादन ३,७५,००० टन थ।

पश्चिमी पंजाब के रावलपिंडी, अटक, झेलम और गुजरात के जिलों में सबसे अधिक भूमि पर मक्का की खेती होती है। हाल में शेखूपुरा, स्यालकोट और गुजरांवाला में मक्का की खेती का क्षेत्रफल बढ़ गया है। सिन्ध में सक्कर व हैदराबाद के जिले मक्का उत्पादन के लिये विशेष उल्लेखनीय हैं।

चना भी पाकिस्तान की एक प्रमुख फसल है और करीब ३० लाख एकड़ भूमि पर चना बोया जाता है। इसका ९८ प्रतिशत भाग पश्चिमी पंजाब में है। थोड़ी वहुत मात्रा में चना सिन्ध, सीमाप्रांत और पूर्वी बंगाल में भी उगाया जाता है। सन् १९५२-५३ में इस भाग से ३ लाख ७० हजार टन चना उत्पन्न हुआ था। यद्यपि पश्चिमी पंजाब के प्रत्येक जिले में चना उगाया जाता है। परन्तु शाहपुर, मांटगोमरी और मुल्तान इसके लिये विशेष क्षेत्र हैं।

पाकिस्तान में चने का उत्पादन व क्षेत्र (१९५२)

राज्य	उत्पादन (हजार टन)	क्षेत्रफल (हजार एकड़)
पूर्वी बंगाल	४०	२००
सीमाप्रांत	३३	२१४
सिंध	८३	३५९
पश्चिमी पंजाब	४९७	१७८
खैरपुर व बहालपुर	९७	३७५
कुलयोग पाकिस्तान	७४३	२८१३
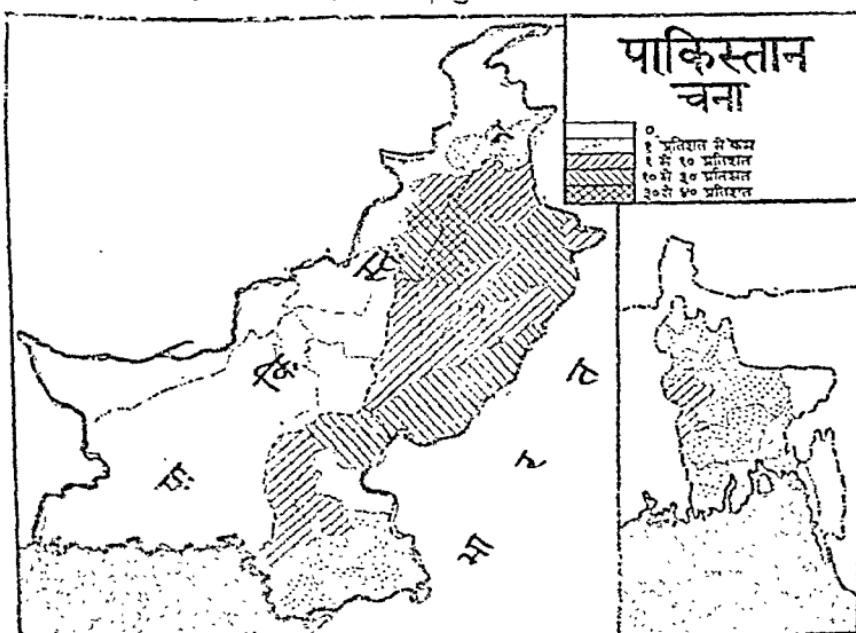
चित्र ८४—चने की खेती सिन्धु व उसकी सहायक नदियों की घाटियों में विशेष रूप से होती है।

पाकिस्तान में खाद्यान्नों का उत्पादन बहुत संतोषजनक है। पश्चिमी पाकिस्तान में गेहूँ व चावल का उत्पादन मांग पूर्ति से अधिक होता है। इस प्रकार पूर्वी पाकिस्तान में अनाज की कमी पश्चिमी पाकिस्तान के द्वारा पूरी हो जाती है। खेती की विधियों में सुधार हो जाने, सिंचाई के साधनों के बढ़ जाने और अधिक धन व यातायात की सुविधाओं की सहायता से पश्चिमी पाकिस्तान में खाद्यान्नों का उत्पादन इतना अधिक बढ़ सकता है कि वर्तमान जन-संख्या से कहीं अधिक लोगों का निर्वाह हो सकेगा।

व्यवसायिक फसलें

गन्ना—पाकिस्तान में ७ लाख एकड़ भूमि पर गन्ने की खेती की जाती है और पश्चिमी पंजाब व पूर्वी बंगाल इसकी खेती के मुख्य क्षेत्र हैं।

पश्चिमी पंजाब में मांटगोमरी, लायलपुर, स्यालकोट और लाहौर के जिले; पूर्वी बंगाल में दिनाजपुर, रंगपुर, ढाका और मेमनसिंह के जिले गन्ना उत्पादन के लिए विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। गन्ने का कुल उत्पादन ८,७४,००० टन है। अतः पाकिस्तान को भारत से आयात की हुई चीनी पर निर्भर रहना पड़ता है और निकट भविष्य में रहना भी पड़ेगा।
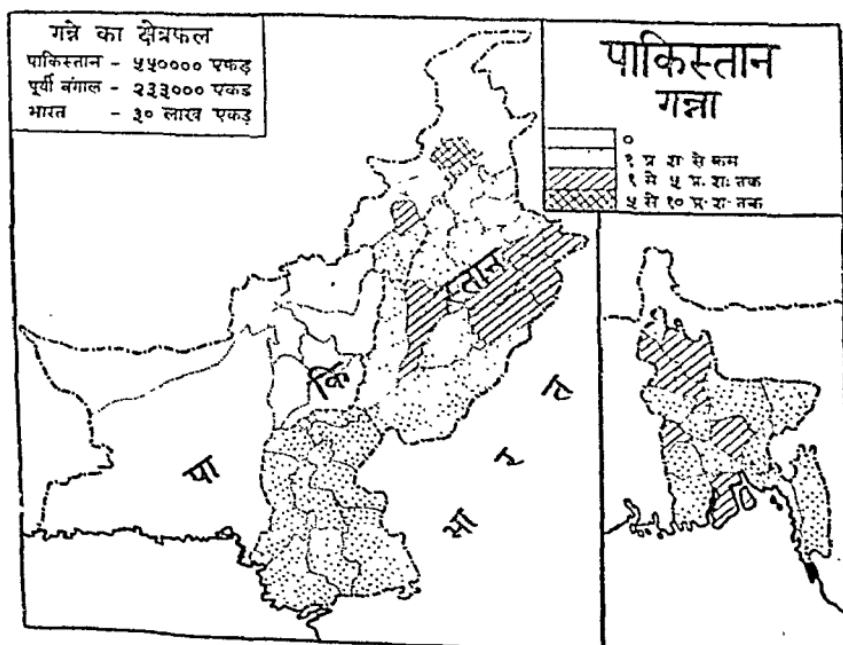
चित्र ८५—सीमाप्रांत, पश्चिमी पंजाब की नहर छावनियों और पूर्वी बंगाल के मेमनसिंह जिले में गन्ने का उत्पादन विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है।

पाकिस्तान में गन्ने का उत्पादन क्षेत्र (१९५१-५२)

प्रांत	क्षेत्रफल (हजार एकड़)	प्रांत	क्षेत्रफल (हजार एकड़)
पूर्वी बंगाल	२२६	सिन्ध	१७
सीमाप्रांत	८२	पश्चिमी पंजाब	३३५
		कुलयोग (पाकिस्तान)	७००

तम्बाकू भी पाकिस्तान की एक प्रमुख व्यवसायिक फसल है। इसका उत्पादन अधिकतर पूर्वी बंगाल में होता है। रंगपुर, दिनाजपुर, और चिटगाँव इसके उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र हैं। रंगपुर की १५ प्र. श. कृषि भूमि पर तम्बाकू की खेती होती है।
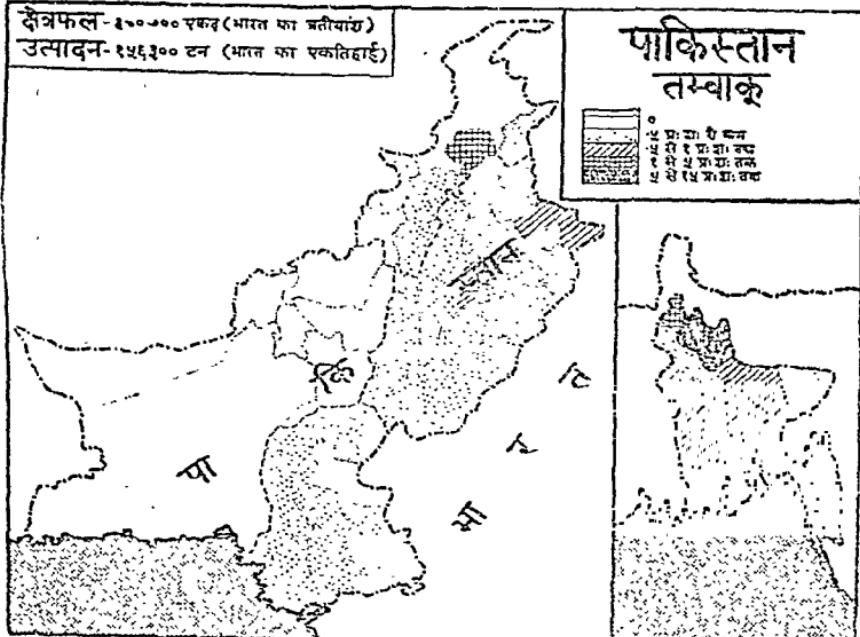
चित्र ८६—पूर्वी पाकिस्तान के रंगपुर और पश्चिमी पंजाब के स्यालकोट जिले में तम्बाकू की खेती विशेष महत्त्वपूर्ण है।

चाय भी बड़ी महत्त्वपूर्ण व्यवसायिक फसल है। यह सिलहट और चिटगांव के पहाड़ी प्रदेशों में ही उगाई जाती है। पाकिस्तान में चाय का वार्षिक उत्पादन ४५० लाख पौंड है जब कि भारत में प्रतिवर्ष ४,०५० लाख पौंड चाय उत्पन्न होती है। इस समय पूर्वी पाकिस्तान में चाय के १२० बगीचे हैं। इन में से १०९ सिलहट में और ३ चिटगांव में हैं। करीब ७५००० एकड़ भूमि पर चाय की खेती होती है। सन् १९४९ से पाकिस्तान अन्तर्राष्ट्रीय चाय समझौते में शामिल है और उसके अनुसार वहाँ ७६७०० एकड़ भूमि पर चाय उगाई जा सकती है।

पाकिस्तान से चाय निर्यात कर दी जाती है और ग्रेट ब्रिटेन इसका मुख्य ग्राहक देश है। प्रतिवर्ष लगभग ३ करोड़ ५० लाख पौंड चाय बाहर भेजी जाती है। सन् १९५२-५३ में ग्रेट ब्रिटेन ने पाकिस्तान से ३ करोड़ ६० लाख पौंड चाय

मंगवाई। सन् १९५३-५४ में चाय की खेती ७५,००० एकड़ भूमि पर की गई और कुल उत्पादन २३,००० टन था।

चाय का निर्यात व्यापार चिटगांव के द्वारा होता है। इस बन्दरगाह से चाय और पटसन दोनों का ही निर्यात होता है। अतः दोनों में काफी स्पर्धा रहती है। चिटगांव से प्रतिवर्ष केवल ६ लाख टन का व्यापार हो सकता है। परन्तु चाय व्यापार की एक दूसरी समस्या चाय बन्द करने के बक्सों की कमी है।

कपास पश्चिमी पाकिस्तान की सबसे प्रमुख व्यवसायिक फसल है। आदिकाल से सिन्धु घाटी में कपास की खेती होती आ रही है और जैसा मोहनजोदारो सभ्यता के चिन्हों से पता चला है यद्यपि पाकिस्तान के सभी भागों में इसकी खेती की जाती है परन्तु पश्चिमी पंजाब व सिन्ध में ९७ प्रतिशत कपास उत्पन्न होती है। पश्चिमी पंजाब की ९० प्र०श० कपास मुल्तान, मांटगोमरी, लायलपुर, शाहपुर, लाहौर, शेखूपुरा और झंग जिलों से प्राप्त होती है। इन जिलो में २०-३० प्र० श० कृषिभूमि कपास की खेती में लगी हुई है।

कपास उत्पादन व क्षेत्रफल (१९५०-५१)

क्षेत्र	हजार एकड़	हजार गांठ (३९२ पौंड)
पश्चिमी पंजाब	१७१३	६२५
सिन्ध	८१३	४५०
रियासतें	४१९	१९४
सीमाप्रांत	११	३
पूर्वी पाकिस्तान	१२५०	१८
	३०११	१३२०

पिछले कुछ दिनों में उत्पादन व क्षेत्रफल दोनों ही कम हो गए हैं। सन् १९४५-४६ में क्षेत्रफल ३ करोड़ ३१ लाख एकड़ और उत्पादन १ करोड़ ५ लाख गांठ था। उत्पादन की कमी का कारण निर्यात की कमी है। वास्तव में ऊँचे दाम व खराब किस्म की वजह से विदेशों में पाकिस्तान का रूई की मांग कम हो गई है। निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने छोटे रेशेवाली कपास पर निर्यात कर भी कम कर दिया है।
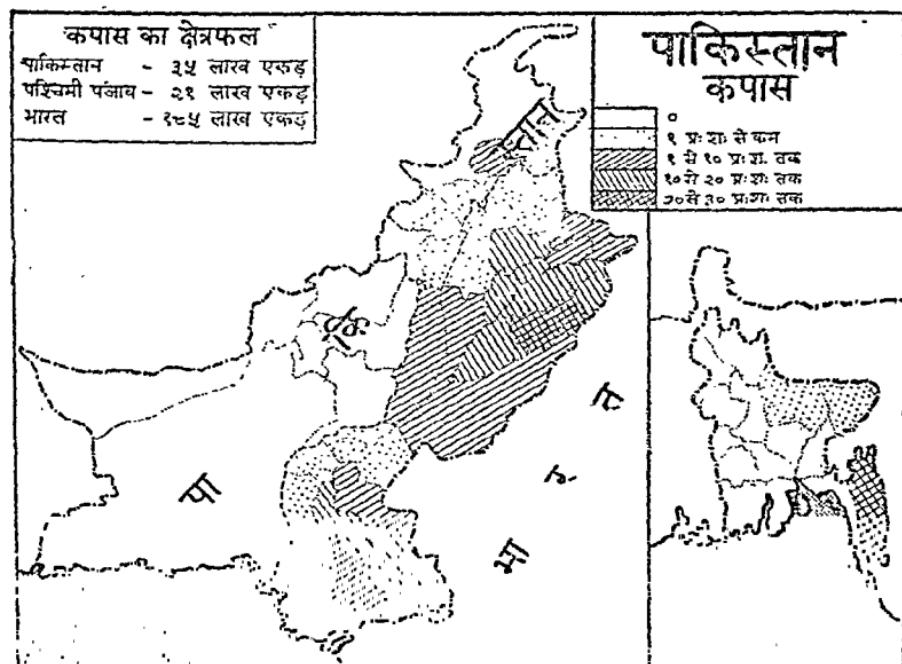
चित्र ८७—पश्चिमी पंजाब के पूर्वी भाग और सिन्ध के हैदराबाद जिले में कपास की खेती विशेष महत्त्वपूर्ण है।

पाकिस्तान अपनी कपास का अधिकतर भाग निर्यात कर देता है और कुल का ८० प्रतिशत भाग अकेला भारत ही ले लेता है।

पटसन के उत्पादन में पाकिस्तान का एकक्षत्र आधिपत्य है। संसार में पटसन के कुल उत्पादन का ८० प्र० श० भाग पूर्वी बंगाल से प्राप्त होता है। सन् १९४९-५० में पाकिस्तान में १५ लाख एकड़ से अधिक भूमि पर पटसन की खेती हुई। पूर्वी पाकिस्तान की ८ प्रतिशत कृषि भूमि या १२ लाख एकड़ भूमि पर पटसन की खेती की जाती है और इस पर सरकारी निरीक्षण रहता है।

संसार में पाकिस्तान का पटसन उत्पादन (हजार मीट्रिक टन)

	संसार	पाकिस्तान
१९३५-३९	१५१०	११२५
१९४०-४४	१६३५	१२५७
१९४५	१४७५	११२१
१९४८	१५७८	१२४२

सन् १९५२-५३ में १९०७ हजार एकड़ भूमि से १२,१८,००० टन पटसन उगाया गया। पूर्वी बंगाल की आर्द्र जलवायु पटसन की खेती के लिए बहुत उपयुक्त है। रेशों की किस्म व मात्रा भूमि पर निर्भर रहती है। पूर्वी बंगाल में पटसन की खेती ३ प्रकार की भूमि पर होती है—(१) उच्च भूमि की उपजाऊ बलुही दोमट

मिट्टी में सबसे उत्तम प्रकार का पटसन उगाया जाता है। (२) चारभूमि पर जो नदियों द्वारा वहाकर लाई हुई मिट्टी से बनी है और नदियों के समीप स्थित रहती है। वर्षा ऋतु में इनमें वाढ़ का पानी भर जाता है और इन भूमियों में खाद भी नहीं देना पड़ता। (३) नदियों के डेल्टा प्रदेश के दलदली निचली भूमि में।

पूर्वी बंगाल में पटसन उगाने वाले चार मुख्य प्रदेश हैं—नारायनगंज, सिराजगंज, उत्तराया और देवरा—और इन्हीं के नामों पर चार प्रकार के पटसन का अलग-अलग नाम पड़ गया है। **नारायनगंज का पटसन** ब्रह्मपुत्र नदी की पुरानी घाटी में मेमनसिंह, ढाका और टिपरह के जिलों में उगाया जाता है। पुरानी ब्रह्मपुत्र के
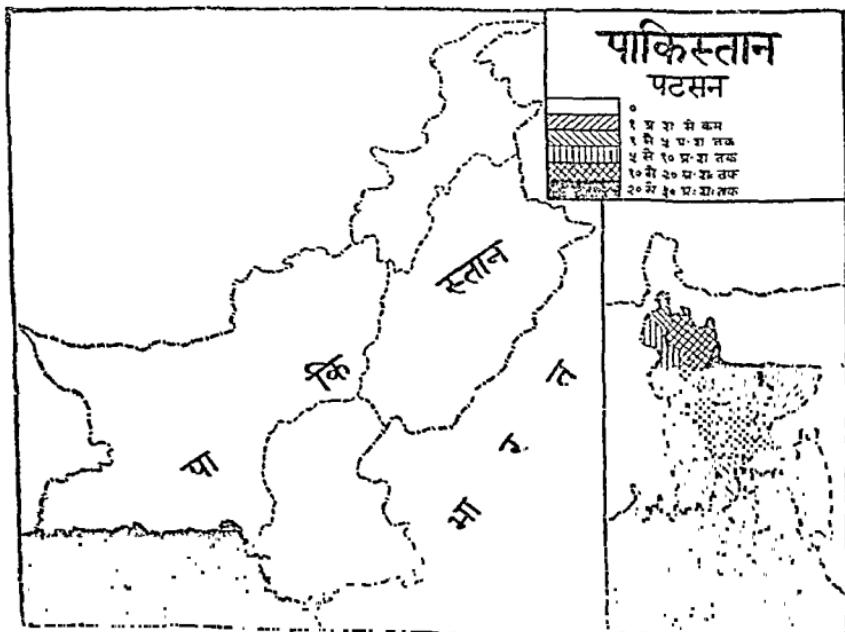
चित्र ८८—पटसन पूर्वी बंगाल की मुख्य उपज है—मेमनसिंह और ढाका इसके मुख्य क्षेत्र हैं।

समान स्वच्छ जल और कहीं नहीं मिलता। परन्तु अधिकतर भूमि उपजकाल में वाढ़ के पानी के नीचे दवी रहती है। अतः पटसन के पौधों के रेशे मुलायम व मोटे हो जाते हैं। इसीलिए यह पटसन सबसे अच्छा होता है।

सिराजगंज का पटसन—पवना, वोगरा, रंगपुर, और पश्चिमी मेमनसिंह जिलों में ब्रह्मपुत्र नदी की नई तलहटी और जमुना नदी की घाटी में उगाया जाता है। जमुना का पानी भी काफी साफ है।

उत्तराया या उत्तरी पटसन—उच्च भूमि से प्राप्त होता है और इस उत्पादन के मुख्य क्षेत्र राजशाही, वोगरा, रंगपुर, दिनाजपुर, और माल्दा हैं। इस प्रदेश में ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियों से जल प्राप्त होता है। परन्तु साफ पानी की कमी के कारण

अधिकतर पटसन को तालाबों के पानी से धोना पड़ता है। इसी गंदले पानी के कारण बहुधा पटसन का रंग मटमैला हो जाता है।

देवरा पटसन—फरीदपुर जिले के उन भागों में उगाया जाता है जहाँ गंगा नदी का पानी उपलब्ध है। यह पटसन बड़ा मजबूत होता है परन्तु साथ-साथ कड़ा रूखा भी होता है। अतः इससे बोरे व डोरियां बनाई जाती हैं।

पूर्वी पाकिस्तान का ७० प्र० श० पटसन अकेले मेमनसिंह से प्राप्त होता है। मध्य फरवरी से अप्रैल के मध्य तक पटसन बोया जाता है और फिर जून के महीने से कटाई प्रारम्भ हो जाती है। कटाई का मौसम सितम्बर के शुरू तक रहता है। पटसन की औसत प्रति एकड़ उपज १२०३ पौंड हैं। सन् १९४७-४८ में पटसन की प्रति एकड़ उपज १३२९ पौंड थी—यह मात्रा संसार में सबसे अधिक है। पूर्वी बंगाल की २० लाख एकड़ भूमि पर पटसन की खेती होती है और प्रतिवर्ष ६९० लाख गांठ पटसन प्राप्त होता है। प्रति गांठ की तौल ४०० पौंड होती है।

पूर्वी पाकिस्तान के किसानों का यह मुख्य उद्यम है और देश की समृद्धि इसी पर निर्भर रहती है। परन्तु पाकिस्तान में पटसन की एक भी मिल नहीं है और आजकल पटसन की गांठ बनाने का प्रबन्ध भी असंतोषजनक है। अतः अधिकतर कच्चे पटसन को ठीक तरह से बांधने व तैयार करने के लिए भारत भेज दिया जाता है जहाँ से इसका विदेशों को निर्यात होता है।

पटसन का निर्यात व्यापार—सन् १९५०-५१ में पाकिस्तान ने ४६ लाख गांठ पटसन निर्यात किया। इनमें से २४ लाख गांठें कलकत्ता को नावों व स्टीमर जहाजों द्वारा भेजी गई। भारत पाकिस्तान की पटसन का सबसे बड़ा ग्राहक है और यहाँ प्रतिवर्ष करीब ४० लाख गांठ पटसन की मांग रहती है। निर्यात का एक-चौथाई भाग ग्रेट ब्रिटेन को चला जाता है, इसके बाद बेल्जियम, इटली व फ्रांस का स्थान क्रमशः महत्त्वपूर्ण है।

चिटगांव के बन्दरगाह से केवल ५१,४०० गांठें ही बाहर भेजी गई। पाकिस्तान सरकार चिटगांव बन्दरगाह का विकास कर रही है ताकि वहाँ से अधिक निर्यात हो सके। इस समय चिटगाँव में न तो क्रय-विक्रय की सुविधाएँ हैं और न माल रखने की ही।

पाकिस्तान के पटसन व्यवसाय में सबसे महत्त्वपूर्ण काम सन् १९५० के अगस्त महीने में हुआ जबकि वहाँ की सरकार ने 'पाकिस्तान केंद्रीय पटसन समिति' की स्थापना की। यह समिति पटसन की कृषि, आर्थिक दशा व अन्य बातों का निरीक्षण करती है और बीज, यातायात तथा क्रय-विक्रय सम्बन्धी विषयों में अनुसंधान द्वारा पटसन व्यवसाय को सहायता पहुँचाती है।

पटसन की कमी और पाकिस्तान के एकछत्र आधिपत्य के कारण कई देशों में इसके स्थान पर दूसरी वस्तुओं को स्थानान्तरित करने के लिए प्रयोग हो रहे हैं। बेल्जियन कांगो में यूरेना लोबाटा नामक एक जंगली रेशेदार पौधा उगता है और इसका वार्षिक उत्पादन कई हजार टन है। लेपोल्ड विले में इससे बोरे तैयार करने का

एक कारखाना स्थापित कर दिया गया है। इससे मामूली किस्म का रेशेदार पौधा पंजा कहलाता है। दसवर्षीय योजना में काँगो सरकार इसका वार्षिक उत्पादन ११,००० टन से २४,००० टन कर देगी। जावा तो चीनी के बोरों के वास्ते आत्म-निर्भर हो गया है। वहाँ पटसन की तरह का रोजेला नामक रेशेदार पौधा उगाया जाता है। मंचूरिया में किनाक नामक एक पौधा विस्तृत रूप से उगाया जाता है और उसके रेशे से सोयाबीन भरने के बोरे तैयार किये जाते हैं। फिलीपाइन का मेनीला हेम्प और इन्डोचीन का पोलोम्पन पटसन की तरह के ही रेशेदार पौधे हैं। इस प्रकार के पौधों की बढ़ती हुई खेती से पूर्वी पाकिस्तान में पटसन की खेती को धक्का लगने का डर है।

तिलहन—पाकिस्तान में १८ लाख एकड़ भूमि पर तिलहन की खेती की जाती है जबकि भारत में २ करोड़ एकड़ भूमि तिलहन की खेती में लगी हुई है। यहाँ के मुख्य तिलहन अलसी और रेंडी है। पूर्वी बंगाल में तिलहन का उत्पादन तो अधिक है परन्तु होता निम्न कोटि का है। यहाँ के मुख्य तिलहन सरसों, अलसी व तिल हैं।

तिलहन का उत्पादन व क्षेत्रफल (१९५०-५१)

	क्षेत्रफल (हजार एकड़)			उत्पादन (हजार टन)		
	सरसों	तिल	अलसी	सरसों	तिल	अलसी
पूर्वी बंगाल	४८८	१४४	६०	८६	२७	९
पश्चिमी पंजाब	३६०	३०	६	६६	३	१
सिन्ध	३२४	१५	—	४७	२	—
सीमाप्रांत	९३	२	—	७	—	—
रियासतें	२८७	१०	—	६२	२	—
	१६२६	२०१	६६	२७८	३४	१०

अलसी की खेती पूर्वी पाकिस्तान में बहुत प्रधान है। पाकिस्तान की कुल ७८,००० एकड़ अलसी भूमि में से ६८,००० एकड़ अकेले पूर्वी पाकिस्तान में है। सन् १९५२-५३ में पाकिस्तान में २,२८,००० टन तिलहन उत्पन्न हुआ।

वन सम्पत्ति

पाकिस्तान के ६० लाख एकड़ से अधिक क्षेत्रफल में वन पाए जाते हैं। यह क्षेत्रफल कुल विस्तार का तीसवाँ हिस्सा है। शुष्क जलवायु के कारण सिन्ध व सीमाप्रांत में तो वन बहुत कम हैं। पश्चिमी पंजाब का २ प्र० श० क्षेत्रफल ही वनाच्छादित है। परन्तु पूर्वी पाकिस्तान में दक्षिणी तटीय प्रदेश व चिटगांव में विस्तृत वन पाये जाते हैं। परन्तु पूर्वी बंगाल के वनाच्छादित प्रदेश संबद्ध नहीं हैं। उत्तर-पूर्व में मेमनसिंह और सिलहट के प्रदेश वन से ढके हुए हैं और फिर दक्षिणी पूर्व में चिटगांव का प्रदेश वनाच्छादित है। बीच के प्रदेश में वन नहीं के बराबर हैं। ये वन एक ही भाग में केन्द्रित हैं और विस्तार को देखते हुए बहुत कम हैं। अतः पाकिस्तान सरकार को वन और लगवाने चाहिएँ।

पाकिस्तान के वन प्रदेशों का क्षेत्रफल (१९५२)
(हजार एकड़ में)

पूर्वी बंगाल	४४४७	बलूचिस्तान	१८०५
सिन्ध	११९१	सीमाप्रान्त	५९२
पश्चिमी पंजाब	१८७२	कुल योग	१०,०००

पाकिस्तान में निम्नलिखित पेड़ों से व्यापारिक लकड़ी पायी जाती है :—

(१) **बबूल**—यह सिन्ध, बलूचिस्तान और पश्चिमी पंजाब में पाया जाता है। बबूल की लकड़ी व छाल कई प्रकार से प्रयोग की जाती है। छाल से तो चमड़ा साफ किया जाता है और लकड़ी से बैलगाड़ियाँ, कृषि सम्बन्धी यन्त्र व हल तथा खम्भे व शहतीर आदि बनाए जाते हैं। इस लकड़ी का कोयला भी बहुत अच्छा होता है।

(२) **नीला चीड़**—यह सीमाप्रान्त व पश्चिमी पंजाब के पहाड़ी भागों में पाया जाता है।

(३) **गुरजन**—इसका घर पूर्वी बंगाल है और इसकी लकड़ी से नावें व माल भरने के बक्स बनाए जाते हैं।

(४) **गमरी**—यह भी पूर्वी बंगाल का पेड़ है और नावें, बजरे व पेटियां बनाने में प्रयोग होता है।

(५) **सुन्दरी**—पूर्वी बंगाल का पेड़ है। डेल्टा भागों में होता है।

(६) **बांस**—पूर्वी बंगाल के पूर्वी भागों में खूब होता है और कई प्रकार के प्रयोग में आता है। नोआखली, टिपरह, मेमनसिंह, सिलहट और चिटगांव में बांस खूब होता है। सस्ते मूल्य के कारण गांवों में इससे दीवालें, छप्पर व टट्टर बनाते हैं।

पाकिस्तान में वनसंपत्ति के विस्तार व उपभोग के विषय में कोई व्यवस्थित खोजपूर्ण अध्ययन नहीं हुआ है। अतः विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

खनिज सम्पत्ति

खनिज संपत्ति के दृष्टिकोण से पाकिस्तान की दशा बहुत अधिक संतोषजनक नहीं है। फिर भी पाकिस्तान में विविध प्रकार के खनिज पाये जाते हैं। पाकिस्तान के बहुत से प्रदेशों में खनिज उत्पादन की विशेष संभावनाएँ हैं। परन्तु जब तक उचित अन्वेषण द्वारा इस निहित संपत्ति का पता नहीं लगाया जाता, तब तक पाकिस्तान को औद्योगिक खनिज पदार्थों के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ेगा। इस समय पाकिस्तान में लोहा, मैंगनीज, मोनाजाइट, तांबा, अभ्रक और बाक्साइट बिल्कुल नहीं पाया जाता। कई प्रदेशों में अन्वेषण चल रहा है और ऐसी आशा है कि सीमाप्रान्त में बन्नू के दक्षिण-पूर्व में लोहा; चितराल, कोहाट और बलूचिस्तान में मैंगनीज; बलूचिस्तान, चितराल और वजीरिस्तान में तांबा; हजारा जिले, पश्चिमी पंजाब और बलूचिस्तान में अभ्रक तथा बलूचिस्तान में बाक्साइट की खानें मिल सकेंगी। पाकिस्तान का अधिकांश भाग परतदार चट्टानों का बना हुआ है

इसलिए कच्चे लोहे का भंडार मिलने की कम सम्भावना है। पाकिस्तान के दूरस्थ चितराल प्रदेश में करीब ६०० लाख टन मेगनटाइट लोहे का भंडार निहित है। पश्चिमी पंजाब और वलूचिस्तान में २५० फीट नीचे उत्तम कोटि के कोयले की विस्तृत खान है। प्रयोगशालाओं में प्रयोग द्वारा यह देखा गया है कि यह कोयला वायलर या अन्य मतलव का नहीं है परन्तु इसमें और वहुत-सी विशेपताएँ पायी जाती हैं। इस कोयले से गंधक, कोयला, गैस व अन्य प्रकार की बहुत-सी गौण वस्तुएँ प्राप्त की जा सकती हैं जिनके सहारे विशेष औद्योगिक उन्नति हो सकती है। इसके अलावा इस कोयले से कोयले की ईंटें और कोक बनाया जा सकता है जिसे वायलर या घरों में जलाने के काम में ले आया जा सकता है।
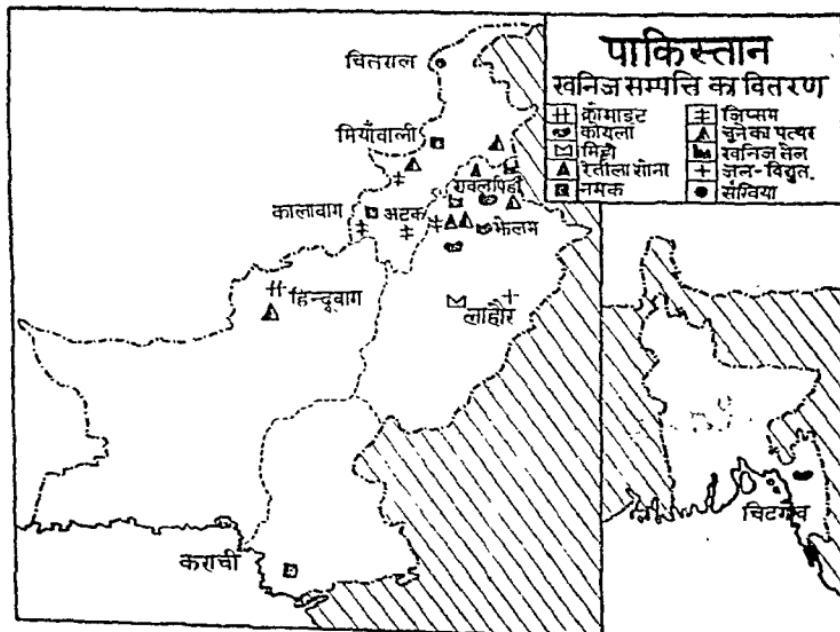
चित्र ८९— पूर्वी पाकिस्तान में खनिज पदार्थों की कमी ध्यान देने योग्य है। कोयले और खनिज तेल की सम्भावनाएँ हैं।

खनिज उत्पादन (१९५३)

कच्चा तेल	१,९३,२०० मीट्रिक टन
कोयला और लिगनाइट	५८३,७२७ ,, ,,
क्रोमाइट	२,३४,००० टन
जिप्सम	२७,२०० ,,
चूने का पत्थर	८,७८,७०० ,,
सिलीका वालू	४,७०० ,,
अग्निमिट्टी	३,१०० ,,

पाकिस्तान सरकार को अपनी खनिज संपत्ति की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। वलूचिस्तान, चितराल और उत्तरी सीमाप्रान्त की पश्चिमी तलहटी में ही अधिक खनिज संपत्ति पायी जाती है परन्तु इन प्रान्तों में औद्योगिक उन्नति सबसे कम है। इनके विपरीत जहाँ उद्योग-धंधे व जनसंख्या का घनत्व अधिक है वहाँ खनिज संपत्ति का उत्पादन नहीं के बराबर है। वास्तव में पाकिस्तान की खनिज संपत्ति का औद्योगिक व व्यापारिक उपयोग सस्ते व शीघ्रगामी यातायात के साधनों के विकास पर निर्भर है।

इस राष्ट्र के मुख्य खनिज क्रोमाइट, पेट्रोलियम, नमक, शोरा, जिप्सम, चूने का पत्थर, मिट्टी, फुलर्स अर्थ और सुरमा हैं। झेलम, शाहपुर और मियांवाली के जिलों में नमक की पहाड़ी फैली है और इससे पहाड़ी सेंधा नमक प्राप्त होता है। खेवड़ा के गांव के पास मुख्य सतह की मोटाई ५५० फीट है और इनकी ५ तह जो प्रत्येक २७५ फीट मोटी है उनका नमक बहुत साफ है। साथ की अन्य तहों में मिट्टी मिली हुई पायी जाती है और पोटाश व मैगनीशियम भी मिला हुआ रहता है। सिन्धु नदी पर स्थित कालाबाग के पूर्व-उत्तर-पूर्व में खुली खानों से नमक निकाला जाता है। सीमाप्रान्त के कोहाट प्रदेश में खुली खानों से नमक निकाला जाता है और यहां नमक का अटूट भंडार है।

खनिज	वार्षिक उत्पादन	उत्पादन का क्षेत्र
क्रोमाइट	१९५० में उत्पादन १८,१२५ टन था (अधिकतर क्रोमाइट निर्यात कर दिया जाता है)	वलूचिस्तान में ऊपरी पिशीन घाटी और हिन्दूबाग में, सीमाप्रांत और चितराल। इन प्रदेशों में उच्चकोटि के क्रोमाइट का अपार भंडार है।
जिप्सम	सन् १९५० में उत्पादन १६,६४६ टन था।	पश्चिमी पंजाब में झेलम, शाहपुर और मियांवाली; वलूचिस्तान, सिन्ध और सीमाप्रान्त। डेरा-इस्माइल खां में जिप्सम का अपार भंडार है।
फुलर्स अर्थ (Fuller's Earth)	औसत वार्षिक उत्पादन ३००० टन है। यह मिट्टी बड़ी कठोर है और साबुन, कागज और रंग बनाने में प्रयोग की जाती है।	पश्चिमी पंजाब, सीमाप्रान्त और सिन्ध।
नमक	सन् १९५०-५१ में पहाड़ी नमक उत्पादन ४० लाख मन था। सन् १९४८-४९ में उत्पादन की मात्रा ५७	सिन्ध, पश्चिमी पंजाब और सीमाप्रान्त। सिन्ध के मौरीपुर में समुद्र के पानी से साधारण नमक तैयार किया जाता है। सन् १९५०

खनिज	वार्षिक उत्पादन	उत्पादन का क्षेत्र
	लाख थी। कोहाट और पश्चिमी पंजाब में मिलाकर ३० लाख टन पहाड़ी नमक उत्पन्न होता है।	में उत्पादन ५०० लाख मन था।
चूने का पत्थर	३०३,००० टन।	पश्चिमी पंजाब, अटक, झेलम और रावलपिंडी तथा उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रांत।
अग्नि मिट्टी	सन् १९४९ में इसका कुल उत्पादन ६९९७ टन था। सन् १९५०-५१ में यह उत्पादन केवल १९८० टन ही रह गया।	पश्चिमी पंजाब। डेरा इस्माइल खां में फायर क्ले तथा सिन्ध व चितराल में रंगीन मिट्टी पायी जाती है।
शोरा	—	पश्चिमी पंजाब
सुरमा	अपार भंडार है पर अधिक विकास नहीं हुआ है। सन् १९४६ में उत्पादन ५८४ टन था।	चितराल और कलात राज्य। चितराल की १३,५०० फीट ऊँचाई तथा सर्द जलवायु के कारण अधिक काम नहीं हो पाया है।
मिट्टी में मिला हुआ सोना	बहुत थोड़ा	पश्चिमी पंजाब के अटक, मरदान, हज़ारा और झेलम जिलों में इस समय स्थली सतह पर ही सोना निकाला जाता है।
आर्सेनिक	—	चितराल
ग्रेनाइट	२ लाख टन	पश्चिमी पंजाब और सीमाप्रांत।

पाकिस्तान में औद्योगिक शक्ति के साधन

आजकल किसी भी देश की औद्योगिक उन्नति के लिए शक्ति के साधनों का होना बहुत आवश्यक है। शक्ति कोयला, तेल और जल से प्राप्त की जाती है। पाकिस्तान में शक्ति के साधनों से ६९,०७४ किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है। उसका ब्योरा इस प्रकार है—कोयले की भाप से ३२८६८ किलोवाट, जल-विद्युत १०७०० किलोवाट; डीज़ल इंजनों में तेल से २५४५० किलोवाट और गैस से ५६ किलोवाट।

कोयला—मात्रा व प्रकार दोनों के ही दृष्टिकोण से पाकिस्तान में उपलब्ध कोयला बहुत मामूली होता है। पाकिस्तान में प्रतिवर्ष ४½ लाख टन टरशियरी प्रकार का कोयला निकाला जाता है। इसमें राख, धूल और गंधक की अधिकता रहती है और यह घरेलू उपयोग या कोक बनाने के लिए बिलकुल व्यर्थ होता है। पश्चिमी पंजाब के शाहपुर, झेलम और मियांवाली जिलों में कोयले की खान हैं। पश्चिमी पंजाब के कोयले में जलने की शक्ति कम होती है और राख भी कम ही होती है पर गंधक का अंश बहुत अधिक होता है। ऐसा अनुमान है कि बलूचिस्तान, सीमाप्रान्त, और पश्चिमी पंजाब में ३ लाख टन कोयले का अपार भंडार है।

सीमाप्रान्त में कोयले के ३ संभावित क्षेत्र हैं—(१) हजारा जिले की डोर नदी घाटी में; (२) कोहाट जिले में बड़ौच घाटी के उत्तर में और (३) दक्षिणी वजीरिस्तान के स्पिली टाय में मीरा क्वान्ड स्थान पर। बलूचिस्तान में खोस्ट प्रदेश भविष्य में एक महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र हो जायेगा। सरकार ने बलूचिस्तान के शारिग कोयला क्षेत्र का विकास करना शुरू कर दिया है।

पाकिस्तान में कोयले का उत्पादन (१९५०)

बलूचिस्तान	२३४,६४१ टन
पंजाब	१९१,९०८ ,,
उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त	७,२१३ ,,
कुल योग	४३६,७५० ,,

सन् १९५४ में कोयले का कुल उत्पादन ५९९००० टन था।

पूर्वी पाकिस्तान में कोयले का नितान्त अभाव है। इसलिए अपनी मांग की पूर्ति के लिए इसे कोयला बाहर से आयात करना होता है। यह पश्चिमी बंगाल से मंगाया जाता है। ऐसा अनुमान है कि चिटगांव के पूर्वी भाग में कोयले का निहित भंडार है। परन्तु निकट भविष्य में इस क्षेत्र का विकास होना असंभव है। पाकिस्तान सरकार अपने कोयले का सबसे अच्छा उपभोग करने के लिए एक ईंधन अन्वेषण केन्द्र स्थापित कर रही है।

इस समय पाकिस्तान को प्रतिवर्ष १५ लाख टन कोयले की आवश्यकता रहती है। इस मांग की पूर्ति के लिए देश को दक्षिणी अफ्रीका, चीन, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और पोलैंड से कोयला मंगवाना पड़ता है। पाकिस्तान की औद्योगिक मांग की पूर्ति के लिए दक्षिणी अफ्रीका का कोयला बहुत अच्छा होता है परन्तु भारतीय कोयला रेल के इंजिनों के लिए विशेष रूप से अच्छा होता है। दक्षिणी अफ्रीका के पास व्यापारिक जहाजों का बेड़ा है इसलिए पाकिस्तान पहुँचने पर यह कोयला भारतीय कोयले से सस्ता पड़ता है।

खनिज तेल—पाकिस्तान की सब खनिज सम्पत्ति में खनिज तेल का स्थान सब से प्रमुख है।

पाकिस्तान में खनिज तेल का उत्पादन बराबर बढ़ रहा है।

प्राकृतिक गैस— हाल में बलूचिस्तान के सुई स्थान पर प्राकृतिक गैस के अपार भंडार का पता चला है। इसके विकास होने पर पश्चिमी पाकिस्तान के औद्योगिक और आर्थिक जीवन में नवीन जीवन आ जायेगा। भाप से तैयार बिजली के अतिरिक्त, इस गैस से प्लास्टिक, कृत्रिम रेशम, गोंद, सिलिका, कालिख तथा जमाने वाली वस्तुओं के उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन मिलेगा। पाकिस्तान सरकार की अनुमति से पाकिस्तान उद्योग विकास कारपोरेशन बर्मा तेल कम्पनी के सहयोग से इस योजना पर काम कर रहा है। अभी तक चार कुएँ खोदे जा चुके हैं और आशा है कि गैस की प्राप्ति १००० लाख घन फीट प्रति दिन तक होगी। यह भाप बिजली के उत्पादन में १६ लाख टन कोयले के प्रतिवर्ष की दर से ६० साल तक की मांग पूर्ति के बराबर है। सुई पहाड़ी से कराँची तक ३५० मील लम्बी एक पाइपलाईन बनायी जावेगी जिसके द्वारा ५०० लाख घन फीट गैस प्रति दिन राजधानी को भेज दी जायेगी। सन् १९५५ के अन्त से इसका उपयोग होने लगा है और आशा है कि पाकिस्तान प्रतिवर्ष आयात में ७·८ करोड़ रुपये की बचत कर सकेगा।

जलविद्युत— पाकिस्तान में जलविद्युत के विकास के लिये विशेष साधन उपस्थित हैं। पाकिस्तान की संभावित जलशक्ति ६० लाख किलोवाट है जिसमें से अभी तक केवल १०,७०० किलोवाट बिजली विकसित की गई है। इस समय चार जल-विद्युत योजनाओं पर कार्य हो रहा है: (१) पूर्वी बंगाल में कर्नफुली योजना (२) पश्चिमी पंजाब में रसूल जलविद्युत योजना (३) सीमाप्रांत के मालाकन्द केन्द्र का विकास और (४) मालाकन्द के समीप दरगाई केन्द्र।

रसूल जलविद्युत योजना पश्चिमी पंजाब की सबसे महत्त्वपूर्ण योजना है। इस पर काम पूरा हो गया है। ऊपरी झेलम नहर का निचली नहर में जो जल-प्रपात बनता है उसी से बिजली उत्पन्न की जाती है। इससे १४००० किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी और २०,००० किलोवाट अतिरिक्त बिजली से नगरों में रोशनी व खेतों में सिंचाई का प्रबन्ध हो सकेगा। इसकी संस्थापित क्षमता २२००० किलोवाट है।

कर्नफुली योजना के अन्तर्गत कर्नफुली नदी के जल से बिजली बनाई जावेगी। इस समय शक्ति के अभाव के कारण पूर्वी पाकिस्तान की औद्योगिक उन्नति नहीं हो सकती। इस योजना से एक लाख ६० हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी। और इसके द्वारा चिटगांव, चांदपुर और कोमिला में उद्योग-धंधे व रोशनी का प्रबन्ध हो सकेगा। इसके अलावा इस शक्ति की सहायता से कर्नफुली नदी के मुहाने तक नावें चल सकेंगी, बाढ़ें रोकी जावेंगी और ७० हजार एकड़ भूमि पर सिंचाई की जा सकेगी।

वारसक बांध पेशावर के २६ मील पश्चिम में स्थित है और इसके बन जाने पर काबुल नदी का पानी १५० फीट ऊँचा हो जावेगा। इससे नदी के दाहिने किनारे पर से नहरों द्वारा ६० हजार एकड़ भूमि को सींचा जा सकेगा और बायें किनारे की नहरों द्वारा ५ हजार एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। फलतः १००० सरहदी लोग नई भूमि पर सिंचाई की सहायता से खेती-बारी कर सकेंगे और उससे उत्पादित

चित्र ६०—पश्चिमी पाकिस्तान की जलविद्युत योजनाएं ध्यान देने योग्य हैं

शक्ति की सहायता से छोटे-मोटे उद्योग चल सकेंगे। काबुल नदी की नहरों द्वारा फिर से वन लगाये जावेंगे। और पेशावर की पहाड़ियों के निचले ढालों पर बड़े वृक्ष उगाये जायेंगे। इन जंगलों के बढ़ जाने पर पेशावर में ईंधन की कमी दूर हो जावेगी और सरहदी लोगों के लिए लकड़ी काटने का उद्यम महत्वपूर्ण हो जावेगा। यह तो हुई वारसक बांध योजना के गौण लाभों की बात। इससे सबसे महत्त्वपूर्ण लाभ यह होगा कि १ लाख ५० हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न होगी और इसकी सहायता से पंजाब व सीमाप्रान्त का औद्योगीकरण हो सकेगा।

मालाकन्द की जल-विद्युत योजना से अनेक लाभ हैं। यह योजना बिलकुल तैयार हो चुकी है और उसका उत्पादन केन्द्र दरगाई में है। यह २०,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न करेगी और वाह के सीमेंट कारखानों को इसी से १०,००० किलोवाट शक्ति प्राप्त होती है। इसके अलावा पश्चिमी पंजाब व सीमाप्रान्त के ८८ नगरों व गांवों में रोशनी की व्यवस्था की जा सकेगी। इसके दो उत्पादन केन्द्र मालाकन्द और दरगाई में हैं। दोनों की संस्थापित क्षमता क्रमशः १०००० और २०००० किलोवाट है।

कुर्रमगढ़ी योजना—उत्तरी सीमाप्रान्त के दक्षिणी भाग में एक और योजना पर काम हो रहा है। बन्नू के पास कुर्रमगढ़ी नामक स्थान पर कुर्रम नदी पर एक बांध बनाया जावेगा, जिससे नहरों को पानी दिया जावेगा और करीब ३००० किलोवाट बिजली तैयार की जावेगी। इस बिजली को बन्नू व डेरा इस्माइलखां के जिलों में प्रयोग किया जा सकेगा।

फलों का उत्पादन

विविधता और मात्रा के दृष्टिकोण से पाकिस्तान फलों का विशेष रूप से धनी है। हर प्रान्त में व्यापार के लिये फल उगाये जाते हैं। फलों का वार्षिक उत्पादन ३० लाख टन है। इसका ६०-७० प्रतिशत तो देश में ही खप जाता है और बाकी निर्यात कर दिया जाता है। पाकिस्तान में ४,०६,५०० एकड़ भूमि पर फल उगाये जाते हैं। प्रत्येक प्रान्त का वितरण इस प्रकार है—पूर्वी बंगाल,२,००,०००; पश्चिमी पंजाब १,५०,०००; सिन्ध ५०,०००; बलूचिस्तान ८०००; सीमाप्रान्त १५००।

पूर्वी बंगाल में आम, अनन्नास और केले होते हैं। राजशाही, बोगरा, दिनाजपुर और रंगपुर में आम खूब होता है। ढाका, फरीदपुर, नोआखली और बारकगंज में केले होते हैं और सिलहट के अनन्नास प्रसिद्ध हैं। पूर्वी बंगाल के केले जगतप्रसिद्ध हैं और इनका वार्षिक उत्पादन ४३० लाख मन है।

पश्चिमी पंजाब के रावलपिन्डी, झेलम और कटक जिलों में फल उत्पादन का व्यवसाय होता है। मरी पहाड़ियों को हम प्रान्त के फलों का बगीचा कहते हैं। यहां के मुख्य फल सन्तरे, आम, नींबू और मीठे नींबू हैं। व्यापार के लिए सेब, अखरोट, बादाम और जैतून उगाने की भी योजना है।

उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त में नाशपाती,नाख,अंजीर, आड़ू, केले व आम होते हैं। अंजीर, नाशपाती और नाख की तो देश व भारत दोनों ही जगह काफी मांग रहती है। इसी कारण इस प्रान्त को एशिया का कैलीफोर्निया कहते हैं।

बलूचिस्तान की समृद्धि वहाँ के फलों के व्यापार पर निर्भर रहती है। अंगूर, सेब और खरबूजे यहाँ के महत्त्वपूर्ण फल हैं। पाकिस्तान व भारत की मंडियों में इनकी विशेष मांग रहती है। वास्तव में भारत में बलूचिस्तान व सीमाप्रान्त के फलों की बहुत मांग रहती है।

सिन्ध में अंगूर व खजूर उगाये जाते हैं। बहावलपुर में भी खजूर उगते हैं।

पाकिस्तान में फलों के इतने अधिक उत्पादन के होते हुए भी फलों को टीन के डिब्बों में बन्द करने का व्यवसाय बहुत उन्नत नहीं है। निकट भविष्य में संसार की फल मंडियों में पाकिस्तान का स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण हो जायेगा। परन्तु इसके लिये कुछ कठिनाइयों का सामना करना होगा। यहाँ की नाशपाती व अन्य फलों में अक्सर एक प्रकार का कीड़ा लग जाता है और दूसरी बात यह है कि इनके पकने का समय भी निश्चित नहीं है। फिर यहाँ के फल अधिकतर अधपके से रहते हैं। इसके अलावा निम्न कोटि की बोतलों, टीन के डिब्बों की कमी, चीनी के मंहगे दाम और निश्चित मंडियों के अभाव के कारण इस उद्योग को विकसित करने के लिये विशेष प्रयत्न करने पड़ेंगे। इस समय फलों को डिब्बों में बन्द करने की केवल एक फैक्टरी पेशावर में है। पूर्वी पाकिस्तान में केवल अनन्नास को डिब्बों में बन्द किया जाता है। इस उद्योग को सरकारी सहायता व प्रोत्साहन से बढ़ाने की आवश्यकता है।

पशु-पालन

पाकिस्तान की भूप्रकृति और जलवायु पशुपालन के लिये बड़ी उपयुक्त है। यहाँ पर पाये जाने वाले पशुओं की संख्या इस प्रकार है—

	(लाख में)		(लाख में)
गाय, बैल	२४०	बकरी	१००
भैंस	६०	घोड़े व खच्चर	१०
भेड़	६०	ऊंट	४

बलूचिस्तान और सिंध की जलवायु में अच्छी तृण भूमियां नहीं पाई जातीं। अतः वहाँ गाय बैल इतने अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितने कि पश्चिमी पंजाब में। पश्चिमी पंजाब में गाय, बैल, भैंस की संख्या ६० लाख है और सिन्ध में इन पशुओं की संख्या केवल २६ लाख है। पूर्वी पाकिस्तान में पशुओं की संख्या तो काफी है परन्तु उनकी नस्ल निम्न कोटि की है। पश्चिमी पंजाब के पशु दूध व मांस उत्पादन में अधिक उत्तम हैं। पूर्वी पाकिस्तान की घास में फासफोरस की कमी है और इसीलिए पशुओं को बीमारी हो जाती है।

पूर्वी पाकिस्तान में अधिक वर्षा के कारण काफी नमी बनी रहती है। इसलिए वहाँ भैंस व भेड़ नहीं पाली जा सकतीं। ऊंट भी उस जलवायु में नहीं रह सकते।

अतः अधिकतर गाय, बैल व बकरियाँ पायी जाती हैं। पश्चिमी पाकिस्तान में, सिन्ध व बलूचिस्तान में ऊंट पाया जाता है। सीमाप्रांत, बलूचिस्तान और सिन्ध में भेड़ें भी पाई जाती हैं। पश्चिमी पाकिस्तान में भैंसें पायी जाती हैं।

विभिन्न पशुओं से दूध, मांस, चमड़ा व खालें प्राप्त होती हैं। दुग्धशालाओं का व्यवसाय पश्चिमी पंजाब के दक्षिणी भाग में मांटगोमरी, लायलपुर और मुल्तान के जिलों में केन्द्रित है। चमड़े का व्यवसाय भी बढ़ रहा है। चमड़ा व खालों का वार्षिक उत्पादन इस प्रकार है—गाय की खालें ४५ लाख टुकड़े; भैंस का चमड़ा ८ लाख टुकड़े; बकरी की खाल ५३ लाख और भेड़ की खाल २० लाख। यद्यपि कच्चा माल काफी है परन्तु चमड़ा साफ करने का व्यवसाय अभी तक कोई विशेष तरक्की नहीं कर पाया है। ऊन का वार्षिक उत्पादन २८० लाख पौंड है। सबसे अच्छा ऊन सिन्ध व बलूचिस्तान से प्राप्त होता है। सन् १९४८ में पाकिस्तान से यूरोप व अमरीका को १,३०,००० गांठ ऊन निर्यात किया गया। इस समय प्रायः सारा का सारा उत्पादन बाहर भेज दिया जाता है। पाकिस्तान से कच्चा ऊन खरीदने वाले देश ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका हैं। पाकिस्तान का मांस निर्यात बढ़ने की बहुत कम आशा है परन्तु उसके चमड़े का निर्यात व्यापार महत्त्वपूर्ण है।

मछली पकड़ने का व्यवसाय

पाकिस्तान में मछली पकड़ने का उद्यम खेती व पशुपालन के समान महत्त्वपूर्ण नहीं है। इसकी वस्तु न तो उतने महत्व की है और न ही इसमें अधिक मनुष्य लगे हुए हैं। मछली पकड़ने के उद्यम के मुख्य केन्द्र ढाका व फरीदपुर जिले हैं और पश्चिमी पाकिस्तान में सिन्ध का तटीय प्रदेश।

पूर्वी बंगाल में पकड़ी गई मछलियाँ वहाँ के लोगों के भोजन का एक महत्त्वपूर्ण अंग हैं। यदि वहाँ मछली पकड़ने में जरा-सी कमी कर दी जाय तो वहाँ के भोजन की समस्या बड़ी खराब हो जाती है। मांग से अधिक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। अतः यहाँ पकड़ी गई बहुत-सी मछलियाँ भारत भेज दी जाती हैं। नारायणगंज, चांदपुर और गोआलन्दो तक छोटी-छोटी नावों द्वारा मछलियां ले जाई जाती हैं और फिर वहाँ से रेल या स्टीमर जहाजों द्वारा इन्हें भारत ले जाते हैं। रोहू, हिल्सा, कटला और प्रान यहाँ की मुख्य मछलियाँ हैं। पूर्वी बंगाल के तालाबों और बिलों में काई, मगूर, सिन्गी और साल जाति की मछलियाँ खूब होती हैं। पूर्वी बंगाल सरकार मछली पकड़ने के उद्यम को प्रोत्साहन दे रही है। सन् १९४९-५० में सरकारी योजना के अन्तर्गत ३५० तालाबों और ७०० बीघा जल क्षेत्र में मछली पाली जा रही हैं। इसके अलावा एक दस वर्षीय योजना के अनुसार पानी से घिरे क्षेत्रों और छोड़े हुए तालाबों में मछलियाँ पाली जायेंगी।

पश्चिमी पाकिस्तान में सिंध का तट मछली पकड़ने के उद्यम के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण है। सिन्ध व बलूचिस्तान का सम्पूर्ण तटीय प्रदेश मछली पकड़ने के धन्धे

का प्रधान केन्द्र है। पाकिस्तान के ३६,००० लोग इस धन्धे में लगे हुए हैं। बलूचिस्तान के समुद्र से पकड़ी हुई मछलियों का वार्षिक उत्पादन ६३,००० मन है। सिंध में मछलियों का वार्षिक उत्पादन इस प्रकार है—समुद्री मछलियाँ १,६८,००० मन और ताजे पानी की मछलियाँ २,६६,५०० मन। कुल मिलाकर मछलियों की मात्रा ४,६४,५०० मन रहती है।

बलूचिस्तान का मकरान तट मछलियों की मात्रा व कोटि दोनों ही दृष्टिकोण से बड़ा महत्त्वपूर्ण है। इसका तट ३५० मील लम्बा है। खाड़ियाँ और गड्ढे हैं पर नदियाँ नहीं गिरतीं। तट से कोई १० मील की दूरी तक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं और करीब २०,००० लोग इस व्यवसाय में लगे हुए हैं। सिन्ध के तट की लम्बाई २०० मील है और यह बहुत कटा-फटा है। सिंध नदी मिट्टी व अन्य सामग्री बहाकर लाती है जिसको खाने के लिए मछलियाँ आती हैं। तट से ८० मील की दूरी तक समुद्र की गहराई केवल १०० फैदम है। अतः सिन्ध का तट इस व्यवसाय का केन्द्र हो गया है।

यहाँ प्रॉन, सालमन, मुलट, पामफ्रट, मैकरेल और हिल्सा जाति की मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। सिन्ध से मछलियाँ निर्यात भी की जाती हैं। सिन्ध सरकार मामूली प्रकार की मछलियों के विभिन्न भागों से प्राप्त तेलों का अन्वेषण करने की व्यवस्था कर रही है। यदि इन मछलियों का उपभोग हो सका तो इनसे प्राप्त तेल से गोंद व गेलाटीन बनाई जा सकेगी। सीमाप्रान्त में भी ताजे पानी की कुछ मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। बलूचिस्तान व सिन्ध के किनारों पर सितम्बर से मई तक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। मानसून के दिनों में समुद्री तेज हवाओं के कारण मछुए प्रायः खाली रहते हैं।

शिल्प उद्योग

पाकिस्तान की वर्तमान आर्थिक स्थिति की विशेषता यह है कि यहाँ की प्राकृतिक संपत्ति तो अपार है, प्राकृतिक साधन भी बहुत विस्तृत हैं—संसार का ७० प्रतिशत कच्चा पटसन यहीं होता है, उच्चकोटि की कपास का वार्षिक उत्पादन १५ लाख गांठ है और साथ-साथ ऊन, चमड़ा व खालें, गन्ना, तम्बाकू, फल व मछली भी बहुत काफी मात्रा में उपलब्ध हैं; खनिज सम्पत्ति भी पर्याप्त है, परन्तु औद्योगिक विकास बहुत कम हुआ है। इस औद्योगिक पिछड़ेपन के कई कारण हैं—(१) पिछली शताब्दी में उद्योग-धंधे कलकत्ता, बंबई और अहमदाबाद, में ही स्थापित किये गये थे। (२) पिछले महायुद्ध में देश के उद्योग-धन्धे मध्य प्रदेशों में जैसे इन्दौर, कानपुर, नागपुर, टाटानगर और जबलपुर में स्थापित हो गये। (३) औद्योगिक कार्यालय व विद्यालय तथा अन्वेषण की प्रयोगशालाएँ अधिकतर कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास, बम्बई और कानपुर में स्थापित हैं। इस प्रकार वर्तमान पाकिस्तान के क्षेत्रों में देश के विभाजन के समय भी उद्योग-धन्धों की कमी थी और यह कमी अभी तक दूर नहीं की जा सका है।

पाकिस्तान के मुख्य उद्योग-धंधों में २ लाख व्यक्ति काम करते हैं। परन्तु पाकिस्तान के औद्योगिक विकास की निकट भविष्य में बहुत आशा है। भूगर्भ निरीक्षण के बाद पाकिस्तान में कोयला, लोहा व तेल जैसे खनिज पदार्थों का उत्पादन किया जा सकता है। पूंजी व मशीनों की वर्तमान कमी भी हमेशा नहीं रहेगी। फिर विदेशी पूंजी की सहायता लेकर भी वह अपने उद्योग-धंधों की उन्नति कर सकता है। देश में विदेशी पूंजी को आकर्षित करने के लिए निम्नलिखित ४ बातें होनी जरूरी हैं—(१) देश की प्राकृतिक सम्पत्ति व साधनों के विषय में विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध किये जाएँ। (२) विदेशी पूंजीपतियों को विश्वास दिलाया जावे कि उन्हें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं भुगतना पड़ेगा। (३) देश के उद्योग-धंधों का राष्ट्रीयकरण नहीं होगा, ऐसी नीति-विषयक घोषणा की जानी चाहिए और (४) बैंकों के जरिए या अन्य तरीकों से लाभ की मुद्रा देश के बाहर भेजने की सुविधा दी जानी चाहिए। इस समय पाकिस्तान में कई विदेशी राष्ट्रों के औद्योगिक व व्यापारिक मिशन आ चुके हैं। परन्तु उन सबकी मांग यही है। पाकिस्तान सरकार ने एक औद्योगिक विकास समिति स्थापित की है। इसका ध्येय देश में पटसन, कागज, पोत-निर्माण, खाद तथा अन्य भारी इन्जीनियरिंग व रासायनिक उद्योगों को प्रोत्साहन

चित्र ९१
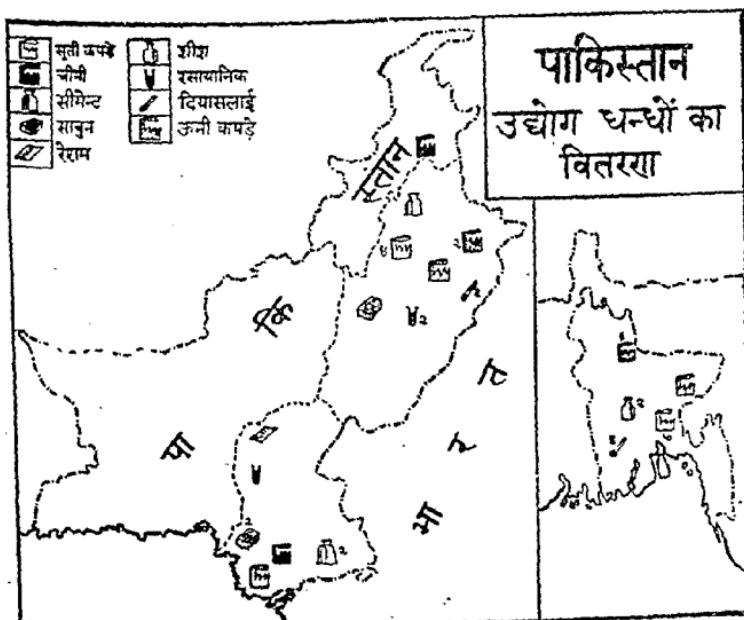
देना है। इस प्रकार सरकार के नाम पर पूंजी आकर्षित करना इसका ध्येय है। पाकिस्तान में उद्योग-धंधों की उन्नति के लिए एक ६-वर्षीय योजना चलाई गई है। यह सन् १९५७ में पूरी होगी।

सूती वस्त्र व्यवसाय—इस समय पाकिस्तान में १८ मिलें हैं, जिनमें ५३,३०० करघे और तकवे हैं। सन् १९४७ में जब देश का विभाजन हुआ था—जब पाकिस्तान बना था, यहां केवल ४८२४ करघे, १,७५,००० तकवे और केवल १४ सूती मिलें थीं। तब से चार सूती मिलें और बढ़ गई हैं —३ पश्चिमी पाकिस्तान में और एक पूर्वी पाकिस्तान में। करीब १९,००० व्यक्ति इस उद्योग में लगे हुए हैं। सन् १९४८ तक मिल के बने हुए कपड़े का वार्षिक उत्पादन १,९०० लाख गज था जबकि हाथ के करघों से प्रतिवर्ष २,३५० लाख गज कपड़ा तैयार किया जाता था। सन् १९५० में मिल में बने हुए कपड़े का उत्पादन ८५,११२ गांठ था (प्रत्येक गांठ में १,५०० गज कपड़ा होता है।) सन् १९४८ में उत्पादन की गांठों की संख्या केवल ५८,७०० थी। इस समय हाथ के करघों से कोई २,५०० लाख गज कपड़ा तैयार किया जाता है। अतः स्पष्ट है कि पाकिस्तान का यह उद्योग बराबर वृद्धि कर रहा है। सूती वस्त्र व्यवसाय पूर्वी बंगाल में सबसे आगे बढ़ा हुआ है। वहाँ की ९ मिलों में ९५,२०८ तकवे और २,५२२ करघे हैं। ४ और मिलें बनाई जा रही हैं। पूर्वी बंगाल में खुलना, बजेरहाट, नारायणगंज और कुशतिया इस उद्योग के केन्द्र हैं। नारायणगंज में ६ मिलें हैं जिनमें कुल मिलाकर १,७८७ करघे और ४१,८५२ तकवे हैं। सन् १९५४ के शुरू में सूती वस्त्र उद्योग में तकुवों की संख्या ६,४२,००० थी और सूती कपड़ा उद्योग का वार्षिक उत्पादन २६१३ लाख गज है। करघों की संख्या १४,००० है। सन् १९५७ तक तकुवों की संख्या २० लाख हो जायेगी। इस वर्ष बलूचिस्तान में एक सूती मिल बनाई जा रही है इसमें २५,००० तकुवे होंगे। जब इसमें उत्पादन शुरू हो जायेगा तो कपड़े का वार्षिक उत्पादन ७२०० लाख गज हो जायेगा। सन् १९५२ में ५३,३६० मीट्रिक टन सूत और २१,७४४ लाख मीटर कपड़ा तैयार किया गया।

पश्चिमी पंजाब में सूती मिलें लाहौर, लायलपुर और ओकाड़ा में हैं। सिंध में केवल कराची ही इस उद्योग का केन्द्र है। परन्तु फिर भी यह नया राष्ट्र कपड़े में आत्मनिर्भर नहीं है। वर्तमान जनसंख्या और १८ गज प्रति मनुष्य प्रति वर्ष के आधार पर प्रतिवर्ष इसे ५ लाख टन या ५० करोड़ गज कपड़ा बाहर से मंगवाना पड़ता है।

पाकिस्तान में कपास भी होती है और सूती कपड़ों की मांग भी काफी रहती है। सन् १९५० में पाकिस्तान की सूती मिलों ने ४०० पौंड वजन की १००,००० गांठ कपास प्रयोग की। इस समय पाकिस्तान को ग्रेट ब्रिटेन, भारत और जापान से सूती कपड़ा आयात करना होता है।

चीनी व्यवसाय—पाकिस्तान में चीनी की ११ मिलें हैं जिनका वितरण इस प्रकार है :—

क्षेत्र	मिलों की संख्या	केन्द्र
पूर्वी बंगाल	६	ढाका, राजशाही, मेमनसिंह, दिनाजपुर और जेसोर
पश्चिमी पंजाब	४	रावलपिंडी
सीमाप्रान्त	१	अबोटाबाद

पाकिस्तान की सब मिलों का वार्षिक उत्पादन २५,००० से ३०,००० टन तक है परन्तु वार्षिक मांग २ लाख टन है। सन् १९५४ में ८२ हजार टन चीनी तैयार हुई। अतः काफी कमी रहती है। परन्तु पूर्वी बंगाल के मेमनसिंह, चिटगांव, दिनाजपुर और रंगपुर के जिलों में उपयुक्त भूमि व जलवायु पायी जाती है। अतः गन्ने का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। सीमाप्रान्त के मरदान स्थान पर एशिया में सब से बड़ी मिल बनाई जा रही है। ५ और कारखाने खोले जा रहे हैं। इन ५ कारखानों का उत्पादन १००००० टन होगा और यह सन् १९५६ तक बनकर तैयार हो जायेंगे। ऐसा हो जाने पर पाकिस्तान चीनी के विषय में बहुत कुछ आत्मनिर्भर हो जायेगा।

ऊनी वस्त्र व्यवसाय—सिन्ध व पश्चिमी पंजाब में ट्वीड कपड़ा, कम्बल, दरियाँ व गलीचे बनाये जाते हैं। सिंध के मरुस्थली भागों में ही यह व्यवसाय सीमित है। कराची में भी ऊन व ऊनी धागा तैयार करने की फैक्टरी स्थापित की गई है। पाकिस्तान सरकार ने बलूचिस्तान के हरनाई और सीमाप्रान्त के बन्नू जिलों में ऊनी कपड़े की दो मिलें बनवाई हैं, जिनमें १९५२ से उत्पादन शुरू हो गया है। प्रत्येक में करीब २००० तकवे हैं। इस समय देश का आधा ऊन कम्बल बनाने के व्यवसाय में खप जाता है।

पाकिस्तान में प्रतिवर्ष कोई ३०० लाख पौंड ऊन प्राप्त होता है। इसके कारखाने दो करांची में, एक थाल में, बन्नू और हरनाई (बलूचिस्तान) में हैं। रेशम का उद्योग अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में है। इसमें कोई १० हजार आदमी काम करते हैं और वार्षिक उत्पादन ४०००० पौंड है। यह पूर्वी पाकिस्तान में केन्द्रित है।

दियासलाई उद्योग—दियासलाई बनाने की ६ फैक्टरियां लाहौर व ढाका में स्थित हैं। लाहौर की तीन फैक्टरियों में से दो वेस्टर्न इण्डिया मैच कम्पनी के अधिकार में हैं। लाहौर के इन कारखानों में आसपास के प्रदेशों से आये हुए कोई ५०० मनुष्य काम करते हैं।

सीमेंट उद्योग—खूब व्यवस्थित है। इस समय पाकिस्तान में सीमेंट के ५ कारखाने हैं—४ पश्चिमी पाकिस्तान में और १ पूर्वी पाकिस्तान में। वाह, करांची और सिलहट इसके केन्द्र हैं। वाह का कारखाना एसोसिएटेड सीमेंट कम्पनीज के आधिपत्य में है और इसमें लगभग १,५०० मजदूर काम करते हैं। सिंध के सक्खर जिले में रोहरी स्थान का कारखाना भी इसी कम्पनी का है। सीमेंट का वार्षिक उत्पादन ६ लाख टन है और इसका आधा भाग घरेलू उपभोग में ही खप जाता है। देश में वार्षिक मांग १० लाख टन रहती है।

शीशा बनाने का उद्योग अभी नया ही है। इसके पांच कारखानें हैं—२ पूर्वी बंगाल में और ३ पश्चिमी पंजाब में। पूर्वी बंगाल में शीशा बनाने का प्रमुख केन्द्र ढाका है।

इसके अलावा पाकिस्तान अन्य उद्योग-धन्धों का विकास करना चाहता है। पूर्वी बंगाल में पटसन की ३ मिलें नरायणगंज के समीप बनाई जा रही हैं। इनमें प्रत्येक में १००० करघे होंगे और अनुमान है कि ३२००० टन बोरे और १६००० टन कपड़ा

प्रतिवर्ष बनाया जा सकेगा। ६ और मिलों को खोलने की योजना है। इनमें से ४ तो खुलना जिले में होंगी और दो चिटगांव में होंगी। इनमें से सब मिलाकर कोई ३००० करघे होंगे। पाकिस्तान में यद्यपि इस समय कागज की कोई भी मिल नहीं है, परन्तु कागज बनाने के उद्योग की सम्यक् संभावनाएँ हैं। उपयुक्त रसायन पदार्थ व अन्य कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। पश्चिमी पंजाब का गोंद, नमक व चूना तथा पूर्वी बंगाल का बाँस इस उद्योग के मुख्य स्तम्भ हो सकते हैं। चिटगांव और रंगमती के बीच में कप्ताईमुक स्थान पर कागज की एक मिल बनाई जा रही है। यह क्षेत्र बाँसों का भंडार है। सन् १९५४ के अन्त में इस मिल का उत्पादन शुरू हो गया और अब देश की कागज की मांग पूरी की जा रही है। करांची में भूसी और घास से दफ्ती व बाँधने का सस्ता कागज तैयार किया जा सकता है।

लोहा और इस्पात ढालने के ३२ कारखाने हैं। इस्पात उद्योग स्थापित करने के बारे में अभी विचार हो रहा है। देश में इस्पात की वार्षिक मांग ३५०,००० टन के लगभग रहती है।

यातायात के साधन

पाकिस्तान में थल, जल व वायु तीनों ही प्रकार के गमनागमन साधन हैं और इसमें वृद्धि भी की जा सकती है। देश कृषि-प्रधान है और निर्यात व्यापार में प्रमुख है। अतः यातायात के साधनों का देश के आर्थिक जीवन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

रेल-मार्ग—पाकिस्तान में ७०५८ मील लम्बे रेल मार्ग हैं। इनमें से ५३६२ मील लम्बा रेल-मार्ग पश्चिमी पाकिस्तान में और १६९६ मील लम्बा रेल मार्ग पूर्वी पाकिस्तान में है। देश के विभाजन के पहले पाकिस्तान की रेल व्यवस्था बंगाल-आसाम और उत्तरी-पश्चिमी रेल-मार्गों का भाग थी। शुरू में यहां की रेलें सैनिक महत्व के लिए बनाई गई थीं। यहाँ के रेलमार्गों का दूसरा उद्देश्य सीमाप्रान्त, पंजाब और सिंध की कृषि उपज को बम्बई, दिल्ली व कराची तक पहुँचाना था। पूर्वी बंगाल की रेलें पटसन को कलकत्ते तक पहुँचाती थीं। देश-विभाजन के बाद परिस्थिति परिवर्तन के कारण नयी सीमा के अन्तर्गत इन रेल-मार्गों की पुनः व्यवस्था करनी पड़ी।

पाकिस्तान के रेल-मार्गों को कई असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। देश में कोयले का अभाव है और रेल के डिब्बों की भी कमी है। इसके अलावा निम्नलिखित अन्य कठिनाइयाँ भी हैं—(१) कुशल विशेषज्ञों की कमी है। (२) पूर्वी पाकिस्तान में रेलों के डिब्बे व इंजनों की मरम्मत के लिए कुछ भी सुविधाएँ नहीं हैं। (३) कोयले की मांग-पूर्ति अनिश्चित है। (४) इंजन मालगाड़ी व सवारी गाड़ी की बहुत कमी है। इसलिए पाकिस्तान सरकार **सैयदपुर कारखाने** को पूरी तरह से नए यंत्रादि से पूर्ण बना रही है। **पहारवली** में इसी प्रकार का दूसरा कारखाना भी बनाया जा रहा है। परन्तु कोयले की कमी की समस्या बड़ी विकट है। इसलिए इञ्जनों में कोयले के स्थान पर तेल प्रयोग किया जा रहा है और

उत्तरी-पश्चिमी रेल मार्ग पर चलने वाले १७२ इञ्जनों को तेल द्वारा संचालित किया जा रहा है। कच्चे माल के उपलब्ध होने पर उत्तरी-पश्चिमी रेल-मार्ग के आधे इंजनों को तेल द्वारा संचालन के योग्य कर दिया जावेगा।

पश्चिमी पाकिस्तान में उत्तरी-पश्चिमी रेलमार्ग व उसकी शाखाएँ हैं। इसका प्रधान कार्यालय लाहौर में है और इसकी कुल लम्बाई ५३६३ मील है। इसमें ४५६१·५८ मील तक तो बड़ी लाइन है। इसकी दो प्रमुख शाखाएँ हैं और प्रत्येक शाखा की अनेक उपशाखाएँ हैं।
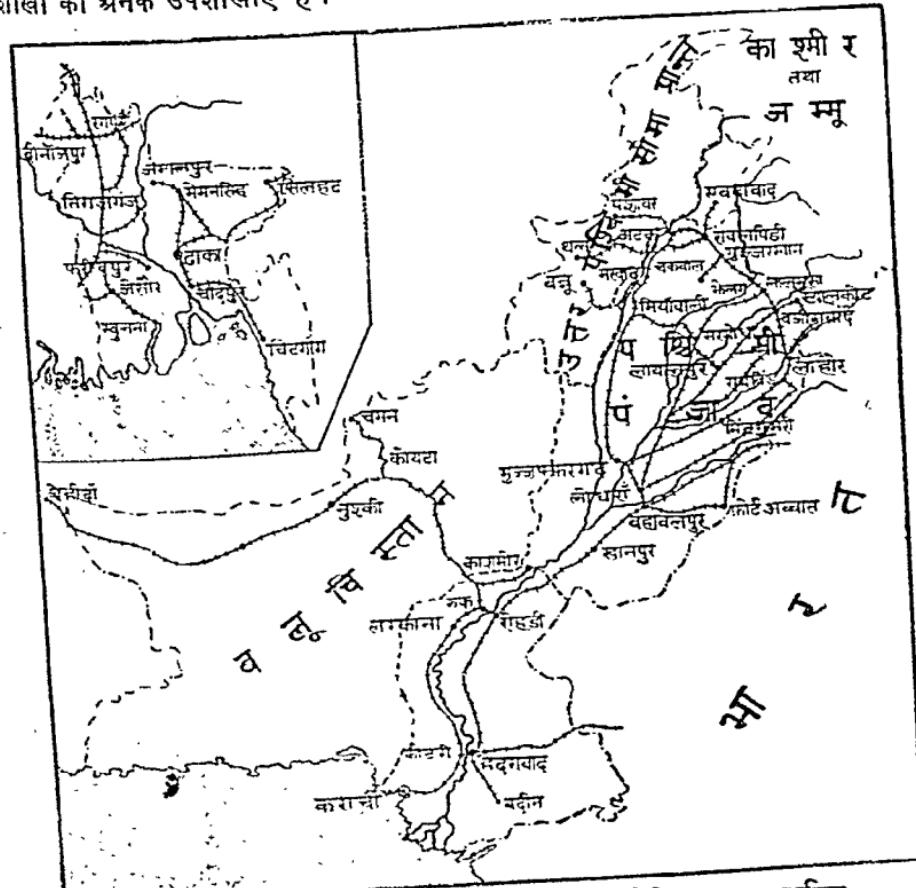
चित्र ९२—पश्चिमी पाकिस्तान के रेलमार्ग औद्योगिक या व्यापारिक दृष्टिकोण से नहीं बनाए गए थे वल्कि सैनिक सुविधा के लिए।

(१) लाहौर से पेशावर तक। यह शाखा वजीराबाद, रावलपिंडी और अटक होती हुई जाती है। वजीराबाद से एक लाईन काश्मीर की सीमा पर स्यालकोट तक जाती है।

(२) लाहौर से करांची तक। इस शाखा के मार्ग पर खानेवाल, लोधरान, रोहरी और सक्खर पड़ते हैं। यह रेलमार्ग रोहरी स्थान पर सिन्धु नदी को पार

करता है। सक्खर से एक उपशाखा सीबी होती हुई जाहीदान तक और दूसरी क्वेटा होती हुई चमन तक जाती है।

इसके अलावा वजीराबाद और खानेवाल, पेशावर व मुजफ्फरगढ़ तथा रोहरी व वादिन के बीच कई और उपशाखाएँ हैं। इस भाग में छोटी लाइन की लम्बाई ३१८·७४ मील तथा संकरी लाइन की लम्बाई ४८१·७७ मील है।

पूर्वी पाकिस्तान में रेलमार्गों की लम्बाई १६६६ मील हैं। इसमें कुछ बड़ी लाइन है और कुछ छोटी लाइन भी। ५४४·१३ मील तक तो बड़ी लाइन है और १११८·५० मील लम्बी छोटी लाइन है। संकरी लाइन की लम्बाई १६·५० मील है। ब्रह्मपुत्र नदी प्रान्त के बीचोंबीच से प्रवाहित होती है। नदी के दाएँ किनारे पर बड़ी लाइन रेलमार्ग की इकहरी शाखा है। और थोड़ी दूर तक छोटी लाइन की इकहरी शाखा भी जाती है। नदी के बायें किनारे पर छोटी लाइन की इकहरी शाखा चिटगांव तक जाती है। इन दोनों शाखाओं के बीच केवल नावों को छोड़कर और कोई सम्बन्ध नहीं है। पूर्वी बंगाल के मुख्य रेलमार्ग छोटी लाइन के हैं और चिटगांव से आगे बढ़ते हैं।

(१) चिटगांव से सिलहट तक। इस मार्ग पर लकसम, कमीला, नारायणपुर और कुलौरा स्थित हैं। लकसम से एक उपशाखा चांदपुर तक जाती है।

(२) चिटगांव से बहादुराबाद तक। यह मार्ग नारायणगंज और मेमनसिंह से होकर जाता है। मेमनसिंह एक अन्य रेलमार्ग द्वारा ढाका से संबन्धित है।

चूंकि पूर्वी पाकिस्तान का अधिकतर व्यापार चिटगांव से ही होता है इसलिए भैरव बाजार और चिटगांव के बीच गाड़ियों में बड़ी भीड़-भाड़ रहती है। इसलिए इस क्षेत्र में लाइन को दुहरी कर देने की योजना है।

पोरदाह बड़ी लाइन का बड़ा महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। यहाँ से तीन रेलमार्ग जाते हैं :—(१) जमुना पर स्थित सिराजगंज को (२) पद्मा पर स्थित राजबारी और फिर वहाँ से फरीदपुर को और (३) ईश्वरडी होते हुए डोमर तक और फिर वहाँ से दार्जिलिंग तक। चिटगांव के विकास हो जाने पर बड़ी लाइन के रेलमार्ग पर आना-जाना कम हो जायेगा और आय से व्यय अधिक होने लगेगा। अतः रेल-विभाग इस मार्ग को छोटी लाइन में परिवर्तित करने की सोच रहा है ताकि व्यय में कमी हो जाय और देश की रेलवे लाइनें एकसार हो जायें। पूर्वी पाकिस्तान में १६६३ मील लम्बे रेलमार्ग हैं परन्तु उन्हें कई असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। ये असुविधाएँ कोयले के अभाव, इंजन व गाड़ियों की कमी से सम्बन्धित हैं। मरम्मत करने के कारखाने भी कम हैं। कोयला अधिकतर भारत से ही मंगाया जाता है परन्तु इसके लिए भारत व पाकिस्तान के बीच मित्रता होना आवश्यक है। दक्षिणी अफ्रीका व आस्ट्रेलिया से कोयला मंगवाने में खर्च अधिक पड़ता है। इसी प्रकार ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र अमरीका से ही रेल के इंजन व गाड़ियाँ मंगाई जा सकती हैं परन्तु इन देशों पर अन्य देशों की मांग इतनी अधिक रहती है कि उनमें पाकिस्तान के मतलब के लिए काफी माल नहीं मिल सकता।

सड़कें

पश्चिमी पंजाव और सीमाप्रान्त में सड़कों का काफी विकास हुआ है। इन दोनों प्रान्तों में ४००० मील पक्की सड़कें हैं। पूर्वी पाकिस्तान में वर्षा की अधिकता व नदियों के प्रवाह के कारण सड़कें वनाने में कठिनाई है। इसीलिए पूर्वी वंगाल में लम्वी सड़कें नहीं हैं। सन् १९५४ में पाकिस्तान में कुल मिलाकर सड़कों की लम्वाई ५८,६०० मील थी। इसमें से उत्तम सड़कें ८९३७ मील लम्वी हैं। इनका व्योरा इस प्रकार है—

	उत्तम सतह वाली सड़कें	पक्की सड़कें	कच्ची सड़कें	कुल योग
पंजाव	२,६९४	४१०	१२,८८३	१५,९८७
सीमाप्रांत	१,१०३	१२०	१,८९९	३,१२२
सिंध	५९७	१६०	११,६४८	१२,४०५
वलूचिस्तान	५८६	६३७	३,४५३	४,६७६
पूर्वी पाकिस्तान	५९४	१,०२८	२,१७८२	२१,७९४
कुल योग	५,४७४	२,३५५	५०,०५५	५७,९८४

सीमान्त सड़कें—पाकिस्तान और ईरान, अफगानिस्तान और सिनक्यांग के वीच ५ सीमान्त थलमार्ग हैं।

(१) वलूचिस्तान में चमन से कांधार और हिरात तक। यह मार्ग खोजक दर्रे से होकर जाता है।

(२) क्वेटा से महीदान तक। महीदान ईरान और वलूचिस्तान की सीमा पर स्थित है। वहाँ तक उत्तरी-पश्चिमी रेलमार्ग जाता है और फिर वहाँ से काफिले की एक सड़क। हाल में महीदान और तेहरान के वीज मोटर योग्य सड़क वन गई है।

(३) खैवर दर्रे से होती हुई एक सड़क पेशावर को कावुल और जलालावाद से मिलाती है। पेशावर और कावुल के वीच की दूरी १७० मील है और अकेला खैवर दर्रा ३० मील लम्वा है। पश्चिमी पाकिस्तान और अफगानिस्तान के वीच यही एक व्यवस्थित मार्ग है। इसी मार्ग से सिकन्दर, तेमूर, चंगेज़ खान, नादिरशाह और वावर ने भारत पर चढ़ाइयां की थीं।
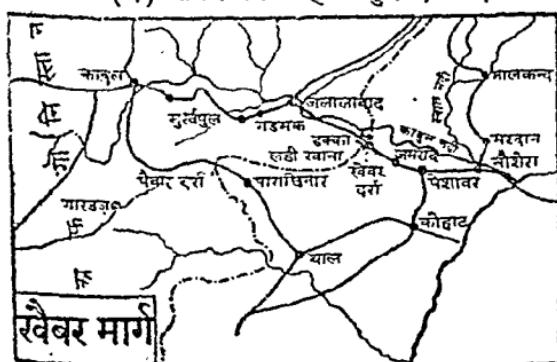
चित्र ९३

यह मार्ग कावुल नदी के समानान्तर जाता है। पेशावर से लंडीखाना तक ५५ मील लम्वी एक सड़क नदी के काफी दक्षिण से होकर जाती है।

(४) पश्चिमी पंजाव के अटक से सिनक्यांग प्रदेश के काशगर स्थान तक।

यह मार्ग चितराल और हिन्दुकुश होकर जाता है। गिलगित पहुंचने के लिये १२ रोज का लम्बा रास्ता तय करना पड़ता है। पेशावर से गिलगित तक ३५० मील लम्बा काफिला मार्ग है जो कि १३,७०० फीट की ऊँचाई पर स्थित कराकोरम पहाड़ के बाबूसर दर्रे से होकर गुजरता है। गिलगित से एक शाखा दक्षिण-पूर्व की ओर सिन्धु नदी से १०० मील ऊपर स्थित बाल्टिस्तान के शासन केन्द्र स्कीडू तक जाती है। इस प्रकार सिनक्यांग से चलने वाले काफिला मार्ग का केन्द्र गिलगित है। काशगर से व्यापारी रेशम, सूती कपड़ा, दरियां व गलीचे, भेड़ की खाल और बकरियां लाते हैं और उनके बदले मिट्टी का तेल, चीनी, दियासलाई और नमक ले जाते हैं। पाकिस्तान सरकार ने पेशावर-गिलगित मार्ग को चौड़ा कर दिया है। अब यह मार्ग लारियों व मोटरगाड़ियों द्वारा ४ दिन में पार किया जा सकता है।

(५) डेरा इस्माइलखाँ से कलात व कांधार को। यह मार्ग ७५०० फीट की ऊँचाई पर स्थित गोमाल दर्रे से होकर जाता है। यह सब से पुराना व्यापारिक मार्ग है और इसी मार्ग से अफगानिस्तान के हजारों व्यापारी प्रतिवर्ष आते हैं। ये व्यापारी अपने ऊँटों पर रेशम, फल, ऊँट व बकरी के बाल, भेड़ की खाल और कालीन व गलीचे लाते हैं। व्यापार की ये वस्तुएं काबुल व बोखारा से आती हैं।

जलमार्ग

पाकिस्तान के आन्तरिक जलमार्ग ५००० मील लम्बे हैं। पश्चिमी पाकिस्तान की नदियों से यातायात का कुछ भी काम नहीं लिया जाता है। यद्यपि सिन्धु संसार की सब से बड़ी नदियों में है परन्तु रेलों के निर्माण के बाद से इस पर व्यापार बहुत कम होता है।

सिन्धु नदी सतलज के स्रोत के पास ही कैलाश पर्वत से निकलती है। लद्दाख प्रदेश से होकर गिलगित स्थान तक यह उत्तर-पश्चिम की ओर बहती है। गिलगित में यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है और फिर इसी दिशा में बहती हुई अरब सागर में जा गिरती है। मुहाने के पास यह नदी कई नालियों में बहने लगती है और इस प्रकार इसके डेल्टा में कई नालियां बन जाती हैं। इस कटे-फटे डेल्टा भाग में सरपत मैनग्रोव नामक पौधे पाये जाते हैं। अधिकतर डेल्टा भाग दलदली है। इसके ऊपर व मध्यवर्ती प्रवाह क्षेत्र में शायक, काबुल, कुर्रम और गोमल नदियां आकर इसमें मिल जाती हैं। लेकिन इनसे भी अधिक महत्वपूर्ण सहायक नदियां **झेलम, रावी, चिनाब और सतलज** हैं जो पश्चिमी हिमालय से निकलकर मिठनकोट स्थान पर इसमें मिल जाती हैं। इन्हीं को मिलाकर इस प्रदेश का नाम पंज + आब = पंजाब पड़ गया है।

सिन्धु नदी १८०० मील लम्बी है और मुहाने से १००० मील दूर तक इसमें नावें चलाई जा सकती हैं। परन्तु इसका प्रवाह अक्सर बदलता रहता है और बरसात के दिनों में इसमें भीषण बाढ़ आती है। इसी कारण इसके किनारों पर कोई बड़े नगर नहीं हैं। मुल्तान, लाहौर, लायलपुर, वजीराबाद और बहावलपुर इसकी सहायक नदियों पर बसे हुए हैं।

वारसक जल-विद्युत योजना के वन जाने पर कावुल नदी का पानी एक जलाशय के रूप में इकट्ठा कर लिया जायेगा। इससे उस भाग में नावें चल सकेंगी और खैवर दर्रे के मोटर-लारी मार्ग के अलावा इस वैकल्पिक जलमार्ग से भी पेशावर और कावुल के वीच संवंध स्थापित हो सकेगा।

पूर्वी पाकिस्तान में जलमार्गों की वड़ी सुविधा व महत्व है। यहां के नाव्य जल-मार्ग ४,५०० मील लम्वे हैं। संसार में इसके समान नाव्य जल मार्ग कहीं और नहीं हैं। पूर्वी वंगाल में नदियां, उनकी सहायक नदियां व उनकी नालियां आदि सभी पूर्णतया नाव्य हैं। पूर्वी वंगाल की मुख्य नदियां, पद्मा, ब्रह्मपुत्र और मेघना हैं। पद्मा वास्तव में गंगा नदी की ही एक शाखा है। माल्दा के पास गंगा नदी की दो शाखायें हो जाती हैं— एक दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है और भागीरथी कहलाती है। दूसरी शाखा दक्षिण-पूर्व की ओर वहती है। इसी का नाम पद्मा है। यह नदी राजशाही, पवना, फरीदपुर और ढाका जिलों से होकर वहती है। ब्रह्मपुत्र नदी पूर्वी वंगाल में रंगपुर स्थान पर प्रवेश करती है और दक्षिण की ओर वहती हुई फरीदपुर में पद्मा से मिल जाती है। मेघना नदी सिलहट प्रदेश में सूरमा कहलाती है और चांदपुर के पास पद्मा में मिल जाती है।

इन जलमार्गों पर नावें व स्टीमर जहाज चल सकते हैं। यहाँ के मुख्य नाव्य मार्ग निम्नलिखित हैं—(१) चांदपुर से नारायणगंज तक (२) गोआलन्डो से चांदपुर तक (३) गोआलन्डो से नारायणगंज तक (४) ढाका से वारीसाल तक (५) वारीसाल से लोहागंज तक। इनके द्वारा केवल यात्री ही सफर नहीं करते वलिक इन्हीं के द्वारा पाकिस्तान का पटसन व चावल भी इधर-उधर लाया ले जाया जाता है।

वायुमार्ग

वायुमार्गों के द्वारा दूरस्थ भागों में भी शीघ्रता का संवंध स्थापित हो सकता है। पाकिस्तान के लिये वायुमार्गों का महत्व और भी अधिक है विशेषकर इसलिये कि इसके पूर्वी व पश्चिमी भागों के वीच गमनागमन का केवल एक ही जरिया है— वायु से अथवा समुद्र से। समुद्र का रास्ता लम्वा व चक्करदार है। अतः वायुमार्ग का महत्व स्पष्ट है।

पाकिस्तान में इस समय काफी हवाई अड्डे हैं और दूसरे महायुद्ध के वाद से वायु यातायात ने काफी प्रगति की है। कराची, लाहौर, क्वेटा, पेशावर, हैदरावाद (सिन्ध) मुल्तान, ढाका, चिटगांव और सिलहट यहाँ के मुख्य हवाई अड्डे हैं। वायु यातायात चालक चार कम्पनियाँ हैं—ओरियन्ट एअरवेज, पाकिस्तान एअर सर्विस जिसका नाम अव पाकिस्तान एविएशन लिमिटेड हो गया है, क्रीसेंट एअर ट्रांसपोर्ट लि० और पाकिस्तान इंटरनेशनल एअर लाइन्स जो १६५३ में स्थापित की गई और जिसमें अधिकतर पूंजी सरकार की लगी हुई है। इन कम्पनियों के हवाई जहाज वंवई, कलकत्ता और दिल्ली को भी आते हैं। इसके अलावा पाकिस्तान और लंका,

बर्मा, सिंगापुर, तेहरान और काहिरा के बीच भी वायु संबंध हैं। सन् १९५५ के जनवरी मास में वायु यातायात के राष्ट्रीयकरण का निश्चय किया गया।

पाकिस्तान के मुख्य वायुमार्ग (१९४९)

	उड़ान
१. ओरियन्ट एअरवेज	
कराची-क्वेटा-लाहौर	हफ्ते में दो बार
कराची-लाहौर-रावलपिंडी-पेशावर	,, ,, तीन ,,
कराची-कलकत्ता-ढाका-चिटगांव	,, ,, ,, ,,
कराची-अहमदाबाद-बंबई	,, ,, ,, ,,
कराची-क्वेटा-जाहीदान-मेशद तेहरान	,, ,, एक ,,
कलकत्ता-ढाका	दैनिक
ढाका-चिटगांव-सिलहट	,,
कलकत्ता-चिटगांव	,,
चिटगांव-आक्याब-रंगून	,,
२. पाकिस्तान एअर सर्विस	
कराची-लाहौर	दैनिक
कराची-दिल्ली	,,
लाहौर-दिल्ली	,,
लाहौर-रावलपिंडी-पेशावर	हफ्ते में तीन बार
कराची-बंबई-कोलम्बो	,, ,, ,, ,,
कराची-कलकत्ता-रंगून-सिंगापुर	,, ,, ,, ,,
कराची-काहिरा	,, ,, दो ,,

करांची प्रधान हवाई अड्डा है और अन्तर्राष्ट्रीय वायुमार्गों पर स्थित होने के कारण इसका स्थान बड़ा महत्वपूर्ण हो गया है। करांची के हवाई अड्डे का महत्व नीचे दिये हुए आंकड़ों से स्पष्ट हो जायेगा:—

हवाई जहाजों के आने-जाने की संख्या	९७९
आने जाने वाले यात्रियों की संख्या	८,२२८
यहाँ से गुजरने वाले यात्रियों की संख्या	३,५२४
डाक की मात्रा	१,०७,७२२ पौंड
यहाँ से गुजरने वाली डाक की तोल	२,२१,७९७ ,,
यहाँ पर उतारा व चढ़ाया माल	३,३९,४२३ ,,
यहाँ से गुजरने वाला माल	१,५८,३१४ ,,

पाकिस्तान से भारत के साथ वायु यातायात की व्यवस्था, भारत सरकार के समझौते के अनुसार होती है।

पाकिस्तान की हवाई यातायात योजना अभी तक व्यापारिक दृष्टिकोण से

लाभप्रद नहीं है। वायुयानों में यात्री व माल लादने के स्थान का पूरा प्रयोग नहीं होता है। पूर्वी पाकिस्तान में कुशल विशेषज्ञों और रेडियो यन्त्रादि की कमी के कारण हवाई यातायात का विकास नहीं हो पाया है और फरीदपुर, कोमिला तथा अन्य स्थानों पर हवाई जहाज उतरने की पटरी होने पर भी वायु यातायात की व्यवस्था नहीं है।

विदेशी व्यापार

आधुनिक उद्योग-धंधों की बहुत-सी वस्तुएं पाकिस्तान में उपलब्ध नहीं हैं। कोयला, मशीनें, सूती कपड़ा, मोटर-गाड़ियां, रासायनिक पदार्थ, कागज, लोहा व इस्पात के सामान, चीनी व रबड़ की वस्तुओं की पाकिस्तान में काफी मांग रहती है। इसलिये विदेशी व्यापार का विशेष महत्व है। पाकिस्तान में बहुत-सी वस्तुएँ तैयार की जा सकती हैं परन्तु इस समय उनके उत्पादन की कोई व्यवस्था न होने से पाकिस्तान उनका आयात करता है।

पाकिस्तान से कपास, पटसन, ऊन, ऊनी वस्तुएँ, जिप्सम, पोटाशियम नाईट्रेट, चमड़ा व खालें बाहर निर्यात की जाती हैं। थोड़ी मात्रा में अनाज, चाय, फल व तरकारियाँ भी विदेशों को भेजी जाती हैं; निर्यात की सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु कच्चा पटसन है और संपूर्ण उत्पादन की मात्रा बाहर भेज दी जाती है। पटसन के बाद दूसरी वस्तु ऊन है। इसके बाद चमड़ा व खालों का स्थान आता है। कपास भी निर्यात की प्रमुख वस्तु है। कपास के कुल उत्पादन का दो-तिहाई भाग भारत व अन्य विदेशों को भेज दिया जाता है। सन् १९५०-५१ में पाकिस्तान के निर्यात व्यापार का ८५ प्रतिशत अंश कपास व पटसन था। अतः स्पष्ट है कि कुल कच्चे माल के निर्यात पर निर्भर रहना आर्थिक संकट से खाली नहीं क्योंकि संसार में इनकी मांग सदैव घटती-बढ़ती रहती है।

पाकिस्तान की निर्यात वस्तुओं के मुख्य खरीदार भारत, ग्रेट ब्रिटेन, बेल्जियम, संयुक्त राष्ट्र, रूस, इटली, फ्रांस, चीन व आस्ट्रेलिया हैं।

१९५३-५४ में पाकिस्तान का निर्यात व्यापार

वस्तु	मूल्य (लाख रुपये)
कच्चा पटसन	४२९१
कच्ची कपास	३८४३
ऊन	३२५
चमड़ा व खालें	२९२
चाय	२८२
मछली	१४०

पाकिस्तान से भारत कपास, ऊन व अनाज मंगवाता है।

पाकिस्तान की निर्यात सामग्री के मुख्य ग्राहक देश और निर्यात सामग्री का मूल्य (१९५०-५१) (लाख रुपये में)

भारत	५५६३	इटली	४३६
ग्रेट ब्रिटेन	३१९४	जापान	३३३८
संयुक्त राष्ट्र	१६०४		
चीन	८९०		
फ्रांस	१००७	कुल योग	२५,२८४

पाकिस्तान की मुख्य आयात सामग्री—सूत व सूती कपड़ा, खनिज तेल, मशीनें इस्पात व उसकी बनी हुई वस्तुएँ, मोटर गाड़ियाँ, रासायनिक पदार्थ, भोजन, कागज व बिजली के सामान आदि हैं। भारत से पाकिस्तान सूती कपड़ा व सूत, पटसन की वस्तुएँ, चीनी, गुड़, लोहा व इस्पात, कागज व कोयला मंगवाता है। पाकिस्तान के आयात का एक-चौथाई भाग सूती कपड़ा होता है जो कि भारत, ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र, इटली, ईरान, चीन, लंका, व स्ट्रेटस सेटलमेंट्स से आता है।

१९५३-५४ में पाकिस्तान का आयात व्यापार

वस्तु	लाख रुपये
सूत और तैयार माल	५२७
मशीनें	११४६
लोहा व इस्पात	५१४
गाड़ियाँ	१६५
तेल	८८०
बिजली का सामान	१४७
फल और सब्जी	१४२
कागज दफ्ती	१४७

पाकिस्तान का ३० प्रतिशत विदेशी आयात व्यापार ग्रेट-ब्रिटेन से होता है और पाकिस्तान का २५ प्रतिशत निर्यात ग्रेट ब्रिटेन को ही जाता है।

संयुक्त राज्य और पाकिस्तान के बीच व्यापार का मूल्य (पौंड में)

वर्ष	संयुक्त राज्य में आयात	संयुक्त राज्य से निर्यात	संयुक्त राज्य से पुनर्निर्यात
१९५०	२६०७२१९६	४०९८१६५५	११७४४५
१९५१	४०४९६९७८	४५५९९०४८	३५०३१३
१९५२	२८८२०६४१	५६३५१३४९	१२३२२७
१९५३	३०६७५१६०	३२९९६७९८	१९५०५७
१९५४	२६३३४६१७	४५८५१९५५	१७९४४१

ग्रेट ब्रिटेन से पाकिस्तान में सूती कपड़ों का सबसे अधिक आयात होता है परन्तु इधर कुछ दिनों से पाकिस्तान में विलायती सूती कपड़ों का आयात बहुत कम हो गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ की वस्तुओं की कोटि पाकिस्तान की मंडियों की मांग के अनुसार नहीं होती है। शुरू में पाकिस्तान में सूती कपड़ों की बहुत कमी थी। इसलिए अंग्रेजी मिलों में तैयार किया हुआ कपड़ा खप जाता था परन्तु धीरे-धीरे जापान का मामूली व सस्ता कपड़ा उपलब्ध हो गया। फलतः ग्रेट ब्रिटेन की मिलों के कपड़े की मांग अब बहुत कम हो गई है। ग्रेट ब्रिटेन से आयात की जाने वाली अन्य सामग्री मशीनें, धातु यंत्र व औजार, दवाई व रासायनिक पदार्थ और रबड़ के बने पदार्थ हैं।

पाकिस्तान को आयात सामग्री भेजने वाले मुख्य देश और आयात सामग्री का मूल्य

(१९५०-५१)

(लाख रुपये में)

देश	मूल्य	देश	मूल्य
भारत	२१८३	हालैंड	१२७
ग्रेट ब्रिटेन	३३४०	फ्रांस	२२१
संयुक्त राष्ट्र	९८८	चीन	८४०
इटली	६७५	जापान	२३४६
		कुल योग	१४,२५०

पाकिस्तान के समुद्री व्यापार की दिशा (१९५०-५१)

(प्रतिशत)

देश	निर्यात	आयात
ग्रेट ब्रिटेन	२२·२३	३१·२१
भारत	१०·०१	१५·२७
फ्रांस	८·७३	—
संयुक्त राष्ट्र	७·८५	१०·७५
हांगकांग	७·५५	—
जापान	६·८६	८·४४
रूस	५·८१	—
जर्मनी	४·४४	—
इटली	३·८८	७·४०
चीन	—	४·८३
हालैंड	—	२·४१
मिश्र	—	२·३०
बर्मा	—	२·१४
अन्य देश	२२·६४	१५·२५
	१०० प्रतिशत	१०० प्रतिशत

सन् १९४९-५० में पाकिस्तान के पुनर्निर्यात व्यापार का मूल्य ७६२ लाख रुपया था। इसी साल कलकत्ते के बन्दरगाह से ४७१ लाख रुपये मूल्य की पाकिस्तानी सामग्री बाहर भेजी गई। भारत के साथ इसका व्यापार थल मार्गों द्वारा भी होता है और साधारणतया प्रतिवर्ष थल मार्गों से १५ करोड़ रुपये का माल आयात किया जाता है और ८० करोड़ रुपए का सामान निर्यात होता है।

पाकिस्तान की विदेशी व्यापार नीति की विशेषता विभिन्नता है। इस नीति का मुख्य ध्येय अपनी आर्थिक दशा को विभिन्न बनाना है ताकि पाकिस्तान की भारत पर निर्भरता कम हो जाए। देश विभाजन के बाद पाकिस्तान का आधे से अधिक विदेशी व्यापार भारत के साथ ही होता था। पाकिस्तान इस निर्भरता से अपने को मुक्त करना चाहता है। इसलिए उसने अपने विदेशी व्यापार में विभिन्नीकरण की नीति को अपनाया। सितम्बर सन् १९४९ में दोनों देशों के बीच मुद्रा विनिमय और व्यापार सम्बन्धी संकट से पाकिस्तान की इस नीति को और भी बढ़ावा मिला और अब यह उसके विदेशी व्यापार का आधार-सा बन गई है।

बन्दरगाह व व्यापारिक केन्द्र

पाकिस्तान का निकास अरब सागर व बंगाल की खाड़ी में है। यहाँ के दो प्रमुख बन्दरगाह करांची और चिटगांव है।

करांची पाकिस्तान का सबसे महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह है और इसका पोताश्रय भी प्राकृतिक व आदर्श है। इसका पृष्ठप्रदेश बड़ा विस्तृत है। और इसके अन्तर्गत अफगानिस्तान, बलूचिस्तान और पश्चिमी पंजाब शामिल हैं। सन् १८६७ में स्वेज नहर के खुलने, अमरीका के गृहयुद्ध और सन् १८७८ में पंजाब के साथ सीधा रेल-मार्ग बन जाने से करांची बन्दरगाह का महत्व और भी बढ़ गया है।

चित्र ६४—करांची इसी नाम की एक त्रिकोण खाड़ी पर बसा है। यह खाड़ी अरब सागर से एक निचली बालू की दीवार द्वारा अलग है। बालू की यह दीवार प्रधान भूखंड से दक्षिण की ओर मनोरा के पहाड़ी द्वीप तक फैली हुई है।
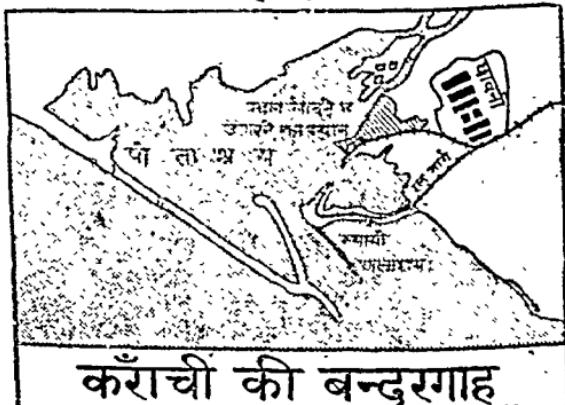
परन्तु बम्बई की स्पर्द्धा के कारण यह बहुत समय तक विशेष तरक्की नहीं कर सका। बम्बई की अपेक्षा करांची में जहाजों की ठहरने की कम सुविधाएँ प्राप्त थीं और इसका पृष्ठप्रदेश भी बहुत उन्नत नहीं था।

यहाँ से निर्यात की मुख्य वस्तुएँ गेहूँ, तिलहन, कपास, ऊन, चमड़ा व हड्डियाँ हैं। यहाँ पर विदेशों से सूती व ऊनी कपड़ा, चीनी, धातुएँ, मशीनें, तेल, शराब व रासायनिक पदार्थ आयात किए जाते हैं। करांची का व्यापारिक महत्व अधिक है। यहाँ पर कोई विशेष उद्योग-धन्धे नहीं हैं। गेहूँ के अलावा और अन्य कोई उद्योग उन्नत अवस्था में नहीं है। करांची उत्तरी-पश्चिमी रेलमार्ग द्वारा अपने पृष्ठ प्रदेश के विभिन्न केन्द्रों से मिला हुआ है।

पाकिस्तान बनने के बाद पिछले तीन सालों में इस बन्दरगाह द्वारा व्यापार की मात्रा में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। निर्यात की मात्रा तो बराबर कम होती जा रही है परन्तु आयात की मात्रा पहले से काफी अधिक बढ़ गई है।

वर्ष	आयात	निर्यात	कुल योग
१९४७-४८	११,५६,३५३	१०,२७,५२१	२१,८३,८७४
१९४८-४९	१६,०२,७४७	९,३९,९३४	२५,४२,६८१
१९४९-५०	१९,०८,४२२	९,२३,४७६	२८,३१,८९६
१९५०-५१	२३,९१,०००	१०,८२,०००	३४,७३,०००

१९५२-५३ में आयात-निर्यात मात्रा ३९९४,००० टन थी। बन्दरगाह की सामान लादने-उतारने की शक्ति को ३४ प्र. श. से ५० प्र. श. बढ़ाने के लिए एक योजना पर विचार किया जा रहा है। इसके अनुसार उतारने-चढ़ाने की पूर्वी भूमि को और अच्छा बनाया जावेगा। वहाँ १७ पेटियाँ बनाई जावेंगी और आजकल की लकड़ी के तख्तों को हटाकर फिर से बनाया जावेगा। करांची बन्दरगाह समिति ने रेल व सड़कों पर स्थित भूमि को भिन्न उद्योग-धन्धों को देकर औद्योगिक उन्नति को प्रोत्साहन दिया है।

सरकार एक मछलीमार बन्दरगाह बनाने की भी सोच रही है। इसमें नावों के फिसलने व ठहरने का स्थान होगा, जाल सुखाये जा सकेंगे और शीत भंडार व टीन के डिब्बों में बन्द करने का सुप्रबन्ध होगा। रेल व सड़कों द्वारा इसको आसपास के क्षेत्रों से मिला दिया जायेगा। केटीबन्दर, शाहबन्दर और सोनी बन्दर सिंध के अन्य तीन छोटे बन्दरगाह हैं।

चित्र ९५

पिछले तीन सालों में बन्दरगाह से माल उतारने व चढ़ाने की शक्ति में काफी वृद्धि हुई है। देश विभाजन के समय केवल ६ लाख टन माल ही प्रतिवर्ष उतारा चढ़ाया जा सकता था परन्तु अब १ करोड़ रुपया खर्च करके इसकी सुविधाओं को और अच्छा कर दिया गया है। अतः अब १८ लाख टन प्रतिवर्ष लादा व उतारा जा सकता है।
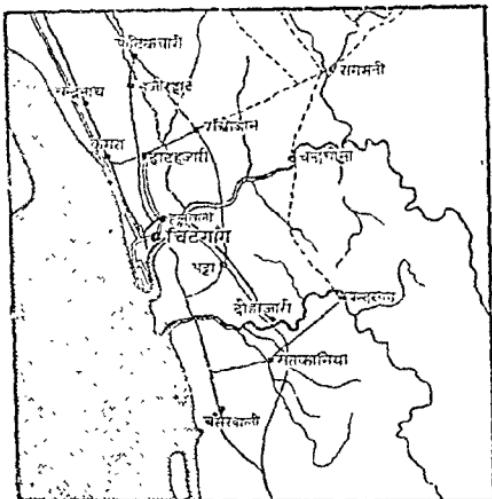
बन्दरगाह द्वारा भार वहन (टन)

वर्ष	आयात	निर्यात	कुल योग
१९४७-४८	२,६३,७२१	१,५७,१२४	४,२०,८४५
१९४८-४९	३,५८,००८	२,३९,५७२	५,९७,५८०
१९४९-५०	७,०९,९८०	२,९८,३८३	१०,०८,३६३
१९५०-५१	१२,६८,६०८	४,२६,४०१	१६,७५,००९

सन् १९५२-५३ में यहाँ से आयात-निर्यात की कुल मात्रा १७०५००० टन थी। पिछले चार वर्षों में बन्दरगाह का व्यापार चौगुना हो गया।

हाल ही में पाकिस्तान सरकार ने बन्दरगाह की सुविधाओं को बढ़ाने के लिए एक समिति स्थापित की है। इस समिति की सिफारिश के अनुसार पोताश्रय की सुविधाओं व विस्तार में ऐसी वृद्धि की जायेगी कि प्रतिवर्ष ४० लाख टन माल उतारा-चढ़ाया जा सकेगा। पाकिस्तान सरकार की ६ साला विकास योजना में चिटगांव बन्दरगाह के विकास को सबसे प्रथम स्थान दिया गया है।

खुलना—पुसौर नदी पर स्थित खुलना जिले में एक आन्तरिक बन्दरगाह है। पाकिस्तान सरकार इसका विकास कर रही है ताकि यहाँ पर बड़े-बड़े जहाज आ-जा सकें। यह विकास कार्य पिछले एक वर्ष से शुरू किया गया है और प्रथम वर्ष के प्रयोग के सफल होने पर यहाँ पर स्थायी बन्दरगाह बनाया जायेगा। इसके बन जाने से चिटगांव बन्दरगाह और पूर्वी बंगाल रेल-मार्ग पर भीड़-भाड़ तथा माल व यात्रियों का भार कम हो जाएगा। इसके द्वारा पटसन व चाय का निर्यात और कोयले व भोजन सामग्री का आयात व्यापार हो सकेगा। अनुमान है कि इस बन्दरगाह से ५ लाख टन भार का माल प्रतिवर्ष उतारा-चढ़ाया जा सकेगा। सन् १९५१-५२ में इस बन्दरगाह से ३४९००९ टन माल उतारा-चढ़ाया गया।

सन् १९५३-५४ में पाकिस्तान के विभिन्न बन्दरगाहों पर आये गये जहाजों का टन भार इस प्रकार था—

	टन भार
करांची	३६,५४,०००
चिटगांव	१२,६६,०००
छलना	४,४२,०००

पाकिस्तान सरकार ने हरिंगट्टा और मेघना के किनारों पर बन्दरगाह स्थापित करने के लिए अन्वेषण कार्य किया है। परन्तु मेघना का प्रवाह हमेशा बदलता रहता है तथा हरिंगट्टा के मुहाने पर बालू की एक दीवार-सी है जो जहाजों के लिए बड़ी खतरनाक है।

पूर्वी पाकिस्तान में काक्स बाजार और नोआखली अन्य दो छोटे-छोटे बन्दरगाह हैं।

व्यापारिक केन्द्र

पश्चिमी पंजाब का क्षेत्रफल ६१,७७५ वर्गमील है और इसकी आबादी एक करोड़ ३० लाख है। जनसंख्या के घनत्व का औसत २६३ मनुष्य प्रतिवर्ग मील है। यहाँ के लोगों का मुख्य धंधा खेती है। परन्तु प्रांत में नमक, खनिज तेल, व टरशियरी कोयले का भी भंडार है। १ लाख से अधिक आबादी के कई नगर हैं। लाहौर, रावलपिंडी, स्यालकोट, लायलपुर और मुल्तान यहाँ के मुख्य नगर हैं।

लाहौर पश्चिमी पंजाब का शासन केन्द्र है, सब से बड़ा नगर है और व्यापार की मंडी है। यह रावी नदी पर बसा है और अमृतसर से ३३ मील दूर है। सूती कपड़ा बुनना, चमड़ा साफ करना, शीशे का सामान बनाना, आटा पीसना व चीनी तैयार करना यहाँ के मुख्य उद्योग हैं। चमड़े का धंधा सबसे महत्त्वपूर्ण है। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या ७ लाख है।

लायलपुर लाहौर से ८७ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। यह पश्चिमी पाकिस्तान का सबसे महत्वपूर्ण गेहूँ केन्द्र है।

मुल्तान सीमान्त नगर है और सामग्री एकत्र करने का मुख्य केन्द्र है। यहाँ पर अफगानिस्तान के फल, दवाइयाँ, रेशम व मसाले आते हैं और पूर्व की ओर भेज दिये जाते हैं। रेलों द्वारा यह लाहौर व करांची से मिला हुआ है।

सिन्ध का क्षेत्रफल ४८,१३० वर्गमील है और आबादी ४५ लाख है। यहाँ व ६२ प्रतिशत जनसंख्या खेती में लगी हुई है और केवल ८ प्रतिशत लोग उद्योग-धंध में लगे हैं। मछली पकड़ने का धंधा भी महत्वपूर्ण है और ३९००० मनुष्यों की जीविका का यही साधन है। चमड़ा व खालें, तथा गेहूँ यहाँ से निर्यात की प्रमु वस्तुएँ हैं। करांची, सक्खर, हैदराबाद, बादिन और जेकोबाबाद यहाँ के प्रमुख व्या रिक केन्द्र हैं।

उत्तरी पश्चिमी सीमाप्रान्त पहाड़ी है और उसका कुल क्षेत्रफल ३६,२७० वर्गमील है। इसमें से २४,६८६ वर्गमील सरहदी प्रदेश है। यहाँ की आबादी ३० लाख है। पेशावर अबोटाबाद, डेरा इस्माइलखाँ और थाल यहाँ के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र हैं। अबोटाबाद काश्मीर की सीमा पर स्थित एक पहाड़ी नगर है। इसकी आबादी ४०,००० है। चमड़े व पत्थर का काम विशेषतया महत्त्वपूर्ण है। हाल में सूत कातने व बुनने की कुछ मिलें भी खुल गई हैं। पेशावर प्रांत का शासन केन्द्र है और एक प्रमुख सैनिक व व्यापारिक नगर है।

बलूचिस्तान पाकिस्तान की सबसे बड़ी इकाई है। इसका क्षेत्रफल १,३४,००२ वर्गमील है। यहाँ की कुल आबादी ८,५७,८३५ है और इसका घनत्व ६ मनुष्य प्रति वर्गमील है। यहाँ के मैदान पथरीले व अनुपजाऊ हैं। गर्मी में काफी गर्मी और जाड़े में काफी सर्दी पड़ती है। वर्षा बहुत कम व अनिश्चित है। यह प्रदेश अंगूर, आड़ू, नाशपाती, सेव व खरबूजो के लिए प्रसिद्ध है। यह वस्तुएँ सिंचाई की सहायता से उगाई जाती हैं। क्वेटा, चमन, जाहीदान और हिन्दूबाग यहाँ के मुख्य व्यापारिक केन्द्र हैं। क्वेटा यहाँ का शासन केन्द्र है।

पूर्वी बंगाल के प्रसिद्ध नगर व व्यापारिक केन्द्र ढाका, नारायणगंज, मेमनसिंह, फरीदपुर, रंगपुर, सिलहट व चांदपुर हैं। यहाँ के मुख्य उद्योग चाय के कारखाने व पटसन दबाने की मिलें हैं। यदि चाय के कारखानों की संख्या सबसे अधिक है तो पटसन की मिलों में लगे हुए मजदूरों की संख्या सब से अधिक है। इसके बाद सूती कपड़ा बुनने व कातने के कारखानों का स्थान आता है। चावल के कारखानों की भी काफी संख्या है परन्तु उनमें लगे हुए मजदूरों की संख्या रेलों, इंजीनियरिंग व चीनी के कारखानों के मजदूरों से भी कम है।
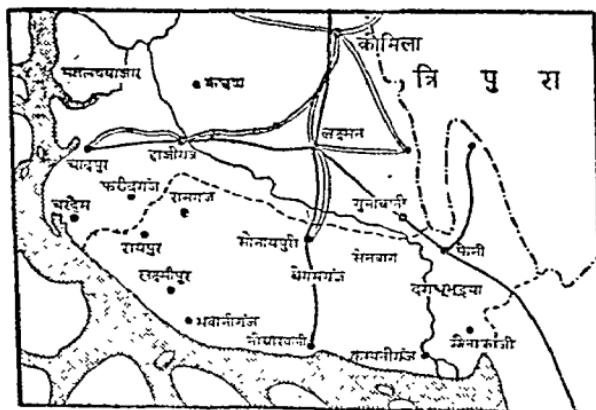
चित्र ९६

पूर्वी बंगाल में विभिन्न उद्योगों के कारखानों की स्थिति इस प्रकार है :—

	कारखानों की संख्या
चाय के कारखाने	११६
चावल के कारखाने	८४
पटसन के कारखाने	६५
इंजीनियरिंग के कारखाने	२१

	कारखानों की संख्या
मोजा वनियान व सूती बुनाई के कारखाने	१४
रेल की मरम्मत के कारखाने	१३
सूती कपड़ा मिलें	१३
चीनी की मिलें	९
नाव बनाने व मरम्मत के कारखाने	६
छपाई व किताब बांधने के कारखाने	६

ढाका सोने चांदी के काम व सीप की चूड़ियों के लिए प्रसिद्ध है। यह आंतरिक व्यापार का प्रमुख केन्द्र है। यह पटसन उत्पादक क्षेत्रों के मध्य में स्थित है।

नारायणगंज ढाका का बन्दरगाह है और पूर्वी बंगाल का मुख्य व्यापार केन्द्र है। यहां की आबादी ४५,००० है। **सिलहट** सूरमा नदी पर बसा हुआ है और फल व नीबू के लिए प्रसिद्ध है।

प्रश्नावली

१. पाकिस्तान की प्रमुख आर्थिक उपज क्या है? उनके साथ भारतीय वस्तुओं की कैसी स्पर्धा रहती है?

२. पाकिस्तान के आत्मनिर्भर होने की क्या संभावनाएँ हैं? समझाकर उदाहरण देते हुए लिखिए?

३. पाकिस्तान को किन प्राकृतिक भागों में बांटा जा सकता है? प्रत्येक का सकारण विवरण दीजिए।

४. पाकिस्तान के मुख्य खनिज पदार्थ कौन-कौन से हैं और कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं?

५. पाकिस्तान की जनसंख्या का विवरण बतलाइए और इसकी विशेषताओं के कारण लिखिए।

६. पाकिस्तान के यातायात के साधनों का वर्णन कीजिए और देश की आर्थिक उन्नति के लिए उनका महत्व बतलाइए।

७. पश्चिमी पाकिस्तात के मानचित्र पर वहाँ के सिंचाई के साधनों को दिखलाइए और बतलाइए कि वहाँ पर नहरों द्वारा सिंचाई की इतनी उन्नति कैसे सम्भव हो सकी है?

८. पूर्वी पाकिस्तान के मानचित्र पर निम्नलिखित क्षेत्र दिखलाइए :—

(अ) प्रमुख पटसन उत्पादन क्षेत्र,

(आ) मुख्य जलमार्ग और तीन नदी बन्दरगाह।

९. निम्नलिखित के महत्व व स्थिति पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए—लाहोर, पेशावर, रावलपिंडी, ढाका और नारायणगंज।

१०. कराँची व ढाका के बन्दरगाहों से होने वाले आयात-निर्यात व्यापार का निरूपण कीजिए।

११. पूर्वी पाकिस्तान में किन शिल्प उद्योगों की उन्नति की जा सकती है? कारण बतलाते हुए उत्तर लिखिए।

१२. पाकिस्तान में चीनी के कारखानों व सूती कपड़ा मिलों की वर्त्तमान दशा और भावी संभावनाओं का वर्णन कीजिए।

१३. भारत व पाकिस्तान के बीच व्यापार की विशेषताएँ बतलाइए।

१४. दैनिक उपभोग की वस्तुओं के लिए पाकिस्तान भारत पर कहाँ तक निर्भर रहता है? ये वस्तुएँ कहीं और से प्राप्त की जा सकती हैं या नहीं।

अध्याय : : चौदह

बर्मा

सन् १९३७ तक बर्मा भारत का ही अंग था। सभ्यता, जाति व भौगोलिक दृष्टिकोण से बर्मा इंडोचीन प्रायद्वीप का ही भाग है यद्यपि राजनीतिक तरीके पर यह एक अलग राष्ट्र है।

स्थिति, विस्तार व क्षेत्रफल—इंडो-चीन प्रायद्वीप के दक्षिणी प्रदेश में उत्तर व पश्चिमोत्तर दिशा की ओर बर्मा स्थित है। इसके पूर्व में चीन का यनान प्रदेश और इंडो-चीन व स्याम के देश हैं। उत्तर में वह पर्वतीय प्रदेश हैं जहाँ भारत, चीन व तिब्बत की सीमायें एक दूसरे से मिलती हैं। इसके दक्षिण में हिन्द महासागर व मलाया प्रायद्वीप हैं और पश्चिम में भारत व पूर्वी पाकिस्तान।

बर्मा का स्वरूप बहुत कुछ पतंग के सामान है। उत्तर से दक्षिण तक इसका विस्तार कोई ८६० मील में है और पूर्व से पश्चिम तक इसकी चौड़ाई ५७५ मील है। इसके अलावा इसकी पूंछ-सी दक्षिण की ओर ६०० मील तक फैली हुई है। इसकी तटरेखा लगभग १२९० मील लम्बी है और भारत की अपेक्षा अधिक कटी-फटी है। कुल मिलाकर इसका क्षेत्रफल २,६१,७८९ वर्गमील है।

बर्मा की स्थिति आर्थिक दृष्टिकोण से बड़ी महत्त्वपूर्ण है। भारत और आस्ट्रेलिया के मध्य वायुमार्ग बर्मा से होकर जाता है। स्याम, फ्रांसीसी इंडोचीन और चीन के साथ इसकी सीमा मिली हुई है। लाशिओ, तयोनगई, मेयमयो स्थानों पर इसका चीन के साथ संपर्क होता है और लाशिओ का मार्ग जिसे बर्मा रोड भी कहते हैं, सबसे अधिक सैनिक व व्यापारिक महत्त्व का है। यह तो हुई थल व वायुमार्गों की बात। सामुद्रिक व्यापारिक मार्गों का भी यह केन्द्र है और संसार के सभी प्रमुख समुद्री मार्गों से संबंधित है।

जनसंख्या व मनुष्य—बर्मा की जनसंख्या सन् १९५३ में १,९०,४५,००० है और आबादी का औसत घनत्व ७२ मनुष्य प्रति वर्गमील है। परन्तु जापान, चीन, भारत व इंडोचीन की अपेक्षा यह संख्या बहुत ही कम है जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट हो जायेगा :—

जनसंख्या का औसत घनत्व (प्रति वर्ग मील)

देश	संख्या	देश	संख्या
जापान	४९६	फिलीपाइन्स	१४०
चीन	२५०	मलाया	१०३
भारत	२४७	बर्मा	७२

इस प्रकार दक्षिण पूर्व एशिया के सभी देशों में बर्मा की जनसंख्या का घनत्व सबसे कम है।

बर्मा में जनसंख्या का सबसे अधिक घनत्व पीगू, इरावदी और मांडले प्रदेशों
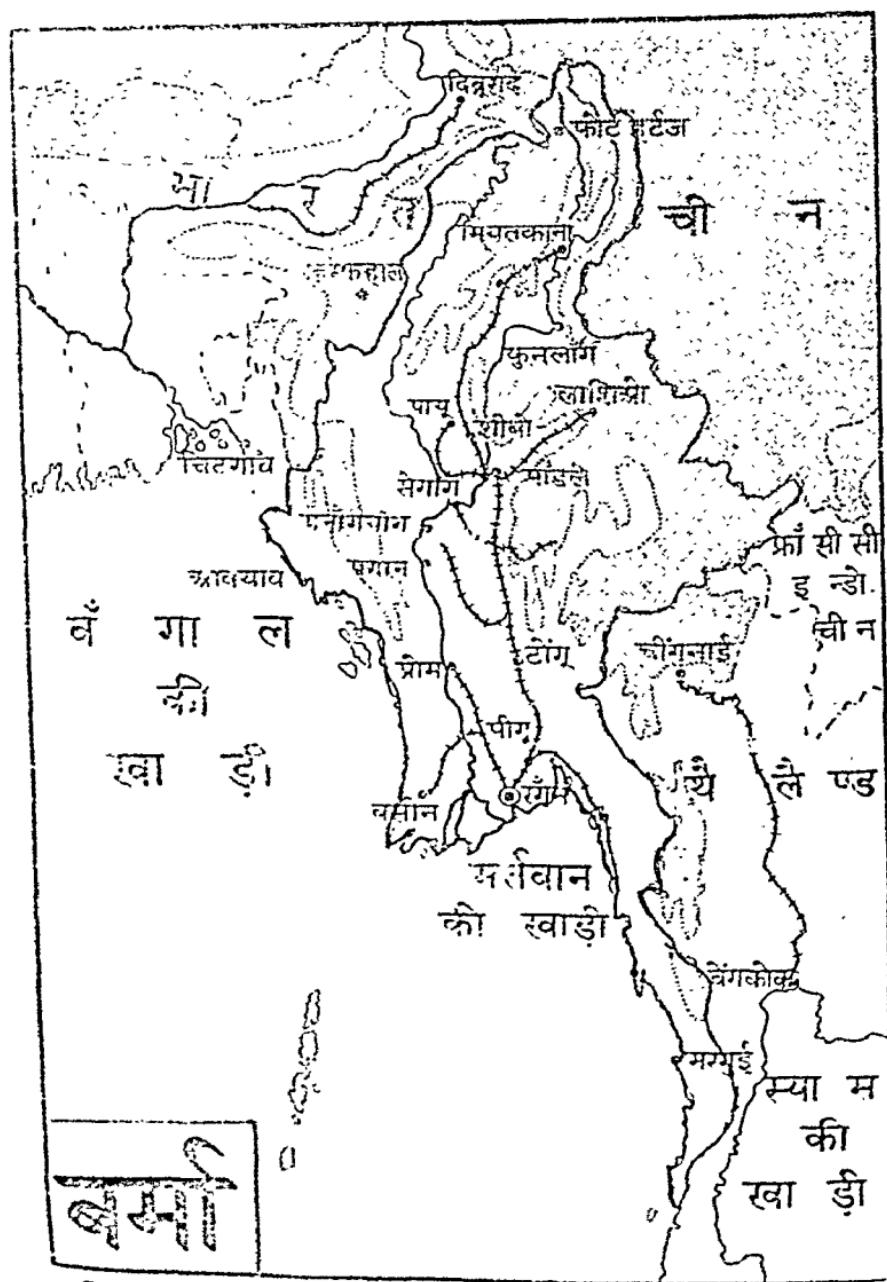
चित्र ९७—बर्मा और भारत व पूर्वी पाकिस्तान के बीच कोई रेलमार्ग नहीं है।

में है। इन प्रदेशों में क्रमशः २१५,१६८ और १५३ मनुष्य प्रति वर्गमील क्षेत्रफल में निवास करते हैं। जनसंख्या का वितरण इस प्रकार है :—

पीगू	२६ लाख	मागवे	१६ लाख
इरावदी	२७ ,,	मान्डले	१६ ,,
टेनासिरम	२१ ,,	अराकान	१२ ,,
सैमैयान्ज	२३ ,,	पूर्वी राज्य	२० ,,

वर्मा की कुल आबादी के दो-तिहाई लोग वर्मा के आदि निवासी हैं। भारतीय भी काफी हैं—लगभग १० लाख। वर्मा के लोग बड़े नम्र, दयालु व आवभगत करने वाले होते हैं। इसीलिए उन्हें पूर्व के आइरिश का उपनाम दे दिया गया है। यहाँ के लोग अधिकतर मंगोल जाति के हैं और भारतीयों से अधिक पढ़े-लिखे व धनाढ्य हैं। प्रायः ये लोग साफ दिल के होते हैं और इनका वर्ताव सच्चा व द्वेषहीन होता है। ये लोग बहुत जल्दी हिलमिल जाते हैं। स्त्रियों और पुरुषों को समान सामाजिक अधिकार प्राप्त हैं परन्तु जीवन कठिन न होने के कारण यहाँ के लोग अधिक हिम्मती व मेहनती नहीं बन पाये हैं।

यहाँ के लोगों का मुख्य धर्म बौद्ध है और करीब ८५ प्रतिशत जनता बुद्ध भगवान् की उपासक है। साधारणतया यहाँ के लोग मंगोल जाति के हैं परन्तु इसके तीन मुख्य विभाग हैं—(१) तिब्बती व वर्मी के मिश्रण (२) मॉन कहमर और (३) टीई चीनी। ये तीनों ही उपजातियाँ आपस में एक-दूसरे से संबंधित हैं और आपसी कलह होने पर भी इनके बीच एकराष्ट्रीयता की भावना बराबर बढ़ती जा रही है।

भू-प्रकृति व जलवायु—वर्मा एक पहाड़ी देश है और इसकी समस्त भूमि पहाड़ों व घाटियों से घिरी हुई है। उत्तरी ब्रर्मा में ऊँचे व ढालू पर्वत शिखर हैं जिन पर वन पाये जाते हैं। इनके बीच संकरी घाटियाँ हैं जो प्रायः बन्जर-सी पड़ी रहती हैं। दक्षिणी वर्मा में इरावदी व सिवथांग नदियों की चौड़ी घाटियों में नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी के मैदान पाये जाते हैं। ये मैदान दक्षिण पुच्छल प्रदेश के तटीय भागों तक विस्तृत हैं।

वर्मा का अधिकतर भाग उष्णकटिबन्ध में स्थित है। इसलिए यहाँ की जलवायु गर्म व तर है। अप्रैल-मई के महीनों में विकट गर्मी पड़ती है और वर्षा बिल्कुल नहीं होती। मई के अन्त में मानसूनी हवाओं द्वारा वर्षा होनी शुरू होती है और फिर सितम्बर तक प्रायः नित्यप्रति वर्षा होती रहती है। डेल्टा व तटीय प्रदेश प्रायः सदैव ही तर रहते हैं। ऊपरी वर्मा में तीन मौसम होते हैं—जाड़ा, गर्मी और बरसात, परन्तु दक्षिणी वर्मा में केवल दो ही मौसम होते हैं—तर व शुष्क। दोनों ही मौसमों में खूब गर्मी पड़ती है।

स्थिति—वर्मा की स्थिति बड़ी महत्त्वपूर्ण है—(१) भारत और आस्ट्रेलिया के बीच हवाई मार्ग पर इसका स्थान बड़ा ही गम्भीर है। (२) इसकी स्थल सीमायें थाईलैण्ड, हिन्दचीन तथा चीन से मिली हुई हैं। चीन में पहुँचने के रास्ते लाशियो,

साउनगी और मेमओ है। लाशियो का मार्ग वर्मा सड़क कहलाता है और बहुत महत्त्वपूर्ण है (३) संसार के प्रधान समुद्री मार्गों से वर्मा का सम्वन्ध है।

खनिज सम्पत्ति

वर्मा में कई प्रकार के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं जिनमें खनिज तेल, जस्ता, शीशा, टीन, टंगस्टन, निकल और कोवाल्ट प्रमुख हैं। शीशे के उत्पादन में वर्मा का संसार में छठा स्थान है और टीन के उत्पादन में इसका पांचवां नम्वर है। टंगस्टन के उत्पादन में चीन के वाद इसका दूसरा स्थान है। खनिज तेल के उत्पादन में भी यह प्रमुख हैं। परन्तु केवल खनिज तेल को साफ करने के उद्योग को छोड़कर और कोई उद्योग अधिक उन्नति नही कर पाया है। इसलिए अन्य सभी खनिज कच्ची दशा में ही वाहर निर्यात कर दिए जाते हैं। १९३९-४० में देश के कुल निर्यात का ३८ प्रतिशत खनिज होते थे परन्तु अब केवल २ प्रतिशत ही रह गए हैं। यहाँ के प्रधान खनिज तथा उनका उत्पादन निम्न तालिका से स्पष्ट हो जायेगा।

	खनिज उत्पादन (हजार टन)	
	१९३९	१९५३
खनिज तेल (हजार वैरल)	६४९४	११९८
टीन	५०	१०
शीशा	७७·२	९४६
जस्ता	५९·३	—
सुरमा (टन)	३२५	०·१६
टंगस्टन	४·३४	०·६५
निकल	२·९	०·८१
सोना (औंस)	१०२६	०·१६
चांदी (हजार औंस)	६१७५	६७२४
लालमणि (हजार कैरट)	२११६	३३·९
पन्ना (,,)	१०·५	४४·१

जैसा कि स्पष्ट है युद्ध से पहिले वर्मा का खनिज उत्पादन और विशेषकर खनिज तेल उद्योग वड़ी ही अच्छी दशा में था परन्तु उस समय की वरवादी ऐसी हुई कि यह आज तक पहले जैसी दशा को प्राप्त न हो सका। सन् १९४७ में उत्पादन फिर शुरू हुआ परन्तु गृह कलह के कारण अभी तक अधिक प्रगति नहीं हो पाई है।

चिन्दविन और निचली इरावदी घाटी में वर्मा के सभी तेल क्षेत्र स्थित हैं। यनांगयांग में सवसे वड़ी तेल की खान है। यहाँ से पाइप द्वारा तेल रंगून तक लाया जाता है। वर्मा में खनिज तेल का वार्षिक उत्पादन ३००० लाख गैलन है। संसार के तेल उत्पादन का केवल ½ प्रतिशत अंश ही वर्मा से प्राप्त होता। टेनासरिम में टीन की वहुमूल्य खानें हैं और वादिन में संसार का सवसे वड़ा चांदी भंडार पाया जाता

है। चिन्दविन की घाटी में कोयले की भी खानें हैं और वहीं माणिक जैसे बहुमूल्य पत्थर भी पाये जाते हैं। उत्तरी पश्चिमी बर्मा में उच्च कोटि के कोयले का विस्तृत भंडार निहित है। यदि इस क्षेत्र की इन खानों का विकास किया जा सका तो बर्मा के उद्योग-धंधों व यातायात के साधनों की विदेशी कोयले पर निर्भरता कम हो जायेगी। इनके अलावा यहाँ पर लालमणि, वोलफ्राम, सुरमा व नमक भी पाए जाते हैं। प्रायः सभी खनिजों की संपूर्ण उत्पादन मात्रा निर्यात कर दी जाती है।

वन-सम्पत्ति

देश के ५५ प्रतिशत भू-भाग पर वन पाए जाते हैं जहाँ से सागौन की लकड़ी प्राप्त होती है। सन् १९५४ में २७,२०० घन टन सागौन का निर्यात हुआ जबकि सन् १९३८-३९ में २,०४,००० घन टन लकड़ी बाहर भेजी गई थी।

बर्मा में ६ प्रकार के वन पाए जाते हैं :—

(१) अराकान और टेनासरिम के तट पर सामुद्रिक जल के वन पाये जाते हैं।

(२) अराकान व टेनासरिम के उच्च किनारों पर रेतीले तटीय वन पाये जाते हैं।

(३) १२० इंच से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उष्णकटिबन्धीय सदाबहार वन पाए जाते हैं। बांस इनका मुख्य पौधा है।

(४) ५० इंच से १२० इंच वर्षा वाले क्षेत्रों में मिले-जुले पतझड़ वन पाए जाते हैं। ऊपरी बर्मा में सागौन व पदौक के वृक्ष विशेष रूप से मिलते हैं।

(५) शुष्क प्रदेश में कांटेदार वृक्षों के शुष्क वन पाए जाते हैं। इनमें कई ऐसे वृक्ष मिलते हैं जिनसे चमड़ा साफ करने का काम लिया जाता है।

(६) ३००० फीट से अधिक ऊँचाई पर शीतोष्ण प्रदेश के वन पाए जाते हैं। चीड़, ओक, फर्न और अखरोट के पेड़ इनमें बहुतायत से मिलते हैं।

बर्मा की वनस्पति में सागौन और बांस का विशेष महत्व है। व्यापारिक दृष्टिकोण से सागौन का बड़ा महत्व है परन्तु जनता के दृष्टिकोण से बांस अधिक लाभप्रद है। सागौन के वृक्ष पीगूयूमा, अराकनयूमा के पूर्वी ढाल और स्याम की सीमा पर पाये जाते हैं। इन वृक्षों को काटकर सिखाये हुए हाथियों की सहायता से नदी तक घसीट लाया जाता है और फिर नदियों में बहाकर डेल्टा प्रदेश में स्थित बन्दरगाहों तक पहुँचा दिया जाता है। पिछले कुछ दिनों से बर्मा सागौन की विश्व-व्यापी मांग के ७५ प्रतिशत अंश की पूर्ति करता रहा है। सागौन की लकड़ी बहुत मजबूत व टिकाऊ होती है। इसमें दीमक आदि नहीं लग पाते। बांस भी बड़ा लाभप्रद वृक्ष है और बर्मा के लोग इसे कई प्रकार के प्रयोग में लाते हैं। घरेलू बर्तन, मकान मेज-कुर्सी, नाव व पानी के नल आदि वस्तुएँ बांस से ही बनाई जाती हैं। इधर कुछ दिनों से बेंत का प्रयोग भी बढ़ रहा है। अब डलिया व टोकरियाँ तथा मेज-कुर्सी बेंत से ही बनाई जाती हैं।

सन् १९५३-५४ में धान की खेती ४२२५००० हेक्टर भूमि पर की जाती थी और १०२२००० टन धान देश से निर्यात किया गया। रबड़ का भी उत्पादन होता है परन्तु युद्ध और गृह कलह से इसको बड़ा धक्का पहुँचा है।

केयातायात साधन

देश में २६६७ मील लम्बा रेल-मार्ग है परन्तु सड़कें अच्छी नहीं हैं। केवल ६८११ मील लम्बी पक्की सड़कें हैं। वास्तव में यहाँ की यातायात प्रणाली में जल-मार्ग प्रधान हैं। इरावदी नदी पर ८७२ मील की दूरी तक जहाज लाए जा सकते हैं। चिन्दविन नदी भी ५२४ मील तक नाव्य है। इसके अलावा डेल्टा प्रदेश में छोटी-छोटी झीलें २००० मील लम्बा जलमार्ग प्रस्तुत करती है। मोलमीन के आस-पास अन्य नदियों की नाव्यता की दूरी २५० मील और भी है।

वर्मा में गमनागमन व यायायात के सबसे प्रमुख साधन जलमार्ग हैं। इरावदी नदी ऊपरी व निचले वर्मा के संपूर्ण विस्तार से होकर वहती है और रंगून से भामो तक लगभग ९०० मील की दूरी में जहाज आ जा सकते हैं। वर्मा के मध्य प्रदेश के निकास का यही मुख्य मार्ग है और देश के प्रमुख नगर इसी के किनारे पर बसे हुए हैं। सालविन नदी इरावदी से अधिक लम्बी जरूर है परन्तु वहाव में चट्टानों व झरनों की अधिकता के कारण इस पर मुहाने से केवल ८० मील दूर तक जहाज चल सकते हैं।

वर्मा के सभी रेलमार्ग छोटी लाइन के हैं और रंगून से शुरू होते हैं। सन् १९४० में वर्मा के रेलमार्गों की कुल लम्बाई २०६० मील थी। वर्मा का मुख्य रेलमार्ग सीटांग घाटी से होता हुआ रंगून से मान्डले तक जाता है। इसी मार्ग पर पीगू बसा है। दूसरा मुख्य रेलमार्ग इरावदी घाटी से होता हुआ रंगून से प्रोम तक जाता है। इन दोनों रेलमार्गों की कुछ प्रमुख शाखायें निम्नलिखित हैं:—

(१) पीगू से मर्त्तवान तक और फिर नाव द्वारा नदी पार कर के मोलमीन तक।

(२) मोलमीन से यी तक और फिर यी से वर्मा स्याम रेलवे द्वारा स्याम के आन्तरिक भाग तक।

(३) मान्डले से लाशिओ तक।

(४) मान्डले से म्यितकियना तक।

(५) प्रोम मार्ग पर स्थित हनजादा से बसीन तक।

वर्मा के थलमार्ग—सड़कें विशेष उन्नत नहीं हैं। मजदूरी महंगी होने तथा अच्छे पत्थर की कमी के कारण पक्की सड़कों का बनाना कठिन है। वर्मा में १७,००० मील लम्बी सड़कें हैं और इनमें से १२,५०० मील सड़कें मोटर चलाने योग्य हैं। वर्मा की प्रमुख सड़कें निम्नलिखित हैं:—(१) वर्मा सड़क (२) रंगून-प्रोम यनांयांग मेकतिला मार्ग (३) म्यांगयान मेकतिला-त्वांजयी स्याम मार्ग (४) सागायांग शावेवो-कलेवा इम्फाल मार्ग (५) स्टिलवेल मार्ग (६) पीगू थाटन मोलमीन टेवाय

और मार्जिन मार्ग। बर्मा सड़क रंगून से कुनमिग तक जाती है। इसी सड़क पर पीगू, मान्डले, मेमयो, लाशिओ और वान्टइंग भी स्थित हैं। यह संपूर्ण मार्ग साल भर बराबर खुला रहता है। **स्टिलवेल मार्ग** आसाम रेलमार्ग के अन्तिम विन्दु लेडो से शुरू होता है और म्यितकीना होता हुआ भामो तक जाता है। भामो से एक शाखा द्वारा इसे बर्मा सड़क से मिला दिया गया है। यह शाखा नामखान होती हुई जाती है। स्टिलवेल मार्ग का निर्माण सैनिक यातायात के लिये हुआ था परन्तु यह हुक्यांग घाटी के महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र से होकर जाती है इसलिये इसका महत्व और भी अधिक है।

बर्मा और भारत के बीच कोई व्यवस्थित थलमार्ग नहीं है। इसके कई कारण हैं—(१) भारत और बर्मा के बीच सामुद्रिक मार्ग का व्यय इतना कम है कि सड़क पर अधिक धन व्यय करने की बात के पक्ष में कोई भी सरकार नहीं होती। यह सड़क इतने अधिक व्यय के बाद केवल सैनिक महत्व के लिये बनाई जा सकती है। इस दृष्टिकोण से मार्ग निरीक्षण भी हुआ तो जब सवाल धन व्यय का आया तो कोई भी सरकार तैयार न हुई। (२) बर्मा के अलग होने से पहले भारत सरकार इस प्रश्न को अधिक महत्व नहीं देती थी। बर्मा के अलग राष्ट्र बन जाने के बाद से जब भी यह मार्ग बनाने का प्रश्न उठा तो बर्मा सरकार के मंत्रियो ने इसका विरोध किया। उनकी धारणा थी कि ऐसा मार्ग बन जाने से प्रवासी भारतीयों की संख्या बहुत बढ जायेगी और उन्हें रोकना कठिन होगा। फिर भी भारत व बर्मा के बीच रेल, सड़क सम्बन्ध स्थापित करने के प्रश्न पर निकट भविष्य में विचार होने की आशा है।

व्यापारिक केन्द्र

बर्मा के प्रमुख व्यापारिक केन्द्र आक्याब,बसीन, टेवाय, मोलमीन, मान्डले, भामो और रंगून हैं। **भामो** उत्तरी बर्मा में स्थित है और सीमान्त मार्गो द्वारा चीन-बर्मा का व्यापार का केन्द्र है। यह मांडले से २०० मील उत्तर में है। **आक्याब** बर्मा के पश्चिमी किनारे पर बसा है और चावल निर्यात का मुख्य केन्द्र है। इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि इसका आन्तरिक भागों के साथ सम्बन्ध किसी रेल-मार्ग द्वारा नहीं है। यहाँ की आबादी ४०,००० है और यहाँ पर प्रमुख आयात की वस्तुएँ शराब, मशीनें, सूती कपड़े

चित्र ६८—आक्याब का बन्दरगाह व व्यापारिक केन्द्र

और लोहे के सामान हैं। **बसीन** इरावदी प्रदेश के मध्य में बसा है और समुद्र से ७० मील की दूरी पर स्थित है। रंगून से इसका सीधा रेल संबंध है। रंगून प्रमुख बन्दरगाह व राजधानी है। यह रंगून नदी पर समुद्र से २५ मील की दूरी पर बसा है। यहाँ पर सूती कपड़े, धातुएँ, खाने की वस्तुएँ, रेशम, चीनी, चमड़े का सामान, मशीनें व कागज आयात किया जाता है। निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ चावल, चमड़ा व खालें, जस्ता, शीशा, लकड़ी, खनिज तेल, तम्बाकू व रबड़ हैं। देश के सभी प्रमुख नगरों के साथ इसका रेल-संबंध है। **मोलमीन** मर्त्तवान की खाड़ी पर स्थित एक प्रमुख बन्दरगाह है। इस्पात, चीनी, खाद्य पदार्थ और टाट के बोरे यहाँ पर आयात की मुख्य वस्तुएं हैं और लकड़ी, रबड़, टीन और तम्बाकू यहाँ से निर्यात की जाती है। **टेवाय** वर्मा के दक्षिणी पूँछ सदृश भाग के मध्य में स्थित है और वोलफ्राम व टीन के निर्यात का प्रमुख केन्द्र है। **मरगई** टेनासरिम के दक्षिणी-पश्चिमी किनारे पर स्थित है और रबड़ व मोती निकालने के उद्यम का केन्द्र है। **मान्डले** उत्तरी वर्मा में इरावदी नदी पर बसा है और रंगून से ४०० मील दूर है। चावल व रेशम यहाँ के व्यापार की प्रमुख वस्तुएँ हैं।

विदेशी व्यापार

वर्मा के कुल निर्यात व्यापार का दो तिहाई से तीन चौथाई भाग तक चावल व खनिज तेल होता है और यहाँ का ९० प्र. श. निर्यात व्यापार रंगून बन्दरगाह से होता है। दूसरी विशेषता यह है कि साधारणतया वर्मा की ७५ प्र. श. निर्यात सामग्री भारत ले लेता है। इसके कई कारण हैं—(१) भारत के बन्दरगाह इसके बिलकुल समीप हैं। (२) भारत में चावल, खनिज तेल व सागौन की माँग रहती है और वर्मा में इन वस्तुओं का आधिक्य रहता है। (३) बहुत दिनों तक भारत व वर्मा के बीच व्यापार स्वातन्त्र्य रहा है। वास्तव में सन् १९३७ तक वर्मा भारत का ही एक भाग रहा है। (४) सन् १९३७ तक भारत व वर्मा की मुद्रा एक थी और (५) सन् १९४० तक वर्मा का अधिकतर व्यापार भारतीयों के ही हाथ में था।

वास्तव में वर्मा व भारत में सदैव से ही एक अटूट सम्बन्ध रहा है और सन् १९३७ में भारत से वर्मा के अलग हो जाने पर भारत की आर्थिक स्थिति को भारी धक्का पहुँचा। भारतीय उद्योग-धंधों को प्राप्त सरकारी संरक्षण वर्मा में लागू नहीं होता है। अतएव वर्मा में भारतीय उद्योग-धन्धों को विदेशी राष्ट्रों में तैयार की हुई वस्तुओं के साथ स्पर्धा करनी पड़ती है। वर्मा से अलग हो जाने से उन अनेक भारतीय मजदूरों को भी जो वर्मा के रबड़ व अन्य उद्योगों में लगे हुए हैं परदेसी या विदेशी समझा जाता है। फिर वर्मा के अलग हो जाने से भारत की खनिज तेल, रबड़, टीन और वोलफ्राम जैसे खनिज पदार्थ सम्बन्धी माँग पूर्ति पर बड़ा खराब असर पड़ा है। इससे अधिक शोचनीय असर वर्मा पर पड़ा है और वर्मा की औद्योगिक उन्नति के लिए आवश्यक है कि भारत व वर्मा के बीच मेल-जोल बना रहे। इस मेल-जोल को बनाये रखने के लिए परस्पर व्यापार सम्बन्ध रखना अत्यन्त आवश्यक है। इससे दोनों देशों को फायदा होगा। परन्तु इसके पहले कि भारत में व्यापारिक

व औद्योगिक सहयोग बढ़े वर्मा के लोगों के दिल में भरोसा पैदा होना चाहिए कि उनकी आर्थिक प्रगति में भारतीय रोड़ा नहीं बल्कि सहायक हैं। साथ-साथ यहाँ पर बसी हुई भारतीय जनता को भी विश्वास दिलाया जाना चाहिए कि उनके साथ वही वर्ताव किया जावेगा जो वहाँ के वर्मी लोगों के साथ। इस प्रकार आपस में अच्छी भावनाओं का विकास हो सकेगा।

वर्मा का विभिन्न देशों के साथ समुद्र द्वारा व्यापार

(प्रतिशत)

भारत	६०	मलाया	४·६
ग्रेट ब्रिटेन	१३·२	जापान	४·०
लंका	५·५		

वर्मा वाहर के देशों से तैयार माल मंगवाता है। साधारण दैनिक उपभोग की वस्तुएँ भी वाहर से ही आती हैं। इसके अलावा लोहा व इस्पात, कोयला व कोक तथा मशीनें भी आयात की जाती हैं। आयात किये हुए माल का ५० प्रतिशत भाग भारत से आता है और २० प्रतिशत आयात ग्रेट ब्रिटेन से। भारत से वर्मा सूती कपड़ा व सूत, पटसन, सुपारी, दालें, लोहा व इस्पात, सिगरेट, चाय, जूते व फल मंगवाता है। ग्रेट ब्रिटेन से आयात की जाने वाली वस्तुओं में सूती कपड़े, मशीनें, लोहा व इस्पात तथा रासायनिक पदार्थ सबसे प्रमुख हैं।

वर्मा से भारत को चावल, दालें, चना, तेल, मोमवत्ती, टीन व लकड़ी आदि निर्यात की जाती है।

प्रश्नावली

१. "वर्मा के लोगों का मुख्य व्यवसाय व उद्यम उनकी भौगोलिक परिस्थितियों पर आश्रित है।" इस उक्ति पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

२. भारत व वर्मा के वीच व्यापार की मुख्य विशेपताएँ वतलाइए।

३. वर्मा के औद्योगीकरण में वहाँ की विभिन्न परिस्थितियों से कहाँ तक सहायता मिल सकती है?

४. वर्मा में औद्योगिक उन्नति व विकास की संभावनाओं का निरूपण कीजिए।

अध्याय : : पन्द्रह

लंका

सन् १९४८ से लंका ब्रिटिश कामनवेल्थ के अन्तर्गत एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया है। सैनिक दृष्टि से इसकी स्थिति बड़ी महत्त्वपूर्ण है और इसीलिए ग्रेट ब्रिटेन की सरकार ने नौ सेना व वायु सेना के अड्डे अपने ही हाथ में रखे हैं।

स्थिति, क्षेत्रफल, प्राकृतिक बनावट व जलवायु—पाक जलडमरूमध्य लंका को भारतीय प्रायद्वीप से अलग करता है और आदमस ब्रिज नामक द्वीप शृंखला इसको भारत से सम्बन्धित करती है। भू-प्रकृति के दृष्टिकोण से लंका द्वीप भारत का ही एक अंग है। इसकी लम्बाई २७० मील और सब से अधिक चौड़ाई १४० मील है। इसका कुल क्षेत्रफल २५,३३२ वर्गमील है। यहां की सबसे लम्बी नदी महाविला गंगा है और इसकी लम्बाई १३४ मील है। यह उत्तर-पूर्व की ओर बहती है। इस पर छोटी-छोटी नावें चल सकती हैं।

लंका की जलवायु उष्णकटिबंधीय है और साल भर बराबर पानी बरसता रहता है। इसके पश्चिमी भाग में मई से अक्तूबर तक वर्षा होती है। पूर्वी भाग की वर्षा जाड़ों में होती है। प्राकृतिक बनावट के दृष्टिकोण से लंका का मध्य भाग पठारों व पहाड़ों से घिरा है। बाकी भाग मैदान है।

कृषि—भूमि, तापक्रम और वर्षा के दृष्टिकोण से लंका कृषि के उद्यम के लिए बड़ा उपयुक्त है, इसीलिए कृषि यहाँ का प्रधान धंधा हो गया है। फिर भी कुल क्षेत्र-फल के पंचमांश में ही खेती की जा सकती है। शेष चार-पंचमांश या तो वनों से घिरा है या बंजर भूमि है। यहाँ की मुख्य फसलें चाय, रबड़, नारियल और सिनकोना हैं। इनकी उपज का अधिकतर भाग निर्यात कर दिया जाता है।

प्राकृतिक रबड़ के विश्वव्यापी उत्पादन का ६ प्रतिशत अंश लंका से ही प्राप्त होता है। रबड़ के वर्तमान वृक्षों को देखते हुए लंका में रबड़ का अपार भंडार कहा जाता है जिसको यदि पूरी तरह से प्रयोग किया जावे तो प्रतिवर्ष १,२०,००० टन अतिरिक्त रबड़ प्राप्त किया जा सकता है। कहवा, कोको और तम्बाकू यहाँ की अन्य फसलें हैं। परन्तु लंका की आर्थिक उन्नति में चाय व रबड़ का विशेष महत्व है। यहाँ की मुख्य फसलें चाय, रबड़ और नारियल हैं। सन् १९५३-५४ में विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल (एकड़) इस प्रकार था :

चाय	५७२००८
रबड़	६५६०००
नारियल	१०७०९४२
धान	१०४८२२८

सन् १९५४ में चाय का निर्यात ३५,६०,७६,००० पौंड था। लंका की चाय के प्रमुख ग्राहक निम्नलिखित हैं :—

संयुक्त राज्य	११८० लाख पौंड
आस्ट्रेलिया	५२० ,, ,,
संयुक्त राष्ट्र	३४० ,, ,,
दक्षिणी अफ्रीका	२३० ,, ,,
मिश्र	२३० ,, ,,
इराक	२१० ,, ,,
कनाडा	१७० ,, ,,
न्यूजीलैंड	१३० ,, ,,

लंका में शुरू में ३,४०,००० एकड़ भूमि पर चावल की खेती होती थी और धान का वार्षिक उत्पादन ४५ लाख बुशल था। देश में प्रतिवर्ष ३०० लाख बुशल चावल की मांग रहती है। इसलिए सरकार की तरफ से गल ओया घाटी के विकास की योजना पर काम हो रहा है। यह घाटी द्वीप के पूर्वी भाग में है और सन् १९६२ तक २४ लाख एकड़ भूमि पर चावल उगाया जाने लगेगा। सन् १९५२ में धान का क्षेत्रफल पहिले से बढ़कर १०,४८,२८८ एकड़ हो गया था। १८ बुशल प्रति एकड़ से धान की उपज को बढ़ाकर ५० बुशल कर देने की भी कोशिश हो रही है।

खनिज सम्पत्ति—यहाँ की खनिज सम्पत्ति में चूने के पत्थर, मणि व ग्रेफाइट का स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण है। ग्रेफाइट के विश्वव्यापी उत्पादन का ११ प्र. श. अंश लंका की खानों से प्राप्त होता है। लंका का ग्रेफाइट सैनिक दृष्टिकोण से बहुत उच्चकोटि का होता है और इस प्रकार के ग्रेफाइट के उत्पादन में लंका का स्थान संसार में सबसे बढ़ा हुआ है। सन् १९५३ में ग्रेफाइट के आंकड़े इस प्रकार थे :

खानों की संख्या	लगे हुए व्यक्ति	निर्यात	मूल्य
२४	१०००	७२०० टन	२९ लाख रु०

जनसंख्या व यातायात के साधन—यहां की जनसंख्या ८०,९८,६६७ है और दक्षिणी-पश्चिमी भाग सबसे अधिक घना बसा है। यहाँ की दो-तिहाई जनसंख्या सिंहाली है और लगभग एक चौथाई लोग तमिल हैं। धर्म के दृष्टिकोण से अधिक लोग बौद्ध धर्म को मानने वाले हैं और करीब पंचमांश जनता हिन्दू धर्म अनुयायी है। जनसंख्या का औसत घनत्व २९३ मनुष्य प्रति वर्गमील है।

लंका के रेलमार्ग कोलम्बो से चलकर उत्तर-पश्चिमी में तलाइमन्नार तक जाते हैं, उत्तर में जाफना और पूर्व में ट्रिनकोमाली भी रेलमार्गों द्वारा कोलम्बो से सम्बन्धित है।

उद्योग-धन्धे—लंका कृषि-प्रधान देश है और यहाँ के उद्योग-धंधे अभी हाल में ही विकसित हुए हैं। तेजाब (Acetic Acid), सिरामिक, शीशा, गोंद, टोप, प्लाईवुड, कुनैन, कागज व नारियल की जटा की चटाइयाँ व रस्से बनाना लंका के

मुख्य उद्योग-धंधे हैं। देश की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति के लिए लंका की
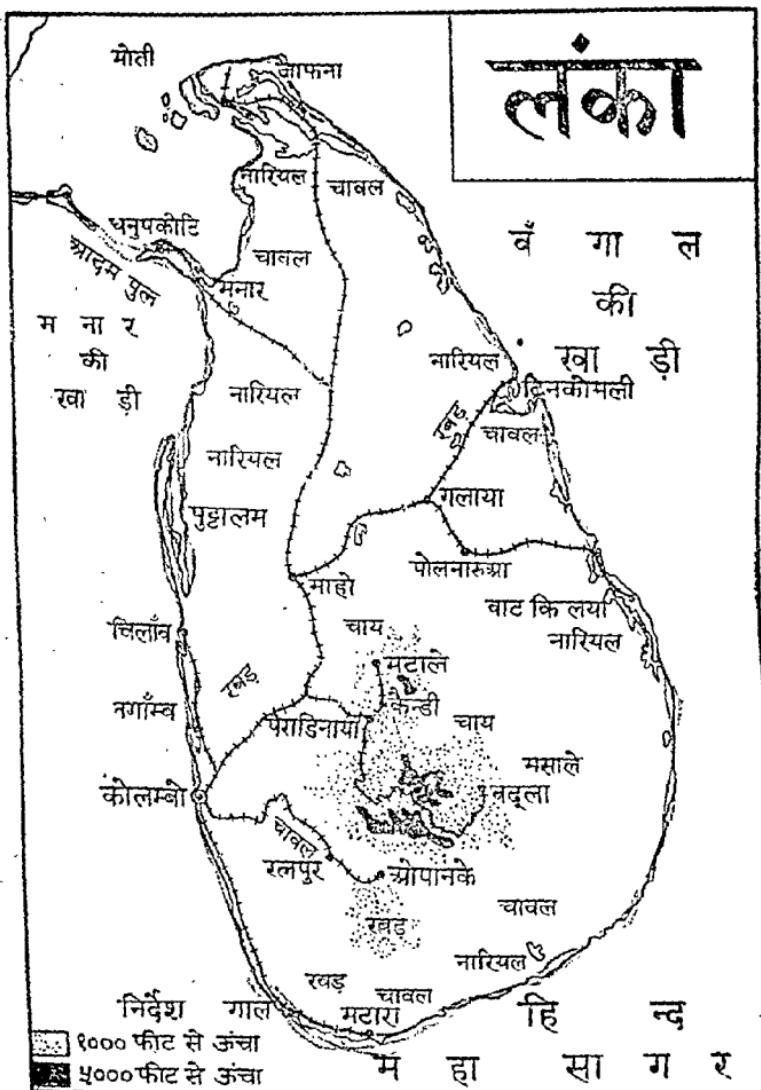
चित्र ६६—रेलमार्गों के विन्यास पर ध्यान दीजिए। यहाँ के रेलमार्ग उत्तर में जाफना, दक्षिण में मटारा और उत्तर-पूर्वी किनारे पर ट्रिनकोमाली को कोलम्बो से मिलाते हैं।

सरकार ने सन् १६४८ में एक छः वर्षीय योजना पर काम शुरू किया है। सन् १६५४-५५ में योजना पूरी हो गई है और लंका बहुत-सी वस्तुओं में आत्मनिर्भर हो गया है

विदेश व्यापार—लंका के निर्यात व्यापार की मुख्य वस्तुएँ चाय, रवड़, नारियल का तेल व गिरी हैं। चाय की अन्तर्राष्ट्रीय मंडियों में तो लंका व भारत की काफी स्पर्धा रहती है। सिनकोना, तम्बाकू, लकड़ी व इलायची को भी निर्यात कर दिया जाता है। वदले में लंका चावल, खनिज तेल, सूती कपड़े, मोटर-गाड़ियाँ, धातुएँ, कोयला व सीमेन्ट वाहर से मंगवाता है।

व्यापार (लाख रुपयों में) १९५४

देश	आयात	निर्यात
संयुक्त राज्य	२९२०	४९४८
आस्ट्रेलिया	१०६०	१७२५
भारत	१९१३	६४६
वर्मा	१२५३	—
जापान	७६४	६०
संयुक्त राष्ट्र	३६५	११७१
चीन	१५८३	२२१६
कनाडा	१२४	७०२
हालैन्ड	२९२	४१६
मिश्र	—	८७५
इटली	३८०	३३४
दक्षिणी अफ्रीका	४७	८५७
न्यूजीलैण्ड	—	४१०
फ्रांस	२००	१३
मलाया	२०	—
थाइलैण्ड	१३५	—
वेल्जियम	३४१	५०
जर्मनी	२२३	३५०
पाकिस्तान	४९	११२

लंका के विदेशी व्यापार में भारत का स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। परन्तु भारत व लंका का व्यापार सहयोगी नहीं वल्कि स्पर्धाजनक है। फिर भी दोनों देश एक दूसरे को काफी सामान भेजते हैं। भारत लंका को सूती कपड़े, पटसन, दालें, मछली, फल, सब्जी, चावल व लकड़ी भेजता है। और लंका से भारत को नारियल की विभिन्न वस्तुएँ, मसाले व रवड़ निर्यात किये जाते हैं। यदि व्यापार वढ़ाया जावे तो भारत से लंका को रेशमी व ऊनी कपड़े, मोजा वनियान, कम्वल, गलीचे व दरियाँ, सावुन, कितावें, काँटा-छुरी चम्मच आदि वस्तुएँ आसानी से भेजी जा सकती हैं।

वास्तव में लंका की आर्थिक उन्नति चाय, रवड़ व नारियल के वागीचों पर निर्भर है। चाय में तो यह भारत की स्पर्धा करता है परन्तु रवड़ व नारियल यह